ख़ून के आँसू

ख़तीबे मशरिक़ हज़रत
अल्लामा मुशताक़ अहमद निज़ामी

रज़वी किताब घर
425, मटिया महल जामा मस्जिद, दिल्ली-110006

तमाम भाईयो को सलाम किताबे

स्केन करके पीडिएफ मे आप

तक पहुँचाने के लिए इस

फक़ीर को अपनी दुआओ में

खास तौर पर याद रखे !

दुआओ का तालीब

सग ए रज़ा लाला ख़ान

الاسم	معنی	الاسم	معنی	الاسم	معنی
هو الله	وہ اللہ	الوهاب	بہت دینے والا	الحليم	بردبار
الذي لا إله	کہ نہیں کوئی معبود	الرزاق	رزق دینے والا	العظيم	بزرگ
إلا هو	مگر وہی	الفتاح	کھولنے والا	الغفور	بخشنے والا
الرحمٰن	بڑا مہربان	العليم	جاننے والا	الشكور	شکر پسند
الرحيم	نہایت رحم والا	القابض	بند کرنے والا	العلي	بلند
الملك	بادشاہ	الباسط	کھولنے والا	الكبير	بڑا
القدوس	پاک	الخافض	پست کرنے والا	الحفيظ	نگہبان
السلام	سلامت رکھنے والا	الرافع	بلند کرنے والا	المقيت	قوت دینے والا
المؤمن	امن دینے والا	یا اللہ جل جلالہ		الحسيب	کافی
المهيمن	نگہبان			الجليل	بزرگ
العزيز	غالب	المعز	عزت دینے والا	الكريم	سخی
الجبار	زبردست	المذل	ذلت دینے والا	الرقيب	نگہبان
المتكبر	بڑائی والا	السميع	سننے والا	المجيب	قبول کرنے والا
الخالق	پیدا کرنے والا	البصير	دیکھنے والا	الواسع	فراخی والا
البارئ	عالم کا بنانے والا	الحكم	حاکم	الحكيم	حکمت والا
المصور	صورت بنانے والا	العدل	عدل کرنے والا	الودود	دوست بڑا
الغفار	بخشنے والا	اللطيف	باریک بیں	المجيد	بزرگ
القهار	زبردست	الخبير	خبردار	الباعث	اٹھانے والا

الاسم	معنی	الاسم	معنی	الاسم	معنی
الشهيد	گواہ	الصمد	بے نیاز	مالك الملك	مالک ملک
الحق	سچا	القادر	قدرت والا	ذو الجلال والإكرام	بزرگی اور بخشش والا
الوكيل	کارساز	المقتدر	صاحب قدرت	المقسط	عدل کرنے والا
القوي	طاقت والا	المقدم	پہلا	الجامع	جمع کرنے والا
المتين	مضبوط	المؤخر	پچھلا	الغني	بے نیاز
الولي	دوست	الأول	اوّل	المغني	دولت مند کرنے والا
الحميد	قابل تعریف	الآخر	آخر	المعطي	عطا کرنے والا
المحصي	گھیرنے والا	الظاهر	آشکارا	المانع	منع کرنے والا
المبدئ	پہلے پہل پیدا کرنے والا			الضار	ضرر پیدا کرنے والا
المعيد	دوبارہ پیدا کرنے والا			النافع	نفع دینے والا
المحيي	زندہ کرنے والا	الباطن	پوشیدہ	النور	روشنی والا
المميت	مارنے والا	الوالي	کارساز	الهادي	ہدایت دینے والا
الحي	زندہ	المتعالي	برتر	البديع	نیا پیدا کرنے والا
القيوم	ہمیشہ رہنے والا	البر	احسان کرنے والا	الباقي	ہمیشہ رہنے والا
الواجد	پانے والا	التواب	توبہ قبول کرنے والا	الوارث	مالک
الماجد	بزرگی والا	المنتقم	بدلہ لینے والا	الرشيد	راہنما
الواحد	ایک	العفو	معاف کرنے والا	الصبور	بڑا تحمل والا
الأحد	اکیلا	الرؤوف	بہت مہربان	جل وعلا	بزرگ و برتر

غلام الحصرت

بسم الله الرحمن الرحيم

ख़ून के आँसू

मुकम्मल

यानी उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी का जीता जागता मुज़ाहरा और उनकी सैकड़ों किताबों का खुलासा व निचोड़

लेखक

ख़तीबे मशरिक़ मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी

हिन्दी अनुवाद :

साजिद हाशमी

बएहतेमाम

हाफ़िज़ मुहम्मद क़मरुद्दीन रज़वी

नाशिर

रज़वी किताब घर

425, उर्दू मार्केट, मटिया महल, जामा मस्जिद,
दिल्ली – 110006 ★ फ़ोन : 011 – 23264524, 55393370

नाम किताब	ख़ून के आँसू (मुकम्मल)
लेखक	अल्लामा मुश्ताक़ अहमद निज़ामी
तसहीह	साजिद हाशमी
बएहतेमाम	हाफ़िज़ मुहम्मद क़मरुद्दीन रज़वी
नाशिर	रज़वी किताब घर, दिल्ली
मतबअ	रज़वी ऑफ़सेट प्रेस एजेंसी
पहली बार हिन्दी	2004 ई०
सफ़हात	344
कम्पोज़िंग	रज़वी कम्प्यूटर प्वाइंट, दिल्ली-6
क़ीमत	

महाराष्ट्र में अहले सुन्नत का मर्कज़ी कुतुबख़ाना

रज़वी किताब घर

114, गैबी नगर भिवंडी, ज़िला थाणा, महाराष्ट्र-421302

ख़ून के आँसू
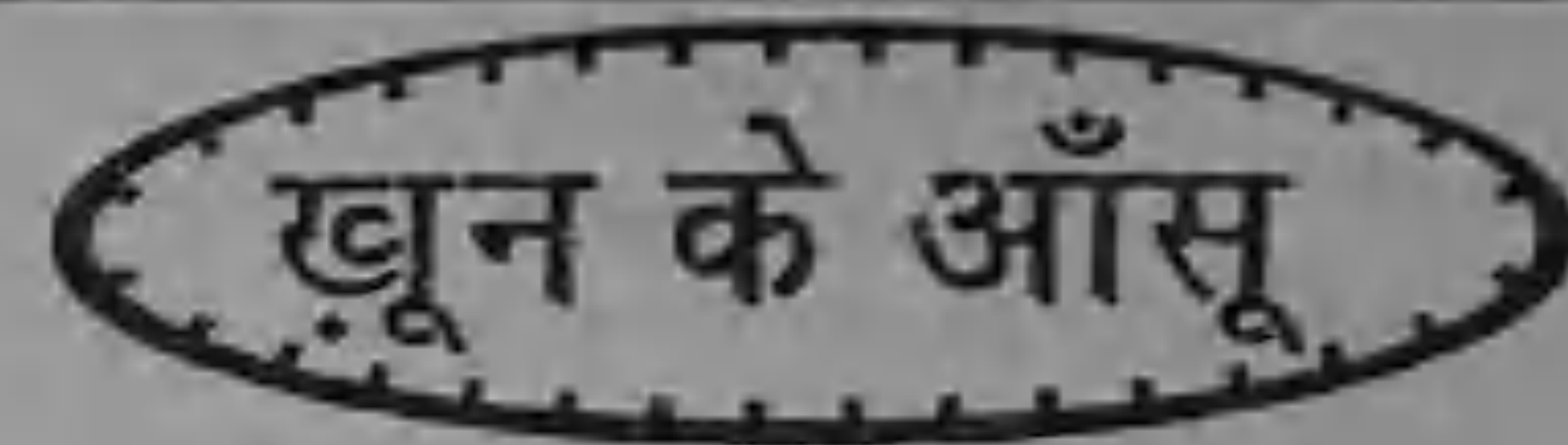
पर हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द का इज़हारे मसर्रत और अ़तिया

फ़ख़्रे अमासिल हज़रत मौलाना सय्यद बुरहानुल हक़ साहिब मुफ़्तीए जबलपुर की दावत पर शाहज़ादए आला हज़रत आक़ाए निअ़मत हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द अदामल्लाह फ़ुयूज़हुम व बरकातहुमुल आ़लिया जबलपुर तशरीफ़ ले जाते हुए कल 13 अगस्त 1961 ई० दफ़्तर पासवान में तशरीफ़ लाये। मौलाना अनवार अहमद निज़ामी ने जिन्हें हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द से बैअ़त हासिल है। हज़रत की ख़िदमते गिरामी में "ख़ून के आँसु" का एक मुजल्लद नुस्ख़ा बतौरे नज़रानए अ़क़ीदत पेश किया और उसके कुछ मज़ामीन सुनायें।

जिस को सुन कर हज़रत ने फ़रमाया "मुश्ताक़ ने इस किताब की तरतीब में बड़ी मेहनत और काविश की है" और इन्तेहाई बहजत व मसर्रत की हालत में मुस्कुराते हुए इरशाद फ़रमाया "इसको ख़ून के आँसू कहा जाये या ख़ुशी के आँसू" इसके बाद अपनी जेबे ख़ास से 25 रुपए देते हुए यह फ़रमाया कि इसको जिल्द दोम की इशाअ़त में मेरी तरफ़ से शामिल कर लिया जाये। किसी भी किताब पर हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द का इज़हारे मसर्रत इसके सेहत व सनद की रौशन दलील है, यह सरकार का करम व ख़ुरदाँ नवाज़ी है वरना मन आनम कि मन दानम, रब्बे करीम हज़रत के ज़िल्ले आ़तिफ़त को हम पर दराज़ फ़रमाए। आमीन बिजाहि सय्येदिलमुर्सलीन सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम।

ख़ाकपाए हबीब मुश्ताक़ अहमद निज़ामी

1 रबीउल अव्वल शरीफ़ मुताबिक़ 14 अगस्त 61 ई०

पेशे लफ़्ज़

उड़ती फिरती थीं हज़ारों बुलबुलें गुलज़ार में
जी में क्या आया कि पाबन्दे नशेमन हो गईं

मेरे हाशियए ख़्याल मे भी यह बात न थी कि अब से पहले जो किताबें मेरे मुताला से गुज़र गई हैं उनकी बाज़ ख़त कशीदा इबारतें तरतीब पाकर किसी किताब की शक्ल इख़्तियार कर लेंगी।

सच जानिये अभी सन् 1957 ई० की बात है, मैं हस्बे मामूल मुल्क के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में तक़रीरी प्रोग्राम पर गया और मामूलन अख़्बार व रसाइल मेरी नज़र से गुज़रते रहे। लेकिन "इन दिनों" उर्दू अख़्बारात में बाज़ ऐसे कालम देखे जिनमें इस्माईली तहरीक को नये रंग व रौग़न से पेश किया जा रहा था जिसके पसे पर्दा जमीअतुल उलमाए हिन्द की तन्ज़ीमी साज़िश काम कर रही थी, मुझे वैसे भी अख़्बार बीनी से एक गूना तअल्लुक़ है मगर "इन दिनों" अख़्बारात से यूं भी दिलचस्पी बढ़ गई कि शायद आज़ादीए हिन्द के ताजदारे अव्वल हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी रहमतुल्लाह अलैह का भी कारनामए हयात पेश किया जाये मगर अफ़सोस कि [illegible] रोज़ा (दिल्ली) के इलावा किसी भी अख़्बार ने इस मर्दे मुजाहिद का कहीं नाम तक न लिया जिसका नाम फ़ज़्ले हक़ है, जो सही मानों में सन् 1857 की [illegible] जंग का [illegible] रहनुमा है, जिसने अंग्रेज़ी [illegible] को कुचलने के लिए सर धड़ की बाज़ी लगाई और अंग्रेज़ों के ज़ुल्म व [illegible] का निशाना बन कर जज़ीरए अन्डोमान की ज़हरीली फ़िज़ाओं में हमेशा के लिए [illegible] गया। जिस की क़ब्र पर आज भी रहमतों के फूल बरस रहे हैं।

आसमां तेरी लहद पर शबनम अफ़शानी करे
सब्ज़ए नौरस्ता उस घर की निगहबानी करे

[illegible] के लिए तो इस मर्दे मुजाहिद की क़ब्र जज़ीरए अन्डोमान में है मगर हज़रत [illegible] की सरफ़रोशी व [illegible] आज भी अहले इश्क़ व मुहब्बत से यह [illegible] रही है।

[illegible] तुरबते मा दर ज़मीं मजो
[illegible] आरिफ़ मज़ारे मा

सोचिये तो सही यह तारीख़ का कैसा दिलदोज़ सानिहा है कि आज़ादीए हिन्द के हीरो को गुमनामी के पर्दे में छुपाया जा रहा है और अंग्रेज़ बहादुर के ज़र ख़रीद ग़ुलामों की पेशानी पर शहीदे वतन व सिपह सालारे आज़म का लेबल चस्पाँ किया जा रहा है।

अद्ल व इन्साफ़ के गले पर छुरी चलते देख कर मेरे जिस्म की एक एक रग काँप उठी। दिल व दिमाग़ की ग़ैर मुतहर्रिक दुनिया में एक तलातुम सा पैदा हुआ। यहां तक कि असल वाक़िआत ज़ेहन व दिमाग़ के झरोंको से सर गोशी करने लगे। अब मुझे भी फ़िक्र व ख़्याल की दुनिया से बाहर निकल कर अज़्मे महकम की जगह लेनी पड़ी। चुनान्चे इस इरादा से क़लम उठाया कि इस्माईली तहरीक और हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तहरीके जिहाद का मुवाज़ना (तुलना) किया जाये ताकि हक़ीक़त बे निक़ाब होकर सामने आ जाए।

कुछ बरस पहले हज़रत अल्लामा के हालाते ज़िन्दगी का मुताला कर चुका था जो बातें ज़ेहन के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में मुन्तशिर थीं, अब वह एक के बाद दूसरी सतहे ज़ेहन पर उभरती गईं। ऐसा महसूस हुआ कि ज़ेहन ने आज ही के लिए उन्हें ख़ामोशी से सुला दिया था और अब ज़ेहन की एक हरकत पर तमाम वाक़िआत उठ खड़े हुए। गोया मुद्दतों के थके हुए मुसाफ़िर जज़्बए मुसाबक़त की रौ में यह शेअ्र गुनगुनाते हुए मन्ज़िल की तलाश के लिए अपनी अपनी राह लग गये।

यह बज़्मे मय है याँ कोताह दस्ती में है महरूमी
जो बढ़ कर ख़ुद उठा ले हाथ में मीना उसी का है

अब दिमाग़ में वह पहला सुकून न रहा बल्कि ज़ेहन वाक़िआत व हालात की आमद व रफ़्त का आमाजगाह बन गया मुद्दतों के सोये हुए परिन्द बेदार हो चुके थे। अन्देशा था कि कहीं क़फ़स की तीलियों से बाहर हुए तो उनकी गिरिफ़्त दुशवार हो जायेगी। इस लिए ज़ेहन कहता गया और बातें नोके क़लम पर आती गईं और जहां कहीं भी इश्तेबाह पैदा हुआ किताबों की मदद से उन मक़ामात की सेहत कर ली गई। और साथ ही साथ हवाला भी दर्ज कर दिया गया ताकि किताब अपना वज़न बाक़ी रख सके।

मैंने ज़ेरे नज़र किताब में इस अमर का एहतेमाम व इन्तेज़ाम किया है कि सुन्नी मकतबाए फ़िक्र की कोई भी किताब हवाला में न पेश की जाये ताकि किसी इबारत

को यह कह कर मजरूह न कर दिया जाये कि यह तो सुन्नी हज़रात का हम पर इफ़्तेरा व बुहतान है चूंकि उलमाए अहले सुन्नत की किताबों के साथ उमूमी तौर पर यही मुआनिदाना और ग़ैर संजीदा रविश इख़्तियार की जाती है। इस लिए चार व नाचार मुझे नई राह इख़्तियार करनी पड़ी गोया यह एक ऐसा आईना है जिस में देवबन्दियत व वहाबियत के सही ख़द्दो ख़ाल नज़र आयेंगे इस लिए मैं यह कहने में हक़ बजानिब हूं कि-

उन्हीं की महफ़िल संवारता हूं चराग़ मेरा है रात उनकी
उन्हीं के मतलब की कह रहा हूं ज़बान मेरी है बात उनकी

ख़ून के आंसू अपनी नौइयत की पहली किताब होगी जिसकी किसी इबारत पर हज़राते देवबन्द यह कह कर दामन कशाँ न गुज़र सकेंगे कि यह तो ग़ैरों के घर की बात है इसमें जो कुछ है उन्हीं के घर का है या फिर ऐसे हज़रात का नाम लिया गया है जो सुन्नी देवबन्दी इख़्तिलाफ़ात से किसी हद तक दूर रहे मसलन मैंने किसी मौक़ा पर डा॰ इक़बाल का यह शेअ्र पेश किया है-

अजम हनूज़ न दानन्द रमूज़े दीं वरना
ज़े देवबन्द हुसैन अहमद ईं चे बुलअजबी अस्त

मौलवी हुसैन अहमद के बारे में डा॰ इक़बाल की राय पर यह जिरह व तन्क़ीद नहीं की जा सकती कि डा॰ इक़बाल बरेलवी थे। यह एक ग़ैर जानिबदार की राय है हां यह हो सकता है कि हज़राते देवबन्द बज़ोमे ख़्वेश डा॰ इक़बाल को जाहिले मुतलक़ क़रार देकर इस शेअ्र को लग़्व व बे मानी क़रार दें जैसा कि उलमाए देवबन्द का आबाई दस्तूर है। यह बहस तफ़सीली तौर पर अगले सफ़हात पर आयेगी। इस मक़ाम पर मक़सूदे निगारिश इसके सिवा कुछ भी नहीं कि ज़ेरे नज़र किताब उलमाए देवबन्द के लिट्रेचर का ऐसा ख़ुलासा और निचोड़ है जिससे हज़राते देवबन्द दिन के उजाले ही में नहीं बल्कि रात की तारीकी में भी पहचाने जा सकेंगे।

अब ज़रा उन किताबों की मुख़्तसर फ़ेहरिस्त मुलाहज़ा फ़रमाइये जो किताबें व अख़बार व रसाइल 'ख़ून के आंसू' के माख़ज़ हैं।

(1) हयाते तय्यिबा (2) तवारीख़े अजीबा (3) सीरते सय्यद अहमद (4) हयाते वली (5) हयाते क़ासिम (6) अशरफ़ुस्सवानेह (7) हकीमुल उम्मत (8) जामेउल मुजद्दिदीन

(9) हसनुल अज़ीज़ (10) अलइमदाद (11) हिफ़्ज़ुलईमान (12) बस्तुल बनान (13) तग़य्युरुलउनवान (14) अश्शेहाबुस्साक़िब (15) अशद्दुल अज़ाब (16) सैफ़े यमानी (17) मुख़्तसर सीरते नबविया (18) तक़्वीयतुलईमान (19) अलमुहन्नद (20) सिराते मुस्तक़ीम (21) तहज़ीरुन्नास (22) नक़्शे हयात (23) मकतूबाते शैख़ (24) फ़तावा देवबन्द का तहक़ीक़ी जाइज़ा (25) मसलए क़ौमियत (26) अलजिरहु अला अबी हनीफ़ा (27) बाग़ीए हिन्दुस्तान (28) हिन्दुस्तान में मुसलमानों का निज़ामे तालीम व तरबियत (29) मल.फ़ूज़ाते अशर.फ़ुल उलूम (30) नज़रे अक़ीदत (31) मुकम्मल कार्रवाई जमीअतुल उलमाए हिन्द (32) तज़्किरतुर्रशीद (33) फ़तावा रशीदिया (34) मक़ालाते अकाबिरे दारुल उलूम देवबन्द (35) अरवाहे सलासा (36) नुसरते आसमानी (37) मुफ़्ती साहब देवबन्द और ग़रीब पेशावर अक़्वाम (38) तफ़्सीरे हक़्क़ानी (39) आईनए सदाक़त (40) मकालमतुस्सद्रैन (41) फ़ैसला हफ़्त मसला (42) नशरुत्तीब (43) अख़्बारुल अख़ियार (44) तजल्लीए देवबन्द (45) ज़िन्दगीए रामपुर (46) फ़ारान कराची (47) दावत दिल्ली (48) शैख़ुल इस्लाम नम्बर (49) अल.फ़ुरक़ान लखनऊ (50) बुरहान दिल्ली (51) अलइन्साफ़ दिल्ली (52) तर्जमान लाहौर।

इनके इलावा भी बाज़ दूसरी किताबों से मवाद फ़राहम किया गया है जिनका ज़िक्र तफ़सीले अबस के सिवा कुछ भी नहीं इस लिए उनके तज़्किरे से सर्फ़े नज़र करता हूं।

इस मक़ाम पर बड़ी नाहक़ शनासी होगी अगर अपने उन बुज़ुर्गों और दोस्तों का शुक्रिया न अदा करूं जिन्होंने फ़राहमीए कुतुब में मेरा हाथ बटाया।

(1) उस्तादे मुहतरम मुजाहिदे मिल्लत हज़रत मौलाना अलहाज मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला सदर आल इण्डिया तबलीग़े सीरत रईसे आज़म उड़ीसा (2) हज़रत मौलाना सय्यद अब्दुल हक़ साहब ख़तीब धूराजी (3) हज़रत मौलाना सिराजुलहुदा साहब गयावी (4) हज़रत मौलाना क़ाज़ी सय्यद ग़ुलाम मुस्तफ़ा मियाँ साहब क़ादरी, कलकत्ता (5) हज़रत मौलाना अब्दुल वहीद साहब बनारस (6) हज़रत मौलाना बाक़र अली ख़ाँ साहब (7) आलीजनाब डा॰ अलीमुद्दीन साहब रईसे कलकत्ता (8) हज़रत मौलाना अलहाज नईमुल्लाह ख़ाँ साहब।

मैं इन तमाम ही हज़रात का ममनूने करम व सिपास गुज़ार हूं।

जैसा कि मैंने अब से पहले अर्ज़ किया कि इस्माईली नाम निहाद तहरीक और

हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तहरीर्दे जिहाद के मुवाज़ना के लिए क़लम उठाया था। ख़्याल था चन्द सफ़हात पर यह उनवान ख़त्म हो जायेगा। मगर–

ख़त लिखते लिखते शौक़ ने दफ़्तर किये रवाँ
इफ़राते इश्तियाक़ ने आख़िर बढ़ाई बात

के मुताबिक़ बात बढ़ गई। यहां तक कि कई सौ सफ़हे की एक ज़ख़ीम किताब हो गई। किताब के हजम की मौज़ूनियत भी मन्ज़ूरे ख़ातिर थी इस लिए हज़रत अल्लामा की सवानेह हयात का तफ़सीली मज़मून अपनी ज़ेरे तालीफ़ किताब 'दो मुजाहिद' में मुन्तक़िल कर दिया जिसमें हज़रत अल्लामा और मुजाहिदे मिल्लत मौलाना मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला की मुकम्मल सवानेह हयात होंगी।

और शातिमाने रसूल की कई सौ किताबों की ज़हर आलूद इबारतें पेशे नज़र किताब के दामन पर इस तरह समेट दी गईं जैसे किसी बेगुनाह के दामन पर ख़ून की छींटें क़ातिल की सफ़्फ़ाकियों का पता दे रही हैं।

हवालाजात में सेहत का पूरा पूरा ख़्याल रखा गया है और इबारात का वही मफ़हूम लिया गया है जो सियाक़ व सिबाक़ से किसी इबारत का मफ़हूम मुतअय्यन किया जा सकता है। यह किताब हज़राते देवबन्द के हक़ में लम्हए फ़िक्रिया की हैसियत रखती है और अपनों के लिए मशअ़ले राह या निशाने मील का काम देगी।

ज़ेरे नज़र किताब न तो अफ़साना है न नावेल और न ही इसका मुअल्लिफ़ अफ़साना नवीस है न नावेल निगार इस किताब में न तो ज़बान का चटख़ारा है न अन्दाज़ का गुले रवाँ। इज़हारे ख़्याल में न तो शोख़ीए तहरीर की सहर तराज़ी ज़ाहिर हो सकी और न ही जिद्दत तराज़ क़लम की फ़ुसूं कारी। यह महफ़िले ऐश व नशात नहीं बल्कि यह मजलिसे आहो बुका है। गाने वाले की नज़र आवाज़ के उतार चढ़ाव और अल्फ़ाज़ के निशस्त व बरख़ास्त पर होती है मगर एक दिल जले की पुकार तो ग़लत क़िस्म अल्फ़ाज़ भी नहीं होती चे जाए कि वह लफ़्ज़ों के हेर फेर में उलझे। वह रोता है और धाड़ें मार मार कर रोता है। रोने वाला इज़हारे मुद्दआ में नुमाइशी लफ़्ज़ों का मोहताज नहीं होता बल्कि कभी दामन पर टपकते हुए आँसू तर्जुमाने दिल होते हैं और कभी उसकी आहो बुका उसके क़ल्ब व जिगर की टीस का पता देते हैं।

मैं ख़ुद से नहीं रोया रुलाया गया हूं, मैं ख़ुद से नहीं तड़पा तड़पाया गया हूं। मैं एक मज़लूम मिल्लत रसीदा हूं, मुझे नहीं मेरे प्यारे महबूब को गालियाँ दी गई हैं। मैं दुनिया नहीं माफ़ौक़ किरदगार की बारगाहे बेकस पनाह में दरीदा देहनी व

गुस्ताख़ी की गई है। एक दो नहीं मुतअ़द्दिद रुसवाए ज़माना किताबें लिखी गईं, वह भी ऐसा महबूब जिब्रील जिसके दर के पहरादार हों जो नबुव्वत व रिसालत की मस्नदे रफ़ीअ़ पर फ़ाइज़ हो, जिस के सदक़े अम्बिया व रुसुल को नबुव्वत व रिसालत मिली हो जिसके वसीले कायनाते आलम वजूद में आई हो। क़ुरआन जिसको यासीन व ताहा, मुज़्ज़म्मिल व मुद्दस्सिर के ख़िताबात से नवाज़े उसी ज़ाते सुतूदा सिफ़ात को चमार से ज़्यादा ज़लील और ज़र्रए नाचीज़ से कमतर कहा गया। ऐसी ग़ारतगर ईमान इबारतों पर चश्मे मोमिन ख़ून के आँसू न रोये तो क्या करे। हिफ़्ज़ुल ईमान, बहिश्ती ज़ेवर, तक़वीयतुल ईमान, तहज़ीरुन्नास, अश्शेहाबुस्साक़िब, सिराते मुस्तक़ीम जैसी कुफ़्री गन्दी फूहड़ किताबें देख कर ईमान का तक़ाज़ा है कि इस पर नफ़रीं व मलामत की जाये।

मगर इस चीरा दस्ती व दीदा दिलेरी का क्या इलाज कि उनकी कुफ़्री किताबों पर सदाए एहतेजाज बुलन्द करने वालों को फ़सादी और काफ़िर कहा जाता है।

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम
तुम क़त्ल भी करते हो तो चर्चा नहीं होता

अपनों के भेस में कुछ बेगानों ने ज़हर आलूद तीर बरसाये हैं जिस पर उलमाए अहले सुन्नत का कलेजा छलनी हो गया और उनकी ईमानी रूह तड़प रही है। हम अपने नबी के एक वफ़ादार ग़ुलाम हैं, इन इबारतों पर मुत्तलअ़ होने के बावजूद अगर ख़ामोश रह जाते तो हमारे ईमान की कमज़ोरी होती और हम उस अहकमुल हाकिमीन की बारगाहे अदालत में उसके इस सवाल का क्या जवाब देते कि तुमने मेरे महबूब के दुश्मनों के साथ क्या कुछ किया ?

बाग़ीए नबुव्वत और शातिमे रसूल की नापाक व गन्दी इबारात पर हरफ़गीर होना ऐब नहीं बल्कि उस पर ख़ामोश रह जाना तौहीने मुहब्बत का मुजरिम क़रार देगी।

इमरानियात व इक़्तेसादियात, सियासियात व लिसानियात पर तो आज दुनिया के बहुत से अहले क़लम इज़हारे ख़्याल कर रहे हैं मगर बताओ इस ख़ाकदाने गीती में वह कौन सी जमाअ़त है जिसको दीवानए रसूल कहा जाता हो और जिस जमाअत की तक़रीर और तहरीर का मतमए नज़र अ़ज़मते रिसालत और वक़ारे नबुव्वत की परचम कुशाई के सिवा कुछ न हो। बिहम्दिल्लाह वह अहले सुन्नत व जमाअत

है जो पूरी एतेदाल पसन्दी से मिल्लते इस्लामिया को तौहीद व रिसालत का दर्स दे रहे हैं जिनकी तक़रीर व तहरीर इफ़रात व तफ़रीत से यकसर ख़ाली हैं मुहब्बत में न तो इस क़दर ग़ाली हैं कि रिसालत का डाँडा तौहीद से मिला दें और न ही बारगाहे नबुव्वत के बे अदब व गुस्ताख़ हैं कि नबीए मुहतरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपने जैसा बशर या बड़े भाई का मर्तबा दें या अलअयाज़ बिल्लाह आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को चमार से ज़्यादा ज़लील और ज़र्रए नाचीज़ से कमतर क़रार दें जैसा कि उलमाए देवबन्द की रुसवाए ज़माना किताबों में मौजूद है।

उलमाए अहले सुन्नत की एक मोअ्तदिल पालीसी है न तो वह ख़ालिक़ को मख़्लूक़ का मर्तबा देते हैं और न ही किसी मख़्लूक़ को ख़ालिक़ का हमसर समझते हैं। कोई मख़्लूक़ फ़ज़्ल व कमाल में कितनी ही आला सतह पर क्यों न हो बहरहाल वह बन्दा है मख़्लूक़ है वह मअ्बूद नहीं और ख़ालिक़ नहीं।

उलमाए अहले सुन्नत के मिशन में आवारगी और कज रवी नहीं, उनकी मुहब्बत का एक महवर है और वह सरकारे अबद क़रार की ज़ाते सुतूदा सिफ़ात है जिनकी ज़ात अल्लाह तआला के बाद सब से ज़्यादा बुज़ुर्ग व बरतर है। हम उनके वफ़ादार गुलाम हैं उन्हीं के वसीला से खाते हैं और उन्हीं का गाते हैं, इस लिए हमारा कहना यह है-

मा क़िस्सए सिकन्दरो दारा न ख़्वाँदह एम
अज़ मा बजुज़ हिकायते मेहरो वफ़ा मपुर्स

उलमाए देवबन्द की अंग्रेज़ दोस्ती
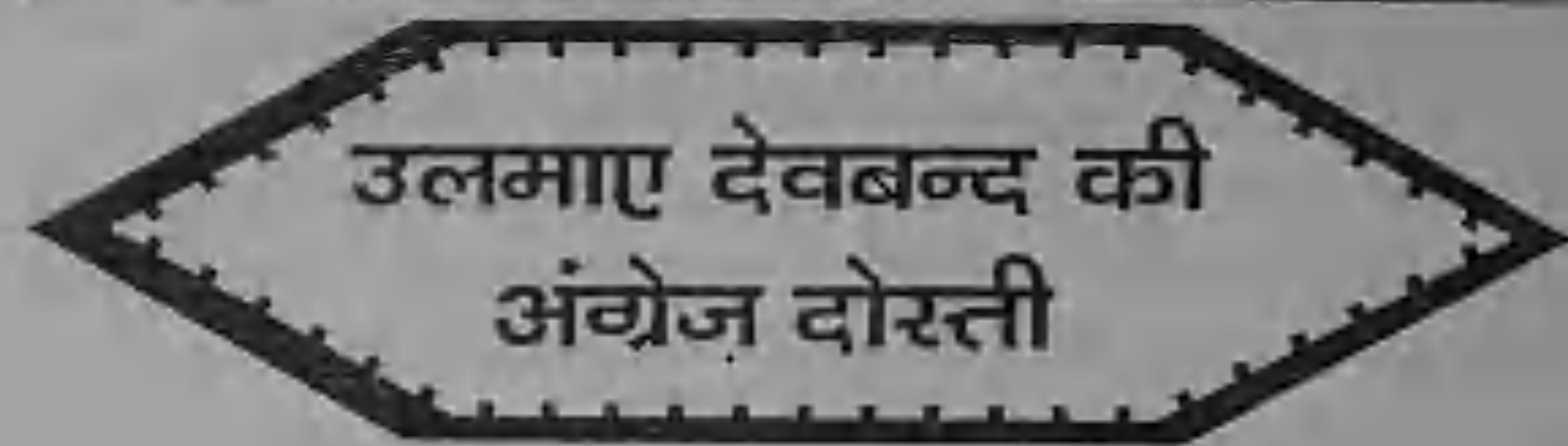
यह कोई नई बात नहीं है-

"होती आई है कि अच्छों को बुरा कहते हैं" के मुताबिक़ तक़रीबन हर सदी व हर दौर में उलमाए हक़ पर उलमाए सू (दुनियादार) और दूसरे बातिल फ़िरक़े ने कीचड़ उछालने की कोशिश की और नित नये तरीक़ों से इन्हें बदनाम करने के दरपै रहे मगर हक़ व सदाक़त के हामिलीन शर-पसन्दी व इश्तेआल अंगेज़ी की बजाए ख़ामोशी से यही कहते रहे-

इधर आओ प्यारे हुनर आज़मायें
तु तीर आज़मा हम जिगर आज़मायें

चुनान्चे भारत की ज़मीन भी इसी तारीख़ को दोहराती रही। सन् 1857 ई० के ग़दर ने न सिर्फ़ बिसाते सियासत को पलट दिया। बल्कि सल्तनते मुग़लिया के ज़वाल और अंग्रेज़ी सामराजियत को इस्तिक़लाल व इस्तिहकाम की हद तक पहुंचा दिया। अंग्रेज़ हिन्दुस्तान में अफ़यून की गोली खाकर न आये थे बल्कि अक़्ल व दानिश की ऐनक उनकी आंखों पर लगी थी। एक प्रदेसी और सात समुन्द्र पार क़ौम को हिन्दुस्तानी बाशिन्दों पर राज करना था इस लिए फ़न्काराना होशियारियों से काम लेते हुए उसने भारत की मुस्लिम सियासत पर अपनी निगाह जमाई। चूंकि तख़्त व ताज मुसलमानों ही से लिया गया था। इस लिए सफ़ेद चमड़े वालों को मुस्लिम सियासत ही से अन्देशा था। चुनान्चे अंग्रेज़ इस टोह में पड़ गए कि हिन्दुस्तानी मुसलमानों की बाग डोर किस के हाथ है और इस सुराग़ रिसानी (खोज लगाने का फ़न) में अपनी इन्तेहाई अच्छी तदबीर से वह इस मन्ज़िल पर पहुंच गए कि गए गुज़रे ज़माने में भी यहां की मुस्लिम अक्सरियत उलमा और सूफ़िया की अक़ीदतमन्द है। अब यह बात ज़रूरी थी कि भारत के उलमा व मशाइख़ के तबक़ा की छान बीन की जाये और अमीरे कारवाँ के कांधे पर बन्दूक़ रख कर गोली चलाई जाये।

अंग्रेज़ खुद सामने आते हुए घबराते थे। चूंकि अभी अभी मुसलमानों के खून से होली खेल चुके थे, अभी तो उनके हाथों की लाली और दामन की सुर्खी भी न गई थी वह कैसे मुमकिन था कि वह बे निकाब सामने आ जाते। इसलिए अब उन्हें इस्लामी सियासत के खिलाफ़ जो कुछ करना था वह जुब्बा व दस्तार की शक्ल में करना था (शिकार तो करना था मगर टट्टी (दीवार) की आड़ से) गोया ऐसे सय्याद की तलाश थी जो इस राह का आज़माया हुआ हो, चुनान्चे अंग्रेज़ को बन्दूक रखने के लिए कांधे की ज़रूरत थी।

यहां तक कि यह बात भी बे-निकाब होकर रही कि इस वक्त इल्मी फ़ज़्ली कमाल के दो इदारे हैं जिनका सिक्का हिन्दुस्तान में चल रहा है, एक उनमें वलीयुल्लाही खानदान है जो मन्कूलात में अहले इल्मो अदब से ख़िराजे अक़ीदत हासिल कर चुका है और दूसरा ख़ानदाने हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी और उनके मुत्तबेईन (अनुयायी) या उनके हम ख़्याल मुआसिरीन का है जो मअ़क़ूलात में अपने फ़ज़्लो कमाल के सबब हिन्दुस्तान की ज़मीन पर बादल बन कर छाया है। गोया यह तबक़ा दीनियात को मन्तिक़ व फ़लसफ़ा की भी ऐनक लगा कर देखने का आदी था। यानी-

"दर कफ़े जामे शरीअत दर कफ़े सनदाने इश्क़" का हामिल था।

मगर इन दोनों ख़ानदानों में एक नुमायां फ़र्क़ यह था कि वलीयुल्लाही ख़ानदान उस वक्त सुबह के चराग़ की तरह टिमटिमा रहा था। गोया अहदे रफ़्ता (गुज़रा ज़माना) की एक यादगार था अब उनमें पहले जैसा कोई साहबे फ़ज़्लो कमाल न था और जो इल्म वाले और वजाहत वाले थे भी वह अंग्रेज़ों के हाथ कठपुतली न बन सकते थे। इसलिए ले दे के मौलवी इस्माईल देहलवी पर अंग्रेज़ों की निगाह पड़ी जो बड़े ख़ानदान की औलाद होने की वजह से पूजे जा रहे थे और दूसरी तरफ़ अल्लामा फ़ज़्ले हक़ और उनके मुत्तबेईन आसमाने इल्मो अदब पर कहकशां का जमाल बन कर चमक रहे थे।

1. अंग्रेज़ हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की पेशानी पर अपना मुस्तक़बिल पढ़ रहे थे कि यही वह निडर व बेबाक मर्द मुजाहिद है जिसके फ़तवे से हिन्दुस्तान की ज़मीन पर ज़लज़ला आएगा और अंग्रेज़ी हुकूमत यकलख़्त कांप उठेगी जिसकी पादाश में उसे क़ैदो बन्द की सख़्तियां भी झेलनी पड़ेंगी और जज़ीरए अन्डोमान की मस्मूम फ़ज़ाओं में झुलसना भी होगा मगर ग़ैरत व ख़ुद्दारी का यह

पुतला अपना फ़तवा वापस लेने पर आमादा न होगा। चुनान्चे अहले इल्म पर यह बात रोज़े रौशन की तरह ज़ाहिर है कि जज़ीरए अन्डोमान में जिस वक्त हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ अपने बिस्तरे मौत पर थे, उठने, बैठने करवट बदलने से मजबूर थे बग़ैर किसी के सहारे बैठ न सकते थे। ज़िन्दगी का आख़िरी वक्त था, मौत क़दम चूमती हुई आ रही थी और हयात बनाये लेकर रुख़सत हो रही थी ज़िन्दगी के ऐसे नाज़ुक मरहला पर आपकी ग़ैरते ईमानी का ऐसा संगीन इम्तेहान लिया गया जिसकी मिसाल शाज़ो नादिर ही कहीं मिल सकेगी। चुनान्चे इसी कर्ब व इज़्तिराब की हालत में एक अंग्रेज़ अफ़सर आया और उसने हज़रत अल्लामा से कहा। अगर आप महज़ इतना फ़रमा दें कि मुझे अपने इस फ़तवे पर अफ़सोस है जो मैंने अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद का फ़तवा दिया है तो मैं अभी अभी आपको रिहा कर देता हूं और अपने ज़ेरे इन्तेज़ाम आपके बाल बच्चों में आपको पहुंचाये देता हूं।

बिस्तरे मर्ग का वह नहीफ़ व नातवां जो बैठ कर दवा पीने से मअ़ज़ूर (मजबूर) था इतना सुनते ही गरजदार आवाज़ के साथ उठ कर बैठ गया। और अंग्रेज़ अफ़सर से फ़रमाया कि मुझे ऐसी एक नहीं हज़ार ज़िन्दगी दी जाये तो फ़ज़्ले हक़ यही कहेगा कि अंग्रेज़ों पर जिहाद फ़र्ज़ है।

टीपू सुल्तान ने कितनी उम्दा बात कही कि "लोमड़ी की सौ साला ज़िन्दगी से शेर की एक दिन की ज़िन्दगी बेहतर है।" परवरदिगारे आलम हज़रत अल्लामा की क़ब्र को रहमतों के फूल से भर दे जिसने अपनी आने वाली नस्ल के लिए मौत व ज़िन्दगी की एक कुशादा राह पेश कर दी। इस लिए अंग्रेज़ों के लिए यह राह तो मायूस करने वाली थी कि वह हज़रत अल्लामा या उनके शाहज़ादों की तरफ़ दोस्ती का हाथ बढ़ाते या क़ौमी ग़द्दारी के लिए ऐसे बेदार मग़ज़ व बा ग़ैरत से रस्मो राह की पेशकश करते।

इस लिए अब अंग्रेज़ों के सामने सिर्फ़ एक ही दरवाज़ा था और वह मौलवी इस्माई देहलवी का ऐवाने जिदाल (दर) था।

2. दूसरी वजह यह थी कि अंग्रेज़ मौलवी इस्माईल के ढोल का पोल भी जानते थे। इसलिए उन्हें और भी जुरअत हुई कि ऐसे दुनिया तलब व इक़्तेदार पसन्द को बहलाना फुसलाना कुछ दुशवार नहीं। जैसा कि पहले अर्ज़ कर चुका हूं कि मौलवी इस्माईल के इल्म का लोहा मुसल्लम न था बल्कि उनकी तही दस्ती व बेमाइगी पर

उनकी इल्म मुत्तलक़ थे, महज़ बड़े बाप के औलाद होने की लाज रखी जा रही थी।

जैसा कि मैं आगे चल कर इस हक़ीक़त को बे-नक़ाब करूंगा कि ख़ुद उलमाए देवबन्द ने मौलवी इस्माईल को जाहिल, मुलहिद, ज़िन्दीक़ और दीन से बे-बहरा होने का फ़तवा दिया है।

3. अंग्रेज़ को इस इरादे पर उकसाने के लिए तीसरी वजह यह भी थी कि हज़रत अल्लामा और मौलवी इस्माईल देहलवी के दर्मियान मसलए इम्तेनाए नज़ीर पर झड़प भी हो चुकी थी जिस पर मौलवी इस्माईल देहलवी को जामा मस्जिद दिल्ली की भरी महफ़िल में शर्मिन्दगी व नदामत उठानी पड़ी थी, इसलिए मौलवी इस्माईल और उनके कीना परवर मुत्तबेईन के दिल में हज़रत अल्लामा और उनके मुख़लिस मुत्तबेईन की तरफ़ से इन्तेक़ाम की आग भड़क रही थी, यह लोग किसी ऐसे मौक़ा के इन्तेज़ार में थे जिसमें दिल की भड़ास निकाली जा सके गोया अंग्रेज़ और मौलवी इस्माईल के दर्मियान यह बात क़दरे मुश्तरक थी कि हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ को जड़ से उखाड़ कर फेंक दिया जाये-

दोनों तरफ़ थी आग बराबर लगी हुई

यही वह चन्द वजहें हैं जिनकी बिना पर मौलवी इस्माईल देहलवी और अंग्रेज़ बहादुर के दर्मियान दोस्ताना मुआहिदा हुआ और उस जमाअत ने अपने कांधे को बन्दूक़ रखने के लिए पेश कर दिया।

अब मुसलमानों का दीन व ईमान लूटने के लिए अंग्रेज़ बहादुर को चोर दरवाज़ा मिल चुका था। चुनान्चे अब वह मुसलमानों के सामने कोट, पतलून, टाई और हैट लगा कर न आता बल्कि उन्हीं नाम निहाद उलमा के जुब्बा व दस्तार में छुप कर आता। अब हिन्दुस्तान की ज़मीन एक नई आफ़त का गहवारा बन चुकी थी। ज़बान उलमा की हिलती नज़र आती बोल सात समुन्द्र पार की होती। ग़रीब मुसलमान क्या जानता था कि यह जुब्बा व दस्तार वाले हमें दिन दहाड़े अंग्रेज़ों के हाथ बेच डालेंगे मगर हाए हसरत व नाकामी यह तो अंग्रेज़ से पहले ही सौदाबाज़ी कर चुके थे।

उलमाए अहले सुन्नत की जलन और उनसे कीना व हसद के सबब उलमाए देवबन्द के हर-गरोह के लोग ग्रामोफ़ोन का रिकार्ड बन चुके थे। अंग्रेज़ जो सिखा पढ़ा देते यह लोग वही बातें मुसलमानों के सामने उगल देते जैसा कि आज तक

होता चला आ रहा है।

लिल्लाह सोचिये और इन्साफ़ और दियानतदारी से काम लीजिये कि हिन्दी मुसलमानों पर किस क़दर जांच व आज़माइश का दौर था। मुसलमान अपने ही हाथ अपना घर फूंक रहा था-

ऐ चश्म शौला बार ज़रा देख तो सही
यह घर जो जल रहा है कहीं तेरा घर न हो

ऊपर की तम्हीद के बाद नतीजे में यह बात कही जा सकती है कि तबक़ए उलमा में एक गरोह उलमाए अहले सुन्नत का था जिनकी पेशानी पर अंग्रेज़ दुश्मनी का टीका लगा था और दूसरा ग्रुप उलमाए देवबन्द के इमाम व मुक़्तदा मौलवी इस्माईल का था जिनके माथे पर अंग्रेज़ दोस्ती का लेबल था। मौलवी इस्माईल को अंग्रेज़ दोस्ती पर इस क़दर ग़ुरूर व घमन्ड था कि जिस वक़्त अंग्रेज़ों के इशारे पर मैदाने जंग में जा रहे थे तो लखनऊ से गुज़रते वक़्त सूफ़ी अब्दुर्रहमान साहब लखनवी रहमतुल्लाह अलैह जो वजूदी' मसलक रखते थे और अपने वक़्त के ख़ुदा रसीदा बुज़ुर्ग और वलीए कामिल थे। उनसे मौलवी इस्माईल ने कहा जंग से वापस आकर मैं तुम्हारी ख़बर लूंगा।

सूफ़ी अब्दुर्रहमान साहब रहमतुल्लाह अलैह ने अपने कश्फ़ के ज़रीआ फ़रमाया यह तो उस वक़्त मुमकिन है जब कि जंग से तुम्हारी वापसी भी हो सके। नाज़िरीन समझ सकते हैं कि उस जंगे ज़रगरी में कौन सा जज़्बा कारफ़रमा था, एक आमी और सतही इन्सान भी यह नतीजा निकाल सकता है कि मौलवी इस्माईल उस जंग के बहाने अंग्रेज़ बहादुर की ख़ुशनूदी हासिल करके उलमाए अहले सुन्नत से बदला लेना चाहते थे। इस मक़ाम पर पहुंच कर अब मुनासिब यह है कि इस राय पर तारीख़ी शहादत की एक न मिटने वाली मुहर लगा दी जाये। बल्कि यह मामला तारीख़ ही के सुपुर्द कर दिया जाये और बात बहुत ही मुस्तनद हो जाएगी कि तारीख़ी शहादत के दोश बदोश उलमाए देवबन्द के बुज़ुर्गों की तहरीर सनद और हवाला में पेश कर दी जाये ताकि मजाले इन्कार न रह जाये।

1. हवाला तज़्किरतुर्रशीद हिस्सा अव्वल स 73 की एक इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये और अन्दाज़ा कीजिये कि उलमाए देवबन्द के बुज़ुर्गों का अंग्रेज़ से कैसा

1. "अनवारुर्रहमान लि-तनवीरिल् जिनान" तारीख़ी नाम "मख़्ज़ने असरारे हक़, मतबअ़ नवल किशोर- लखनऊ

गहरा तअल्लुक़ था।

> "बाग़ के सरों पर मौत खेल रही थी उन्होंने कम्पनी (अंग्रेज़ी हुकूमत) को अमन व आफ़ियत का ज़माना क़दर की निगाह से न देखा और अपनी रहम दिल गवर्नमेन्ट के सामने बग़ावत का अलम क़ाइम किया।"

फ़रमाईये क्या अब भी उलमाए देवबन्द को अंग्रेज़ दोस्ती से इन्कार हो सकता है? मौलवी रशीद अहमद गंगोही उलमाए देवबन्द के मुसल्लम मुक़्तदा व पेशवा हैं।

वह कम्पनी राज को रहमदिल गवर्नमेन्ट से तअबीर करते हैं। वह अंग्रेज़ जो मुसलमानों के ख़ून से होली खेल चुका हो। जिसने मुसलमानों की लाश दरख़्तों पर लटका कर चील कव्वों से नुचवाया हो, वही अंग्रेज़ जिसने मस्जिदों को घोड़ों की लीद से नापाक किया हो, हां हां वही अंग्रेज़ जिसने शाह ज़फ़र के नाश्ते में उनके लड़कों का सर भेजा हो। वह मौलवी रशीद अहमद गंगोही की नज़र में रहम दिल है और उसका ज़माना अमन व आफ़ियत का ज़माना है--- मज़कूरा बाला तहरीर का यह टुकड़ा भी क़ाबिले तवज्जोह है कि (बाग़ के सरों पर मौत खेल रही थी) इस से इशारा है हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ और उनके दूसरे साथियों की तरफ़ जिन लोगों ने अंग्रेज़ राज के ख़िलाफ़ बग़ावत का झन्डा बुलन्द किया था। यानी उस वक़्त दो ग्रुप था। एक मौलवी रशीद अहमद गंगोही का जो अंग्रेज़ी राज का गुन गा रहा था और उनका क़दम जमाने के लिए मुसलमानों को बहलावे दे रहा था। और दूसरा ग्रुप हज़रत अल्लामा का था जो अंग्रेजी साम्राजियत के ख़िलाफ़ जिहाद का नअरा बुलन्द कर रहा था।

सच जानिये तज़्किरतुर्रशीद की यह इबारत देख कर मुझ पर सक्ता तारी हो गया और मैं एक गहरी फ़िक्र में डूब गया कि या अल्लाह एक तरफ़ मुसलमानों का ख़ून पानी की तरह बह रहा था और दूसरी तरफ़ ऐसे नाम निहाद मौलवी थे जो अंग्रेज़ बहादुर को रहम दिल और उसके ज़ुल्म व सितम को अमन व आफ़ियत का नाम देकर मुसलमानों की इज़्ज़त व आबरू का जनाज़ा निकाल रहे थे-

क़यामत क्यों नहीं आती इलाही माजरा क्या है

क्या मिल्लते इस्लामिया की तारीख़ में इससे भी ज़्यादा कोई घिनौना और क़ौमी ग़द्दारी का बाब मिल सकता है? यह हैं उलमाए देवबन्द के वह अमीरे कारवाँ जो अंग्रेज़ बहादुर के हाथ काठ पुतली बन चुके थे। अभी क्या है-

आगे-आगे देखिये होता है क्या

2. तज़्किरतुर्रशीद हिस्सा अव्वल स़ 80 की दूसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये जो सरासर अंग्रेज़ दोस्ती में डूबी हुई है-

> "जब मैं हक़ीक़त में सरकार (ब्रिटिश) का फ़रमांबरदार हूं इन झूठ से मेरा बाल भी बीका न होगा और अगर मारा भी गया तो सरकार मालिक है उसे इख़्तियार है जो चाहे करे।"

अंग्रेज़ बहादुर के हुज़ूर फ़रमांबरदारी हो तो ऐसी हो। कहां ख़ुद-सरी व बे-ख़ौफ़ी का यह आलम कि जिस का नाम मुहम्मद या अली है वह किसी चीज़ का मुख़्तार नहीं और अंग्रेज के क़दम पर सर बसुजूद हुए तो इस बुरी तरह कि आप ही 'अन दाता' हैं, सरकार ही मालिक व मुख़्तार हैं जो चाहें सो करें, यह है रसूल दुश्मनी और अंग्रेज़ दोस्ती का जीता जागता मुज़ाहरा। यह अल्लाह तआला की लानत व फिटकार है कि मेरे मुस्तफ़ा की बारगाह से नाफ़रमानी करने वाला अंग्रेज़ को अपना मालिक व मुख़्तार बनाये और अंग्रेज़ के दामन में अपनी जिन्दगी की पनाह ढूंडे।

यह वह मक़ाम है जहां मौलवी रशीद अहमद गंगोही दर्से तौहीद भूल बैठे हैं। अल्लाह तआला की ज़ात से एतेमाद व तवक्कुल जाता रहा। हालांकि ऐसे मौक़ा पर एक मर्दे मोमिन की बोल यह होती है कि अंग्रेज अगर दुश्मन है तो हुआ करे, मैं अपने परवरदिगारे आलम का मुतीअ़ व फ़रमांबरदार हूं मर्ज़ीए मौला अज़ हमा औला (सब से बेहतर), जो मेरे रब को मन्ज़ूर होगा वही होगा। मेरा सरे नियाज़ रज़ाए इलाही पर झुका है। उसकी बारगाहे अहदियत से नाफ़रमानी की मजाल नहीं मगर जनाब गंगोही साहब फ़रमाते हैं। जी नहीं मैं तो ब्रिटिश गवर्नमेन्ट का फ़रमांबरदार हू और अंग्रेज़ बहादुर ही मेरे मालिक व मुख़्तार हैं। अब मेरी मौत व ज़िन्दगी तो उन्हीं के हाथ है।

अल्लाह तआला की बारगाहे बेकस पनाह को छोड़ कर अंग्रेज के दरवाज़े पर जिन्दगी की भीख मांगी जा रही है-

ग़ुलामी हो तो ऐसी हो वफ़ादारी हो तो ऐसी हो

ज़रा और आगे बढ़िये-

मुहब्बत के आगे मक़ाम और भी हैं

अब अंग्रेज़ आक़ा की तीसरी भारी भरकम शहादत मुलाहज़ा फ़रमाईये।

3. हवाला मुकालमतुस्सदरैन मुरत्तबा ताहिर अहमद क़ासमी मतबूआ रहमानी प्रेस महल्ला गढ़ैया दिल्ली 8

> "मौलाना हिफ़्ज़ुर्रहमान सेवहारवी नाज़िमे आला जमीअ़तुल उलमा हिन्द दिल्ली, ने कहा इलियास साहब रहमतुल्लाह अलैह की तबलीग़ी तहरीक को इब्तेदाअन हुकूमत की तरफ़ से बज़रीआ़ हाजी रशीद अहमद साहब कुछ रुपया मिलता था, फिर बन्द हो गया।"

अब बात छुपी न रह गई कि अंग्रेज़ बहादुर से उलमाए देवबन्द का किस क़दर गहरा सांठ गांठ था। इसी को कहते हैं "इक़रारी डिग्री"-सईयाँ भये कोतवाल अब डर काहे का? जबकि इलियासी (तबलीग़ी) जमाअ़त पर गवर्नमेन्ट का दस्ते करम है और गवर्नमेन्ट के सहारे यह फल फूल रही है तो फिर तबलीग़ी जमाअ़त वालों को मुल्क के गोशे गोशे में चना और सत्तू लेकर कलिमा और नमाज़ की दावत देने में रुपये पैसे की फ़िक्र क्योंकर लाहिक़ हो सकती है। मनी ऑर्डर तो घर पहुंचता ही जा रहा है मगर क़ौम को दिखाने और बहलावा देने के लिए सत्तू की गठरी बग़ल में दबी है। "हाथी के दांत दिखाने के और होते हैं खाने के और।"

किसी ऐरे ग़ैरे का नहीं बल्कि मौलवी हिफ़्ज़ुर्रहमान नाज़िमे जमीअ़तुल उलमा हिन्द जैसे ज़िम्मेदार का इक़रार है कि मौलाना इलियास को तबलीग़ी तहरीक के लिए गवर्नमेन्ट की तरफ़ से रुपया मिलता था।

अब तो नाज़िरीन तबलीग़ी जमाअ़त की हक़ीक़त समझ चुके होंगे कि इस तगो दौ और दौड़ धूप में किस की मर्ज़ी काम कर रही है। भला बताईये तो सही अंग्रेज़ जैसे इस्लाम और मुसलमान दुश्मन को मुहम्मदी कलिमा और नमाज़ की नश्रो इशाअ़त से क्या तअ़ल्लुक़?

कुछ तो है जिसकी पर्दा दारी है

कलिमा और नमाज़ के नाम पर जो गली गली की ख़ाक छानी जा रही है उसमें गवर्नमेन्ट की रज़ाजूई और ख़ुशनूदी हासिल करनी है।

किसी न किसी मामला पर दोनों में मुआहिदा हो चुका है। गवर्नमेन्ट इसलिए रुपया देती है कि कलिमा और नमाज़ की दावत पर तुम मुसलमानों की रहनुमाई और पेशवाई करो। जब मुसलमान तुम्हें अपना रहनुमा और पेशवा मान लेगा तो कल हमारे लिए इलेक्शन में तुम्हारा एक इशारा काफ़ी होगा। जिधर तुम्हारा वोट गिरेगा उसी तरफ़ तबलीग़ी जमाअ़त का झुकाव होगा। मुसलमानों में तुम्हारी डिक्टेटरी क़ाइम रहे और तुम्हारे वास्ते से मुसलमानों का वोट हमें मिलता रहे। और मुआहिदा की दूसरी वजह यह भी हो सकती है कि तुम मुझ से रुपया लेकर मुसलमानों की क़ियादत अपने हाथ में ले लो और जब उनपर क़ाबू पा जाओ तो अपने तक़द्दुस व इत्तेबाअ़े शरीअ़त का सहारा लेकर मुसलमानों में नये नये अक़ीदे फैलाओ। औलिया अल्लाह की क़ब्र पर जाने वालों को बिदअ़ती कहना। या रसूलल्लाह कहने वालों को मुशरिक कहना। मीलाद व क़ियाम करने वालों पर भपती कसना, उर्स व फ़ातिहा करने वालों को मुंह चिढ़ाना। तो मुसलमानों में ख़ुद ही फूट पड़ जाएगी इस तरह से हम तुम दोनों का मक़सद हल हो जाएगा। तुम एक टोली के क़ाइद हो जाओगे और मुसलमानों का इफ़्तेराक़ व इन्तेशार देख कर हम चैन व सुकून की बांसुरी बजायेंगे। यह है तबलीग़ी जमाअ़त का पस मन्ज़र और उसकी दौड़ धूप का नतीजा।

अब दो क़दम और भी मेरे साथ आगे बढ़िये और देखिये तो सही-

पहुंचा कहां से है कहां सिलसिलए दराज़े इश्क़

चलिये ज़रा थाना भवन की सैर करें और मौलाना अशरफ़ अली थानवी की अंग्रेज़ दोस्ती का छुपा हुआ राज़ मालूम करें।

4. उलमाए देवबन्द की अंग्रेज़ दोस्ती पर चौथी शहादत-

हवाला मुकालमतुस्सद्रैन स॰ 10-11 की इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये और मौलाना थानवी के अंग्रेज़ बहादुर से क़ल्बी तअ़ल्लुक़ात पर आफ़रीं सद आफ़रीं कहिये।

> "मौलवी शब्बीर अहमद साहब देवबन्दी सदर जमीअ़तुल इस्लाम कलकत्ता ने मौलवी हिफ़्ज़ुर्रहमान साहब के जवाब में कहा कि देखिये मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी रहमतुल्लाह अलैह हमारे और आपके मुसल्लम बुज़ुर्ग व पेशवा थे, उनके मुतअ़ल्लिक़ बाज़ लोगों को कहते हुए सुना गया कि इन (यानी मौलाना थानवी) को छः सौ रुपये माहवार हुकूमत की तरफ़ से दिये जाते थे।"

ई हमा ख़ाना आफ़ताब अस्त
उलमाए देवबन्द में जिसको देखिये उसका दामन अंग्रेज़ बहादुर के दामन से
वाबस्ता है क्या अब भी दिमाग़ के किसी हाशिये में शक व शुबहा की गुन्जाइश
बाक़ी रह गई कि उलमाए देवबन्द अंग्रेज़ के ज़र ख़रीद गुलाम न थे। अंग्रेज़ अपना
हक़ अदा कर रहा था और यह जुब्बा व दस्तार वाले अपना अहदो पैमान पूरा कर
रहे थे। आख़िर यह छः सौ रुपये माहाना किसी न किसी मक़सद ही के पेशे नज़र
दिये जाते थे। अब कौन इन्कार कर सकता है कि तक़वीयतुल ईमान, हिफ़्ज़ुल ईमान,
बहिश्ती ज़ेवर, तहज़ीरुन्नास, फ़तावा रशीदिया, सिराते मुस्तक़ीम, जैसी शर अंगेज़,
कुफ़्र आमेज़ किताबें अंग्रेज़ी हुकूमत के इशारे पर लिखी गई हैं। यही वह गन्दी व
फूहड़ किताबें हैं जिनसे हिन्दी मुसलमानों का शीराज़ा बिखरा और मुसलमानों के
घर की ईंट से ईंट बज गई। बाप सुन्नी है तो बेटा वहाबी, बीवी मुर्दों को फ़ातिहा
दिलाना चाहती है तो शौहर तलाक़ देने पर आमादा और अगर शौहर महफ़िले
मीलाद शरीफ़ करना चाहता है तो बीवी निकाह फ़स्ख़ (ख़त्म) कराने के लिए तैयार।
शुबरात के हलवे और ईद की सेवैइयों पर ख़ाना जंगी। यही अंग्रेज़ की पॉलीसी
थी जिसमें वह सौ फ़ीसद कामयाब हुआ। अंग्रेज़ अपने हाथों यह काम अन्जाम
न दे सकता था। अगर बहिश्ती ज़ेवर, हिफ़्ज़ुल ईमान और तक़वीयतुल ईमान पर
किसी ईसाई पादरी का नाम होता तो मुसलमान ऐसी किताब को परवाह के क़ाबिल
भी न समझता उसे देखना तो दर किनार अपने हाथ में लेना भी गवारा न करता
मगर जिन किताब के सरे वरक़ पर शहीदे वतन, शैख़ुल हिन्द, मुरब्बीए ख़लाइक़,
हकीमुल उम्मत, हुज्जतुल इस्लाम, शैख़ुल इस्लाम जैसे ख़ूब भड़काऊ ख़िताबात
लिखे हों तो न चाहते हुए भी एक बार मुसलमान उसकी तरफ़ मुतवज्जेह हो ही
जाता है।

चुनान्चे अंग्रेज़ की कितना परवर पालीसी मुसलमानों के घर इसी चोर दरवाज़े
से दाख़िल हुई और आज तक मुसलमानों के बदन में नासूर बन कर रिस रही है।

हज़राते उलमाए देवबन्द की यही वह किताबें हैं जिनसे मुसलमानों के घर
इख़्तिलाफ़ात के सोते फूट पड़े और न जाने कितने इख़्तिलाफ़ात की कितनी नदियां
और नाले बह गए। ज़रा कोई ख़्याल तो करे किस क़दर हैरत की बात है कि अगर
आज शादी में दुल्हा को सेहरा बांध दिया जाये तो देवबन्दी मौलवी का शिर्क का
फ़तवा लिए हाज़िर 'अरे अरे यह क्या ग़ज़ब हो गया।'

कोई बताये तो सही कि आख़िर सेहरा और शिर्क में कौन सा जोड़ है। आप
यह न समझिये कि यह हज़रात शिर्क व बिदअत की तारीफ़ नहीं जानते। जानते
हैं मगर मुश्किल यह आन पड़ी कि अंग्रेज़ दोस्ती में उन्हीं की इबारतें उन्हीं के हक़
में "सांप के मुंह में छछूंदर बन गई हैं" जो न निगलते बने न उगलते बने।

अंग्रेज़ों को ख़ुश करने के लिए कभी यह लिख मारा कि 'अब्दुन्नबी',
'ग़ुलाम दस्तगीर', 'पीर बख़्श' नाम रखना शिर्क है। हालांकि मौलवी रशीद अहमद
गंगोही के पेदरी मादरी दोनों नसब नामे में यह मुशरिकाना नाम मौजूद है। कभी
शौक़ चर्राया तो यह लिख दिया कि मीलाद तो ऐसे ही है जैसे 'कन्हैया का जनम'
हालांकि हाजी इमदादुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की ने 'फ़ैसला हफ़्त मसाला' में
तहरीर फ़रमाया है कि मैं साल ब साल महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुनअ़क़िद करता
हूं और खड़े होकर सलात व सलाम पढ़ने में लज़्ज़त महसूस करता हूं। उलमाए
देवबन्द अंग्रेज़ दोस्ती में मुसलमानों के हर फ़ेअ़ल पर शिर्क की छाप लगाते गए।
जिस का नतीजा यह है कि आज कोई देवबन्दी मौलवी शिर्क की सही तारीफ़ ही
नहीं कर सकता और अगर कोई देवबन्दी मौलवी शिर्क की ऐसी तारीफ़ कर सकता
है जिससे उसके अकाबिर इस तारीफ़ की ज़द में न आयें तो आज भी मेरा चैलेन्ज
है कि कोई भी शिर्क की जामेअ़ व मानेअ़ तारीफ़ करके मुझ से पांच सौ रुपये का
इनाम हासिल करे।

ऐसी ज़िद का क्या ठिकाना दीने हक़ पहचान कर
हम हुए मुस्लिम तो वो मुस्लिम ही काफ़िर हो गया

उलमाए देवबन्द की अंग्रेज़ दोस्ती के ज़ेरे उनवान मैंने जितनी शहादतें पेश
की हैं उन सब में हज़राते देवबन्द ही का क़लम कारफ़रमा है जिससे वह एक लमहा
के लिए भी इन्कार नहीं कर सकते। और यह उलमाए देवबन्द की दीदा दिलेरी
मुलाहज़ा फ़रमाईये कि मौलवी रशीद अहमद गंगोही ब्रिटिश अहद को क़दर की
निगाह से देखते और उसको अमन व आफ़ियत का ज़माना क़रार देते। अंग्रेज़ बहादुर
को अपना मालिक व मुख़्तार समझते। जनाब थानवी साहब की जेब छः सौ रुपये
माहाना से गरम होती रही और मौलवी इलियास साहब को कलिमा और नमाज़
की तहरीक चलाने के लिए गवर्नमेन्ट से इमदाद मिलती रही। इन हज़रात को
मुजाहिदे वतन और सिपह सालारे आज़म कहा जाये और मुसलमानों को आबरूमन्दाना

ज़िन्दगी देने और उनकी इज़्ज़त व आबरू महफ़ूज़ रखने के लिए वह फ़ज़्ले हक़ जिसने ...शोर की मुश्किल झेली हों उनको अंग्रेज का पिट्ठू और न जाने क्या क्या कहा जाये।

आख़िर कब तक इस क़ौम को उलमाए देवबन्द थपकियां देकर सुलाते रहेंगे। हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी के साथ उलमाए देवबन्द ने जो ज़्यादती बरती है उस पर मेरी ही आंख अश्कबार नहीं बल्कि बाज़ उनके भी इस नारवा ज़्यादती को बरदाश्त न कर सके।

चुनान्चे मौलवी अब्दुश्शाहिद ख़ाँ साहब शेरवानी नाज़िमे जमीअतुल उलमा अलीगढ़ "बाग़ीए हिन्दुस्तान" में लिखते हैं-

मुक़दमा बाग़ीए हिन्दुस्तान सफ़हा 12-

> "मुआसिरीं जलीलुल मौलाना इस्माईल शहीद की सवानेह हयात लिखने वालों ने अल्लामा (फ़ज़्लेहक़) के साथ बड़ा ज़ुल्म रवा रखा [illegible] आमेज़ी व बुहतान तराज़ी से भी दरेग़ न किया।"

यह है उलमाए देवबन्द की वह फ़िरक़ावाराना ज़ेहनियत जिस पर अपने व बेगाने दोनों ही नुक्ता सन्ज और नुक्ता चीं हैं।

अब मुनासिब यह है कि इसी ज़िम्न में इस्माईली नाम निहाद तहरीक की एक झलक पेश कर दी जाये।

सय्यद अहमद राय बरैलवी और इस्माईल देहलवी का याग़िस्तानी मुसलमानों पर हमला

तुम्हें काली घटा का भी नहीं पहचानना आया
नशेमन से धुआं उठता है तुम कहते हो सावन है

आजके मौजूदा हालात में पूरी दुनियाए वहाबियत व देवबन्दियत इस्माईली तहरीक को अपने लिए बाइसे फ़ख़्र व मुबाहात समझती है और उन हज़रात को जहां कहीं भी अपनी ख़िदमात के सराहने का मौक़ा मिलता है वहां इस्माईली तहरीक पर शोलाबार तक़रीरें करके अपने को मुजाहिदीन की पहली सफ़ में शुमार कराने की कोशिश करते हैं। अख़बार व प्रेस का प्रोपगन्डा भी उन्हें हासिल है इसलिए कभी

कभी अख़बारात में भी ऐसे मज़ामीन आते रहते हैं जिस से उनकी कारगुज़ारी की याद देहानी होती रहे और इतने ही पर बस नहीं बल्कि जहां अपनी नाम निहाद तहरीक पर तक़रीरें करते हैं वहीं उलमाए अहले सुन्नत पर यह बुहतान तराशी भी कि यह तो हलवे मांडे वाली जमाअत है।

मेरी अक़्ल हैरान है, कि उलमाए देवबन्द की तक़रीर व तहरीर का कोई आईन व ज़ाबता भी है या ज़बान व क़लम को इतनी आज़ादी है कि जो मन में आये बिला रोक टोक उसे कह दिया जाये और जो कुछ ज़बान पर आये बे सोचे समझे उसे बोल दिया जाये। मैं उनके मुतअल्लिक़ यह बद गुमानी क्यों कर क़ाइम कर सकता हूं कि तारीख़ उनके सामने नहीं है और यक़ीनन है। मगर तारीख़ उन्हें अपने दामन में पनाह नहीं दे रही है। एक मुअर्रिख़ भी उनकी आज़ादाना रविश पर ख़ून के आंसू रोता होगा।

आ अन्दलीब मिलके करूं आहो ज़ारियां
तू हाए गुल पुकारे मैं चिल्लाऊँ हाए दिल

बहरकैफ़ उलमाए देवबन्द मुद्दतों से रेत की दीवार का महल उठा रहे हैं जिस पर नक़्श व निगार की गुल कारियां तो नज़रें फ़रेब हो सकती हैं मगर वक़्त के किसी हादसे का एक झटका भी यह महल अपने कांधे पर न उठा सकेगा।

दानिशमन्दी तो यह थी कि बुनियादें मज़बूत होतीं चाहे दीवार पर बेल बूटे होते या न होते मगर इस जमाअत ने अपनी पुरी कोशिश धुल की रस्सी बिटने और रेत की दीवार उठाने में ख़त्म कर दी।

अब आईये तारीख़ की रौशनी में इस दावे की शहादतें भी फ़राहम की जायें मगर तारीख़ी शहादत से पहले यह समझ लेना ज़रूरी है कि हज़राते देवबन्द का दावा क्या है।

1. उलमाए देवबन्द का यह कहना है कि सय्यद अहमद राय बरैलवी और मौलवी इस्माईल देहलवी ने हक़ की ख़ातिर जिहाद किया। लेकिन तारीख़ को इससे इन्कार है। तारीख़ का कहना यह है कि यह जिहाद न था बल्कि यह जमाअत अंग्रेज़ों के हाथ कठ पुतली बन कर नाच रही थी वग़ैरह वग़ैरह।

2. उलमाए देवबन्द का यह कहना है कि हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी अंग्रेज़ों के पिट्ठू थे और इस्माईल देहलवी एक मुजाहिद थे। मगर तारीख़ को इससे भी इन्कार है।

3. उलमाए देवबन्द का यह कहना है कि मौलवी इस्माईल देहलवी ने सिर्फ़ सिक्खों से जिहाद किया मगर तारीख़ का यह कहना है कि उनकी पहली जंग अफ़ग़ानी मुसलमानों से हुई।

4. उलमाए देवबन्द का यह कहना है सय्यद अहमद राय बरैलवी और इस्माईल देहलवी इस लड़ाई में शहीद कर दिये गए। मगर तारीख़ के वाक़ियात यह बताते हैं कि सिक्खों के हाथ नहीं बल्कि उनकी बद अक़ीदगी की बिना पर अफ़ग़ानी पठानों ने उन्हें क़त्ल कर दिया। (गोया एक शातिमे रसूल की जो सज़ा होनी चाहिए थी उसको पठानों ने उसके कैफ़रे किरदार तक पहुंचा दिया।)

5. उलमाए देवबन्द को अपने अकाबिर की अंग्रेज़ दोस्ती से इन्कार है मगर तारीख़ ने उनकी अंग्रेज़ दोस्ती पर मुहर लगा दी है।

अब ज़रूरत है कि हर एक दावे को तारीख़ की कसौटी पर जांच परख लिया जाये और फ़ैसला तारीख़ के हाथ सुपुर्द कर दिया जाये ताकि बात सिर्फ़ बे दलील की बातों की मन्ज़िल पर न रह जाये इस सिलसिला का पहला हवाला मुलाहज़ा फ़रमाईये।

तज़किरतुर्रशीद हिस्सा 2 सफ़हा 270

> 1. "हज़रत मौलवी रशीद अहमद गंगोही" ने इस सिलसिला में फ़रमाया कि हाफ़िज़ जानी साकिन अम्बेठ ने मुझ से बयान किया था कि हम क़ाफ़ला में हमराह थे। बहुत सी करामतें वक़्तन फ़वक़्तन हज़रत सय्यद साहब से देखीं, मौलवी अब्दुल हई साहब लखनवी और मौलवी इस्माईल देहलवी और मौलवी मुहम्मद हुसैन साहब रामपुरी भी हमराह थे और यह सब हज़रात सय्यद साहब के हमराह जहाज़ में शरीक थे। सय्यद साहब ने पहला जिहाद मुसम्मा यार मुहम्मद ख़ाँ हाकिमे याग़िस्तान से किया था।"

अब मैं नाज़िरीन का इन्साफ़ चाहता हूं कि यार मुहम्मद ख़ां यह किसी मुसलमान का नाम है ? या किसी सिक्ख (सरदार जी) का ? और मुल्के याग़िस्तान यह इस्लामी ममलिकत था ग़ैरे नग़ी मुल्क है या सिखिस्तान का ?

अंग्रेज़ों ने मौलवी इस्माईल को सिक्खों से लड़ने के लिए भेजा था या ग़रीब अफ़ग़ानी पठानों से जंग व जिदाल के लिए ? यह बात वाज़ेह रहे कि मौलवी रशीद

अहमद गंगोही उलमाए देवबन्द के मुसल्लम रहनुमा व बुज़ुर्ग हैं जिनके मरने पर मौलवी महमूदुल हसन साहब सदर मुदर्रिस देवबन्द ने मर्सिया लिख कर अपनी अक़ीदतमन्दी का सुबूत दिया है जिस का सिर्फ़ एक शेअ़र यहां सुन लीजिये।

ख़ुदा उनका मुरब्बी वह मुरब्बी थे ख़लाइक़ के
मेरे मौला मेरे हादी थे बेशक शैख़ रब्बानी

मौलवी रशीद अहमद साहब तमाम मख़्लूक़ात के मुरब्बी थे। उलमाए देवबन्द के 'मौला' 'हादी' और 'शैख़ रब्बानी' हैं। भला मुरब्बीए ख़लाइक़ की तहरीर से किस तरह उलमाए देवबन्द को इन्कार हो सकता है।

ग़ौर फ़रमाईये कि इस्माईली जिहाद सिक्खों के साथ था या हाकिमे याग़िस्तानी यार मुहम्मद ख़ान के साथ था। इस पर दूसरा तमाशा यह कि मौलवी इस्माईल देहलवी अंग्रेज़ों के पिट्ठू न थे। अब इस दावे की दूसरी शहादत मुलाहज़ा फ़रमाइये।

सीरते सय्यद अहमद हिस्सा 1 स 190 मुरत्तबा मौलवी अबुल हसन अली साहब नदवी-

> 2. "इतने में क्या देखते हैं कि अंग्रेज़ घोड़े पर सवार चन्द पालकियों में खाना रखे कश्ती के क़रीब आया और पूछा कि पादरी साहब कहां हैं। हज़रत ने कश्ती पर से जवाब दिया कि मैं यहां मौजूद हूं अंग्रेज़ घोड़े पर से उतरा और टोपी हाथ में लिये कश्ती पर पहुंचा और मेज़ाज पुर्सी के बाद कहा कि तीन रोज़ से मैं ने अपने मुलाज़िम को यहां खड़े कर दिये थे कि आपकी इत्तेलाअ़ करें। आज उन्होंने इत्तेलाअ़ दी कि ज़्यादा उम्मीद यह है कि हज़रत क़ाफ़िला के साथ तुम्हारे मकान के सामने पहुंचें। यह इत्तेलाअ़ पाकर सूरज डूबने तक मैं खाने की तैयारी में मश़ग़ूल रहा। सय्यद साहब ने हुक्म दिया कि खाना अपने बर्तनों में मुन्तक़िल कर लिया जाये। खाना लेकर क़ाफ़िले में तक़सीम कर दिया गया और अंग्रेज़ दो तीन घन्टा ठहर कर चला गया।"

मुन्दर्जा बाला इबारत ने इस्माईली नाम निहाद तहरीके जिहाद को इस क़दर उरियां व बे निक़ाब कर दिया कि अब इस जंगे ज़र गरी की कोई भी कड़ी छुपी

न रह गई। बार बार इस इबारत को पढ़िये और अन्दाज़ा कीजिये कि सय्यद साहब और इस्माईल साहब अंग्रेज़ों के इशारे पर कैसा दिलफरेब ड्रामा खेल रहे थे।

मुजाहिदीन तो लड़ने के लिए जा रहे हैं मगर अंग्रेज़ हर मन्ज़िल पर खाना नाश्ता लिये हाज़िर है और घन्टा दो घन्टा नहीं मुसलसल तीन दिन तक सय्यद साहब की आमद का इन्तेज़ार होता रहा। अदब व एहतेराम का यह आलम के अंग्रेज टोपी हाथ में लेकर हाज़िर हुआ। (अंग्रेज़ों के यहां अदब का यही तरीक़ा है।)

खाना थोड़ा सा नहीं बल्कि चन्द पालकियों में लेकर हाज़िर हुआ जो पूरे क़ाफ़िला पर तक़सीम कर दिया गया। सय्यद साहब अंग्रेज़ से इस क़दर घुल मिल गए हैं कि अब मौलाना साहब नहीं बल्कि पादरी साहब हो गए।

अंग्रेज़ ने पूछा कि पादरी साहब कहां हैं तो सय्यद साहब ने बिला देर किये जवाब दिया कि मैं यहां मौजूद हूं। ख़्याल फ़रमाइये इस सवाल व जवाब में कोई अजनबियत व बेगानगीयत नहीं महसूस हो रही है बल्कि यही सवाल व जवाब किसी पुरानी रस्मो राह की रौशन दलील हैं। अंग्रेज़ के इल्म में यह बात है कि आज हमारे ज़र ख़रीद गुलामों का क़ाफ़िला इधर से गुज़रेगा। और पादरी साहब (सय्यद साहब) को यह मालूम है कि हमारे अन्न दाता (अंग्रेज) हमारी ख़ातिर व तवाज़ोअ के लिए हाज़िर राह होंगे।

यह उलटी मन्तिक़ समझ में न आई कि जिहाद के लिए तो सय्यद साहब और मौलवी इस्माईल साहब जा रहे हैं मगर राशन का इन्तेज़ाम अंग्रेज बहादुर के हाथ है। अंग्रेज़ दस पांच मिनट नहीं बल्कि मुसलसल तीन घन्टे तक अमीरे कारवाँ (सय्यद साहब) की ख़िदमत में हाज़िर रहा। बड़ा ग़ज़ब किया मौलाना सय्यद अबुल हसन अली नदवी ने जिन्होंने इस गुफ़्तगू का तज़किरा न किया। ग़ालिबन यह बात उनके भी इल्म में न होगी कि अंग्रेज़ और पादरी साहब के दर्मियान क्या गुफ़्तगू रही। शायद यही वह मक़ाम है जिसके लिए किसी शायर ने कहा–

यह वह नाज़ुक हक़ीक़त है जो समझाई नहीं जाती

मगर मौलाना अली नदवी को इतनी तो सराहत कर देनी थी कि अंग्रेज किस क़िस्म का खाना लाया था। अंग्रेज़ के यहां तो ख़िन्ज़ीर और झटके का गोश्त दोनों ही हलाल है। नहीं मालूम वह क्या लाया था और सय्यद साहब और उनके हमराही हलाल व हराम की तमीज़ किये बग़ैर सफ़ा चट कर गए।

अब नाज़िरीन इन्साफ़ फ़रमायें कि वह फ़ज़्ले हक़ जिसने इस्लाम व मुसलमानों

की ख़ातिर क़ैद व बन्द की मशक़्क़तें झेलीं, घर से बे घर हुआ, जज़ीरए अन्डोमान की ज़हर आलूद फ़ज़ाओं में कर्ब व इज़्तिराब की ज़िन्दगी गुज़ार कर अपने नाम को ज़िन्दगीए जावेद दे गया वह अंग्रेज़ों का पिट्ठू था या सय्यद साहब व मौलवी इस्माईल साहब जो अंग्रेज़ों के हाथ हलवा पराठा उड़ा रहे थे।

ख़िरद का नाम जुनूं पड़ गया जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

मुन्दर्जा बाला उनवान की ताईद में अब तीसरा हवाला मुलाहज़ा फ़रमाइये। हयाते तय्येबा स 296 मुरत्तबा मिर्ज़ा हैरत देहलवी, मतबूआ फ़ारूक़ी, दिल्ली।

> 3 "कलकत्ता में जब मौलाना इस्माईल ने जिहाद का वअ़ज़ फ़रमाना शुरू किया है और सिक्खों के मज़ालिम की कैफ़ियत पेश की है तो एक शख़्स ने दरियाफ़्त किया। आप अंग्रेज़ों पर जिहाद का फ़तवा क्यों नहीं देते। आपने जवाब दिया उनपर जिहाद करना किसी तरह वाजिब नहीं है एक तो उनकी रआ़यित हैं, दूसरे हमारे मज़हबी अरकान अदा करने में वह ज़रा भी दस्त अन्दाज़ी नहीं करते, हमें उनकी हुकूमत में हर तरह आज़ादी है बल्कि उनपर कोई हमला आवर हो तो मुसलमानों पर फ़र्ज़ है कि वह उससे लड़ें और अपनी गवर्नमेन्ट पर आंच न आने दें।"

नोटः- हयाते तय्येबा के इलावा यही वाक़िआ तवारीख़े अजीबा स 73 मुरत्तबा मुहम्मद जाफ़र थानेसरी मतबूआ फ़ारूक़ी दिल्ली में भी दर्ज है।

अकाबिरे देवबन्द की अंग्रेज़ दोस्ती के लिए क्या इससे भी ज़्यादा कोई खुली शहादत हो सकती है ? सैकड़ों मील की मुसाफ़त पर सिक्खों से जिहाद करना तो, वाजिब है मगर वह ज़ालिम अंग्रेज़ जिसने शाह ज़फ़र के लड़कों का सर बाप के नाश्ता में भेजा हो, बड़े बड़े उलमा फांसी के तख़्ते पर लटका दिये गए हों, मसाजिद और ख़ानक़ाहों की बे हुरमती की गई हो, उससे जिहाद वाजिब नहीं। बल्कि ऐसे ज़ालिम व सफ़्फ़ाक पर अगर कोई हमला आवर हो तो मुसलमानों को उससे लड़ना फ़र्ज़ है ताकि अंग्रेज़ के दामन पर कोई आंच न आ सके।

ताली एक हाथ से नहीं बजती दोनों हाथ से बजती है। एक तरफ़ से रुपये की थैली है और दूसरी तरफ़ से हलफ़े वफ़ादारी।

मुसलमानों का ख़ून पानी की तरह बह जाये तो कोई ग़म नहीं मगर अंग्रेज़ बहादुर के बदन पर सूरज की धूप न पड़ सके।

मुझे दावा नहीं तन्हा निबाही दोस्ती हमने
मुहब्बत को संभाला है कभी तुमने कभी हमने

अब इस सिलसिला की चौथी शहादत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

सितारों के आगे जहां और भी हैं

तवारीख़े अजीबा स 182

> 4 "इस सवानेह और मक्तूबाते मुन्सलिका से साफ़ मालूम होता है कि सय्यद साहब का सरकार अंग्रेज़ से जिहाद करने का हरगिज़ इरादा न था। वह उस आज़ाद अमलदारी को अपनी ही अमलदारी समझते थे और इसमें शक नहीं कि अगर सरकारे अंग्रेज़ी उस वक़्त सय्यद साहब के ख़िलाफ़ होती तो हिन्दुस्तान से सय्यद साहब को कुछ मदद न पहुंचती मगर सरकारे अंग्रेज़ी उस वक़्त दिल से चाहती थी कि सिक्खों का ज़ोर कम हो।"

और इसी तारीख़े अजीबा स 91 पर सय्यद अहमद साहब बरैलवी का यह मक़ूला भी दर्ज है।

> "सरकार अंग्रेज़ पर किस सबब से जिहाद करें और ख़िलाफ़े उसूले मज़हब तरफ़ैन का ख़ून बिला सबब गिरा दें।"

क्या ख़ूब कही! अंग्रेज़ बहादुर से जिहाद करना तो ख़िलाफ़े उसूले मज़हब है लेकिन यार मुहम्मद ख़ान हाकिमे यागिस्तान और अफ़ग़ानी पठानों से जिहाद करना ऐने इस्लाम है। इस ज़िम्न में नाज़िरीन ने यह बात भी समझ ली होगी कि सय्यद अहमद साहब राय बरैलवी अंग्रेज़ की आज़ाद अमलदारी को अपनी अमलदारी समझते थे।

सच है! समझना भी चाहिए था जबकि हिन्दी मुसलमान उन्हीं के हाथों अंग्रेज़ की बारगाह में क़ुरबानी का मेंढा बन चुका था जिस के ख़ून की कोई क़दर व क़ीमत न थी। अंग्रेज़ की चापलोसी और ख़ुशामद में हज़ारहा मुसलमानों का ख़ून बे दर्दी से बहा दिया गया। क्या इससे बढ़ कर वफ़ादारी का कोई सुबूत हो सकता था।

ख़्याल फ़रमाइये मौलवी इस्माईल साहब देहलवी और सय्यद अहमद साहब राय बरैलवी की इस आज़ाद अमलदारी में फ़ज़्ले हक़ जैसे बेबाक व निडर मुजाहिद को क्योंकर पनाह मिल सकती थी।

अब हयाते तय्येबा स 302 की एक इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये।

> 5 "सय्यद साहब के पास मुजाहिदीन जमा होने लगे तो सय्यद साहब ने मौलाना इस्माईल के मशवरे से शैख़ गुलाम अली रईस इलाहाबाद की मअ़रेफ़त लेफ़टिनेन्ट गवर्नर ममालिक मग़रिबी शुमाली (पश्चिमी उत्तरी) की ख़िदमत में इत्तेलाअ़ दी कि हम लोग सिक्खों पर जिहाद करने की तैयारी करने को हैं। सरकार को तो इसमें कुछ एतेराज़ नहीं है। लेफ़टिनेन्ट गवर्नर साहब ने साफ़ लिख दिया कि हमारी अमलदारी में और अमन में ख़लल न पड़े तो हमें कुछ सरोकार नहीं।"

इस मक़ाम पर यह हक़ीक़त वाज़ेह हो गई कि इस्माईली जिहाद क़ुरआन व हदीस की रौशनी या इस्लामी तक़ाज़े की बुनियाद पर न था बल्कि अंग्रेज़ बहादुर के ईमा व इशारे और उनकी इजाज़त पर मौक़ूफ़ था। गोया एक मुतीअ़ व फ़रमांबरदार अपने आक़ा की बारगाह में हाज़िर होकर यूं अर्ज़ कर रहा है कि सरकार अगर इजाज़त मरहमत फ़रमायें तो जिहाद करने की तैयारी की जाये। वरना देखिये क़ुरआन को जुज़दान में और अहादीस को अलमारी में बन्द किये देते हैं और हुज़ूर ही की बख़्शी हुई तलवार मियान के अन्दर किये लेते हैं।

"कहां वह शोरा शोरी और कहां यह बे नमकी"— मैं दरियाफ़्त करता हूं कि 'अहदे नबुव्वत' व 'अहदे सिद्दीक़ी' व 'अहदे फ़ारूक़ी' में भी मुतअ़द्दिद जिहाद हुए। आख़िर वह जिहाद दुनिया की किस हुकूमत के इशारे पर हुए थे? और यह बात भी दरियाफ़्त करनी है कि मुसलमानों का जिहाद इस्लामी तक़ाज़े की बुनियाद पर मबनी है या अंग्रेज़ बहादुर की इजाज़त पर।

रूहे जिहाद से ना बलद व ना आश्ना तो उसे जिहाद कह सकता है मगर जिसके सामने मिल्लते इस्लामिया की दरख़्शाँ तारीख़ और अस्लाफ़ व अकाबिर के ज़र्रीं कारनामए हयात हों वह इस तहरीक को इसके सिवा कुछ नहीं कह सकता कि याज़ नाम निहाद मौलवियों ने ज़र तलबी व इक़्तेदार पसन्दी की ख़ातिर बे गुनाह

मुसलमानों का ख़ून बहा कर दुनिया को आख़िरत पर तरजीह दी है और अपने पेट [illegible]ना व दुनियावी [illegible] के पेशे नज़र लाखों मुसलमानों को घर से बे घर किया तारीख़ के मज़कूरा बाला इक़्तेबासात को देखने के बाद इस्माईली तहरीक के बारे में इसके सिवा और क्या कहा जाये कि-

हम शेख़ की सुनते थे मुरीदों से बुज़ुर्गी
तक़रीर तो देखा तो शैतान के सिवा हेच

हैरत है उलमाए देवबन्द की इस दीदा दिलेरी पर कि जंगे ज़र गरी और तहरीक[illegible] ज़र अन्दोज़ो को जिहाद का नाम देकर अपने मुजाहिदीन में शुमार कराते है और आज क़ौम के सामने गले फाड़ फाड़ कर तक़रीरें की जाती हैं कि आज़ादीए वतन के लिए इसने भी पापड़ बेले हैं।

जी हां! यह आप के वही मुजाहिदीने वतन हैं जिनका हर क़दम अंग्रेज़ो के इशारे पर उठता था। अगर अंग्रेज़ बहादुर की इजाज़त है तब तो जिहाद फ़र्ज़ है वरना [illegible] लाए ताक़! अगर यह जिहाद मज़लूम मुसलमानों [illegible] के जज़्बए हमदर्दी और मसाजिद व अज़ान की हुरमत बरक़रार रखने के लिए था तो अंग्रेज़ के हाथ कठ पुतली बनने की क्या ज़रूरत थी। बिलफ़र्ज़ अगर अंग्रेज़ इजाज़त न भी देता तो सबसे पहले हिन्दी मुसलमानों की ताक़त अंग्रेज़ो से लड़ने के लिए इकट्ठा की जाती। पहले रास्ते का यह कांटा दूर कर लिया जाता तब दूसरी जंग रंजीत सिंह से लड़ी जाती। जैसा कि कलकत्ता के मुसलमानों ने मौलवी इस्माईल देहलवी से मुतालबा किया था कि आप अंग्रेज़ो से जिहाद का हुक्म क्यों नहीं देते [illegible]

यह न समझिये कि कोई हलका फुलका सवाल है बल्कि इस सवाल में हिन्दी मुसलमानों का ज़मीर बोल रहा है और इसी सवाल से उनके जज़्बए हुर्रियत और अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जज़्बए जिहाद का पता चलता है। गोया हिन्दुस्तान की ज़मीन यह चाह रही थी कि ज़ालिम व सफ़्फ़ाक अंग्रेज़ों का क़िला क़ुमा (ख़ात्मा) कर दिया जाये और हिन्दी मुसलमान दिल व जान से यह चाहता था कि यह सफ़ेद चमड़ी वाले जिन का दिल तवे की कालिख से ज़्यादा काला है। उन्हें चुन चुन कर सात समुन्दर पार कर दिया जाये और उनके मन्हूस व नापाक क़दम से हिन्दुस्तान जन्नत निशान पाक व साफ़ करके आज़ादमन्दाना ज़िन्दगी गुज़ारी जाये। जबकि क़ौम [illegible] अंग्रेज़ से लड़ने के लिए जज़्बए जिहाद रखती हो तो रहनुमायाने वतन के लिए यह किस क़दर आसान था कि मामूली सी जिद्दो जहद से अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ कर[illegible]

मुसलमानों को एक झन्डे तले जमा कर लेते और ऐसी घमसान लड़ाई लड़ते कि अंग्रेज़ों के क़दम उखड़ जाते। उन्हें सदियों के बाद फिर एक नया तजरबा हो जाता कि आज भी मुसलमानों की रगों में वही गरम गरम ख़ून और उसमें वही ईमानी है जो कभी बद्र व हुनैन की मअरेका आराईयों में काम कर चुकी है। सरवरे कायनात हज़रत मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के जाँ निसार ग़ुलामों से तख़्तो ताज लेना और उन पर हुक्मरानी करना कुछ आसान नहीं, यह वही मुजाहिदीने इस्लाम हैं जिनकी तारीख़ के सरे वरक़ पर आज भी यह लिखा हुआ है कि-

दश्त तो दश्त है दरिया भी न छोड़े हमने
बहरे ज़ुल्मात में दौड़ा दिये घोड़े हमने

(डा० इक़बाल)

चाहिए तो यह था कि सय्यद अहमद साहब राय बरैलवी और मौलवी इस्माईल देहलवी हिन्दी मुसलमानों के जज़्बए हुर्रियत का पास व लिहाज़ रखते हुए इस्लामी तक़ाज़े की बुनियाद पर अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ अलमे बग़ावत बुलन्द करते जैसा कि अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी, मुफ़्ती इनायत अहमद साहब काकोरवी, मुफ़्ती सदरुद्दीन देहलवी वग़ैरहुम ने अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जंगे आज़ादी की मर्दानावार जिद्दो जहद की। मगर अफ़सोस सद अफ़सोस कि सय्यद अहमद साहब और मौलवी इस्माईल देहलवी तो अंग्रेज़ों के हाथ बिक चुके थे। अंग्रेज़ के गर्दिशे अबरू पर रक़्स करने वाले कब मैदाने जंग में टिक सकते थे। चुनान्चे ऐसा ही हुआ कि हज़ारों मुसलमानों को क़ुरबानी का बकरा बना कर मैदाने जंग में छोड़ कर ख़ुद सय्यद अहमद साहब राय बरैलवी पहाड़ की घाटियों में छुप गए। जैसा कि अभी अभी अगले सफ़हात पर अरवाहे सलासा के हवाला से इस हक़ीक़त को बे निक़ाब करूंगा।

बर सरे राह तवारीख़े अजीबा स० 89 की एक और इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

> 6 "सय्यद साहब जिहाद में मसरूफ़ थे उस वक़्त हुन्डी सात हज़ार रुपये की जो बज़रीया साहूकाराने दिल्ली मुर्सला मुहम्मद इस्हाक़ साहब बनाम सय्यद साहब रवाना हुई थी मुल्के पंजाब में वसूल न होने पर इस सात हज़ार की वापसी का दावा अदालते दीवान में दायर होकर डिग्री हो और फिर हंगामे अपील अदालते आलिया दीवान हाई कोर्ट आगरा में भी हुक्मे डिग्री बहुक्मे मुद्दई बहाल रहा।"

पालकियों में खाना अब तक तो आप हज़रात ने यही पढ़ा कि अंग्रेज़ चन्द पालकियों में खाना लेकर दाखिल हुआ था। मगर मुन्दर्जा बाला इबारत ने इस हक़ीक़त को भी बे निक़ाब कर दिया कि ज़र ख़रीद गुलामों को तन्ख़्वाह भी भेजी जाती थी और रुपये की वसूलयाबी न होने पर अंग्रेज़ बहादुर ही मुक़दमा की पैरवी करते थे।

रुपये की थैलियों के सहारे जो जंग लड़ी गई उस पर जिहाद का लेबल लगा कर उलमाए देवबन्द मूंछों पर ताव दिये फिरते हैं कि हम भी जंगे आज़ादी में हिस्सा ले चुके हैं।

उलमाए देवबन्द आज तक इसी ख़्वाबे ख़रगोश में हैं कि हम अपने प्रेस की ताक़त व अख़बारी प्रोपगन्डे के बल बूते तारीख़ की सतरों पर ऐसी गिलाफ़ चढ़ा देंगे जहां तक किसी की नज़र न पहुंच सकेगी। काश वह अपनी वुसअ़ते नज़र से काम लेते और यह सोचते कि यह तारीख़ है। किसी जमाअ़त व जमीअ़त का दफ़्तर नहीं। "तारीख़ अपनी गिरिफ़्त से किसी को छोड़ नहीं सकती" क़सरे तारीख़ के सदर गेट पर आज भी जली क़लम से यह लिखा है कि-

संभल कर पाँव रखना मैकदे में शैख़ जी साहब
यहां पगड़ी उछलती है इसे मैख़ाना कहते हैं

"तारीख़ एक तलवार है जिसकी धार दोस्त व दुश्मन में इम्तियाज़ नहीं करती जो भी तलवार की धार पर अपनी गर्दन रखेगा उसका कट जाना यक़ीनी है।"

हज़रात! सय्यद अहमद राय बरैलवी और मौलवी इस्माईल देहलवी की नाम निहाद तहरीके जिहाद का यह एक इजमाली ख़ाका है जिसकी तफ़सील के लिए तो मुस्तक़िल एक किताब चाहिए। यही हमा मज़कूरा बाला हवालाजात इस यक़ीन दहानी के लिए काफ़ी है कि यह जिहाद न था बल्कि ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के क़दम जमा कर उनकी ख़ुशनूदी हासिल करनी थी— अंग्रेज़ दोस्ती के नाम पर या अफ़ग़ानी पठानों से जिहाद के एलान पर मुस्लिम ताक़त इकट्ठा न हो सकती थी। इस लिए मुस्लिम जज़्बात को सिक्खों के ज़ुल्म व सितम के नाम पर मुश्तइल किया गया। और न मालूम कितने ग़रीब मुसलमानों की गर्दन अंग्रेज़ की सौदाबाज़ी में बेच खाये।

कौन बता सकता है कि कितने बच्चे यतीम हुए, कितनी औरतों का सुहाग लुट गया, कितनी मायें बिन औलाद हो गईं और कितने ख़ानुमाँ बरबाद हो गए। आख़िर लाखों मुसलमानों की ख़ाना बरबादी किस के हाथ हुई और बे गुनाह मुसलमानों का क़ाफ़िला दिन दहाड़े किस तरह लूटा गया।

न इधर उधर की तू बात कर यह बता कि क़ाफ़िला क्यों लुटा
मुझे रहज़नों से ग़रज़ नहीं तेरी रहबरी का सवाल है

अफ़सोस सद अफ़सोस! सर धुनने का मक़ाम है कि वह अंग्रेज़ जिसकी इस्लाम व मुसलमान दुश्मनी आफ़ताब से ज़्यादा रौशन है इससे तो अकाबिर उलमाए देवबन्द ने हलफ़े वफ़ादारी उठाया और मुल्के पाकिस्तान में यार मुहम्मद ख़ान से लड़ाई मोल लेने के लिए मुस्लिम फ़ौज इकट्ठा की गई। चुनान्चे मुअ़तबर वाक़िआ यही है कि-

> "सय्यद अहमद और मौलवी इस्माईल देहलवी जब मक़ामे पंच तार पहुचे तो वहां के रईस फ़तह ख़ाँ नामी ने शुरू में उन लोगों की ख़ातिर तवाज़ोअ़ की और यह लोग चन्द दिनों वहां रहे। लेकिन उन दोनों ने वहां के लोगों पर ज़ुल्म व सितम शुरू किया, उनको बद अक़ीदा बद मज़हब ठहराया। बात बढ़ गई तो उन पठानों ने उनको वहीं ख़त्म कर दिया। यह लोग अपने ज़ुल्म व सितम की वजह से पठानों के हाथ मारे गए।"

जो अपने ज़ुल्म व सितम के बाइस सहीहुल अक़ीदा पठानों के हाथ मारा गया और जिसके दामन पर न जाने कितने बे गुनाह मुसलमानों के ख़ून की छींटे आह व फ़ुग़ाँ कर रही हैं, उसी ज़ालिम बद अक़ीदा, मज़बूह को आज शहीद का लक़ब दिया जा रहा है और लाखों ग़रीब मुसलमानों के बेकसी व बरबादी की ख़ूनी दास्तान को यक लख़्त दरिया बुर्द करने की कोशिश की जा रही है। मगर वाज़ेह रहे-

रंग जब महशर में लाएगी तो उड़ जाएगा रंग
यूं न कहिये सुर्ख़ीए ख़ूने क़तीलाँ कुछ नहीं

जिस क़दर भी बेगुनाह मुसलमानों का ख़ून अंग्रेज़ दोस्ती के पर्दे में बहाया गया है उन सब का हिसाब व किताब अकाबिर उलमाए देवबन्द की गर्दन पर है। किस क़दर शर्म व ग़ैरत और डूब मरने की जगह है कि मुसलमानों को मैदाने कारज़ार में अकेला छोड़ कर यह हज़रात ग़ाइब हो गए जिसके हवाला में अरवाहे सलासा स 140 की इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

7 "दूसरे शख़्स ने बयान किया कि हम उन्हीं दिनों सय्यद साहब को एक पहाड़ी में तलाश कर रहे थे। दफ़अतन कुछ क़ाफ़िला पर गड़बड़ाहट सुना मैं वहां गया तो देखा कि सय्यद साहब और उनके दो हमराही बैठे हैं, मै ने सलाम व मुसाफ़ा किया और अर्ज़ किया कि हज़रत क्यों ग़ाइब हो गए। सब लोग बग़ैर आपके परेशान हैं, मजबूर होकर हमने फ़ुलाँ शख़्स को ख़लीफ़ा बना लिया है और उनसे बैअत की है। आपने इस पर तहसीन की और फ़रमाया कि हमको अब ग़ाइब रहने का हुक्म हुआ है इस लिए हम नहीं आ सकते। इतना फ़रमा कर क़ाफ़िला वालों की ख़ैर और हालत पूछे और फिर रवाना हो गए। मैंने भी हमराह होने के लिए अर्ज़ किया तो मना फ़रमाया और फिर कौशिश करके जो मैंने पीछे चलना चाहा तो मेरे हाथ पाँव वज़नी हो गए। मैं तो खड़ा का खड़ा रह गया। हैरान और मायूस था कि या अल्लाह कैसे चलूं और हज़रत सय्यद साहब मअ़ हमराहियों से ग़ाइब हो गए।"

थक थक के हर मक़ाम पर दोचार रह गए
तेरा पता न पायें तो नाचार क्या करें

"तीसरे एक शख़्स ने बयान किया कि सय्यद साहब को ढूंडते ढूंडते हम एक गाँव में एक जगह उतरे, दरियाफ़्त करने से मालूम हुआ कि यह क़ब्र जो बनी हुई ताज़ा पड़ी है उसको सय्यद साहब अभी बना कर गए हैं। क्योंकि ऊँची थी। इधर उधर देखा तो पता न लगा।"

मिल्लते इस्लामिया की तारीख़ का यह ऐसा दिल गुदाज़ इबरत अंगेज़ बा[illegible] है जिसको पढ़ कर मर्दे मोमिन की गर्दन शर्म व ग़ैरत से झुक जायेगी और वे गुनाह[illegible] मुसलमानों की बेचारगी व कसमपुर्सी पर उसकी आंखें आठ आठ आंसू रोयेंगी[illegible] मेरी अक़्ल हैरान है कि जब यह तारीख़ किसी हिन्दू, ईसाई, सिक्ख, पारसी की निगाह से गुज़रती होगी तो वह इस्लाम और क़ाइदीने इस्लाम के बारे में क्या रा[illegible] क़ाइम करते होंगे। वह लोग तो सय्यद अहमद राए बरेलवी और मौलवी इस्माई[illegible]

देहलवी की बुज़दिलाना हिकायात और उसकी मुस्लिम कुश चालों पर दूसरे क़ाइदीने इस्लाम को भी क़ियास करते होंगे और इसी मकरूह व गन्दे आईना में तमाम ही रहनुमायाने इस्लाम की तस्वीर देखना चाहते होंगे। काश हज़राते देवबन्द इन वाक़िआत पर नज़रे सानी करते और ठन्डे दिल से सोचते कि वह ज़हर को तिरयाक़ कह कर शजरे इस्लाम पर कैसी शदीद तीशा ज़नी कर रहे हैं। किसी को मुक़्तदा व पेशवा मान लेने के यह माना नहीं है कि उसके जुर्म व ख़ता को भी सवाब व इबादत का मर्तबा दिया जाये। रात की तारीकी को दिन का उजाला और आग के अंगारे को शादाब फूल नहीं कहा जाता। ख़्याल फ़रमाइये यह कैसी ना इन्साफ़ी व बद अख़्लाक़ी है कि हज़ारों ना-तजरबाकार और सादा लौह मुसलमानों को ऐसे मैदान में जहां तलवारों की झन्कार और नेज़ों की बारिश में औसान ख़ता कर जायें। वहां इन ग़रीबों को अकेला छोड़ कर यह लोग अपनी जान बचाने की ख़ातिर ग़ाइब हो गए। आख़िर वह ग़रीब मुसलमान बे यार व मददगार क्या करते या तो बिन लड़े अपनी जान देते या लड़ झगड़ कर मर जाते। अब तो उन्हें मौत के चंगुल में दे ही दिया गया है सच कहा किसी दिल जले शायर ने-

दिल के फफोले जल गए सीने के दाग़ से
इस घर को आग लग गई घर के चराग़ से

इस क़िस्म के मज़मूम व क़बीहुल अख़्लाक़ हरकात उन्हीं लोगों से सरज़द हो सकते हैं जिन्हें आख़िरत की बाज़ पुर्स का ख़्याल जाता रहा हो और इस दुनियाए फ़ानी को ऐशे दवाम की जगह समझ ली हो। यह हक़ीक़त आज न सही तो कल मैदाने महशर में उरियां व बेनिक़ाब होकर रहेगी। जबकि अल्लाह तआ़ला की बारगाहे अदालत में लाखों फ़रियादी मुसलमानों के हाथ एक मुजरिम का दामन होगा और सब यक ज़बान होकर अपने ख़ून का बदला चाहते होंगे। गन्दुम नुमा जौ फ़रोश साहूकारों की तिजारत व क़ौमी ग़द्दारी और इस्लाम दुश्मनी की तस्वीर आपने मुलाहज़ा फ़रमा ली। अब चन्द सतरों में तस्वीर का दूसरा रुख़ मुलाहज़ा फ़रमाइये- जिसमें अल्लामा फ़ज़्ले हक़ और उनके साथियों के मुजाहिदाना कारनामे की झलक है। इस सिलसिला में 'दावत' सेह (तीन) रोज़ा का एक मक़ाला मुलाहज़ा फ़रमाइये-

दावत सेह रोज़ा दिल्ली 28 अगस्त 1957 ई० स 2 कालम नम्बर 3-4, व 5 फिर सफ़हा 5 कालम नम्बर 1-2 ज़ेरे उनवान 1857 में उलमा का हिस्सा। (अज़ शैख़ मुहम्मद इस्माईल पानीपती)

"उलमाए इस्लाम इब्तेदा ही से दो गरोहों में बटे हुए हैं, इन में एक गिरोह उलमा का है जो हक़ व इन्साफ़ की तलक़ीन को अपना बुनियादी फ़र्ज़ तसव्वुर करते हैं और बनीए नौअ् इन्सान की ख़िदमत को इबादते इलाही का जुज़ ख़्याल करते हैं। यही वजह है हर ज़माना और हर अहद में इन उलमाए हक़ ने ज़ुल्म व इस्तिबदाद और गुलामी के ख़िलाफ़ जिहाद किया और जाबिर से जाबिर हुक्मराँ से भी ख़ौफ़ न खाया।

अंग्रेज़ों के दौर में भी ऐसे आलिमों की कमी न थी जो नये हाकिमों को ग़ासिब और ज़ालिम कहते थे और उनके ख़िलाफ़ जिहाद करते थे और अपनी जानें कुरबान करते थे। चुनान्चे 1857 के हंगामों से बहुत मुद्दत पहले मुल्क में उलमाए इस्लाम की रहनुमाई में अंग्रेज़ों की मुख़ालफ़त शुरू हो चुकी थी। उलमाए हक़ फ़ौजों और छावनियों में शहरों और क़स्बों में कभी एलानिया और कभी ख़ुफ़िया तौर से अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद की तलक़ीन करते थे। जिस किसी ने हन्टर की किताब पढ़ी है उसे इल्म होगा कि उलमा की यह तहरीक उन्नीसवीं सदी के इब्तेदा से बड़े मुनज़्ज़म तौर से जारी थी और बंगाल से पेशावर तक तमाम अहम मक़ामात पर इस तहरीक के मर्कज़ क़ाइम थे, जहां मुजाहिदीने आज़ादी की तालीम व तरबियत होती थी। 1857 में जब लाखों मुहिब्बाने वतन ने आज़ादी का परचम बुलन्द किया तो उलमा भी मैदाने जंग में आ गए। उन्होंने जगह जगह आज़ादी के लिए तबलीग की और लोगों को इसमें शिरकत करने की दावत दी।

मौलाना पीर अली पटना के मशाहीर उलमा से थे। उनका कारोबार किताब बेचना था, मगर दिल में अंग्रेज़ों से दुश्मनी रखते थे। हंगामा की ख़बर ने उनके दिल में भी हरकत पैदा कर दी। कारोबार छोड़ कर मैदाने सियासत में निकल आये। अवाम को हाथ में ले लिया और मुसलमानों को जिहाद करने के लिए आमादा कर लिया। यह लोग जूक़ दर जूक़ उनके झन्डे तले जमा हुए।

(तारीख़ बग़ावते हिन्द स. 761)

दिल्ली और मेरठ की ख़बरें जब लखनऊ पहुंचीं तो वहां भी हुर्रियत के शैदाईयों ने आज़ादी के लिए जिद्दो जहद शुरू कर दी। मिर्ज़ा बिरजीस क़दर की बादशाहत का एलान कराने और लोगों को आज़ादीए वतन के लिए जिहाद में शामिल होने के लिए तबलीग़ करने वाला भी एक आलिम ही था और यह था सूफ़ी अहमदुल्लाह शाह, इसके मुतअल्लिक़ सर थामस स्टेन्स ने लिखा है कि --- सूफ़ी अहमदुल्लाह शाह अज़ीमुल मर्तबत बेबाक, जसारत व अज़्मे मुहकम का मालिक था और इन तमाम में बेहतरीन सिपाही था।"

जंगे आज़ादी के दौरान में उलमा व फुज़ला ने भी इसी तरह हिस्सा लिया जिस तरह आज़ादी के दूसरे मतवालों ने लिया। जब दिल्ली में जंगे आज़ादी का ज़ोर था और जनरल बख़्त ख़ाँ उस जंग का हीरो था तो उसने सोचा कि अगर इस वक़्त उलमा से जिहाद का फ़तवा लेकर उसकी तशहीर की जाये तो लोगों में एक नया जोश पैदा हो सकता है, चुनान्चे उसने उलमा से जिहाद का फ़तवा लिया और उसे दिल्ली के गली कूचों में चस्पाँ कराया। इस फ़तवे का तशहीर पाना था कि लोगों में एक बिजली सी कौंन गई और वह परवानों की तरह जंगे आज़ादी में कूद पड़े।

मुअर्रिख़ ज़काउल्लाह जैसे आदमी ने भी एतेराफ़ किया है वह लिखते हैं-

जब तक दिल्ली में बख़्त ख़ाँ नहीं आया था, जिहाद के फ़तवे का चरचा शहर में बहुत कम था। मसाजिद में मेम्बरान पर जिहाद का वअ्ज़ कमतर होता था। बख़्त ख़ां ने यह फ़तवा लिखवाया कि मुसलमानों पर जिहाद फ़र्ज़ है। फ़तवे का असर यह था कि मुसलमानों में जोशे मज़हबी ज़्यादा हो गया।

जब दिल्ली के गली कूचों में जंगे आज़ादी लड़ी जा रही थी और बाज़ारों में लाशों के ढेर पड़े थे। अगर उस वक़्त एक तरफ़ मख़्दूम शाह महमूद जैसे आलिम अपने मुरीदों समेत जिहाद के ख़िलाफ़ थे तो दूसरी तरफ़ मौलाना फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी, मौलाना

> जाफ़र थानेसरी, मौलाना इमाम बख़्श सहबाई, मौलवी तबारक अली, मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी, मुफ़्ती मज़हर करीम दरियाबादी, मौलाना अहमदुल्लाह, मौलाना यहया अली, मुफ़्ती इनामुल्लाह गोया, मुफ़्ती लुत्फ़ुल्लाह अलीगढ़ी, मौलाना फ़ज़्ले रसू बदायूनी, मौलाना फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी, वग़ैरह जैसे सैकड़ों आलिम व फ़ाज़िल ऐसे थे जो जंगे आज़ादी में बराबर के शरीक थे और जब मुग़लिया ख़ानदान का आख़िरी चराग़ बुझ गया, तख़्त व ताज छिन गए और वतन के जां निसारों को चुन चुन कर गोलियों का निशाना बना दिया जाने लगा तो उसमें उलमा भी शामिल थे जो उस वक़्त दूसरे लोगों को पेश आये जिन उलमा व फ़ुज़ला ने फ़तवए जिहाद पर दस्तख़त किये थे उनको तरह तरह की तकलीफ़ें पहुंचाई गईं, मौलाना फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी रहमतुल्लाह अलैह को जज़ीरए अन्डोमान भेजा गया।"

अब इसके बाद बाग़ीए हिन्दुस्तान की एक इबारत मुलाहज़ा कीजिये जिससे आपको यह सही अन्दाज़ा हो जायेगा कि फ़तवए जिहाद में पेश क़दमी करने वाला कौन था।

बाग़ीए हिन्दुस्तान सफ़हा 156

> "अल्लामा (फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी) से जेनरल बख़्त ख़ां मिलने पहुंचे, मशवरा के बाद अल्लामा ने आख़िरी तीर तरकश से निकाला, जुमा की नमाज़ के बाद जामा मस्जिद में उलमा के सामने तक़रीर का इस्तिफ़ता पेश किया।"
>
> मुफ़्ती सदरुद्दीन ख़ां आज़ुर्दा सदरुस्सुदूर दिल्ली, मौलवी अब्दुल क़ादिर, क़ाज़ी फ़ैज़ुल्लाह देहलवी, मौलाना फ़ैज़ अहमद बदायूनी, डा॰ मौलवी वज़ीर ख़ां अकबराबादी, सय्यद मुबारक शाह रामपुरी ने दस्तख़त कर दिये। इस फ़तवे के शाया होते ही मुल्क में आम शोरिश बढ़ गई। दिल्ली में नब्बे हज़ार सिपाह जमा हो गई थी।"
>
> (तारीख़ ज़काउल्लाह)

आज़ादीए वतन के मुजाहिदे जलील हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की अंग्रेज़ दुश्मनी के साथ मौलवी सय्यद अहमद राय बरेलवी की अंग्रेज़ दोस्ती की एक और शहादत मुलाहज़ा कीजिये और अन्दाज़ा फ़रमाइये कि इन दोनों में किस क़दर दूरी थी।

मौलवी अब्दुल हक़ जो फ़ुज़लाए देवबन्द में शुमार किये जाते हैं वह अपनी तफ़सीरे हक्क़ानी स. 112 तफ़सीर सूरह बक़र में नेचरी के ज़ेरे उनवान लिखते हैं-

> "इस क़स्बे से एक शख़्स सय्यद अहमद ख़ाँ बहादुर भी पैदा हुए। यह शख़्स इब्तेदा में मौलवी मख़्सूसुल्लाह नबीरए शाह वलीयुल्लाह मुहद्दिस देहलवी की ख़िदमत में आकर किसी क़दर सर्फ़ व नह्व से आश्ना हुए और तावीज़ गन्डे भी सीखे लेकिन जब यह नुस्ख़ा न चला तो गवर्नमेन्ट ब्रिटिश की तरफ़ रुजूअ़ किया और अपनी लियाक़ते ख़ुदा दाद से कोई अच्छा ओहदा भी पाया फिर तो पक्के वहाबी मुत्तबअ़े मौलवी इस्माईल साहब के हो गए।"

"मौलवी अब्दुल हक़ साहब फ़ाज़िले देवबन्द की मज़्कूरा बाला इबारत ने यह वाज़ेह कर दिया कि जनाब सय्यद साहब कोई मौलवी या आलिम न थे। सिर्फ़ अरबी ग्रामर से थोड़ा बहुत आशना हुए मगर जब गाड़ी न चल सकी तो तावीज़ गन्डे के पीछे पड़ गए और जब यह नुस्ख़ा भी कामयाब न हुआ तो ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के दामन में पनाह ली।"

अब यहीं पर मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी के भाई मज़हर अली के बारे में मौलवी हुसैन अहमद साहब की राय सुन लीजिये। किसी साइल ने मौलवी हुसैन अहमद टांडवी से चन्द सवालात किये थे। जिसमें एक सवाल यह भी था कि यह बात सुनने में आई है कि आप और मौलवी महमूदुल हसन साहब की गिरफ़्तारी में मौलवी अशरफ़ अली थानवी का हाथ है क्या यह सही है ?

मौलवी हुसैन अहमद टांडवी का हस्बे ज़ैल जवाब मुलाहज़ा फ़रमाइये-

मक्तूबाते शैख़ जि. 2 स 297 से 299

> "मौलाना मरहूम (थानवी) के भाई मुहकमा सी.आई.डी. में बड़े ओहदेदार आख़ीर तक रहे उनका नाम मज़हर अली है उन्होंने जो कुछ किया हो मुस्तबअ़द नहीं।"

मौलाना अशरफ़ अली थानवी को गवर्नमेन्ट छः सौ रुपये माहवार देती थी। मौलाना थानवी के भाई मजहर अली सी.आई.डी. के बड़े ओहदे पर फ़ाइज़ रहे।

मौलवी इलियास बानीए तबलीगी जमाअत को गवर्नमेन्ट रुपया देती थी। जनाब सय्यद अहमद साहब को ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने बड़ा ओहदा दिया। मौलवी रशीद अहमद गंगोही ने ब्रिटिश को अपना मालिक व मुख़्तार कहा। मौलवी इस्माईल देहलवी ने कहा ब्रिटिश गवर्नमेन्ट पर जिहाद वाजिब नहीं। बल्कि अगर अंग्रेज़ों पर कोई हमला आवर हो तो उससे मुसलमानों को जंग करना फ़र्ज़ है ताकि हमारी गवर्नमेन्ट पर आंच न आ सके।

यह वाक़िआत की बिखरी हुई कड़ियां हैं। नाज़िरीन से मेरी मुन्सिफ़ाना गुज़ारिश है कि वह वाक़िआत की एक एक कड़ी को तरतीब देकर अकाबिर उलमाए देवबन्द की अंग्रेज़ दोस्ती का जाइज़ा लेते जायें— और यह फ़ैसला फ़रमायें कि उलमाए देवबन्द ने किस हद तक अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के साथ ज़ियादती बरती है और अपने मौलवियों की तारीफ़ व मनक़बत में कहां तक ग़लत ब्यानी और झूट बोलने से काम लिया है। जिसकी शहादत में बाग़ीए हिन्दुस्तान का एक और भी हवाला मुलाहज़ा फ़रमाइये–

बाग़ीए हिन्दुस्तान स. 120

> "मिर्ज़ा हैरत देहलवी साहबे हयाते तय्येबा ने तो महवे हैरत ही बना दिया न सिर्फ़ अल्लामा बल्कि अल्लामा के वालिद माजिद मौलाना फ़ज़्ले इमाम को भी पढ़ा लिखा मानने में तअम्मुल किया है जिनके शागिर्दों में इलाया अल्लामा के मुफ़्ती सदरुद्दीन खां आ. ज़ुर्दा सदरुस्सुदुर दिल्ली वग़ैरह जैसे गिरामी क़द्र फ़ुज़लाए अहद भी मौजूद हों जिनके अदना हलक़ा बगोश व शागिर्द नवाब सिद्दीक़ हसन ख़ान क़न्नौजी भोपाली और सर सय्यद अहमद ख़ाँ बानीए मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ जैसे अकाबिर व मशाहीरे वक़्त नज़र आते हों हैरत होती है कि इन्सान मुआनिदाना रविश इख़्तियार करते वक़्त नाबीना क्यों हो जाता है।"

इस मक़ाम पर पहुंच कर अब मुनासिब मालूम होता है कि हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की जलालते इल्म और उनके पुख़्तगीए किरदार पर एक इजमाली गुफ़्तगू कर ली जाये ताकि तस्वीरों के दोनों रुख़ दोश बदोश सामने आ जायें और नाज़िरीन को यह फ़ैसला करने में आसानी हो कि हज़रत अल्लामा इल्म व फ़ज़्ल के किस बुलन्द मक़ाम पर फ़ाइज़ थे और आज़ादीए हिन्द के लिए उस मर्दे मुजाहिद ने क्या पार्ट अदा किया है।

हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी

चमन में फूल का खिलना तो कोई बात नहीं
ज़हे वह फूल जो गुलशन बनाए सहरा को

मन्तिक़ व फ़लसफ़ा के इमाम मुजाहिदे जलील हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की शोहरत व नामवरी के जहां और अ़लल व असबाब हैं उनमें सबसे ज़्यादा अहमियत फ़लसफ़ा के इमाम होने की हैसियत से है। इसलिए अल्लामा के हालाते ज़िन्दगी पर क़लम उठाने से पहले मुनासिब है कि फ़न्ने मन्तिक़ व फ़लसफ़ा पर थोड़ी सी गुफ़्तगू कर ली जाये।

इल्मे मन्तिक़ का बाज़ाबता इज़हार सबसे पहले हज़रत इदरीस अ़लैहिस्सलाम से हुआ। मुख़ालिफ़ीने तौहीद व रिसालत को आजिज़ व साकित करने के लिए उन्होंने बतौरे मोअ़जेज़ा इस्तेमाल किया। फिर इन उलूम को यूनानियों ने अपनाया। चुनान्चे यूनान में बड़े रुतबे के दर्ज ज़ैल यह पाच फ़लसफ़ी गुज़रे हैं–

1 बन्दक़ीस सन् 500 क़ब्ल मसीह ज़माना दाऊद अलैहिस्सलाम में गुज़रा 'हज़रत लुक़मान' से इल्म व हिकमत हासिल करने के बाद यूनान वापस आ गया।

2 फ़ैसा ग़ोरिस यह अस्हाबे सुलैमान अ़लैहिस्सलाम का शागिर्द था।

3 सुक़रात यह फ़ैसा ग़ोरिस का शागिर्द था। बुतों की परसतिश से मख़्लूक़ को रोकने और दलाइल के साथ ख़ालिक़े बारी की तरफ़ तवज्जोह दिलाने पर बादशाहे वक़्त ने क़ैद कराके ज़हर दिला दिया।

4 अफ़लातून यह भी फ़ैसा ग़ोरिस का शागिर्द था और ख़ानदाने अहले इल्म से था। सुक़रात की मौजूदगी में क़रीब क़रीब गुमनाम सा रहा और उसके बाद उसने अपना नाम पैदा किया।

5 अरस्ता तालीस यन्क़ु माखुश का बेटा था और साहिबुल मन्तिक़ के लक़ब से मशहूर हुआ। बाद के सारे फ़लासफ़ा अरस्ता तालीस ही के रहीने मिन्नत और ख़ुशा चीं हैं। इन पांच के बाद दूसरे दर्जे पर 'तालीसुल मलती' साहबे फ़ैमा गोरिस, 'ज़ी मक़रातीस' और अन्कसा गोरिस हैं और अरस्तु की किताबों के शारेह होने की हैसियत से हस्बे ज़ैल नौ फ़लसफ़ी मशहूर हैं-

(1) ताऊ फ़रस्तस (2) अस्तफ़न (3) लैस यह्या बतरीक़े स्कन्दरिया (4) अमूनियुस (5) सम्लीक़ूस (6) शबाक़ँ (7) फ़रफ़ूरियुस (8) सामतियूस (9) अफ़रोदेसी।

यूनान में बाज़ दूसरे फ़ुनून के भी बड़े बड़े कामिलीन गुज़रे हैं मसलन बुक़रात व जालीनूस इल्मे तबीआत (भौतिकी) व (हकीमी) तिब में 'उक़लीदस' इल्मे हिन्दसा में 'अरशमीदस' इल्मुलअजाइर में 'बतलीमुस' और देव जानस कलबी इल्मुल मुनाज़रा व नुजूम में आप अपनी नज़ीर थे।

मुसलमान बादशाहों में सबसे पहले अब्बासिया ख़ानदान के ख़लीफ़ए सानी अबू जअ़फ़र मन्सूर ने इल्मे फ़िक़ह के साथ 'फ़लसफ़ा' 'मन्तिक़' और हैइयत को भी हासिल किया।

इसके कातिब अब्दुल्लाह इब्ने अलमुक़फ़्फ़उल ख़तीबुल फ़ारसी मुतरजिम 'कलीला दिमना' ने अरस्तु की हस्बे ज़ैल तीन किताबें अरबी में तर्जमा करके मन्तिक़ी के लक़ब से शोहरत हासिल की।

(1) क़ातीग़ूरियास (2) अरमीनास (3) अनूलू तबक़ा

ख़ानदाने अब्बासी का सातवां नामवर ख़लीफ़ा मामून रशीद 198 हिजरी में जब तख़्ते ख़िलाफ़त पर बैठा तो अपने ज़ौक़ की बिना पर इन फ़ुनून की तरफ़ मुतवज्जेह हुआ, चुनान्चे मामून के लिखने पर क़ैसरे रूम ने अरस्तु की किताबों का ज़ख़ीरा भेज दिया (वज़ीर जमालुद्दीन क़फ़ती ने अख़बारुल हुकमा में इसकी तफ़सील दर्ज की है।)

फिर चौथी सदी हिजरी में शाह मन्सूर इब्ने नूह सामानी की दरख़्वास्त पर हकीम अबू नसर फ़ाराबी ने उनको मुरत्तब व मुहज़्ज़ब करके मुअ़ल्लिमे सानी का लक़ब हासिल किया।

सुल्तान मसऊद ने शैख़ुर्रईस अबू अली इब्ने सैना (वफ़ात 1037 ई॰ 427 हिजरी) को अपना वज़ीर बना कर तसानीफ़े फ़ाराबी से इस्तेफ़ादा करा के किताबें

लिखवाईं। सूए इत्तेफ़ाक़ कि इस जान्काही व सर मग़ज़ी के बाद कुतुब ख़ाना नज़रे आतिश हो गया तो इब्ने सैना मुहाफ़िज़े उलूम बन गए, चुनान्चे अब जो कुछ है उसी की मेहनत का फल है।

इसके बाद अबू मुहम्मद इब्ने अहमद उन्दुलसी व मुहम्मद ज़करिया राज़ी साहबे तसानीफ़े कसीरा (वफ़ात 932 ई॰ 320 हिजरी ने भी चौथी सदी हिजरी) में इस पौदे को परवान चढ़ाने में कसर उठा न रखी।

पांचवीं सदी हिजरी और उसके बाद 'इमाम अबू हामिद इब्ने ग़ज़ाली' (वफ़ात 505 हिजरी) अल्लामा इब्ने अरशद (वफ़ात 1198 ई॰) इमाम फ़ख़रुद्दीन राज़ी (वफ़ात 606 हिजरी) इब्ने तैमिया अलहर्रानी (768 हिजरी 1337 ई॰) नजमुद्दीन मख़्ज़वानी, इब्ने सहलान और अफ़ज़लुद्दीन ख़ोनजी वग़ैरह ने इन फ़नों में नई नई बारीकियां पैदा कीं। इब्ने ख़ुलदून ने इन तमाम हज़रात का तज़्किरा बड़े उम्दा पैराया में किया है।

इसके बाद नसीरुद्दीन मुहक़्क़िक़ तूसी, कुतबुद्दीन राज़ी, सदरुद्दीन शीराज़ी, मुल्ला जलाल मुहक़्क़िक़ दव्वानी, मुल्ला महमूद जौनपुरी साहब शम्से बाज़ेग़ा व फ़राइद वग़ैरह ने इस फ़न को चार चाँद लगाए। यहां तक कि सलातीने मुग़लिया के अहद में अरब व अजम के अहले फ़ज़्ल व कमाल का एक जम्मे ग़फ़ीर था। हज़रत अमीर ख़ुसरू ने एक के बाद दूसरे सात बादशाहों से एज़ाज़ हासिल किया मुख़्तलिफ़ इन्क़िलाबात देखे मगर हिन्दुस्तान से मुंह न मोड़ा।

शायरों में नज़ीरी नीशापुरी, मलिक क़ुम्मी, उरफ़ी, शीराज़ी, ज़ुहूरी, ग़ज़ाली, शहीदी, आली शीराज़ी, कलीम हमदानी, ग़नी कश्मीरी।

कुत्ताब (लिखने वाले) में-शीरीं क़लम, ज़र्रीं क़लम, हफ़्त क़लम।

उलमा में शैख़ हुसैन वसी, मौलाना फ़तहुल्लाह शीराज़ी, (वफ़ात 997 हिजरी) मौलाना मिर्ज़ा समरक़न्दी, मीर असलम हीरवी (वफ़ात 1061 हिजरी) मीर ज़ाहिद हीरवी, (वफ़ात 1111 हिजरी) मौलाना मीर कलाँ मुअ़ल्लिम जहांगीर (वफ़ात 983 हिजरी) मौलाना सदर जहां, मौलाना ग़ाज़ी ख़ाँ बदख़्शी वग़ैरह जैसी इल्मी शख़्सियतों से हिन्दुस्तान जन्नत निशान बन गया था। ग़रज़ कि चारों तरफ़ उलूमे ज़ाहिरी व बातिनी के चश्मे उबल रहे थे।

मुसलमान बादशाहों की क़दरदानी व इल्म दोस्ती के सिर्फ़ दो वाक़िए शहादत के तौर पर पेश किये जाते हैं जिससे अन्दाज़ा होगा कि वह उलूम व फ़ुनून जो आज

सिर्फ़ ज़ीनते अलमारी हैं या जिनकी दर्स व तदरीस का सिलसिला मस्जिद या ख़ानक़ाह की बोसीदा चटाईयों पर जारी है किसी वक़्त सलातीन के दरबार में उनकी क्या क़दर व क़ीमत थी।

सुल्तान मुहम्मद इब्ने तुग़लक़ शाह ने मौलाना मुईनुद्दीन इमरानी देहलवी को क़ाज़ी अज़दुद्दीन साहब मुवाफ़िक़ की ख़िदमत में शीराज़ भेज कर दरख़्वास्त की कि हर क़ीमत पर हिन्दुस्तान तशरीफ़ लाकर मतन मुवाफ़िक़ को मेरे नाम मअनून कर दीजिये।

सुल्तान अबू इस्हाक़ वालीए शीराज़ को पता चला तो दौड़ा हुआ अल्लामा क़ाज़ी अज़दुद्दीन की ख़िदमत में पहुंच कर अर्ज़ परदाज़ हुआ कि हर ख़िदमत के लिए हाज़िर हूं। तख़्ते सल्तनत की ख़्वाहिश हो तो दस्त बरदार होने को तैयार हूं मगर ख़ुदा के लिए शीराज़ को यतीम न बनाइये। क़ाज़ी साहब ने सुल्तान की क़दरदानी से मुतअस्सिर होकर इरादा बदल दिया और सुल्तान ही के नाम पर किताब मअनून करके हमेशा के लिए ज़िन्दाए जावेद बना दिया।

दूसरा वाक़िआ अल्लामा अमीर फ़तहुल्लाह शीराज़ी से मुतअ़ल्लिक़ है। आदिल शाह बीजापुरी ने हज़ारों ख़्वाहिशों के साथ दकन बुला कर अपना वकीले मुतलक़ बना दिया और ९८१ हिजरी में अकबर बादशाह ने सदरे कुल बना कर ९९३ में अमीरुल मुल्क और अज़दुद्दौला के ख़िताब से नवाज़ा।

हिन्दुस्तान के मशाहीर उलमा उनके हलक़ए दर्स में शरीक रहे और उन्हीं के ज़माने से उलूमे अक़लिया को शानदार फ़रोग़ हासिल हुआ 1997 हिजरी में उनके इन्तेक़ाल पर अकबर बादशाह ने बड़ा ग़म मनाया। (जिसकी तफ़सील मआसिरुल करीम में मौजूद है) अलबत्ता फ़ैज़ी का एक शेअ़र सुन लीजिये।

शहनशाहे ग़मी रा दर वफ़ातश सीना पुरनम शुद
सिकन्दर अश्के हसरत रेख़्त कि अफ़लातूं ज़े आलम शुद

यही वह क़दरदानी व इज़्ज़त अफ़ज़ाई थी जिसके सबब अल्लामा फ़ज़्लेहक़ के मूरिसाने आला शम्सुद्दीन और बहाउद्दीन दोनों भाईयों ने भी हिन्दुस्तान को रौनक़ बख़्शी।

विलादत और नसब

अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी 1212 हिजरी मुताबिक़ 1797 ई॰ में अपने आबाई वतन मौलदविलाद ख़ैराबाद में पैदा हुए। आपके वालिद माजिद मौलाना

फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी उलमाए अस्र में मुमताज़ और उलूमे अक़लिया के आला दर्जा पर सरफ़राज़ थे। हज़रत अल्लामा के दादा हज़रत मौलाना अरशद हरगाम पुर से ख़ैराबाद तशरीफ़ ला कर सुकूनत पेज़ीर हुए थे।

शजरए नसब

(1) मौलाना फ़ज़्ले हक़ इब्ने (2) मौलाना फ़ज़्ले इमाम इब्ने (3) मौलाना शैख़ मुहम्मद अरशद इब्ने (4) हाफ़िज़ मुहम्मद सालेह इब्ने (5) मुल्ला अब्दुलवाजिद इब्ने (6) अब्दुलमाजिद इब्ने (7) क़ाज़ी सदरुद्दीन इब्ने (8) इस्माईल हरगानवी इब्ने (9) क़ाज़ी बदायूनी इब्ने (10) शैख़ अरज़ानी इब्ने (11) शैख़ मुनव्वर इब्ने (12) शैख़ नज़ीरुल मुल्क इब्ने (13) शैख़ सालार शाम इब्ने (14) शैख़ वजीहुल मुल्क इब्ने (15) शैख़ बहाउद्दीन इब्ने (16) शेरुल मुल्क शाह ईरानी इब्ने (17) शाह अताउल मुल्क इब्ने (18) मलिक बादशाह इब्ने (19) हाकिम इब्ने (20) आदिल इब्ने (21) ताइस इब्ने (22) जिरजीस इब्ने (23) अहमद नामदार इब्ने (24) मुहम्मद शहर यार इब्ने (25) मुहम्मद उसमान इब्ने (26) दान इब्ने (27) हुमायूं इब्ने (28) क़ुरैश इब्ने (29) सुलैमान इब्ने (30) अफ़्फ़ान इब्ने (31) अब्दुल्लाह इब्ने (32) मुहम्मद इब्ने (33) अब्दुल्लाह इब्ने अमीरुल मोमिनीन ख़लीफ़तुल मुस्लिमीन हज़रत उमर फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु तआला अन्हु। इस तरह तैंतीस वास्तों से ख़लीफ़ए सानी तक नसब गिरामी पहुंचता है।

अल्लामा के मूरिसे आला शेरुल मुल्क इब्ने शाह अता अताउल मुल्क ईरानी के मूरिसान एक क़ितअ़ मुल्के ईरान पर क़ाबिज़ व हुक्मरां थे। ज़वाले रियासत पर दौलते इल्म कमाई। शेरुल मुल्क के दो साहबज़ादे बहाउद्दीन और शम्सुद्दीन ज़ी इल्म बुज़ुर्ग थे। यह दोनों भाई ईरान से हिन्दुस्तान वारिद हुए।

मौलाना शम्सुद्दीन ने मस्नदे इफ़्ता रोहतक संभाली, हज़रत शाह वलीयुल्लाह इब्ने शाह अब्दुर्रहीम मुहद्दिस देहलवी उन्हीं की औलाद से थे और मौलाना बहाउद्दीन क़ुव्वतुल इस्लाम बदायूं के मुफ़्ती हुए। इनकी औलाद में शैख़ अरज़ानी बदायूनी नामवर बुज़ुर्ग और आला दर्जा के मुफ़्ती हुए। शैख़ एमादुद्दीन इब्ने शैख़ अरज़ानी तहसीले इल्म की ख़ातिर क़ाज़ी हरगाम (ज़िला सीतापुर अवध) की ख़िदमते बा-बरकत में पहुंचे। क़ाज़ी साहब ने तहक़ीक़े शराफ़त व नजाबत के बाद अपना दामाद बना लिया और उनसे शैख़ इस्माईल पैदा हुए जिनकी शादी शैख़ सअ़दी

काकोरवी की लड़की से हुई। उनसे क़ाज़ी सदरुद्दीन पैदा हुए। क़ाज़ी साहब के दो साहबज़ादे हुए। एक साहबज़ादे 'मुल्ला अबुलवाइज़' जो औरंगज़ेब आलमगीर रहमतुल्लाह अलैह के अतालीक़ रहे और फ़तावा आलमगीरी के मुअल्लिफ़ीन से हैं।

इसके इलावा 'हिदाया' 'मुतव्वल' और 'मुल्ला जलाल' पर हाशिये लिखे। उनकी शख़्सियत का अन्दाज़ा इससे हो सकता है कि मुल्ला कुतबुद्दीन शहीद सिहालवी (वालिद उस्तादुल कुल मुल्ला निज़ामुद्दीन सहालवी फ़रंगी महली) इनसे मुलाक़ात के लिए हरगाम पहुंचे थे। 'मुल्ला मुहिब्बुल्लाह बिहारी साहबे सुल्लम' आपके दर्स में शरीक होना चाहते थे। आपके पास वक़्त न था इस लिए सुहाल जाकर मुल्ला कुतबुद्दीन शहीद के शागिर्द हुए।

दूसरे साहबज़ादे 'मुल्ला अब्दुल माजिद इब्ने अब्दुल वाजिद' फ़ाज़िले जलील थे, 'काफ़िया की मबसूत शरह' और 'हाशिया उकलीदस' लिखा और 'तअलीक़ाते मुतफ़र्रिक़ा हिदाया' पर लिखी। बहादुर शाह अव्वल के ज़माने में आग लगने की वजह से तमाम कुतुब ख़ाना जल गया। हरगाम में वफ़ात पाई और वहीं दफ़न हुए।

अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के दादा शैख़ मुहम्मद अरशद ने हरगाम को ख़ैरबाद कह कर ख़ैराबाद को आबाद किया। मौसूफ़ की दूसरी बीवी से अल्लामा के वालिद माजिद मौलाना फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी थे।

मुख़्तसर हालात

मौलाना फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी

हज़ारों साल नरगिस अपनी बे-नूरी पे रोती है
बड़ी मुश्किल से होता है चमन में दीदावर पैदा

अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तारीख़ तिश्नए तकमील रह जाएगी अगर अल्लामा के वालिदे मोहतरम मौलाना फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी के हालाते ज़िन्दगी न पेश किये गए। इस लिए ज़िम्नन मौलाना के मुख़्तसर हालात दर्ज किये जाते हैं।

मौलाना फ़ज़्ले इमाम बड़े नब्बाज़ और ज़हीन थे। मौलाना अब्दुलमाजिद किरानी ख़ैराबादी के अरशद शागिर्दों में से थे। उलूमे अक़लिया व नक़लिया उन्हीं से हासिल किया। 'मीर ज़ाहिद रिसाला' और 'मीर ज़ाहिद मुल्ला जलाल' पर हवाशी

लिखे। इसके इलावा और भी बीसियों मुफ़ीद और मअ्रेकतुल आरा किताबें लिखी हैं। जिनका नाम मालूम हो सका वह दर्ज की जाती हैं-

मन्तिक़ में मशहूर तस्नीफ़ 'मिरक़ात' है जो तमाम मदारिसे अरबिया के निसाब में दाख़िल है, हाशिया उफ़क़ुल मुबीन, तलख़ीसुश् शिफ़ा, नुख़बतुस् सिर्र और आमद नामा तस्नीफ़ किया। इनमें से बाज़ किताबें ग़ैर मतबूआ हैं जिनमें से बाज़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ और लाहौरपुर और कुछ उबैदुल्लाह ख़ाँ रईसे टोंक के कुतुब ख़ाना में मौजूद हैं। इल्मी क़ाबिलियत का अन्दाज़ा इससे किया जा सकता है कि एक जानिब शाह अब्दुल अज़ीज़ साहब और शाह अब्दुल क़ादिर साहब का डंका मन्क़ूलात में बज रहा था और दूसरी तरफ़ इसी दिल्ली में मौलाना फ़ज़्ले इमाम के मअ्क़ूलात का सिक्का चल रहा था। हिन्द व बैरूने हिन्द के तलबा दोनों दरियाओं से सैराब हो रहे थे। सर सय्यद अहमद ख़ाँ बानी मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ ने आसारुस्सनादीद में मौलाना फ़ज़्ले इमाम का तज़्किरा जिस अक़ीदतमन्दी से किया है वह देखने से तअल्लुक़ रखता है। इब्तेदा इन सिफ़ात व अलक़ाब से की है-

"अकमल अफ़राद नौए इन्सी, महबते अनवारे फ़ुयूज़, सरावे सर चश्मए ऐनुल यक़ीन, मुसिसे असास मिल्लत व दीन, माहीए आसारे जहल हादमे बनाए एतेसाफ़, मुहीए मरासिमे इल्म बानी मबानीए इन्साफ़, क़ुदवए उलमाए फ़हूल, हावीए मअ्क़ूल व मन्क़ूल, सनद अकाबिरे रोज़गार, मरजए अआली व अदानीए हर दयार, मेज़ाजदाने शख़्से कमाल, जामेअ् सिफ़ाते जलाल व जमाल, मौरिदे फ़ैज़े अज़ल व अबद, मुतेरह अन्ज़ारे सआदते सरमद, मिस्दाक़े मफ़हूमे तमाम अजज़ा वासितुल अक़्द, सिलसिलए हिकमते इशराक़ी व मश्शाई, ज़ुबदए किराम, उसवए एज़ाम, मुक़तदाए अनाम, मौलाना मख़्दूमना मौलवी फ़ज़्ले इमाम अदख़लहुल्लाहुल मक़ाम फ़ी जन्नातिन्नईम बिलुत्फ़िहिल अमीम।"

मुझे हैरत है उलमाए देवबन्द पर जो 'शाह वलीयुल्लाह साहब' के हालाते ज़िन्दगी पर क़लम उठाते हैं लेकिन अपने उन मुहसिनीन को न सिर्फ़ नज़र अन्दाज़ ही कर देते हैं बल्कि बाज़ औक़ात उन्हें मतऊन व मुत्तहम भी क़रार देते हैं। काश उलमाए देवबन्द हक़ीक़त पसन्दी से काम लेते और ठन्डे दिल से सोचते कि उनके

वह मुहसिनीन जिनकी किताबें आज भी दारुल उलूम देवबन्द के निसाब में दाख़िल हैं। उनके साथ इनका क्या बरताव है। क्या मौलाना फ़ज़्ले इमाम व अल्लामा फ़ज़्ले हक़ इसी सब्बो शत्म के मुस्तहिक़ हैं जिस घिनौने अन्दाज़ में उलमाए देवबन्द उन्हें याद करते हैं।

बुरा हो उस ख़सबियत व तंग नज़री का जिसने अपने व बेगाने की भी तमीज़ बाक़ी न रखी। सच तो यह है कि उलमाए देवबन्द गाली देने में अपनी फ़ितरत व आदत से मजबूर हैं। जबकि उलमाए देवबन्द रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को गाली देने में नहीं चूकते तो मौलाना फ़ज़्ले इमाम व अल्लामा फ़ज़्ले हक़ किस शुमार व क़तार में हैं।

यही है वह उलमाए देवबन्द जिन्होंने अपनी किताबों में महबूबे किरदिगार रसूले कायनात सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को चमार से ज़्यादा ज़लील और ज़र्रए नाचीज़ से कमतर लिखा है।

चुनान्चे मौलवी मुहम्मद मियां देवबन्दी मुरादाबादी मुअल्लिफ़े "उलमाए हिन्द की शानदार माज़ी" ने मौलवी इसमाईल देहलवी का तज़्किरा करते हुए अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी के दामने इल्म व अदब पर कीचड़ उछालने की नाकाम कोशिश की है।

हां अगर 'उलमाए हिन्द की शानदार माज़ी' के बजाए 'अकाबिरे जमीअतुल उलमा हिन्द की शानदार माज़ी' इस किताब का नाम होता तो इस नाम के पर्दे में मुअल्लिफ़ को बहुत कुछ कहने का इख़्तियार था लेकिन जबकि किताब का सरे वरक़ उलमाए हिन्द के जली क़लम से आरास्ता हो तो मुअल्लिफ़ का किस क़दर ज़ुल्म है कि दूसरे उलमाए हिन्द को न सिर्फ़ नाक़ाबिले एतेना ही तसव्वुर किया बल्कि शोहरए आफ़ाक़ व नामवर उलमाए अहले सुन्नत को मतऊन व मुत्तहम क़रार दिया। बात अपने मौज़ूअ से दूर हो गई मुझे ज़ैली तौर पर मौलाना फ़ज़्ले इमाम रहमतुल्लाह अलैह के बारे में एक इजमाली नक़्शा पेश करना है।

हज़रत मौलाना फ़ज़्ले इमाम उलूमे ज़ाहिरी के साथ रूहानियत में भी बुलन्द दर्जा रखते थे। आपके वालिद शैख़ मुहम्मद अरशद मौलाना अहमद इब्ने हाजी

सिफ़तुल्लाह मुहद्दिस ख़ैराबादी से बैअत थे। आपके एक साहबज़ादे आलमे जवानी में क़ज़ा कर गए। बाक़ी बइक़्तज़ाए नौ उमरी अहकामे शरईया के पाबन्द थे इसलिए मौलाना अरशद साहब को तशवीश रहती थी और एक बार आलमे इज़्तिराब व बेचैनी में पीरो मुर्शिद की ख़िदमत में हाज़िर हुए और शैख़े तरीक़त से दुआ की दरख़्वास्त की और मुर्शिदे कामिल ने दुआ की। चुनान्चे रात में सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ियारत नसीब हुई कि सरकारे कायनात सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पक्के बाग़ में तशरीफ़ लाए और बेल के दरख़्त के नीचे वुज़ू फ़रमाया और फ़र्ज़ नमाज़ के बाद पीर व मुरीद दोनों एक दूसरे को मुबारकबाद देने रवाना हुए। रास्ते में दोनों की मुलाक़ात हुई तो एक दूसरे को बशारत का हाल बताया और वहीं से दोनों पक्के बाग़ में पहुंचे तो देखा कि मक़ामे मअ़हूद पर वु. ज़ू का असर यानी पानी की तरी मौजूद थी। एक अर्से तक लोग उस जगह की ज़ियारत करते रहे।

चुनान्चे शैख़ुल इस्लाम हज़रत मौलाना नक़ी अली ख़ाँ साहब बरैलवी रहमतुल्लाह अलैह मुक़तदाए मिल्लत ताजदारे अहले सुन्नत सय्यदी इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ फ़ाज़िले बरैलवी रज़ियल्लाहु अन्हु को 1309 हिजरी में साथ लेकर बरैली शरीफ़ से ख़ैराबाद उस मक़ाम की ज़ियारत के लिए हाज़िर हुए और मौलाना हसन बख़्श के यहां मेहमान हुए थे। अफ़सोस न अब वह मकान बाक़ी रहा और न ही उस जगह का पता चल सकता है।

मौलाना फ़ज़्ले इमाम के हज़ारों शागिर्दों में मुफ़्ती सदरुद्दीन और अल्लामा फ़ज़्ले हक़ शोहरए आफ़ाक़ हैं। मुफ़्ती सदरुद्दीन साहब दिल्ली में 1204 हिजरी मुताबिक़ 1799 ई॰ में पैदा हुए। तारीख़े विलादत 'चराग़' है। बाप दादा कश्मीरी थे। शाह अब्दुल अ़ज़ीज़ साहब शाह अ़ब्दुल क़ादिर साहब और फ़ज़्ले इमाम के शागिर्दे रशीद और अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के हम सबक़ थे। 1857 ई॰ के हंगामे में बग़ावत के इलज़ाम में क़ैद कर लिए गए। जायदाद ज़ब्त कर ली गई। 24 रबीउल अव्वल शरीफ़ 1258 हिजरी मुताबिक़ 1868 ई॰ में वफ़ात पाई।

'चराग़े दो जहां बुवद' मादए तारीख़ है। मिर्ज़ा ग़ालिब भी जो मुफ़्ती सदरुद्दीन

साहब और अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के जलीस व हम नशीन थे। उसी साल राहीए मुल्के अदम हुए। हज़रत फ़ज़्ले इमाम ख़ैराबादी ने 5 ज़ीक़अ़दा 1240 हिजरी मुताबिक़ 1824 ई० को दाइए अजल को लब्बैक कहा। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन०

मिर्ज़ा ग़ालिब ने हस्बे ज़ैल तारीख़े वफ़ात लिखी।

ऐ दरेग़ा क़ुद्वए अरबाबे फ़ज़्ल
करदी सुए जन्नतुल मावा ख़ेराम

चूं इरादत अज़ पए कसबे शरफ़
जस्त साँ क़ुव्वत आँ आली मकाम

चेहरए हस्ती ख़राशीदम नख़ुस्त
ता बिनाए तख़रेजा गरदद तमाम

गुफ्तम अन्दर सायए लुत्फ़े नबी
बाद आरामश गहे फ़ज़्ले इमाम
1240 हिजरी

हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़

आ चश्मे आरज़ू की गुहर बारियां तो देख
लुटते हैं सुबहो शाम ख़ज़ाने नये नये

अल्लामा की तालीम व तरबियत

मौलाना फ़ज़्ले हक़ ने आँख खोली तो गिर्दो पेश इल्म व फ़ज़्ल इमारत व रियासत को जलवा गर देखा। यही वजह थी कि अल्लामा के सहाबज़ादे 1857 के हंगामे के बाद माद्दी रियासत से महरूम होकर भी मुस्तग़नी और कोहे वक़ार रहे। हिन्दुस्तान के मशहूर मर्दुमखेज़ क़स्बों में ख़ैराबाद का नाम भी सदियों से रहा है। शाही ज़माना में कमिशनरी का पायए तख़्त भी रह चुका है। बड़े बड़े उलमा व मशाइख़ के मज़ारात आज भी ज़ियारत गाहे ख़लाइक़ हैं। जिस वक़्त अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबाद से दिल्ली पहुंचे तो एक से बढ़ कर एक बा-कमाल नज़र आये। मुफ़स्सिरीन, मुहद्दिसीन, फुक़हा, फ़लासफ़ा, औलिया, शोअ़रा, जिस तबके पर नज़र डालिये तो सब ही मौजूद थे। आपके वालिद माजिद मौलाना फ़ज़्ले इमाम मकान के इलावा हाथी और पालकी पर भी दरबार आते जाते वक़्त साथ बिठा कर दर्स देते थे और कम उम्री ही में माक़ूलात में अपना जैसा यगानए रोजगार बना लिया था और मन्क़ूलात की तहसील के लिए शाह अब्दुल क़ादिर मुहद्दिस रहमतुल्लाह अलैह और शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस रहमतुल्लाह अलैह की दर्सगाह में पहुंचा दिया।

ज़कावत व ज़ेहानत

चुनान्चे हज़रत अल्लामा ने 1225 हिजरी मुताबिक़ 1809 ई० तेरह साल की उम्र में तमाम पुरव्वजा उलूमे अक़लिया व नक़लिया की तकमील की और चार माह कुछ दिन में क़ुरआन शरीफ़ हिफ्ज़ किया।

हज़रत शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस देहलवी ने जब रद्दे शीआ़ में तोहफ़ए इस्ना अशरी तहरीर फ़रमाई तो शीआ़ने हिन्द की तरह ईरान में भी हैजान पैदा हुआ। ईरान से मीर बाकिर दामाद साहब उफ़कुल मुबीन के ख़ानदान का मुजतहिद फ़रीक़ैन की किताबें लेकर शाह साहब से मुनाज़रा के लिए दिल्ली पहुंचा। ख़ानक़ाह में दाख़िल होने पर शाह साहब ने फ़राइज़े मेज़बानी अदा फ़रमाते हुए क़ियाम के लिए मुनासिब

जगह तजवीज़ फ़रमा दी। शाम को मौलाना फ़ज़्ले हक़ हाज़िर हुए तो शाह साहब को मसरूफ़ मेहमान नवाज़ी देख कर कैफ़ियत मालूम की और मग़रिब बाद मुजतहिद साहब की ख़िदमत में पहुंचे। मुजतहिद साहब ने पूछा, मियां साहबज़ादे क्या पढ़ते हो ? अर्ज़ किया 'इशारात, शिफ़ा, और उफ़क़ुल मुबीन, वग़ैरह देखता हूं। मुजतहिद साहब को बड़ी हैरत हुई और उफ़क़ुल मुबीन की किसी इबारत का मतलब पूछ लिया। अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ने ऐसी मुदल्लल तक़रीर की कि मुतअहिद एतेराज़ात साहबे उफ़क़ुल मुबीन पर कर गए। मुअज़्ज़ज़ मेहमान ने एतेराज़ात के जवाब देही की कोशिश की तो उनको जान छुड़ाना और भी दूभर हो गई। जब ख़ूब आजिज़ कर लिया तो अपने शुबहात के ऐसे अन्दाज़ में जवाबात दिये कि तमाम हमराही उलमा भी अंगुश्त बदन्दाँ हो गए। आख़िर में यह भी इज़हार कर दिया कि मैं शाह साहब का अदना शागिर्द हूं और इज़हारे मअज़रत के बाद रुख़सत हो गए। उलमाए ईरान ने अन्दाज़ा कर लिया कि जब ख़ानक़ाह के बच्चों के इल्म व फ़ज़्ल का यह आलम है तो शैख़े ख़ानक़ाह का क्या हाल होगा। चुनान्चे सुबह को जब ख़ैरियत तलबीए मेहमान के लिए शाह साहब ने आदमी भेजा तो पता चला कि मुजतहिद साहब आख़िरी रात में दिल्ली से रवाना हो चुके हैं।

एक लतीफ़ा

दिल्ली के किसी पुल पर किसी वजह से आमद व रफ़्त ममनूअ़ क़रार दे दी गई थी। अल्लामा के पास कुछ लोग आये और एक बारात ले जाने की बसद मिन्नत व समाजत इजाज़त चाही। अल्लामा ने एक दस्तख़ती पर्चे पर लिख दिया। "रोको मत जाने दो" मुहाफ़िज़ीन ने पर्चा देख कर बारात निकल जाने दिया, हुकूमत की तरफ़ से जवाब तलब किया गया। अल्लामा ने अपनी ज़ीरकी व दानाई से फ़रमाया मैंने तो लिखा था 'रोको, मत जाने दो' इस से ग़रीबों का भी काम निकल आया और अपने ऊपर इल्ज़ाम भी न आने दिया।

सुख़न फ़हमी

आम उलमा की तरह अल्लामा शेअ़र व सुख़न के फ़न से बे ख़बर न थे। शेअ़र गोई के मानिन्द सुख़न फ़हमी में भी कमाल हासिल था। वतने मालूफ़ ख़ैराबाद जो उलमा व सुलहा का मम्बअ़ व मस्कन चला आ रहा था वही लखनऊ के क़ुर्ब और अपनी ज़मीने मर्दुम ख़ेज़ की वजह से मअ़दिने शोअ़रा भी बना हुआ था। अल्लामा

के दौर में हाजी तुराब अली नामी, मुन्शी क़ुदरत हुसैन क़ुदरत, मौलवी मुज़फ़्फ़र हुसैन शोख़ी, मुन्शी मुहम्मद जाफ़र जमहरी, मुन्शी बिहारी लाल ख़ावरी, मुन्शी मोहन लाल गिरामी, मौलवी इलाही बख़्श नाज़िश, मौलवी फ़ज़्ले हक़ अ़ज़ीम वग़ैरह गुलिस्ताने शायरी के मुख़्तलिफ़ रंग व बू रखने वाले शगुफ़्ता फूल थे और ख़ैराबाद की यही वह इल्मी व अदबी फ़ज़ा थी जिसने आख़िरी दौर में भी रियाज़, मुज़्तर, वसीम, कौसर, बिस्मिल, नय्यर और अख़्तर जैसे साहबे दीवान व बाकमाल शोअ़रा पैदा किये जिन्होंने लखनवी स्कूल की शान को चार चाँद लगाए।

अल्लामा रेज़ीडेन्ट के विभाग के सरिश्तादार हो चुके थे। वली अहद से दोस्ताना लगाव था। क़िला में आमद व रफ़्त रहती थी। बड़े बड़े कुहना मश्क़ शायर मौलवी इमाम बख़्श सहबाई, अल्लामा अब्दुल्लाह ख़ाँ अ़लवी, हकीम मोमिन ख़ाँ मोमिन, मुफ़्ती सदरुद्दीन ख़ाँ आज़ुर्दा, मिर्ज़ा असदुल्लाह ख़ाँ ग़ालिब, नवाब ज़ियाउद्दीन ख़ाँ नय्यर, शाह नसीरुद्दीन नसीर, शैख़ मुहम्मद इब्राहीम ज़ौक़, हकीम आग़ा ख़ाँ ऐश, हाफ़िज़ अब्दुर्रहमान ख़ाँ एहसान, मीर हसन तस्कीन और न जाने कितने सुख़नवराने बाकमाल का जमगठा था। यह लोग एक जगह जमा होते होंगे तो आसमान को भी ज़मीन पर रश्क आता होगा।

यही वजह थी कि मिर्ज़ा ग़ालिब से अल्लामा के पुरख़ुलूस और गहरे तअल्लुक़ात थे। अल्लामा ने मिर्ज़ा की अक्सर ग़ज़लों को सुना और दीवान को देखा तो मिर्ज़ा साहब को समझाया कि यह अशआ़र आम लोगों की समझ में न आयेंगे। चुनान्चे हाली ने आबे हयात सफ़हा 512 पर तज़्किरा किया है कि मौलाना फ़ज़्ले हक़ की तहरीक से मिर्ज़ा ने अपने उर्दू कलाम में से जो उस वक़्त मौजूद था दो तिहाई के क़रीब निकाल डाला और उसके बाद इस रविश पर चलना बिल्कुल छोड़ दिया। मिर्ज़ा ग़ालिब ने उससे मुतअस्सिर होकर यह रुबाई कही थी।

मुश्किल है ज़ेबस कलाम मेरा ऐ दिल
सुन सुन के इस सुख़नवराने कामिल

आसान करने की करते फ़रमाइश
गोयम मुश्किल व गर लिखे नगोयम मुश्किल

बक़ौल मौलाना हाली, अल्लामा की सुख़न फ़हमी का अन्दाज़ा इस वाक़िआ से लगाया जा सकता है कि मिर्ज़ा के एक फ़ारसी क़सीदे की तश्बीब का शेअ़र है।

हमचुनां दर तन्क गैब सबूते दारन्द
बवजूदे कि नदारन्द ज़े ख़ारिज अऩ्याँ

मज़कूरा बाला शेअ्र से मुतअ़ल्लिक़ मिर्ज़ा ग़ालिब ने मौलाना हाली से तज़्किरा किया कि मैंने सुबूते की जगह नुमूदे लिखा था। मौलवी फ़ज़्ले हक़ को जब यह शेअ्र सुनाया तो उन्होंने कहा कि अअ्याने साबिता के लिए नुमूद का लफ्ज़ नामुनासिब है इसकी जगह सुबूत बना दो। चुनान्चे तबअ़े सानी में बजाए नुमूद के सुबूत बना दिया है। (यादगारे ग़ालिब स. 79) अहले इल्म जानते हैं कि इस इस्लाह ने फ़लसफ़ियाना इस्तेलाह के मुताबिक़ शेअ्र को कहां से कहां पहुंचा दिया है।

यही वह अ़िलल व अस्बाब हैं जिन्होंने मिर्ज़ा ग़ालिब को मसलए इमकाने नज़ीर और इम्तेनाअ़े नज़ीर पर क़लम उठाने के लिए मजबूर किया। मौलवी इस्माईल देहलवी और मौलवी फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी के माबैन जहां रफ़अ् यदैन, आमीन बिल जेहर जैसे मसाइल पर इख़्तिलाफ़ था वहीं सबसे अहम मसला इमकाने नज़ीर व इम्तेनाअ़े नज़ीर का था।

इस मसला में मौलवी इस्माईल देहलवी की राय यह थी कि ख़ातमुन्नबीईन का मिस्ल मुमकिन बिज़्ज़ात और मुमतनअ् बिलग़ैर है और हज़रत अल्लामा मुमतनअ् बिज़्ज़ात मानते थे। इस मसला पर अल्लामा की मुस्तक़िल किताब मुनाज़राना अन्दाज़ पर इम्तेनाअ़े नज़ीर के नाम से 1908 ई० में मौसूफ़ के तिलमीज़ुत् तिलमीज़ हज़रत मौलाना सय्यद सुलैमान अशरफ़ बिहारी रहमतुल्लाह अलैह साबिक़ सदर दीनियात मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ के ज़ेरे एहतेमाम शाया हो चुकी है और हज़रत अल्लामा के हाथ का लिखा हुआ असली मुसव्वदा कुतुब ख़ाना हबीबगंज में मौजूद है। इस किताब में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नज़ीर के मुमतनअ् बिज़्ज़ात होने पर जो दलाइल व बराहीन क़ाइम किये हैं उन्हें देख कर बे साख़्ता मरहबा व अहसनत ज़बान पर आता है। हज़रत अल्लामा ने इल्मी व फ़न्नी हैसियत से वह गुलकारियां की हैं कि सफ़हाते किताब तख़्ता चमनिस्तान बन गए हैं। यह तो पहले गुज़र ही चुका है कि मिर्ज़ा असदुल्लाह ग़ालिब से अल्लामा के बड़े गहरे तअल्लुक़ात थे। अल्लामा का रुजहाने तबअ् देख कर इसी मौज़ूअ् पर एक मसनवी लिख डाली, जो कुल्लियाते ग़ालिब में मसनवियात के सिलसिले में छटी मसनवी है। ग़ालिब के अन्दाज़े बयान में यह कुछ कम कमाल नहीं कि ऐसे मुश्किल मसला को ऐसी रवानी और ख़ूबी से समझा दिया कि अल्लामा

और दूसरे अहले फ़ज़्ल व कमाल की सुहबत ने ग़ालिब को फ़िलवाक़ेअ़ ग़ालिब बना दिया था।

चुनान्चे ग़ालिब लिखते हैं-

यक जहां ता हस्त यक ख़ातम बस अस्त
क़ुदरते हक़ रा न यक आलम बस अस्त
ख़्वाहद अज़ हर ज़र्रा आरद आलमे
हम बुवद हर आलमे रा ख़ातमे
हर कुजा हंगामए आलम बुवद
रहमतुललिलआलमीने हम बुवद
कसरते इबदाअ़े आलम ख़ूब तर
ता बयक आलम दो ख़ातम ख़ूब तर
दर यके आलम दोता ख़ातम मजोए
सद हज़ारों आलमो ख़ातम बगोए
ग़ालिब ईं अन्देशा पन्दीरम हमी
ख़ुरदह हम बर ख़्वेश मी गीरम हमी
ऐ कि ख़त्मुल मुरसलीनश ख़्वांदइ
दानम अज़ रूए यक़ीनश ख़्वांदइ
ईं अलिफ़ लामे कि इस्तिग़राक़ रास्त
हुक्मे नातिक़ मानए इतलाक़ रास्त
मन्शाए ईजादे हर आलम यके अस्त
गर दो सद आलम बुवद ख़ातम यके अस्त
मुनफ़रिद अन्दर कमाले ज़ाती अस्त
लाजरम 'मिसलश' मुहाल ज़ाती अस्त
ज़ीं अक़ीदत बर नगरदम वस्सलाम
नामा रा दर मी नवर्द दम वस्सलाम

ग़ालिब ने इन अशआर में इब्तेदाई पांच शेअ्रों में अपनी क़ाबिलियत से एक हल निकालने की कोशिश की जिसमें दोनों की बात रह जाती और वह ख़ातमुन्नबीईन अल्लाह तआ़ला ने इस आलम के लिए बताया है इस आलम में तो मुहम्मद

मुमतनअ् न्नुज़ूलाय सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नज़ीर पैदा होना मुहाल और मुमतनअ् बिज़्ज़ात है लेकिन ख़ुदा दूसरा आलम बना कर आदम से ईसा अलैहिमुस्सलाम तक उनके लिए पैग़म्बर पैदा करे और आख़िर में मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ख़ातमुन्नबीईन बना सकता है। इस तरह इमकाने नज़ीर की सूरत निकल सकती है। मगर फिर आख़िरी छः अशआर में इस ख़्याल को रद् करते हुए हज़रत अल्लामा की राय से इत्तेफ़ाक़ करना पड़ा है और फिर इसी राय से अपनी मुवाफ़क़त ज़ाहिर करते हुए जिस मुदल्लल तरीक़ा पर साबित किया है यह ग़ालिब ही का हिस्सा है। (सौरतुल हिन्दिया)

नाज़िरीन ने इस मुख़्तसर सी इल्मी गुफ़्तगू के बाद हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के जलालते इल्म का अन्दाज़ा कर लिया होगा कि वह अपने मुआसरीन में किस दर्जा मुमताज़ व बेनज़ीर थे। सर सय्यद अहमद ख़ाँ बानीए मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ ने मोसूफ़ के वालिद माजिद मौलाना फ़ज़्ले इमाम के मुतअ़ल्लिक़ जिन तअस्सुरात का इज़हार आसारुस्सनादीद में किया है। वह मौलाना के हालात में पीछे गुज़र चुका है। अल्लामा के मुतअल्लिक़ भी सर सय्यद अहमद ख़ाँ की राय मुलाहज़ा करते चलें।

"मुस्तजमऐ कमालाते सौरी व मानवी, जामेऐ फ़ज़ाइले ज़ाहिरी व बातिनी, बनाए बिनाए फ़ज़्ल व अफ़ज़ाल बहार आराए चमनिस्ताने कमाल, मुत्तकीए अराइके इसाबते राय, मस्नद नशीं दीवाने अफ़कार रसाए, साल्बे चुल्के मुहम्मदी, गौहरे सआदते अज़ली व अबदी, हाकिमे महाकिमे मुनाज़रात, फ़रमांरवाए किशवरे मुहाकमात, अक्से आईनए साफ़ी ज़मीरी, सालिमे इस्नैन बदीई व हरीरी, अलमईए वक़्त व मौज़ईए ज़मान, फ़रज़ौके अहद व लमींदे दौरा, मुबतिले बातिल व मुहक्क़िक़े हक़, मौलाना मुहम्मद फ़ज़्ले हक़।"

यह हज़रत ख़ल्फ़ुर्रशीद हैं जनाबे मुस्ताताब मौलाना फ़ज़्ले इमाम मग़फ़िरल्लाह लहुल मुनआम के और तहसीले उलूमे अक़लिया और नक़लिया की अपने वालिद माजिद की ख़िदमते बा बरकत में की है। ज़बाने क़लम ने उनके कमालात पर नज़र करके फ़ख़्रे ख़ानदान लिखा और फ़िक्रे दक़ीक़ ने जब ग़ौर कर के दरियाफ़्त किया फ़ख़्रे जहां पाया। जमीऐ उलूम व फ़ुनून में यकताए रोज़गार हैं और मन्तिक़ व हिकमत की तो गोया उन्हीं की फ़िक्रे आली ने बिना (बुनियाद) डाली है। उलमाए अस्र चल फ़ुज़लाए दहर को क्या ताक़त है कि इस गरोहे अहले कमाल के हुज़ूर में बिसाते मुनाज़राना आरास्ता कर सके। बारहा देखा गया कि जो लोग आपको यगानए फ़न समझते थे जब उनकी ज़बान से एक हरफ़ सुना दावाए कमाल को फ़रामोश करके निस्बते शागिर्दी को अपना फ़ख़्र समझे बईं हमा कमालाते इल्म व अदब में ऐसा अलमे सरफ़राज़ी बुलन्द किया है कि फ़साहत के वास्ते उनकी इबारत शुस्ता महज़रे उरूज व मआरिज है और बलाग़त के वास्ते उनकी तबअ् रसा दस्त आवेज़े बुलन्दीए मआरिज है।

"सहबान को उनकी फ़साहत से सरमायए ख़ुश बयानी और इमरउलक़ैस को उनके अफ़कारे बुलन्द से दस्तगाहे उरूज, मआनी, अलफ़ाज़ पाकीज़ा, उनके रश्के गौहरे ख़ुश आब और मआनीए रंगीन उनके ग़ैरते लअ्ल नाब, सर्व, उनकी सुतूरे इबारत के आगे पा ब-गिल और गुल उनकी इबारते रंगीन के सामने ख़जिल।"

हज़रत अ़ल्लामा के मुतअ़ल्लिक़ मौलवी रहमान अ़ली लिखते हैं-

"दर उलूमे मन्तिक़ व हिकमत व फ़लसफ़ा व अदब व कलाम व उसूल व शेअ्र फ़ाइक़ुल अक़रान व इस्तिहज़ारे फ़ौक़ुल बयान दाश्त।" (तज़्किरा उलमाए हिन्द)

हज़रत अ़ल्लामा के मुतअ़ल्लिक़ मुन्शी अमीर अहमद मीनाई 'इन्तेख़ाबे यादगार' में लिखते हैं-

"अफ़ज़लुल .फ़ुज़ला अकमलुल कुमला फ़ज़ाइले दस्तगाह, फ़वाज़िले पनाह, जनाब मौलाना मौलवी फ़ज़्ले हक़ साहब फ़ारूक़ी बज़्ज़दल्लाहु मज़जअहु, फ़ुनूने हिकमिया में मर्तबए इज्तिहाद, बड़े अदीब, बड़े मन्तक़ी, निहायत ज़ेहीन, निहायत ज़की, तलीक़ व ज़लीक़ इन्तेहा के साहबे तदक़ीक़ व तहक़ीक़।"

मुफ़्ती इनामुल्लाह ख़ाँ बहादुर शेहाबी गोपामऊवी सरिश्ता दार सर ऐडवर्ड कोबर्क रेज़ीडेन्ट दिल्ली लिखते हैं-

> "बिरादरम मौलवी फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी अज़ फ़ुहूल उलमाए नामी व यगानए दौरां अस्त ख़ुसूसन दर उलूमे अक़लिया गुए सबक़त रबूदा व ब-वफ़ूरे इल्म व दानिश दर अतराफ़े आलम बग़ायत दरीं वक़्त मशहूर अस्त।" (ख़ज़ीनतुल औलिया)

एक बार मौलवी इकरामुल्लाह शेहावी गोपामऊवी ने शम्सुल उलमा हज़रत मौलाना अब्दुल हक़ ख़ैराबादी से पूछा, भाई साहब! दुनिया में हकीम का इतलाक़ किन किन पर है ?

मौलाना कहने लगे, भैया! साढ़े तीन हकीम दुनिया में हैं।

> "एक मुअल्लिमे अव्वल अरस्तू, दूसरे मुअल्लिमे सानी फ़ाराबी, तीसरे वालिद माजिद मौलाना फ़ज़्ले हक़ और निस्फ़ बन्दा।" (सौरतुलहिन्दिया)

ग़दर के अकाबिर मुजाहिदीन की शहादतों के बाद मिर्ज़ा हैरत देहलवी और उलमाए देवबन्द व अराकीने जमीअतुल उलमा हिन्द की जुरअत व जसारत पर हैरत होती है जो मौलवी इस्माईल देहलवी के तज़्किरा के साथ हज़रत अल्लामा का नाम लेना भी गवारा नहीं करते और ग़ौर कीजिये तो हैरत की कोई बात नहीं। यह उलमाए देवबन्द जो आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल व मनाक़िब बरदाश्त नहीं कर सकते, अगर वह फ़ज़्ले हक़ के कमालात के मुन्किर हो गए तो हैरत क्यों है ? मुर्दा क़ौमों और बद तीनत गरोहों का ख़ास्सा यह भी रहा है कि असलाफ़ पर नुक्ता चीनी और बुहतान तराशी शेआर बनाया गया है। ग़ज़ब कर दिया देवबन्दी मकतबए फ़िक्र ने जिसने दावाए इस्लाम के बावजूद पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तक को न छोड़ा। कहीं ज़र्रए नाचीज़ से कमतर और कहीं चमार से ज़्यादा ज़लील कहा। उलमाए देवबन्द के सर गरोह मौलवी इस्माईल देहलवी ने तो इस्लाम के लेबल पर नई तौहीद और नई रिसालत का ख़ाका खींचा जिसमें रोज़ बरोज़ हज़राते देवबन्द रंग भरते जा रहे हैं। मसलन उलमाए देवबन्द का यह अक़ीदा कि 'ख़ुदा का झूट बोलना मुमकिन है या यह कहना कि इल्मे ग़ैब अल्लाह ही का ख़ास्सा है यह अल्लाह साहब ही की शान है जब चाहें ग़ैब मालूम कर लें' मआज़ल्लाह वह गोया जाहिल है और ग़ैब से नाबलद है जब

चाहता है मालूम कर लेता है। इसी तौहीद पर आज उलमाए देवबन्द को ग़ुरूर है। ऐसे ही रसूल के बारे में उलमाए देवबन्द का यह कहना कि रसूल मर कर मिट्टी में मिल गए। या यह कहना कि नमाज़ में गाय बैल का ख़्याल लाने से नमाज़ हो जाएगी मगर रसूले ख़ुदा का ख़्याल लाने से नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। या यह कहना कि रसूल ऐसे ही है जैसे गाँव का चौधरी वग़ैरह वग़ैरह। ऐसे दरीदा दहन व परागन्दा ज़ेहन वाले जिन्हें तनक़ीसे उलूहियत व तौहीने नबुव्वत में कोई अन्देशा नहीं अगर वह फ़ज़्ले हक़ और इमाम अहमद रज़ा को गालियां दें तो तअज्जुब क्या है ? वह रसूले ख़ुदा को गालियां देते रहें। हम उन पर राहे हिदायत पेश करते रहें। यह होता आया है और होता रहेगा।

सुबू अपना अपना है जाम अपना अपना
किये जाओ मय ख़्वारो काम अपना अपना

हज़रत अल्लामा की सियासी ज़िन्दगी

रगो पै में जब उतरे ज़हरे ग़म तो देखिये क्या है ?
अभी तो तल्ख़ीए कामो जिगर की आज़माइश है

हज़रत अल्लामा का दौर मुसलमानों के हक़ में बड़ा ही पुर फ़ितन ज़माना था। सात सौ साल से हिन्दुस्तान पर मुसलमानों की हुक्मरानी थी। तीन सौ साल से मुग़लिया शासकों का डंका बज रहा था लेकिन 1757 की जंगे पलासी के बाद उसे घुन लग चुका था। 1797 में जंग और सुल्तान टीपू की मौत ने मुसलमानों का हौसला पस्त कर दिया था। 1803 में दिल्ली विजय के मौक़ा पर लार्ड लेक के समझौते से इसके ख़ात्मे की नौबत आ गई थी। रही सही शान व इज़्ज़त 1806 में अकबर शाह सानी (द्वितीय) की जाती रही। उलमा और औलियाए इस्लाम अपनी रूहानियत और इल्म व अमल के ज़रीया सल्तनत की मज़बूती में हमेशा आगे आगे रहे। हिन्दुस्तान की राजनीति में उलमाए इस्लाम का हमेशा सबसे बड़ा हाथ रहा है। आख़िर दौर में मुजद्दिद अल्फ़े सानी से लेकर मुजाहिदे जलील अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी और दूसरे मुजाहिदीने मिल्लत और दूसरे सर फ़रोशाने उम्मत आगे आगे रहे और आज भी मुल्क का बा-ख़बर हल्क़ा देख रहा है जबकि जमीअतुल उलमाए हिन्द के अराकीन (सदस्य) एसेम्बली व संसद की कुर्सियों पर गवर्नमेन्ट

से तन्ख़ाह ले रहे हैं। फ़ज़्ले हक़ के इल्मी ख़ानदान का एक कफ़न बरदोश रहनुमा जिनका नाम (मुजाहिदे मिल्लत) मौलाना हबीबुर्रहमान है वह तहफ़्फ़ुज़े नामूसे रसूल की ख़ातिर सुल्तानपुर और ग़ाज़ीपुर के जेल में रस्सी बट रहा है।

यही वह उलमाए अह्ले सुन्नत हैं जिनका नाम तारीख़े जिहादे हिन्द में हमेशा सुनहरे हरफ़ों से लिखा जाएगा।

एक ख़ूँ-चकाँ कफ़न में हज़ारों बनाव हैं
पड़ती है आंख तेरे शहीदों पर हूर की

जिस वक़्त अल्लामा दिल्ली से बद दिल होकर झज्झर, अलवर, टोंक और रामपुर में बाइज़्ज़त ओहदा संभालते हुए 1848 में लखनऊ में हुज़ूर तहसील के मुहतमिम (प्रबंधक) व सदरुस्सुदूर हो गए।

बालाकोट के हादसे ने दिल व दिमाग़ पर बड़ा असर डाला था। लखनऊ पहुंचने के कुछ दिन के बाद ही हनुमान गढ़ी अयोध्या का हादसए फ़ाजिआ (दुर्घटना) पेश आ गया। वहां के महन्तों ने मस्जिद में अज़ान देना रोक दिया था। कोई भूला भटका मुसाफ़िर अगर मस्जिद में जा निकलता तो मार पीट कर निकाल दिया जाता। ग़रज़ कि ज़ुल्म व अत्याचार अपने शबाब (चरमसीमा) पर था। 13 ज़ीक़ादा 1271 हि॰ मुताबिक़ जुलाई 1855 ई॰ में शाह ग़ुलाम हुसैन और मौलवी मुहम्मद सालेह एअ्ला कलिमतुल्लाह (हक़) की ख़ातिर जिहाद पर आमादा होकर हनुमान गढ़ी पहुंचे। बैरागियों से मुक़ाबला हुआ। क़ुरआन शरीफ़ पुरज़ा-पुरज़ा करके पाँव से मसला गया। जूते पहन कर मस्जिद में दाख़िल होकर संख बजाए गए। 269 मुसलमान शहीद हुए। इस ख़ूनी हादसा पर मौलाना शाह अमीर अली रहमतुल्लाह अलैह साकिन (निवासी) अमेठी से न रहा गया और मुसलमानों को जिहाद के लिए आमादा किया जबकि पानी सर से ऊँचा हो चुका तब वाजिद अली शाह वालीए लखनऊ को होश आया। उन ही दिनों हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी मर्दे मैदान होकर जिहाद में शरीक हुए लेकिन हालात बद से बदतर होते गए। रूदौली जाते हुए रास्ते में 25 सफ़र 1272 हि॰ मुताबिक़ 7 नवम्बर 1855 ई॰ दिन बुध को गोरों की पलटन ने घेर कर मुसलमानों को ज़ुहर की नमाज़ बा-जमाअत अदा करते हुए तोप के गोलों से शहीद कर दिया जो बच रहे थे राजा शेर बहादुर सिंह के आदमियों ने दस बारह कोस तक उनका पीछा करके छः सौ आदमियों के सर उड़ा दिये "सरे मैदाँ कफ़न बर दोश दारम" (1272 हिजरी) माद्दए तारीख़ है।

रसूलों के एक मजज़ूब ने व इन्न हू अला ज़ालि क ल शहीदुन से (1272 हि॰) तारीख़ निकाली है। इस्लामी हुकूमत में ख़ास इस्लामी मसला पर मुसलमानों की इस बे दर्दी से ख़ूँरेज़ी----

आसमाँ रा हक़ बुवद गर ख़ूँ बबारद बर ज़मीं

आसमान थर्रा उठा, ज़मीन को ज़लज़ला आ गया। ख़ुदा का क़हर लार्ड डलहौज़ी गवर्नर जनरल की शक्ल में नमूदार हुआ। सोमवार 4 फ़रवरी 1856 को जनरल ओटरम रेज़ीडेन्ट कप्तान हेज़ और जनरल देला गवर्नर जनरल का अहद नामा (प्रतिज्ञा पत्र) लेकर अवध के बादशाह वाजिद अली शाह के पास आया और माज़ूली (पद से हटाने) का हुक्म दिया। बादशाह ने दस्तख़त से इन्कार करते हुए हज़ार मिन्नत व समाजत की, लन्दन तक कोशिश की लेकिन बे फ़ाइदा साबित हुआ यहां तक कि कलकत्ता ले जाकर मटिया बुरुज में बन्द कर दिया "लखनऊ ख़राब शुद वावैला" (1272 हि॰) तारीख़ निकाली गई। ग़रज़ कि इस तरह वालियाने अवध की वज़ारत की मुद्दत 45 साल 3 महीने 24 दिन और बादशाहत की मुद्दत 41 साल रही और वालियाने अवध अपने पीछे ऐश परस्ती की हज़ारों दास्तानें छोड़ गए।

अवध सल्तनत की बरबादी में सब से बड़ा हाथ नवाब मीर अली नक़ी का था। अमीनुद्दौला की माज़ूली के बाद 19 रजब 1263 हि॰ मुताबिक़ 9 जुलाई 1847 ई॰ को यह वज़ीरे आज़म (प्रधानमंत्री) बनाए गए। इसी की अन्दरूनी साज़िश की बिना पर वाजिद अली शाह को यह बुरा दिन देखना पड़ा।

जंगे पलासी 1757 के बाद मीर जाफ़र ने शाह आलम के साथ भी ड्रामा खेला था और इस तरह सूबा बंगाल हाथ से निकल गया, दकन में मीर सादिक़ ने 1797 ई॰ में शेरे मैसूर सुल्तान टीपू को धोका देकर हिन्दुस्तान के ग़ुलामी का दाइमी (सदा) का पट्टा अंग्रेज़ों को लिख दिया।

जाफ़र अज़ बंगाल व सादिक़ अज़ दकन
नंगे आदम नंगे दीं नंगे वतन

ख़ुदा जाने मीर अली नक़ी को डाक्टर इक़बाल इस मौक़ा पर क्यों भूल गए ?

आख़िर में अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ने तरकश से आख़िरी तीर निकाला। जुमा की नमाज़ के बाद जामा मस्जिद में उलमा के सामने तक़रीर की और इस्तिफ़्ता

(फ़तवा तलवी) पेश किया। मुफ़्ती सदरुद्दीन खाँ, मौलवी अब्दुलक़ादिर, क़ाज़ी फ़ैज़ुल्लाह, मौलाना फ़ैज़ अहमद बदायुनी, वज़ीर ख़ाँ अकबराबादी, सय्यद मुबारक हुसैन रामपुरी ने दस्तख़त कर दिये। इस फ़तवे के शाया (प्रकाशित) होते ही मुल्क में आम शोरिश बढ़ गई। दिल्ली में 90 हज़ार सिपाह जमा हो गई थी। बादशाह गिरिफ़्तार करके क़िला में बन्द कर दिये गए, तीन शाहज़ादों को क़िला में दाख़िल होते ही गोली का निशाना बना दिया गया और उनके सरों को ख़्वानपोश (कपड़ों) में ढक कर दस्तरख़्वान में लगा कर बादशाह के सामने तोहफ़ा के तौर पर पेश किया गया। अल्लामा दिल्ली से 26 सितम्बर 1857 को रवाना हो गए थे। 19 सितम्बर 1857 के बाद हिन्दुस्तानियों पर मुसीबतों के जो पहाड़ टूटे उसकी मिसाल तारीख़ में मुश्किल से मिलेगी। जिन मज़ालिम (अत्याचार) को लिखते हुए दिल लरज़ता है। क़लम का सीना फटता और काग़ज का जिगर टुकड़े टुकड़े होता है। ज़िन्दा मुसलमानों को सुअर की खाल में सिलवा कर गरम तेल के कढ़ाव में डलवाना। फ़तेहपुरी मस्जिद से क़िला के दरवाज़े तक पेड़ों की शाख़ों पर मुसलमानों की लाशों को लटकाना, मस्जिदों की बेहुरमती (अपमानित), जामा मस्जिद दिल्ली के हुजरों में घोड़ों का बांधना, हौज़ में वुज़ू के पानी की जगह घोड़ों की लीद डलवाना, माफ़ न करने के क़ाबिल और ग़ैर मुमकिन तलाफ़ीए जुर्म है अब मार काट का बाज़ार गर्म हो चुका था। अल्लामा फ़ज़्ले हक़ को भी बाग़ी क़रार दे दिया गया। अंग्रेज़ों के क़ैदी होकर बन्द हो गए। 1275 हि॰ मुताबिक़ 1858 ई॰ में लखनऊ की अदालत में मुक़दमा चला। अल्लामा के सबात व इस्तिक़लाल, सदाक़त व हक़्क़ानियत, बुलन्द हिम्मती व शेर दिली के लिए सैयदल उलमा वग़ैरह की इबारतें काफ़ी हैं।

1859 में जिहाद के फ़तवा की सज़ा या बग़ावत के जुर्म में मौलाना फ़ज़्ले हक़ गिरिफ़्तार होकर सीतापुर से लखनऊ लाये गए और मुक़दमा चलाया गया। जज बार बार रोकता था कि मौलाना आप क्या कह रहे हैं मगर मौलाना के शाने इस्तिक़लाल पर क़ुरबान जाइये। ख़ुदा का शेर गरज कर कहता है कि वह फ़तवा सही है और मेरा ही लिखा हुआ है और आज इस वक़्त भी मेरी वही राय है। मौलाना के इक़रार व तौसीक़ (पुष्टि) के बाद अब गुन्जाइश ही क्या बाक़ी रह गई थी। चुनान्चे अदालत ने काला पानी का हुक्म सुनाया। अल्लामा ने ब-कमाले मसर्रत व ख़न्दा पेशानी इस सज़ा को क़बूल फ़रमाया।

यही वह मुजाहिदे जलील है जिसने सर ज़मीने हिन्द पर आज़ादीए हिन्द की दाग़ बेल डाली। आख़िरकार अल्लामा फ़ज़्ले हक़ जज़ीरए अन्डोमान रवाना कर दिये गए और उधर मौलाना अब्दुल हक़ और मौलवी शमसुल हक़, मुफ़्ती इनामुल्लाह ख़ाँ, ख़्वाजा गुलाम ग़ौस वग़ैरह ने मीर मुन्शी पश्चिमी लेफ्टीनेन्ट के सहयोग से अपील दाख़िल कर दी। अल्लामा के जज़ीरए अन्डोमान पहुंचने से पहले मुफ़्ती इनायत अहमद काकोरवी, मुफ़्ती मज़हर करीम और दूसरे मुजाहिद उलमा वहां पहुंच चुके थे। इन हज़रात ने वहां भी तस्नीफ़ व तालीफ़ का सिलसिला जारी रखा। मुफ़्ती इनायत अहमद ने इल्मुस्सेग़ा जैसी फ़न्ने सर्फ़ की मुफ़ीद किताब जो आज तक निसाब में दाख़िल है वहीं लिखी। तारीख़े हबीबे इलाह भी जज़ीरए अन्डोमान ही में लिखी गई और यही उसका तारीख़ी नाम है। अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ने भी कई मुफ़ीद किताबें लिखीं। अल्लामा और उनके साथियों को जज़ीरए अन्डोमान में क्या क्या तकलीफ़ें झेलनी पड़ीं और उन्हें कैसे ज़िल्लत आमेज़ (अपमानपूर्ण) बरताव से वास्ता रहा उन सबका तज़्किरा (वर्णन) अल्लामा के रिसाला अस्सौरतुल हिन्दिया में मौजूद है।

मौलाना फ़ज़्ले इमाम का वह शाहज़ादा जो कभी हाथी और पालकी पर बैठ कर बाप की आग़ोशे मुहब्बत में दर्स पाता था आज वही जज़ीरए अन्डोमान में अपने सरों पर टोकरा उठा रहा है जिसको देख कर बाज़ अंग्रेज़ भी आंखों में आंसू भर लाये। इधर अल्लामा के साहबज़ादे मौलवी शम्सुल हक़ और ख़्वाजा गुलाम ग़ौस वग़ैरह रिहाई के लिए जान तोड़ कोशिश कर रहे थे। यहां तक कि मौलवी शमसुल हक़ साहब रिहाई का परवाना हासिल करके जज़ीरए अन्डोमान रवाना हो गए। वहां जहाज़ से उतर कर शहर गये तो एक जनाज़ा पर नज़र पड़ी जिसके साथ बहुत बड़ी भीड़ थी-

आशिक़ का जनाज़ा है ज़रा धूम से निकले

पता लगाने पर मालूम हुआ कि कल 12 सफ़र 1278 हि॰ यानी 1861 ई॰ को अल्लामा फ़ज़्ले हक़ का इन्तेक़ाल हो गया और अब सुपुर्दे ख़ाक (दफ़न) करने जा रहे हैं। इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊन मौलवी शम्सुल हक़ भी बसद हसरतो यास जनाज़ा में शरीक हुए और नाकाम व नामुराद वापस लौटे।

क़िस्मत की बद नसीबी कहां टूटी है कमन्द
दो चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया

अफ़सोस हमेशा के लिए आफ़ताबे इल्मो अमल दयारे ग़ुरबत में डूब गया।

अब तक मज़ारे मुबारक लोगों की पनाहगाह और ख़ासो आम की ज़ियारतगाह है।

मौलाना अब्दुल्लाह बलगरामी लिखते हैं

"फ़ज़्ल उनके कफ़न में मकफ़ून और इल्म उनके साथ मदफ़ून हो गया।"

इन्सानियत मौलाना फ़ज़्ले हक़ के नाम पर जिस क़दर भी आंसू बहाए कम है। एक तरफ मौलाना फ़ज़्ले हक़ की तारीख़ देखिये कि अंग्रेज़ों के ज़ुल्म व अत्याचार से सीना छलनी हो गया था और दूसरी तरफ मौलवी इस्माईल देहलवी की तारीख़ देखिये कि उनकी जंग में शरीक होने के लिए मुस्लिम मुलाज़मीन को हुकूमत की तरफ से छुट्टी मिलती थी। अल्लामा के साथ कहां यह ज़ुल्म व अत्याचार और मौलवी इस्माईल देहलवी के साथ कहां यह मुरव्वत व छूट। अब इसका फ़ैसला नाज़िरीन (पाठक) के हाथ है कि अंग्रेज़ों का पिट्ठू कौन था वह फ़ज़्ले हक़ जो अंग्रेज़ों के ख़िलाफ़ जिहाद का फ़तवा देकर मुसलमानों को आबरूमन्दाना (सम्मानजनक) ज़िन्दगी देना चाहता था या वह मौलवी इस्माईल देहलवी जिन्होंने कलकत्ता जामा मस्जिद की तक़रीर में यह कहा था कि अंग्रेज़ों पर अगर कोई हमला आवर हो तो उससे पहले हम जंग करेंगे ताकि अंग्रेज़ सरकार के दामन पर कोई आंच न आ सके और उन्हें अंग्रेज़ बहादुर के लिए मौलवी रशीद अहमद गंगोही ने कहा था कि अंग्रेज़ों का ज़माना अमनो आफ़ियत का ज़माना है।

काश! आज भी मेरे दोस्त अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तारीख़ पर नज़र दौड़ाते और उनके इस अज़ीम एहसान के सामने अपनी गर्दनें झुका कर तारीख़ का सही अंदाज़ा लेते। उलमाए देवबन्द अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तारीख़ पर गुबार डालने की हज़ार कोशिश करें मगर इस ज़िन्दए जावेद हस्ती का नाम तारीख़ के पन्नों से कभी मिट नहीं सकता। बिलफ़र्ज़ तारीख़ को जला दिया जाये तो इन्सानी दिलों से अल्लामा की अज़मत व अक़ीदत कौन छीन सकता है। जब तक इस आसमान के नीचे और ज़मीन की सतह पर इन्सान की आबादी है उस वक़्त तक अल्लामा फ़ज़्ले हक़ के फ़ज़्ल व कमाल का झन्डा लहराता रहेगा।

ज़िन्दा हो जाते हैं जो मरते हैं हक़ के नाम पर
अल्लाह अल्लाह मौत को किसने मसीहा कर दिया

मुजाहिदे जलील हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की इल्मी व मुजाहिदाना ज़िन्दगी की यह एक मुख़्तसर व नातमाम इबरत की दास्तान है जिसमें अल्लामा की ज़िन्दगी के मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) गोशों को उजागर करने की कोशिश की गई

है। वह फ़ज़्ले हक़ जिसकी तसानीफ़ दर्से निज़ामिया में दाख़िल किये जाने के क़ाबिल हैं। मअ़्क़ूलात की किताबों पर जिसके शरह व हवाशी को उलमा अपनी आंखों से लगाते हैं। हिन्दुस्तान का माना हुआ शायर मिर्ज़ा ग़ालिब ने शेअ़्रो सुख़न में जिसकी इस्लाह को क़बूल किया हो। सर सय्यद अहमद ख़ाँ बानीए मुस्लिम युनीवर्सिटी अलीगढ़ और दूसरे फ़ाज़िल मुआसिरीन ने जिस फ़ज़्ले हक़ को वक़्त का इमाम व पेशवा समझा हो--- नवाब युसुफ़ अ़ली ख़ाँ वालीए रामपुर ने जिस से शागिर्दी का शरफ़ इख़्तियार किया हो और मुहकमए निज़ामत भी अल्लामा के सुपुर्द कर दिया हो। नवाब कलब अली ख़ाँ नवाबे रामपुर ने जिसकी शागिर्दी पर फ़ख़्र किया हो। दिल्ली से रवानगी के वक़्त मुग़लिया सल्तनत के आख़िरी ताजदार मिर्ज़ा अबू ज़फ़र बहादुर शाह ने अल्लामा को अपना दोशाला ओढ़ा दिया और रुख़्सत के वक़्त रोकर कहा चूंकि आप जाने को तैयार हैं। मेरे लिए इसके सिवा कोई चारा नहीं कि मैं भी इसको मन्ज़ूर कर लूं मगर ख़ुदा अ़लीम (जानने वाला) है कि विदाई के अल्फ़ाज़ ज़बान पर लाना दुशवार है। मिर्ज़ा ग़ालिब ने भी अपने ख़त में इस अलमनाक दर्दे फ़िराक़ का वर्णन किया है।

वा हसरता! कि आज उसी फ़ज़्ले हक़ के इल्म व अदब के दामन पर उलमाए देवबन्द कीचड़ उछाल रहे हैं और तारीख़ के पन्नों से उस मर्दे मुजाहिद का नाम मिटा देना चाहते हैं।

कहां हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ का इल्मी रोब व जलाल और कहां मौलवी इस्माईल देहलवी जिन पर ख़ुद उलमाए देवबन्द ने जाहिल, मुलहिद (बेदीन), ज़िन्दीक़ (काफ़िर) दीन से बे बहरा होने का फ़तवा दिया है। मगर अफ़सोस कि आज मौलवी इस्माईल देहलवी की तक़वीयतुल ईमान जिसका हर पन्ना नबुव्वत की तौहीन व औलिया की तन्क़ीस (नक़्स निकालना) से भरपूर है उसको तो ऐने इस्लाम कहा जा रहा है। और हज़रत अल्लामा की तस्नीफ़ें जिन की हर हर सतर में इल्म व फ़न के सैकड़ों नुक्ते हैं उनसे बेपरवाई का यह आलम कि तारीख़ के पन्नों पर लेखक का नाम तक देखना गवारा नहीं और मैदाने जिहाद का वह सिपहसालारे आज़म जिसको आज़ादीए हिन्द की ख़ातिर घर से बे-घर होना पड़ा। अंग्रेज़ दुश्मनी में जिसको जज़ीरए अन्डोमान की नाक़ाबिले बरदाश्त सज़ायें भुगतनी पड़ीं। अंग्रेज़ जैसे ज़ालिम व कठोर दिल भी जिसको देख कर आबदीदा हो गए।

बे साख़्ता आज उनके भी आँसू निकल आये
देखा न गया हाल फ़कीराना किसी का

उलमाए देवबन्द की नज़र में वही फ़ज़्ले हक़ अंग्रेज़ों का पिट्ठू है और मौलवी इस्माईल देहलवी जिन्होंने अंग्रेज़ दोस्ती में लाखों मुसलमानों का ख़ून पानी की तरह बहा दिया जिनके दामन पर न जाने कितने बे गुनाहों के ख़ून के छींटें हैं उसी ख़ून से लिप्त दामन को उलमाए देवबन्द अपने प्रोपगन्डे और ज़ोरे क़लम से पाक व साफ़ करना चाहते हैं मगर यह छुपा हुआ राज़ उस वक़्त ज़ाहिर होगा जब क़ातिल ख़ुद ही मैदाने क़ियामत में यह कहता हुआ उठेगा-

दामन को लिए हाथ में कहता था यह क़ातिल
कब तक इसे धोया करूं लाली नहीं जाती

नाज़िरीन की इन्साफ़ पसन्द निगाह पर एतेमाद व भरोसा है कि आप हज़रात ने इस मुख़्तसर सी तहरीर के बाद अपने दिल व ज़मीर (अन्तरात्मा) का फ़ैसला हासिल कर लिया होगा कि मौलवी इस्माईल देहलवी की जंगे ज़रे गर्मी को हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ की तहरीके जिहाद से कोई वास्ता और निस्बत नहीं। मौलवी इस्माईल अफ़ग़ानी पठानों से जंग कर रहे थे और अंग्रेज़ बहादुर यहां से सात हज़ार की हुन्डी भेज रहे थे और हज़रत अल्लामा जैसी बुलन्द पाया शख़्सियत जज़ीरए अन्डोमान में कस-मपुर्सी (जिसका कोई हाल चाल लेने वाला न हो) के आलम में आज़ा व इस्तिक़लाल की एक तारीख़ मुरत्तब कर रही थीं।

सच है दोनों अपने पीछे एक तारीख़ छोड़ गए। मगर फ़र्क़ इतना है कि मौलवी इस्माईल की तारीख़ ने अक़वामे आलम के सामने मुस्लिम क़ौम की गर्दन झुका दी। और हज़रत अल्लामा की तारीख़ ने हमारी इल्मी व क़ौमी तारीख़ को सरफ़राज़ी बख़्शा।

हज़रत अल्लामा की ज़िन्दगी के दो अहम पहलू हैं। आप की इल्मी व अदबी ज़िन्दगी देख कर बू अली सैना, ग़ज़ाली, राज़ी, अबू हनीफ़ा की याद ताज़ा होती है और आपके मुजाहिदाना किरदार से हुसैन इब्ने अली के मज़लूमियत की ख़ूनी दास्तान आंखों के सामने आ जाती है जैसे हुसैन के बचपने में पैग़म्बरे ख़ुदा, जिब्रीले अमीन, अली मुर्तज़ा, सय्यदा फ़ातिमा ने नाज़ बरदारी की, मगर उम्र की आख़िरी घड़ी (वक़्त) में नबी का लाल मुसाफ़त व परदेस में बे यारो मददगार शहीद कर दिया गया।

बिना कर्दन्द ख़ुश रस्मे बख़ाकी ख़ून ग़लतीदन
ख़ुदा रहमत कुनद ई आशिक़ाने पाक तीनत रा

ऐसे ही फ़ज़्ले इमाम का शाहज़ादा फ़ज़्ले हक़ जो हाथी व पालकी पर चलता था। जो वालियाने रियासत और शहन्शाहे वक़्त का मख़्दूम व प्यारा था। जो आसमाने इल्म व अदब का रौशन सितारा और चमनिस्ताने इल्म व हिकमत का शादाब फूल था। वह उम्र की आख़िरी घड़ियों में आज़ादीए हिन्द की ख़ातिर कस-मपुर्सी के आलम में शहीद किया गया। ऐसे ही ख़्याल फ़रमाईये कि दरियाए शोर को मैदाने करबला से कितनी मुनासबत है। वहां दरियाए फ़ुरात पर यज़ीदी पहरे बिठा दिये गये थे और यहां फ़ितरत ने ख़ुद पहरा बिठा दिया है और तारीख़ की इस मुताबक़त पर तो सर धुनने को जी चाहता है कि जिस तरह मुस्लिम इब्ने अक़ील की कूफ़ा में जिस दिन शहादत होती है उसी दिन हुसैन इब्ने अली की मक्का मुकर्रमा से कूफ़ा के लिए रवान्गी होती है।

ऐसे ही मौलाना शम्सुल हक़ जिस दिन जज़ीरए अन्डोमान में रिहाई का परवाना लेकर पहुंचते हैं तो सब से पहले बाप के जनाज़ा पर निगाह पड़ती है। शायद इसी मौक़ा के लिए किसी शायर ने कहा है।

ऐ मालिके तहरीर यह तक़दीर है कैसी
राहों में मेरी आके क़ज़ा खेल रही है

ऐ परवरदिगारे आलम जब तक आसमान के सितारों में चमक और सब्ज़ा ज़ारों में कोयलों की कूक और पपीहा की तरन्नुम ख़ेज़ सदायें (आवाज़ें) गूंज रही हों, ऐ कायनात के पालनहार जब तक समुन्दर की रवानी और समुन्दर की सतह पर मछलियों का खेल कूद हो, ऐ ख़ालिक़े कायनात जब तक कायनात की चहल पहल और रात दिन की गर्दिश हो, ऐ रब्बे करीम जब तक सहने गुलशन में कलियों की मुस्कुराहट और फूलों के क़हक़हे पर बुलबुलों की नवा सन्जी (राग) हो उस वक़्त तक इमामे मन्तिक़ व फ़लसफ़ा मुजाहिदे जलील हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी रहमतुल्लाह अलैह की क़ब्रे मुबारक पर तेरे रहम व करम के फूलों की बारिश हो। आमीन॰

अब्रे रहमत उनके मरक़द पर गुहर बारी करे
हश्र तक शाने करीमी नाज़ बरदारी करे

हिफ़्ज़ुल ईमान पर एक सरसरी निगाह

हिफ़्ज़ुल ईमान मौलवी अशरफ़ अली थानवी की चन्द वरक़ी किताब है जिसकी एक कुफ़्री इबारत पर आये दिन मुनाज़रा, मुबाहसा, मुजादला होता रहता है। उलमाए देवबन्द को यह सब कुछ गवारा है मगर यह नहीं हो सकता कि चन्द सतर की इबारत में कोई ऐसी मुनासिब तरमीम (तब्दीली) कर दी जाये जिससे वह इबारत एतेराज़ात की ज़द से बाहर हो जाये या फिर उस इबारत से रुजूअ् कर लिया जाये। याद रहे कि यह वही मौलाना थानवी हैं जिनको ब्रिटिश गवर्नमेन्ट छः सौ रुपये माहाना देती थी। और थानवी साहब के हक़ीक़ी भाई जनाब मज़हर अली साहब सी.आई.डी. के बड़े पद पर फ़ाइज़ (आसीन) थे। जैसा कि मौलवी हुसैन अहमद टांडवी ने मक्तूबाते शेख़ जिल्द दो सफ़हा 297,298,299 पर इसका तज़्किरा किया है।

यह वही थानवी साहब हैं जिनको हज़राते देवबन्द हकीमुल उम्मत, हुज्जतुल्लाहि फ़िल अर्ज़ और जामेउल मुजद्दिदीन जैसे ख़िताबों से याद करते हैं और ख़ुद थानवी साहब अपने ही ख़्याल में अपने मुरीद से ला इला-ह इल्लल्लाहु अशरफ़ अली रसूलुल्लाह पढ़वाते थे। ग़रज़ कि यह देवबन्दियों के रसूल व पैग़म्बर पैदाइशी वली व बुज़ुर्ग थे फिर दर्जा बदर्जा नबुव्वत व रिसालत की मन्ज़िल पर पहुंचे मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह।

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल सफ़हा 24 की एक रिवायत मुलाहज़ा फ़रमाइये जो थानवी साहब के बचपन के ज़माना के नेक आसार से है।

> "हज़रत की ताई साहबा ने जिनके पास बचपन में रहे हैं ख़ुद हज़रते वाला से बयान किया कि लड़कपन में अक्सर देखा गया कि जब हज़रते वाला को कहीं सफ़र करने का इत्तेफ़ाक़ हुआ तो उस दिन अब्र (बादल) ज़रूर हो गया और बहुत राहत (आराम) के साथ सफ़र तय हुआ।"

अशरफ़ुस्सवानेह की ऊपर लिखी हुई इबारत में लफ़्ज़ 'ज़रूर' तवज्जोह के क़ाबिल है। यानी अब्र का हो जाना इत्तेफ़ाक़िया न था बल्कि क़ानूने इलाही के फ़रिश्ते जनाब थानवी की रज़ा जूई और आराम पहुंचाने पर हाथ बांधे हुए हाज़िर थे। यह कैसे हो सकता था कि अंग्रेज़ बहादुर का लाडला और दुलारा गुज़रे और उस नर्म व नाज़ुक बदन को सूरज की धूप तकलीफ़ पहुंचा सके। जवानी और बुढ़ापे

में इस करामत का ज़ुहूर (ज़ाहिर) नहीं हुआ। अभी तो बचपने का ज़िक्र है। अब ऐसे ही साहबे करामत की एक और इबारत सुनिये जो उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी पर रौशन दलील है। अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल सफ़हा 76 पर है।

> "दारुल उलूम देवबन्द के बड़े जलसए दस्तारबन्दी में बाज़ हज़राते अकाबिर ने इरशाद फ़रमाया कि अपनी जमाअत की मसलिहत के लिए हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल बयान किये जायें ताकि अपने मजमा पर जो वहाबियत का शुबहा है वह दूर हो और मौक़ा भी अच्छा है क्योंकि इस वक़्त मुख़्तलिफ़ (कई) तबक़ों के लोग मौजूद हैं। हज़रते वाला (यानी मौलवी अशरफ़ अली थानवी) ने अदब के साथ अर्ज़ किया कि इसके लिए रिवायात की ज़रूरत है और वह रिवायात मुझको मुस्तहज़र (वह बात जो याद हो) नहीं।"

यह वही थानवी साहब हैं जो हकीमुल उम्मत, जामेउल मुजद्दिदीन और न जाने क्या क्या हैं।

आँजनाब को शिर्क व बिदअ़त की तमाम क़िस्में याद थीं। शादी में सेहरा बांधना शिर्क, अब्दुन्नबी, पीर बख़्श नाम रखना शिर्क और इतना ही नहीं! साबुन साज़ी का तरीक़ा, गोश्त गलाने की तरकीब, मुरब्बा और जेली (एक क़िस्म का खाना जो गोश्त और फलों से तैयार किया जाता है) बनाने का तरीक़ा, बिरयानी, पुलाव, क़ोरमा, फ़ीरीनी, शामी कबाब, सीख़ कबाब, चटपटा बनाने का तरीक़ा। यह तमाम चीज़ें थानवी साहब को याद थीं जिसको बहिश्ती ज़ेवर के दस हिस्सों में भर दिया है।

ग़रज़ कि साबुन फ़ैक्ट्री के नाज़िमे आला, महकमए मतबख़ के नाज़िम उमूरे ज़रूरिया। दवा बनाने के कारख़ाना के जनरल मैनेजर, अन्जुमन मुस्लिम ख़वातीन की हाई कमान्डर को जो बातें मालूम होनी चाहियें वह तफ़सीलवार थानवी साहब के ज़ेहन में हाज़िर थीं मगर अफ़सोस सद अफ़सोस कि थानवी साहब का ज़ेहन अगर ख़ाली था तो फ़ज़ाइले रसूल से। चूंकि इस उनवान पर तक़रीर करने के लिए तो रिवायात की ज़रूरत थी और वह आँजनाब को याद न थीं। वाज़ेह रहे कि एक आशिक़े रसूल के लिए यह ऐसा मुहब्बत आफ़रीं उनवान है जिस पर वह घन्टों नहीं बल्कि मुसलसल न जाने कितने दिनों तक तक़रीर कर सकता है। दर्से निज़ामिया का मुब्तदी (नव आमोज़) तालिबे इल्म भी। इस उनवान पर कुछ न सही तो

मोअ्जेज़ाते नबुव्वत ही के तहत सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल व कमालात का समाँ बांध सकता है। मगर यह बयान मालूमात के साथ अक़ीदत व मुहब्बत का सरमाया चाहता है। वह बद नसीब इस उनवान पर क्या बोले जिसने उम्र भर आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को गालियां दी हों और दुनिया से जाते जाते हिफ़्ज़ुल ईमान जैसी गन्दी और कुफ़्री किताब छोड़ गया हो, जो क़ियामत तक के लिए मुसलमानों के बीच इख़्तिलाफ़ का सबब बन गई।

हज़राते देवबन्द इन्साफ़ व दियानत से कभी इस इबारत पर नज़रे सानी करें और गिरेबान में मुंह डाल कर सोचें क्या यह रसूले करीम का मुंह बोलता मोअ्जेज़ा नहीं कि अपने दुश्मन से अन कही कहलवाई।

मुहब्बत को समझना है तो नासेह ख़ुद मुहब्बत कर
किनारे से कभी अन्दाज़ए तूफ़ाँ नहीं होता

अब ज़रा इस इबारत के मुख़्तलिफ़ हिस्सों का तजज़िया कीजिये तो हज़राते देवबन्द के दिल का चोर पकड़ में आये।

> 1 "हज़राते अकाबिर ने फ़रमाया कि अपनी जमाअ़त की मसलेहत के लिए हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल बयान किये जायें।"

यानी दारुल उलूम देवबन्द की चहार दीवारी में सय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल व मनाक़िब अक़ीदत व मुहब्बत के तक़ाज़े पर बयान नहीं किये जाते बल्कि यह बयान तो मसलेहत की बिना पर होता है। दूसरे अलफ़ाज़ में यूं समझ लीजिये कि आज मसलेहत आन पड़ी है लिहाज़ा आदत व मअ्मूल के ख़िलाफ़ कुछ फ़ज़ाइले रसूल बयान कर दिये जायें।

2. "ताकि अपने मजमा पर जो वहाबियत का शुबहा है वह दूर हो।"

यह मसलेहत की वज़ाहत है यानी अकाबिरे देवबन्द को इस बात का एहसास था कि हम लोग रसूले करीम के फ़ज़ाइल व मनाक़िब नहीं बयान करते इसलिए हिन्दुस्तान की ज़मीन पर हमें वहाबी कहा जाता है और इसका भी एहसास था कि फ़ज़ाइले मुस्तफ़ा पर तक़रीर करने वालों को वहाबी नहीं बल्कि सुन्नी कहा जाता है।

लिहाज़ा आज इश्क़ व मुहब्बत की वह राह इख़्तियार की जाये जिस पर अहले सुन्नत व जमाअ़त का मअ्मूल है ताकि दामन से वहाबियत का ग़ुबार धुल जाये। गोया अकाबिरे देवबन्द ने ख़ुद एक अलामत व निशानी मुतअ़य्यन कर दी। फ़ज़ाइले रसूल पर तक़रीर करने वाले सुन्नी हैं और इस उनवान से कतरा कर महज़ शिर्क व बिदअ़त की राग अलापने वाले वहाबी हैं।

अपने मिन्क़ारों से हलक़ा कस रहे हैं जाल का
ताइरों पर सेहर है सय्याद के इक़बाल का

इस उनवान की वज़ाहत के लिए अशरफ़ुस्सवानेह की एक दूसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये।

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल सफ़हा 45।

> कानपुर की जामा मस्जिद जहां थानवी साहब के तलबा रहते थे। "चन्द औरतें मिठाई पर नियाज़ दिलाने आईं तो तलबा बग़ैर नियाज़ दिये सब खा पी गए, इस पर बड़ी बरहमी फैली और काफ़ी तादाद में लोग जमा हो गए तो थानवी साहब ने फ़रमाया भाई यहां वहाबी रहते हैं यहां नियाज़ फ़ातिहा के लिए कुछ मत लाया करो।"

इसी का नाम है इक़रारी डिग्री! इक़रारे वहाबियत के साथ वहाबियों की अलामत व पहचान भी बता दी कि वहाबी नियाज़ व फ़ातिहा नहीं देते।

मुनासिब होगा कि इसी मौक़ा पर चन्द बातें मौलवी रशीद अहमद गंगोही की ज़िक्र कर दी जायें जो उन्होंने अब्दुलवहाब नज्दी और उसके पैरौकारों के बारे में तहरीर किया है।

फ़तावा रशीदिया जिल्द अव्वल सफ़हा सात।

> मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब के मुक़्तदियों को वहाबी कहते हैं और उनके अक़ीदे उम्दा हैं।

फ़तावा रशीदिया हिस्सा तीन सफ़हा 79

सवाल:- अब्दुल वहाब नज्दी कैसे शख़्स थे ?

जवाब:- मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब को लोग वहाबी कहते हैं। वह अच्छा आदमी था सुना है मज़हब हम्बली रखता था और आमिल बिलहदीस था बिदअत व शिर्क से रोकता था मगर तशद्दुद (तेज़ी) उसके मिज़ाज में थी।

क्या कहना है अंजिनाब का! शिर्क व बिदअत से रोकने वाला गोबर ही क्यों न खाता हो मगर वह गंगोही साहब के गले का हार है। हम्बली हो या ग़ैर मुक़ल्लिद, काफ़िर हो या उसके मिज़ाज में तशद्दुद कुछ भी सही वह अपना ही है। महज़ इसलिए कि वह भी गंगोही साहब की तरह सारी दुनिया को मुशरिक व बिदअती बनाता है। दोस्ती व भाई चारगी के लिए इतनी वजह बहुत काफ़ी है और गंगोही साहब के पैरोकार का यह आलम है कि आँख बन्द करके अब्दुल वहाब नज्दी की पैरवी किये जा रहे हैं।

न काले को देखें न गोरे को देखें
पिया जिसको चाहें सुहागन वही है

लगे हाथ फ़तावा रशीदिया की तीसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये।

फ़तावा रशीदिया हिस्सा दो सफ़हा 11

"इस वक़्त इन अतराफ़ में वहाबी मुत्तबओ सुन्नत और दीनदार को कहते हैं।"

इन्हीं उलमाए देवबन्द की तरफ़दारी में जनाब फ़ीरोज़ुद्दीन साहब रूही ने आईनए सदाक़त नाम की एक किताब लिख डाली जिसके हर हर सफ़हा पर इमाम अहमद रज़ा ख़ाँ फ़ाज़िले बरैलवी और उनके मुतवस्सिलीन को जी खोल कर जाहिलाना और बाज़ारी गालियाँ दी हैं जिस किताब का एक सफ़हा भी किसी सन्जीदा व मतीन शख़्स के लिए पढ़ना दुशवार है। आईनए सदाक़त जैसी शर अंगेज़ व फ़ितना ख़ेज़ किताब पर ही रूही साहब से यूं भी शिकायत नहीं कर सकते कि वह और उनके भाई बिरादर गाली गुलूच में अपनी फ़ितरत व आदत से मजबूर हैं। और इत्तेफ़ाक़ से तब्दीलीए फ़ितरत के लिए हमारे पास कोई नुस्ख़ा मौजूद नहीं वरना यह नुस्ख़ा सब से पहले शिहाबे साक़िब के मुअल्लिफ़ (लेखक) जनाब मौलवी हुसैन अहमद साहब टांडवी पर इस्तेमाल किया जाता। जिस किताब को सही मानों में गाली नामा ही कहा जा सकता है जिसका एहसास न सिर्फ़ सुन्नी मकतबए फ़िक्र

को है, बल्कि फ़ाज़िले देवबन्द मौलवी आमिर साहब उस्मानी मुदीर (एडीटर) तजल्ली ने भी रद्दे शिहाबे साक़िब पर तबसेरा करते हुए इसका एतेराफ़ किया है कि शिहाबे साक़िब तहज़ीब व अदब से गिरी हुई किताब है।

तजल्ली फ़रवरी व मार्च 1959 सफ़हा 79 कालम 2

"वाक़ई मौलाना मदनी ने इस किताब में जिस तरह वो अलफ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये हैं उन्हें मोटी मोटी गालियां न सही 'मुहज़्ज़ब गालियां' कहना ज़रूर हक़ बजानिब है।"

मुदीरे तजल्ली ने गालियों के साथ "मुहज़्ज़ब" की क़ैद लगा कर सदरे देवबन्द को किसी हद तक बचाने की कोशिश की है मगर आगे चल कर सब्र व ज़ब्त का पैमाना भर गया। जब तक मौलाना टांडवी इमाम अहमद रज़ा को गालियां देते रहे उस वक़्त तक मोटी मोटी गालियां न थीं बल्कि मुहज़्ज़ब गालियां थीं लेकिन जब मौलाना टांडवी अपनी आदत के मुताबिक़ अब्दुल वहाब नज्दी और जमाअते इस्लामी पर बरस पड़े तो मुदीरे तजल्ली भी लंगोटी बांध कर सामने आ गए अब उन्हीं मुहज़्ज़ब गालियों को 'तबर्रा' और गाली गुलूच से तअबीर किया गया। मुलाहज़ा हो-

तजल्ली फ़रवरी व मार्च 1959 स. 84 कालम 2

"हम मौलाना मदनी के मुहिब्बीन व मुक़ल्लिदीन चाहें तो इस किताब से ख़ासी इबरत पकड़ सकते हैं। मौलाना मौसुफ़ ने शिहाबे साक़िब में मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी के साथ इन्साफ़ नहीं किया था। बाज़ इल्ज़ामात तो उन पर और उनके मुअतक़िदीन पर ऐसे बे बुनियाद जड़ दिये थे जैसे बरैलवी हम देवबन्दियों पर जड़ रहे हैं और बाज़ अक़ीदे के बारे में इल्मी इख़्तिलाफ़ात की बजाए 'तबर्रा बाज़ी' (गालियं देना) और गाली गुलूच का रास्ता इख़्तियार किया गोया हमीयते दीन और हिमायते हक़ के जज़्बा में ग़ैर मामूली हद तक मुश्तइल हो जाना और इल्मी सन्जीदगी को जज़्बाती जोश की तबाही से न बचाना उनकी पुरानी पहचान रही है। इसी ख़ूबी ने उन्हें बाद में जमाअते इस्लामी और मौलाना मौदूदी के बिल मुक़ाबिल ला खड़ा किया।"

मुदीरे तजल्ली की ऊपर लिखी इबारत में यह टुकड़ा ख़ुसूसियत से क़ाबिले ग़ौर है-

इल्मी सन्जीदगी को जज़्बाती जोश की तबाही से न बचाना उनकी

पुरानी आदत रही है।"

यानी गाली गुलूज, तबर्रा बाज़ी, सब व शत्म, मौलाना टांडवी की आदते सानिया थी। वह इल्मी मसाइल को भी गाली गुलूज ही से हल करने की कोशिश करते थे। अभी तक तो मुदीरे तजल्ली मौलाना टांडवी ही की खबर ले रहे थे। लेकिन जब उलमाए देवबन्द की वे एलेदालियों से कलेजा छलनी हो गया तो आखिरकार कातिमए हक़, नोंके क़लम पर आ ही गया।

तजल्ली फ़रवरी, मार्च सफ़हा 84 कालम एक

> "साथ ही यह भी तस्लीम करते है कि न सिर्फ़ "शिहाबुस्साक़िब" का अन्दाज़े तहरीर वाक़ई गैर महमूद व लाइके इज्तेनाब है। बल्कि हम 'वहाबियों' के और भी बुज़ुर्गों से कहीं कहीं अज़ राहे बशरियत अलफ़ाज़ व अन्दाज़ की ऐसी लग़्ज़िशें हो गई हैं कि उन्हें क़ाबिले इस्लाह कहना चाहिये।"

की मेरे क़त्ल के बाद उसने जफ़ा से तौबा
हाए उस ज़ूद पशीमाँ का पशीमाँ होना

काश यही एहसास मौलाना थानवी, मौलाना गंगोही, मौलाना अम्बेठवी, मौलाना देहलवी वग़ैरह की ज़िन्दगी में हो गया होता तो वह लोग भी अपनी लग़्ज़िशों (भूलों) पर नादिम व शर्मसार होकर दुनिया से गए होते। यही क्या कम है कि अब एहसास हो चला है। ख़ुदा करे यह वक़्ती एहसास इस्तिक़लाल व इस्तिहकाम की सूरत पैदा कर ले और देवबन्दी ग्रुप अपने अकाबिर की ग़लतियों से तौबा करके हिदायत व सलामती की राह पर आ जाये। उस अहकमुल हाकिमीन की रहमते बे पायाँ से क्या बईद जिस का मामूली क़हरो ग़ज़ब इन्सानों पर हिदायत्त का दरवाज़ा बन्द करदे और वही अपनी शाने करीमी से अपने बन्दों पर हिदायत व फलाह का दरवाज़ा खोल दे।

ऊपर लिखी बैली व ज़िम्नी गुफ़्तगू से बात इस हद तक वाज़ेह हो गई कि अकाबिर उलमाए देवबन्द से ख़तायें व लग़्ज़िशें वाक़ेअ हुई हैं जिसकी मज़ीद तफ़सील में फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी मुदीर 'बुरहान' व साबिक़ प्रिन्सिपल मदरसा आलिया कलकत्ता (व सदर शोअबए दीनियात मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़) व मुदीर 'फ़ारान' जनाब माहिरुल क़ादरी की तहरीरें अगले सफ़ों पर पेश की जायेंगी।

इस वक़्त तो जनाब फ़ीरोज़ुद्दीन साहब रूही का तज़्किरा था कि जनाब ने अपनी शर अंगेज़ तालीफ़ आईनए सदाक़त में इमाम अहमद रज़ा, अल्लामा शामी और अल्लामा अहमद ज़ैनी दहलान वग़ैरहुम को ख़ूब ख़ूब गालियां देकर दिल का बुख़ार निकाला है। मुझे इस किताब पर कोई सैर हासिले गुफ़्तगू करनी नहीं है। चूंकि इस किताब का इल्मी व सन्जीदा जवाब सुल्तानुल मुकर्रीन हज़रत अल्लामा मौलाना अब्दुल हफ़ीज़ साहब मुफ़्ती आगरा रहमतुल्लाह अलैह की तरफ़ से शमओ हिदायत के नाम से शाया हो चुका है जो किताब हिन्द व पाक में ब-नज़रे क़बूलियत देखी गई है।

अगर किसी साहब को तहक़ीक़ मक़सूद हो तो वह आईनए सदाक़त के सफ़हा 38, 39,42 को मुलाहज़ा फ़रमायें और इस मक़ाम पर महज़ तस्कीने ख़ातिर के लिए आईनए सदाक़त सफ़हा 44 व 45 की एक इबारत दर्ज की जाती है जो अन्दाज़ व क़ियास के लिए काफ़ी होगी।

(आईनए सदाक़त सफ़हा 44)

शामी की इबारत नक़ल करने के बाद रूही साहब का तबर्रा मुलाहज़ा कीजिये-

> "शामी की इस इबारत को रज़ा ख़ानी उलमा बड़े फ़ख़्र से अपने रिसालों में नक़ल करते हैं 'चन्द सतर बाद' मगर उनको क्या मालूम कि इब्ने आबिद शामी ने हुकूमत के असर से उन ग़रीबों को बदनाम किया और उन (नज्दियों) के ख़िलाफ़ मुत्तहिदा महाज़ क़ाइम करके अपनी दुनिया संभाली, बुरा हो इस दुनिया परस्ती और सुनहरी सिक्कों का जिसके एवज़ शामी ने नज्दियों को दिल खोल कर बदनाम किया है।"

सही है उलमाए अहले सुन्नत हमेशा हुकूमत से अलग थलग रहे। हुकूमत का छुपा हुआ राज़ तो थानवी साहब के भाई मज़हर अली के हम पेशावरों ही को मालूम हो सकता है। अगर शैख़ नज्दी पर नक़्दो नज़र करने की वजह से अल्लामा पर आप ऐसे नापाक व नारवा हमले कर सकते हैं तो फिर दुनिया को अपने मुतअल्लिक़ भी राय क़ाइम करने दीजिये कि इस गाली गुलूज के पर्दे में आप भी किसी हुकूमत की एजेन्टी का हक़ अदा कर रहे हैं।

शीशे के घर में बैठ कर पत्थर हैं फेंकते
दीवारें आहिनी पे हिमाक़त तो देखिये

जब अल्लामा शामी को बुरा भला कहने से जी भर गया तो रूही साहब अल्लामा ज़ैनी दहलान की तरफ़ मुतवज्जेह हुए और ख़ूब ख़ूब जली कटी सुनाई। यह तो रूही साहब ने शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब की तारीफ़ व मन्क़बत का ख़ुतबा पढ़ा जैसा कि वह सफ़हा 42 पर तहरीर फ़रमाते हैं।

> "शैख़ एक फ़ाज़िले अजल थे, उनका इल्मी पाया बुलन्द है वह ठेठ मुहद्दिसाना तरीक़ा पर लिखते हैं। उनका तरीक़ा क़ुरआन और उनकी दलीलें जुज़ व कुल हदीस से माख़ूज़ होती हैं।"

इसी तरह सफ़हा 39 पर लिखते हैं।

> "शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब बचपन ही से अमर बिल्मअ्रूफ़ व नही अनिल मुन्किर की तरफ़ माइल थे वग़ैरह वग़ैरह।"

जब शैख़े ज़मीन व आसमान की तारीफ़ करने से फ़ुरसत मिली तो धींगा मुश्ती पर उतर आये रूही साहब के साथ प्रोफ़ेसर का टाइटल देख कर किताब से मुतअल्लिक़ मेरा हुस्ने ज़न (बेहतर गुमान) यह था कि इसमें मतानत व शाइस्तगी होगी मगर मालूम हुआ कि 'प्रोफ़ेसर' का टाइटल इस्तेलाही नहीं बल्कि उरफ़ी है। जैसा कि आम तौर पर मुस्लिम ख़ानदानों में रिवाज है कि अक़ीक़े का नाम तो अब्दुलहई होता है मगर मां बाप इन्तेहाई दुलार व प्यार के मातहत बच्चे को नवाब, शहज़ादे, लड्डन वग़ैरह कह कर पुकारते हैं। कुछ ऐसा ही रूही साहब के मुतअल्लिक़ भी क़ियास किया जाता है।

तस्वीर का दूसरा रुख़

उलझा है पाँव यार का ज़ुल्फ़े दराज़ में
ख़ुद आप अपने दाम में सय्याद आ गया

थानवी साहब ने जामा मस्जिद कानपुर में वहाबी होने का इक़रार किया। पीरे मुग़ाँ जनाब मौलवी रशीद अहमद साहब गंगोही ने शैख़े नज्दी को आमिल बिलहदीस, मुत्तबअे सुन्नत और फ़र्ते मुहब्बत में न जाने क्या क्या कह दिया। जनाब मसऊद आलम साहब नदवी ने अक़ीदत केशी का हक़ अदा करते हुए शैख़े नज्दी की सवानेह उम्री मुरत्तब कर डाली। और फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना मुहम्मद आमिर साहब उस्मानी ने अपने और अपने दूसरे हम ख़्याल दोस्तों के वहाबी होने का इक़रार किया। और जनाब रूही साहब जो अभी अभी इस जमाअ़त के नये मेम्बर हुए हैं उन्होंने तो अपनी वफ़ादारी का सुबूत देते हुए वह सब कुछ कह दिया जिसके एतेराफ़ (स्वीकृति) में ख़ुद उनके बुज़ुर्गों को भी तकल्लुफ़ (संकोच) होगा। अब आईये अयोध्या वासी जनाब मौलाना हुसैन अहमद साहब सदर देवबन्द की सुनिये जिनकी राह अपने साथियों में सब से अलग थलग है।

हम पैरवीए क़ैस न फ़रहाद करेंगे
कुछ तर्ज़े जुनूं और ही ईजाद करेंगे

शिहाबुस्साक़िब लेखक मौलाना हुसैन अहमद स. 50 की एक इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये-

> "साहिबो! मुहम्मद बिन अ़ब्दुलवहाब नज्दी इब्तेदाए तेरहवीं सदी में नज्द अरब से ज़ाहिर हुआ और चूंकि ग़लत ख़्यालात और अक़ाइदे फ़ासिदा रखता था। इस लिए उसने अहले सुन्नत व जमाअ़त से क़त्ल व क़ेताल किया और उनको ज़बरदस्ती अपने ख़्यालात की तकलीफ़ देता रहा। उनके माल को ग़नीमत का माल और हलाल समझा गया। उन (अहले सुन्नत) के क़त्ल को बाइसे सवाब व रहमत का शुमार करता रहा। अहले हरमैन को ख़ुसूसन और अहले हिजाज़ को उमूमन उसने सख़्त तकलीफ़ें पहुंचाईं। सल्फ़ व सालिहीन और अत्बाअ् (पैरौकारों) की शान में निहायत गुस्ताख़ी व बे-अदबी के अलफ़ाज़ इस्तेमाल किये।

> बहुत से लोगों को उसके सख़्त तकलीफ़ों की वजह से मदीना मुनव्वरा और मक्का मुअज़्ज़मा छोड़ना पड़ा। और हज़ारों आदमी उसकी फ़ौज के हाथों शहीद हो गए। अलहासिल वह एक ज़ालिम व बाग़ी, ख़ूँख़्वार फ़ासिक़ शख़्स था।"

अब अलमुहन्नद मुरत्तबा मौलवी ख़लील अहमद साहब अम्बेठवी की चन्द सतरें मुलाहज़ा फ़रमाइये लेकिन हवाला से पहले यह समझ लेना ज़रूरी है कि अलमुहन्नद है क्या ? अगर मेरी जगह कोई दूसरा होता तो वह सीधे सादे लफ़्ज़ों में सिर्फ़ यह कहता कि अलमुहन्नद अकाबिरे उलमाए देवबन्द के दजल, मकर, फ़रेब, इफ़्तेरा, अय्यारी, चालबाज़ों का मजमूआ है. मगर मैं तो महज़ इतनी सी बात पर क़नाअत करता हूं कि अलमुहन्नद एक ऐसी किताब है जिससे उलमाए देवबन्द के बातिल होने का पता चलता है।

अगर अलमुहन्नद सही है तो हिफ़ज़ुल ईमान को कहीं दरिया में डाल करके थानवी साहब के मुरीदीन को मुनाज़रा से बे ख़ौफ़ होकर आराम की नींद सो जाना चाहिए। आख़िरश मुनाज़रा के डर से क्यों नींद हराम किये हैं ? और तक़वीयतुल ईमान को चुपके से दफ़न करके हमेशा के लिए किताबों की फ़ेहरिस्त से उसका नाम निकाल दिया जाये और तहज़ीरुन्नास के टाइटल पर किसी क़ादियानी मौलवी का नाम और ऐसे ही फ़तावा रशीदिया के सरे वरक़ अगर कोई न मिल सके तो मौलाना हशमत अली खां साहब मरहूम का नाम देकर एलान कर दीजिये कि यह हम लोगों की किताब नहीं बल्कि क़ादियानियों और सुन्नियों की है जिसको हमारे नाम से छाप दिया गया है। जब आप इबारात की तुरअत व नसारत अलमुहन्नद जैसी बे बुनियाद किताब की इशाअत कर सकती है तो ऐसा करने में कौन आपकी कलाई थाम सकेगा।

और हिफ़ज़ुल ईमान, तहज़ीरुन्नास, बराहीने क़ातिआ व तक़वीयतुल ईमान पर आप का ईमान है तो किसी दिन अला रुऊसिल अशहाद (शहादतों के सामने पर) अलमुहन्नद का जनाज़ा निकालिये और मौलाना ख़लील अहमद व मौलाना महमूदुल हसन वग़ैरह की क़ब्र के पास उसको भी दफ़न करके एलान कर दीजिये कि हमारे बुज़ुर्गों ने अलमुहन्नद की इशाअत की थी मगर अब उसका बाज़ार ठन्डा पड़ गया। इस लिए अब हम लोग अलमुहन्नद की जगह अलमुख़न्नस की इशाअत करेंगे जिसमें अलमुहन्नद और तक़वीयतुल ईमान का दर्मियानी मज़हब होगा। ——

और ऐसे ही हर सौ पचास बरस के बाद एक मैंने गढ़त किताब लिखते रहिये हर साल आपकी जमाअत के अकाबिर व असातीन सरकारी हज के लिए हिजाज जाया ही करते हैं। उलमाए हरमैन से दस्तख़त हासिल करते रहें। जब दस्तख़त का ढेर व पुलिन्दा हासिल हो जाये तो अलजमीअत प्रेस से उसको छाप दिया जाये।

कहना यह है कि उलमाए देवबन्द की बाज़ कुफ़्री इबारात को उलमाए अहले सुन्नत ने उलमाए हरमैन की ख़िदमत में पेश किया तो उलमाए मक्का मुकर्रमा व उलमाए मदीना मुनव्वरा ने उन इबारात को देख कर क़ानूने शरीअत के मुताबिक़ उलमाए देवबन्द की तकफ़ीर की जिसकी इशाअत 'हुस्सामुल हरमैन' के नाम से की गई है। हुस्सामुल हरमैन की इशाअत पर देवबन्द में तहलका मच गया और उसके झुटलाने की तरकीबें सोची गईं। और यह तय पाया कि अपने फ़र्ज़ी अक़ीदों को सवालात की शक्ल में उलमाए हरमैन की ख़िदमत में पेश करना चाहिये चुनान्चे अपने नहीं बल्कि अहले सुन्नत के अक़ीदे को सवाल की शक्ल में मुरत्तब किया और उलमाए हरमैन की ख़िदमत में पेश करके उनके दस्तख़त हासिल किये या उलमाए हरमैन के फ़र्ज़ी दस्तख़त से अलमुहन्नद के नाम से उसकी इशाअत कर दी गई। ख़ुदा ही बेहतर जानता है. सच पूछिये तो उलमाए देवबन्द ने अलमुहन्नद की इशाअत से अपनी जड़ें और बुनियादें खोखली कर दीं। इस किताब के छपने पर उन लोगों ने ख़ुद अपने हाथ पाँव पर कुल्हाड़ी मारी है। हुस्सामुल हरमैन के छपने पर इन्तेहाई वहशत व बौखलाहट में यह लोग वह कर गये जिसको कोई देवबन्दी मौलवी होशो हवास में कभी भी गवारा नहीं कर सकता और सच तो यह है कि अलमुहन्नद के छपने से देवबन्दियों ने अपना कम और सुन्नियों का काम ज़्यादा अन्जाम दिया है इस ख़ौफ़ से अपने अक़ीदों को लिख न सके कि इसका भी वही जवाब होगा जो हुस्सामुल हरमैन में है। लिहाज़ा अपने अक़ाइद को तोड़ मरोड़ कर लिखा जो अहले सुन्नत के अक़ीदे हैं या उन से क़रीब तर। इन्शाअल्लाह तआला किताब के आख़िरी सफ़हों पर अलमुहन्नद और तक़वीयतुल ईमान और हिफ़ज़ुल ईमान का एक इजमाली मुवाज़ना पेश करूंगा जिससे आप अन्दाज़ा कर सकेंगे कि अलमुहन्नद और तक़वीयतुल ईमान में किसी एक ही किताब को सही कहा जा सकता है। यह नहीं हो सकता कि एक साथ दोनों किताबें सही मानी जा सकें दोनों किताबों को सही मानना गोया आग व पानी को एक ही जगह जमा करना है। अब तक तो यही मालूम है कि 'इज्तेमाओ नक़ीज़ैन' मुहाल है हां अगर देवबन्द

ने किसी नये फ़लसफ़ा की बुनियाद डली हो जिसमें इज्तेमाए नकीज़ैन के मुहाल न होने पर कोई काबिले तस्लीम दलील क़ाइम की गई हो तो उसका पेश करना उनके ज़िम्मे है।

बात बहुत दूर आ गई। मज़मून यह चल रहा था कि बहुत से उलमाए देवबन्द ने अब्दुलवहाब नज्दी की तारीफ़ व तौसीफ़ की और कुछ लोगों ने उसको ज़ालिम, बागी, खूनख्वार वगैरह कहा जैसा कि मौलवी हुसैन अहमद टांडवी की किताब शिहाबे साक़िब से इसका हवाला पेश किया गया।

अब अलमुहन्नद स. 13 की इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये जिस पर तमाम अकाबिरे उलमाए देवबन्द के दस्तख़त हैं।

> "हमारे नज़दीक उनका (अब्दुलवहाब नज्दी का) वही हुक्म है जो साहबे दुर्रे मुख़्तार ने फ़रमाया है।"

यानी अब्दुल वहाब फ़ासिक़, खूनख्वार बागी था।

अब! दारुल उलूम देवबन्द के साबिक़ शैखुल हदीस जनाब मौलवी मुहम्मद अनवर साहब कश्मीरी की राय मुलाहज़ा फ़रमाइये।

मुक़द्दमा फ़ैजुल बारी-

और मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी एक कम इल्म और कम फ़हम (समझ) इन्सान था इस लिए कुफ़्र का हुक्म लगाने में उसे कोई बाक (संकोच) न था।

आख़िरी फ़ैसला

अब नाज़िरीन इन्साफ़ फ़रमायें कि एक तरफ़ मौलाना रशीद अहमद गंगोही, मौलाना मुहम्मद आमिर उस्मानी, प्रो॰ फ़िरोज़ुद्दीन रूही, मौलाना मसऊद आलम नदवी, और मौलाना थानवी की जमाअत है कि यह लोग शैख़ मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी के मद्दाह (बहुत तारीफ़ करने वाले) और अपने को उसका पैरौ समझते हैं।

यह ज़रूर है कि इस जमाअत में मौलाना थानवी की हैसियत 'थाली के बैंगन' जैसी है 'नीम दरूं नीम बरूं' अशरफ़ुस्सवानेह में वहाबी होने का इक़रार और इस पर तुरफ़ा तमाशा यह कि अलमुहन्नद पर भी आंजनाब की तस्दीक़ है। इस फ़लसफ़े को मौलाना थानवी के ख़ुलफ़ा और मुरीदीन ही ज़्यादा समझ सकते हैं-

हम से कुछ, गैरों से कुछ और दरबान से कुछ

और दूसरी जमाअत में मौलाना किफ़ायतुल्लाह, मौलाना ख़लील अहमद

अम्बेठवी, मौलाना मुहम्मद अनवर कश्मीरी, मौलाना महमूदुल हसन देवबन्दी और मौलाना हुसैन अहमद टांडवी वगैरह हैं। शैख़ अब्दुल वहाब नज्दी के बारे में उन लोगों का वही मसलक है जो अल्लामा शामी का है। यानी अब्दुल वहाब नज्दी ज़ालिम बागी लुटेरा, खूनख्वार फ़ासिक़ और कम इल्म था।

इन्साफ़ तो नाज़िरीन के हाथ है कि मौलाना टांडवी और मौलाना गंगोही में पीरी मुरीदी का रिश्ता है। मौलाना टांडवी मौलाना गंगोही के चहीते मुरीदों में हैं मगर पीर कुछ कहता है और मुरीद कुछ?

अजब कुछ फेर में है सीने वाला जेबो दामाँ का
जो ये टांका तो वो उधड़ा जो वो उधड़ा तो ये टांका

मौलाना टांडवी की बात मानिये तो गंगोही साहब का दामन हाथ से जाता रहा और गंगोही साहब की बात मानिये तो टांडवी साहब से रिश्ता ख़त्म!

नहीं मालूम मैकदए गंगोह के तालिबाने राह साक़ीए मैख़ाना की ज़ुल्फ़ों का पेचो ख़म किस तरह सुलझाते हैं?

यह सवाल जनाब टांडवी साहब की ख़िदमत में भी पेश हो चुका है कि शैख़ नज्दी के बारे में गंगोही साहब की कुछ राय है और आपकी कुछ, तो जवाब में टांडवी साहब ने कैसा हसीन गुरेज़ फ़रमाया है मुलाहज़ा कीजिये। मक्तूबाते शैख़ जिल्द 2 स. 297,298,299

> "जो इबारत उस (शैख़े नज्दी) की तहसीन में लिखी गई है वह महज़ सुनी सुनाई बातों पर मबनी है। हज़रत गंगोही साहब क़ुद्देस सिर्रहुल अज़ीज़ इस किताब (शामी) पर बहुत ज़्यादा भरोसा फ़रमाते थे। ज़्यादातर उनके फ़तावे इसी किताब से माख़ूज़ हैं।"

क्या कहना है मौलाना टांडवी का! पीर व मुर्शिद हमेशा शामी ही से फ़तावा देते रहे। सारी किताब तो छान डाली मगर यह नज़र न आया कि शैख़ अब्दुल वहाब नज्दी ज़ालिम, फ़ासिक़, खूनख्वार था या सुन्नत पर चलने वाला?

हालांकि गंगोही साहब की निगाह शामी के हर सफ़हा व हर सतर पर थी मुलाहज़ा फ़रमाइये। अरवाहे सलासा सफ़हा 292 की इबारत जो मौलाना गंगोही की तारीफ़ व तौसीफ़ (प्रशंसा) से भरपूर है।

> "ख़ान साहब ने फ़रमाया कि हज़रत गंगोही रहमतुल्लाह अलैह ने मौलवी यहया साहब कांधेलवी से फ़रमाया कि फ़लां मसला शामी में देखो, मौलवी साहब ने अर्ज़ किया कि हज़रत वह मसला शामी में तो है नहीं। फ़रमाया यह कैसे हो सकता है। लाओ शामी उठा लाओ। शामी लाई गई। हज़रत (यानी मौलाना रशीद अहमद गंगोही) उस वक़्त आंखों से लाचार हो चुके थे, शामी के दो सुलुस (दो तिहाई) दायें जानिब करके और एक सुलुस बायें जानिब करके अन्दाज़ से किताब एक दम खोली और फ़रमाया कि बायें तरफ़ के सफ़हा पर नीचे की जानिब देखो, देखा तो मसला उसी सफ़हा में मौजूद था। सब को हैरत हुई हज़रत (गंगोही साहब) ने फ़रमाया कि हक़ तआला ने मुझ से वादा फ़रमा लिया है कि मेरी ज़बान से ग़लत नहीं निकलवाएगा।"

क़व्वा ख़ाने के बावजूद गंगोही साहब आंखों से लाचार हो चुके थे मगर इन सब बातों के बावजूद शामी के सफ़हात व सतरें ज़ेहन में महफ़ूज़ थीं और इसी पर बस नहीं बल्कि उनके अल्लाह साहब वादा फ़रमा चुके थे कि गंगोही साहब की ज़बान से ग़लत नहीं निकलवायेंगे। हालांकि ख़ुद गंगोही साहब के दीन व धरम में उनके अल्लाह साहब झूट बोल चुके हैं और हर वक़्त झूट बोलने का इमकान है। न जाने उनके अल्लाह साहब की कैसी ख़ुदाई है। ख़ुद तो झूट बोलें मगर अपने बन्दों से वादा कर ले कि तुम्हारी ज़बान से झूट न निकलेगा।

अब फ़रमायें कि मौलाना टांडवी के मैरोकारों ख़ास कर मौलाना आमिर उस्मानी के अक़ाइद सल्लमहू, जो व इन्शुद कि बात उनके वालिदे बुज़ुर्गवार की सही है या उनके पीर व मुर्शिद मौलाना गंगोही की ?

> ऐसी समझ किसी को भी ऐसी ख़ुदा न दे
> दे आदमी को मौत पर यह बद अदा न दे

मुमकिन है नाज़िरीन को अन्देशा व वसवसा हो कि मौलाना थानवी और मौलाना गंगोही जैसे ज़िम्मेदाराने देवबन्द की किताबों में क्योंकर इस क़िस्म का इख़्तेलाफ़ (बाधा) और तज़ाद (मुख़ालफ़त) वाक़ेअ् हो सकता है और ऐसी ग़ैर मुहतात इबारात किस तरह नोके क़लम पर आ सकती हैं जब कि एक मुबतदी व नापुख़्ता कार से भी ऐसी ग़लतियां मुश्किल से होती हैं।

नाज़िरीन के क़ल्ब व जिगर का चुभता हुआ कांटा दूर करने के लिए अपने ज़मीर व मज़ाक़ (ज़ौक़) के ख़िलाफ़ महज़ यक़ीन देहानी की ख़ातिर चन्द वाक़िआत नक़ल करता हूं जिससे यह सही अन्दाज़ा हो सकेगा कि उलमाए देवबन्द अपनी तहरीर व मजलिसी गुफ़्तगू में किस हद तक ग़ैर मुहतात वाक़ेअ् हुए हैं। बात अगर सुनी सुनाई और महज़ रिवायती होती तो मैं हरगिज़ इसको मअ्रिज़े तहरीर में न लाता मगर वाक़िआत शाया हो चुके हैं इसलिए मेरी हैसियत महज़ नाक़िल की है जिस पर देवबन्दी मकतबए फ़िक्र को नाक भौंव चढ़ाने के बजाये सन्जीदगी से काम लेना चाहिये।

> कोई कोई बड़ा दिलचस्प बाब है इसमें
> कहीं कहीं से मुहब्बत की दास्ताँ सुन लो

तज़किरतुर्रशीद जिल्द 2 स. 245

> "आप (यानी मौलवी रशीद अहमद गंगोही) एक मर्तबा ख़्वाब बयान फ़रमाने लगे कि मौलवी मुहम्मद क़ासिम को मैंने देखा कि दुल्हन बने हुए हैं और मेरा निकाह उनके साथ हुआ, फिर ख़ुद ही तअ्बीर फ़रमाई कि आख़िर उनके बच्चों की कफ़ालत करता ही हूं।"

दूसरा ख़्वाब मुलाहज़ा फ़रमाइये तज़किरतुर्रशीद हिस्सा 2 स 289

> "मौलवी रशीद अहमद गंगोही ने एक बार इरशाद फ़रमाया। मैं ने एक बार ख़्वाब देखा था कि मौलवी मुहम्मद क़ासिम दुल्हन की सूरत में हैं और मेरा उनसे निकाह हुआ है सो जिस तरह मर्द व औरत में एक दूसरे को फ़ाइदा पहुंचता है उसी तरह मुझे उनसे और उन्हें मुझ से फ़ाइदा पहुंचा है। चन्द सतर बाद यह खुलासा और है। हकीम मुहम्मद सादिक़ कांधेलवी ने कहा अर्रिजालो क़व्वामू अलन निसाई यानी मर्द हाकिम हैं औरतों पर। आपने यानी गंगोही साहब ने फ़रमाया हां आख़िर उनके बच्चों की तरबियत करता ही हूं।"

> यह जवाँ साल उमंगें यह अछूते अरमाँ
> किस की झोली में ये अन्मोल सितारे भर दूं

"बिल्ली को ख़्वाब में छीछड़े ही नज़र आते हैं" के मुताबिक़ मौलाना गंगोही को भी ख़्वाब में मौलाना क़ासिम ही नज़र आते थे। इससे गंगोही साहब के बहुत ऊँचे अफ़्कार व ख़्यालात का पता चलता है यह तो ख़्वाब व ख़्याल की बातें थीं। अब ख़ानक़ाहे गंगोह की एक मुहब्बत भरी कहानी सुनिये कि भरी महफ़िल में क्या-क्या शगूफ़े खिलते थे-

यही कुछ उम्मीदें यही आरज़ूएं
मेरी ज़िन्दगी के यही है सहारे

अरवाहे सलासा सफ़हा 289

> "हज़रत वालिद माजिद मौलाना हाफ़िज़ मुहम्मद अहमद साहब व चचा मुहतरम मौलाना हबीबुर्रहमान रहमतुल्लाह अलैहिमा ने बयान फ़रमाया कि एक दफ़ा गंगोह की ख़ानक़ाह में मजमा था। हज़रत गंगोही और हज़रत नानौतवी के मुरीद व शागिर्द सब जमा थे और यह दोनों हज़रात भी वहीं मजमा में तशरीफ़ फ़रमा थे कि हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही ने हज़रत मौलाना क़ासिम नानौतवी से मुहब्बत भरे अंदाज़ में फ़रमाया यहां ज़रा लेट जाओ। हज़रत नानौतवी कुछ शर्मा से गए मगर हज़रत गंगोही ने फिर फ़रमाया तो बहुत अदब के साथ चित लेट गये हज़रत भी उसी चारपाई पर लेट गये और मौलाना क़ासिम नानौतवी की तरफ़ को करवट लेकर अपना हाथ उनके सीने पर रख दिया जैसे कोई सच्चा आशिक़ अपने दिल को तस्कीन दिया करता है। मौलाना क़ासिम नानौतवी हर चन्द फ़रमाते हैं कि मियाँ क्या कर रहे हो यह लोग क्या कहेंगे। हज़रत (गंगोही) ने फ़रमाया लोग कहेंगे, कहने दो।"

बनती नहीं है सब्र को रुख़्सत किये बग़ैर
काम उनकी बेक़रार निगाहों से पड़ गया

मेरी नज़र में ऊपर लिखी इबारत तबसेरा (टीका टिप्पणी) की मुहताज नहीं है। नाज़िरीन (पाठक) ख़ुद ही ख़्याल फ़रमायें कि दिन दहाड़े गंगोह की ख़ानक़ाह में क्या कुछ होता था। अपने बुज़ुर्गों के करतूत व किरदार पर क़ियास करके जब ही तो हज़राते देवबन्द ख़ानक़ाहों के पीछे पड़ गये हैं। यह ग़रीब व कम अक़्ल समझते हैं कि हर ख़ानक़ाह में वही होता है जो थाना भवन या गंगोह की ख़ानक़ाह में होता है।

कारे पाकाँ रा क़ियास अज़ ख़ुद मगीर
गरचे बाशद दर नविश्तन शेरो शीर

बर सरे राह अशरफ़ुत्तम्बीह सफ़हा 40 की भी एक इबारत मुलाहज़ा कीजिये।

> "थानवी साहब लिखते हैं। मौलाना यानी (क़ासिम नानौतवी) बच्चों से हंसते बोलते भी थे और जलालुद्दीन साहब साहबज़ादा मौलाना मुहम्मद याक़ूब से जो उस वक़्त बिल्कुल बच्चे थे बड़ी हंसी किया करते थे, कभी टोपी उतारते कभी कमर बन्द खोल देते थे।"

नदामत हुई हश्र में जिनके बदले
जवानी की दो चार नादानियाँ हैं

तकफ़ीरी अफ़साने 'अशिशहाबुस्साक़िब', 'आईनए सदाक़त', 'फ़सादी मुल्ला' के मुअल्लिफ़ीन व हामेईन अपने अकाबिर व असातीन का मुआशक़ा देख कर ठन्डे दिल से ग़ौर करें और जिन्हें अफ़साना नवेसी ही का शौक़ है उन्हें तकफ़ीरी अफ़साने के बजाए अकाबिरे देवबन्द के इश्क़ व मुहब्बत का अफ़साना मुरत्तब करना चाहिए, जिसमें एक मानवी राबता भी है। भला अफ़साने का तकफ़ीर के साथ क्या जोड़ और पैवन्द है ? ख़ानक़ाहे गंगोह के एक सच्चे आशिक़ की ऐसी दिल गुदाज़ व जाँ नवाज़ कहानी लिखिये जिसको पढ़ कर वामिक़ व अज़रा, शीरीं व फ़रहाद, क़ैस व लैला की दास्ताने इश्क़ व मुहब्बत को भूल जाये। फिर तो किशवरे मुहब्बत (प्यार के देश) में आप ही आप होंगे और आप ही का चर्चा होगा।

कितने ग़ज़ब की बात है, ख़ानक़ाहे गंगोह में एक आशिक़े सादिक़ के हाथों सब्र व शकेब का दामन छूट गया। आबगीनए दिल टूट कर चूर चूर हो गया। मगर तकफ़ीरी अफ़साने के मुअल्लिफ़ के कान पर जूं तक न रेंगी। हालांकि ख़ल्फ़े सादिक़ को तो यह करना चाहिए था कि गंगोह और देवबन्द की दर्द भरी कहानी के नाम कोई अफ़साना लिख कर अपने बुज़ुर्गों के इश्क़ व मुहब्बत को ज़िन्दगीए जावेद बख़्श देते।

ख़ानक़ाहे गंगोह की भरी महफ़िल में मौलाना क़ासिम नानौतवी शरमा-शरमा कर कहते थे कि मियां यह क्या कर रहे हो। मगर गंगोही साहब हवसनाकियों के हाथ मजबूर होकर सब्र व ज़ब्त को आख़िरी सलाम कर बैठे।

जा और कोई ज़ब्त की दुनिया तलाश कर
ऐ इश्क़ हम तो अब तेरे क़ाबिल नहीं रहे

क्या तअज्जुब है कि मिर्ज़ा ग़ालिब ने इन्हीं सब वाक़िआत के पेशे नज़र यह शेअ़र कहा हो-

हर बुलहवस ने हुस्न परस्ती शेआ़र की
अब आबरूए शीवए अहले नज़र गई

"देवबन्दियों के यहां लफ़्ज़े मियाँ भी अ़जीब व ग़रीब हैसियत रखता है। कहीं रशीद मियां कहीं अल्लाह मियां "अल्लाह तआला के लिए उन्हें कोई दूसरा लफ़्ज़ ही नहीं मिलता।"

अगर तकफ़ीरी अफ़साने के लेखक को ज़हमत न हो तो उनसे एक बात पूछनी है कि हिन्द व पाक का वह तबक़ा (गरोह) जिसके ज़बान व क़लम से इश्क़े रसूल और अज़मते औलिया का इज़हार होता है उन्हें बिदअ़ती, मौलुदी और क़ब्र पुजवा क़रार कर आप लोग मीलाद, फ़ातिहा, उर्स व क़ियाम के लिए क़ुरआन व हदीस की दलीलें तलब करते हैं। अब ज़रा से एक सच्चे आ़शिक़ की क़ियामत ख़ेज़ दास्ताने इश्क़ व मुहब्बत के पेशे नज़र यह फ़रमाइये कि जिस तरह नानौतवी साहब और गंगोही साहब ख़ानक़ाहे गंगोह में लेटे थे इस तरह लेटने और गुफ़्तगू करने का हुक्म क़ुरआन की किस आयत और सेहाहे सित्ता की किस हदीस में है। एक आ़मी मुसलमान भी जानता है कि सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया है कि

हया ईमान का एक शोबा (हिस्सा) है। मगर इस बेहयाई पर क़ुरआन व हदीस का कोई टुकड़ा पेश नहीं किया जा सकता। जब कि क़ुरआन व हदीस का मक़सद शर्म व हया की तल्क़ीन है न कि बे हयाई की! मीलाद व फ़ातिहा पर सुबूत व दलील मांगने वालों की ग़ैरते ईमानी यहां क्यों सो गई है, यही वह मक़ाम है जहां पहुंच कर हज़राते देवबन्द के इत्तबाओ सुन्नत की क़लई खुल जाती है। अब मामला मीलाद व फ़ातिहा का नहीं है बल्कि अपने मौलवियों के करतूत व किरदार की बारी है जिनकी विलायत व करामत का ख़ुतबा पढ़ते पढ़ते ज़बान घिस गई है।

कारे शैतां मी कुनद नामश वली
गर वली ईं अस्त लानत बर वली

मुनासिब होगा कि इसी मक़ाम पर मौलाना थानवी के ऊँचे किरदार व मकारिमे

अख़्लाक़ व पुख़्तगीए राए की एक झलक पेश कर दी जाये ताकि-

क़ियास कुन ज़े गुलिस्ताने मन बहार मुरा

सैफ़े यमानी सफ़हा 23,24 मुरत्तबा मौलवी मन्ज़ूर साहब नोअ़मानी देवबन्दी थानवी साहब अपने इब्तेदाई दौर में कानपुर में थे तो वहां के वजूहे इक़ामत बयान करते हैं-

> "तीसरे मैंने देखा कि वहां (कानपुर) बेदुने शिरकत इन मजालिस (मीलाद शरीफ़) के किसी तरह क़ियाम मुमकिन नहीं, ज़रा इन्कार करने से वहाबी कह दिया दर पये ज़लील व तौहीन हो गये और शिरकत भी इस नज़र से कि उन लोगों की हिदायत होगी और यूं ख़्याल होता है कि अगर एक मकरूह के इरतेकाब से दूसरे मुसलमानों के फ़राइज़ व वाजिबात की हिफ़ाज़त हो तो अल्लाह तआ़ला से उम्मीद तसामुह है। बहर हाल वहां (कानपुर) में बेदूने शिरकत 'मीलाद' क़ियाम करना क़रीब बमुहाल देखा और मन्ज़ूर था वहां रहना क्योंकि मनफ़अ़त भी है कि मदरसे से तनख़्वाह मिलती है।"

दुनियावी फ़ाइदा और तनख़्वाह का मिलना यह है टेप का बन्द! (असल मतलब) किसी ने क्या पते की बात कही है-

किया झूट का शिकवा तो यह जवाब मिला
तक़िय्या हमने किया था हमें सवाब मिला

थानवी साहब उन बुज़ुर्गों में हैं कि तक़य्या करके ख़ूब ख़ूब सवाब लूट चुके हैं। इस इबारत का ख़ुलासा व निचोड़ यह है कि जहां तनख़्वाह मिल रही हो और दुनियावी फ़ाइदा हो वहां तक़य्या करके मीलाद शरीफ़ में शरीक हो जाना चाहिये और जैसे जैसे माहौल पर क़ाबू पाते जाईये फिर उन्हीं महफ़िलों को शिर्क व बिदअ़त व कन्हैया का जन्म कहिये।

चुनान्चे आज तक देवबन्दियों का यही दस्तूर है, जहां देखेंगे सुन्नियों की तादाद ज़्यादा है वहां बगला भगत बन कर मीलाद में शिरकत करेंगे और जब दस पांच सादा लौह (सीधे सादे) इनके फ़रेब के जाल में आजायेंगे तो शुबरात के हलवे और क़ियामे मीलाद पर नाक भँव चढ़ा कर उन ग़रीब सुन्नियों से क़ुरआन व हदीस की दलील तलब करेंगे जहां के 'सुन्नी' मसले के जानकार और तजरबाकार होते

है यह या कह कर बरख़ुरदार का टिकट कटा देते हैं कि "हमारी बिल्ली और हमीं से म्याऊँ" हमारा ही खाते हो और हम पर गुर्राते हो, जाओ कहीं और का रास्ता लो जहां मीलाद व फ़ातिहा का दस्तूर न हो। मगर कुछ मक़ामात ऐसे भी हैं जहां के लोग इन लोमड़ी सिफ़त मौलवियों के दजल व फ़रेब में आ गये और यह कह कर उन से रिश्ता व नाता जोड़ लिया कि यह भी तो मौलाना साहब हैं हालांकि वह ग़रीब बात की तह तक न पहुंच सके और धीरे धीरे देवबन्दियत उनके घर पर मुसल्लत हो गई।

इस लिए सुन्नियों को चाहिये कि जहां कहीं भी ऐसी सूरत पैदा हो जाये फ़तवा और दलील तलब करने से पहले ऐसे दुश्मने रसूल को अपने यहां से रुख़सत कर दें फिर किसी सुन्नी आलिम से मसाइल को समझते रहें। चुनान्चे मौलवी अशरफ़ अली थानवी ने कानपुर में ऐसे ही किया कि शुरू में भीगी बिल्ली बने रहे और जैसे जैसे रंग चोखा होता गया वैसे वैसे वहाबियत का प्रचार करते गये। अफ़सोस है कि सुन्नियों के सामने उनके मकर व फ़रेब की सैकड़ों मिसालें होते हुए भी उसको भूल बैठे हैं।

यह वही थानवी हैं जिनके सफ़र में अब्र (बादल) का होना ज़रूरी था। यह कुछ थानवी साहब ही की करामत नहीं बल्कि 'थाना भवन और नानौता' की मिट्टी ही में कुछ ऐसी तासीर है।

अरवाहे सलासा स. 322 की एक रिवायत मुलाहज़ा कीजिये-

> "फ़रमाया कि मौलवी मुईनुद्दीन साहब हज़रत मौलाना मुहम्मद याकूब साहब के सबसे बड़े साहबज़ादे थे वह हज़रत मौलाना की एक करामत जो वफ़ात के बाद हुई। बयान फ़रमाते थे कि एक मर्तबा नानौता में जाड़ा बुख़ार की बहुत कसरत हुई सो जो शख़्स कि क़ब्र से मिट्टी लेजा कर बांध लेता तो उसे आराम हो जाता बस इस कसरत से मिट्टी ले गये कि जब भी क़ब्र पर मिट्टी डालो तब ही ख़त्म, कई मर्तबा डाल चुका परेशान होकर एक बार मैंने मौलाना की क़ब्र पर जाकर कहा कि आपकी तो करामत हुई और हमारी मुसीबत हो गई। याद रखो अगर अब कोई अच्छा हुआ तो हम मिट्टी न डालेंगे बस उसी दिन से आराम न हुआ जैसे चर्चा आराम का हुआ था वैसे ही यह चर्चा हो गया कि अब आराम नहीं होता। फिर लोगों ने मिट्टी लेजाना बन्द कर दिया।"

ऊपर लिखी हुई इबारत का रुख़ और तेवर मुलाहज़ा फ़रमाईये कि साहबे क़ब्र से अदमे शिफ़ा (शिफ़ा न होने) की दरख़्वास्त इस बुनियाद पर नहीं की गई कि मख़्लूके ख़ुदा शिर्क व बिदअ़त में मुब्तला हो गई है बल्कि ख़ानदान वाले क़ब्र पर मिट्टी डालते डालते थक कर चूर हो गये। यह बात तो अजमेर व कलियर में पहुंच कर शिर्क व बिदअ़त हो जाती है। यहां तो थाना भवन और नानौता के बुज़ुर्गों की करामत बयान करनी मक़सूद है।

कूचए जानाँ से ख़ाक लायेंगे
अपना कअ़्बा अलग बनायेंगे

चिड़ तो ग़रीब नवाज़, पीराने कलियर, ख़्वाजा कुतब और महबूबे इलाही से है न कि नानौता के बुज़ुर्गों से और सिर्फ़ मिट्टी में शिफ़ा ही नहीं थी बल्कि साहबे क़ब्र ख़ानदान वालों की आवाज़ सुनते और उनकी बातें भी मान लेते थे। मगर अल्लाह के प्यारे महबूब ख़ुलासए कायनात सरकारे अबद क़रार रूही फ़िदा सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम पर इस बुहतान तराशी (तुहमत लगाना) व इफ़्तिरा परदाज़ी (इल्ज़ाम देना) पर शर्म नहीं आई कि-

> "मैं भी एक दिन मर कर मिट्टी में मिलने वाला हूं।"
> (तक़वीयतुल ईमान स.96)

ख़्याल फ़रमाईये कि नानौता के मुर्दों की क़ब्र से शिफ़ा हो, वह आवाज़ देने वालों की आवाज़ सुनें मगर पैग़म्बरे इस्लाम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम मर कर मिट्टी में मिल गये। मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह और आज तक तौफ़ीक़ न हुई कि उलमाए देवबन्द अपनी इन नापाक इबारतों से तौबा कर लेते? भला यह कैसे हो सकता है इसमें उनके बुज़ुर्गों के इल्म व क़लम की तौहीन है।

रसूले ख़ुदा की तौहीन (बेइज़्ज़ती) ठन्डे दिल गवारा है मगर उनके बुज़ुर्गों के क़लम पर हरफ़ न आये! अगर तक़वीयतुल ईमान ही देवबन्दी धर्म में दीन व ईमान है तो तक़वीयतुल ईमान ही की रौशनी में उन्हें इस इबारत को ख़ारिज कर देना चाहिये।

तक़वीयतुल ईमान स. 64

"यह बात महज़ बेजा है कि ज़ाहिर में लफ़्ज़ बे अदबी का बोले और उससे कुछ और माना मुराद ले।"

तक़वीयतुल ईमान की ऊपर लिखी हुई इबारत ने इन इबारतों में तौजीह व तावील (दलील) का दरवाज़ा बन्द कर दिया जिनके ज़ाहिर में रसूले ख़ुदा की तौहीन व तन्क़ीस (नक़्स निकालना) है।

ख़ुलासा यह है कि हज़राते देवबन्द यह कह कर अपना दामन न बचा सकेंगे कि इस इबारत में 'में' माना में 'से' के है" यानी मर कर मिट्टी से मिल गये।"

जैसा कि बाज़ कठ हुज्जत लोग जवाब दिया करते है।

इन्साफ़ व दियानत का तक़ाज़ा तो यह था कि आप अपनी किताबों से इन गन्दी व फूहड़ इबारतों को ख़त्म करके अपनी हक़ परस्ती व लिल्लाहियत का सुबूत देते। मगर मुश्किल यह आन पड़ी है कि जहां इन इबारतों को आपने ख़ारिज किया। फ़तावा गंगोही के मुताबिक़ ईमान आप से कोसों दूर और इस्लाम आख़िरी सलाम करके रुख़सत हो जायेगा।

मुलाहज़ा हो फ़तावा रशीदिया जि. एक स. 115

> "और किताब तक़वीयतुल ईमान निहायत उम्दा किताब है और रद्दे शिर्क व बिदअत में लाजवाब है। इस्तिदलाल इसके बिल्कुल किताबुल्लाह और अहादीस से है इस का रखना और पढ़ना ऐने इस्लाम है।"

पूरी तक़वीयतुल ईमान ऐने इस्लाम है अगर उसकी इबारत ख़ारिज कर दी गई तो ईमान का एक हिस्सा रुख़सत हो जाएगा। तुफ़ है ऐसी किताब पर और लानत है ऐसी गन्दी ज़ेहनियत पर! गंगोही साहब फ़रमाते हैं तक़वीयतुल ईमान के इस्तिदलाल किताबुल्लाह और अहादीस से हैं तो कोई देवबन्दी साहब यही बतला दें कि ऊपर लिखी हुई इबारतें किस आयत या किस हदीस का तर्जुमा है या महज़ क़ुरआन व हदीस बोलने का ख़ब्त (दिवानगी) सवार है।

वहाबियों में शर्म का कुछ भी असर नहीं
है एतेराज़ ग़ैरों पे अपनी ख़बर नहीं

पहले अपने घर की ख़बर लीजिये फिर कहीं मीलाद व फ़ातिहा करने वालों पर आंखें लाल पीली करके एतेराज़ की जुरअत कीजिये।

अभी तो आप हज़रात ने महज़ नानौता की एक क़ब्र का मज़हका ख़ेज़ (हंसने वाला) हाल सुना है अब इसी सिलसिले में दो एक और भी फ़र्ज़ी व मन गढ़त करामात का हाल सुनते चलिये।

अरवाहे सलासा स. 202

> "फ़रमाया कि एक साहबे कश्फ़ हज़रत हाफ़िज़ मुहम्मद ज़ामिन थानवी रहमतुल्लाह अलैह के मज़ार पर फ़ातिहा पढ़ने गये। फ़ातिहा के बाद कहने लगे कि भई यह कौन बुज़ुर्ग हैं बड़े दिल लगी बाज़ हैं, फ़ातिहा पढ़ने लगा तो मुझसे फ़रमाने लगे जाओ फ़ातिहा किसी मुर्दा पर पढ़ियो यहां ज़िन्दा पर फ़ातिहा पढ़ने आये हो। यह क्या बात है। जब लोगों नें बतलाया कि यह शहीद हैं।"

नोटः- थाना भवन के शहीदों की क़ब्र पर नियाज़ व फ़ातिहा दुरुस्त है मगर सय्यद सालार मसऊद ग़ाज़ी रहमतुल्लाह अलैह की क़ब्रे मुबारक पर जाना शिर्क व बिदअत ? हां अगर रुपया व नज़राना मिले तो वहां की हाज़िरी दुरुस्त है जैसा कि मौलवी अबुल वफ़ा, मौलवी मुहम्मद क़ासिम शाहजहांपुरी हज़रात साल ब-साल आस्तानए बहराइच पर हाज़िर होते हैं ऐसे ही ज़र ख़ेज़ मक़ामात पर मौलाना थानवी की पैरवी काम दे जाती है।

अरवाहे सलासा स. 288 की एक और इबारत मुलाहज़ा फ़रमायें-

> "ख़ान साहब ने यह फ़रमाया कि हज़रत मौलाना गंगोही रहमतुल्लाह अलैह ने ख़ुद मुझ से फ़रमाया कि जब मैं शुरू में गंगोह की ख़ानक़ाह में आकर मुक़ीम हुआ हू तो ख़ानक़ाह में बौल व बराज़ (पाख़ाना पेशाब) न करता था। बल्कि बाहर जंगल जाता था यहां तक कि लेटने और जूतें पहन कर चलने फिरने की हिम्मत न होती थी।"

नोटः- अब कोई दरियाफ़्त करे उलमाए देवबन्द से कि गंगोही साहब किस आयत या किस हदीस की इत्तेबाअ् में इस नौइयत का एहतेराम करते थे। आख़िरकार गंगोह में मस्जिदें भी होंगी उसमें इस्तिन्जा ख़ाना भी होगा उसमें तो गंगोही साहब ने बौल व बराज़ किया होगा ? तो क्यों ख़ानक़ाह का मर्तबा ख़ानए ख़ुदा से भी बढ़ गया।

क़ुरबान जाइये इस उलटी खोपड़ी पर कि ख़ानक़ाहे गंगोह का इस्तिन्जा ख़ाना (पेशाब घर) तो मक़ामे अदब व एहतेराम है मगर औलियाए किराम के मज़ारात अदब व एहतेराम के लाइक़ नहीं ?

अभी चन्द बरस की बात है कि सुल्तानुल हिन्द सय्यदी सरकार मुईनुद्दीन अजमेरी सिन्ज़ी रहमतुल्लाह अलैह के गुम्बदे मुबारक पर वहाबी देवबन्दी तलबा (छात्रों) ने नजासत फेंकी थी जिस पर भारत के तभी सुन्नी मुसलमानों ने गम व गुस्सा का इज़हार किया था। बाज़ अख़्बार व रसाइल में भी यह ख़बर छपी हुई थीं। यह परवरदिगारे आलम का क़हर व ग़ज़ब और उसकी लानत व फिटकार नहीं तो और क्या है कि मज़ाराते औलिया की ताज़ीम व तकरीम से गुरेज़ करने से इस्तिन्जा ख़ाना की ताज़ीम व तौक़ीर कराई गई।

यह तो अपनी अपनी किस्मत और अपना अपना नसीबा है कि कोई मज़ाराते औलिया के सामने बा-अदब व बा करीना खड़ा है और कोई इस्तिन्जा ख़ाने के सामने हाथ बांधे हाज़िर है। नाज़िरीन यह न ख़्याल फ़रमायें कि बात ख़त्म हो गई-

यह क़िस्सए लतीफ़ अभी ना तमाम है
जो कुछ बयाँ हुआ है वह आग़ाज़े बाब था

अरवाहे सलासा स. 240 की इबारत मुलाहज़ा फरमाईये-

> "मौलाना रफ़ीउद्दीन साहब फ़रमाते थे कि मैं 25 बरस हज़रत मौलाना नानौतवी की ख़िदमत में हाजिर हुआ हूं और कभी बिना वुज़ू नहीं गया। मैं ने इन्सानियत से बाला दर्जा उनका देखा। वह शख़्स एक फ़रिश्तए मुक़र्रब थे जो इन्सानों की शक्ल में ज़ाहिर किया गया।"

नोटः- मौलाना नानौतवी एक फ़रिश्तए मुक़र्रब थे जो इन्सानों की शक्ल में ज़ाहिर किये गये थे। दरबारे कासिम में अदब व एहतेराम का यह आलम कि उनका परिस्तार न पुजारी पचीस बरस मुसलसल बा वु.ज़ु हाज़िर होता रहा। गोया वह भी कोई नमाज़ थे कि बग़ैर वुज़ू के हाज़िरी क़बूल न होती।

मुनासिब है कि इसी मक़ाम पर तक़्वीयतुल ईमान की दो चार इबारतें पेश कर दी जायें जिससे देवबन्दी मिशन के सही ख़दो ख़ाल सामने आ जायें।

तक़्वीयतुल ईमान स. 68

> "इन्सान आपस में सब भाई हैं जो बड़ा बुज़ुर्ग हो वह बड़ा भाई है सो उसकी बड़े भाई की सी ताज़ीम कीजिये।"

नोटः- वाज़ेह रहे कि इस इबारत में बड़े बुज़ुर्ग से अम्बिया व औलिया सब ही मुराद हैं!

चुनान्चे इसके बाद लिखा है कि जितने अल्लाह के बन्दे हैं वह सब इन्सान ही हैं और बन्दए आजिज़ और हमारे भाई।

तक़्वीयतुल ईमान स. 71 रसूले करीम की तारीफ़ के बारे में ऑजनाब लिखते हैं-

> "जो बशर की सी तारीफ़ हो सो ही करो इसमें भी इख़्तिसार ही करो।"

तक़्वीयतुल ईमान स. 72

> "जैसा हर क़ौम का चौधरी और गाँव का ज़मींदार सो इन मानों कि हर पैग़म्बर अपनी उम्मत का सरदार है।"

तक़्वीयतुल ईमान स. 16

> "हर मख़्लूक़ बड़ा हो या छोटा वह अल्लाह की शान के आगे चमार से भी ज़्यादा ज़लील है।"

तक़्वीयतुल ईमान की ऊपर लिखी इबारत पर न सिर्फ़ उलमाए अहले सुन्नत ने इज़हारे बेज़ारी की बल्कि देवबन्द के फ़ाज़िल मौलाना मुहम्मद आमिर उस्मानी भी चीख़ उठे।

माहनामा 'तजल्ली' फ़रवरी, मार्च 1957 ई० के ख़ास नम्बर स. 17 की इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

> "मैंने देखा कि शाह इस्माईल शहीद रहमतुल्लाह अलैह ने तक़्वीयतुल ईमान में फ़सले अव्वल फ़िल इज्तिनाबे अनिल इशराक के ज़ैल में लिखा है।
> "हर मख़्लूक़ बड़ा हो या छोटा वह अल्लाह की शान के आगे चमार से भी ज़्यादा ज़लील है।" इस इबारत पर ग़ौर फ़रमाईये। मेरे नज़दीक (आमिर उस्मानी) यह सौ फ़ीसद सही है लेकिन क्या इसका साफ़ और बदीही (ज़ाहिर) मतलब यह नहीं है कि औलिया व सहाबा तो एक तरफ़ रहे। तमाम अम्बिया व रुसुल और ख़ातमुन्नबीईन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी अल्लाह की शान के आगे चमार से ज़्यादा ज़लील हैं, कैसा

ख़तरनाक अन्दाज़े बयान है। कितने लरज़ा देने वाले अल्फ़ाज़ हैं और यह न समझिये कि शाह साहब के अल्फ़ाज़ की यह तावीर कुछ मैं अपनी तरफ़ से पेश कर रहा हूं। नहीं यह तावीर तो उसी ज़माने में की गई और तज़्कीरुल इख़वान उठा कर देख लीजिये कि बाज़ ख़ुतूत कितने गुस्सा के आये लेकिन ख़ुद शाह साहब ने भी उन अल्फ़ाज़ को दुरुस्त व बरहक़ साबित किया और उलमाए मौजूद भी उन अल्फ़ाज़ को बे ऐब व बे ख़लल ठहराते हैं।

नोटः- इस इबारत का हक़ीक़ी मफ़हूम तो जनाब मौलाना आमिर उस्मानी साहब ही समझ सकते हैं कि तक़वीयतुल ईमान की इबारत लरज़ा देने वाली और ख़तरनाक होने के बावजूद उनकी नज़र में 95 फ़ीसदी भी नहीं बल्कि सौ फ़ीसद सही है ? लेकिन यह एतेराफ़ तो उन्हें करना ही पड़ा कि इसका अन्दाज़े बयान ख़तरनाक है जिस पर बहुत से लोगों के ग़म व गुस्से के ख़ुतूत भी आए।

अब यहीं पर अलइम्दाद की एक इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये और मेरी पिछली तहरीर कि मौलाना थानवी देवबन्दियों के मादरज़ाद वली थे फिर तदरीजन मर्तबए नबुव्वत पर पहुंचे, यहां तक कि अपने मुरीद से अपनी नबुव्वत व रिसालत का कलिमा पढ़वाते थे। इसकी शहादत व गवाही हासिल कीजिये।

रिसाला अलइम्दाद मुजरया माह सफ़र 1336 हि० सफ़हा 35 एक मुरीद का ख़्वाब व बेदारी में मौलाना अशरफ़ अली का कलिमा पढ़ना और थानवी साहब का जवाब।

"एक दिन का ज़िक्र है कि, हसनुल अज़ीज़ देख रहा था और दोपहर का वक़्त था कि नींद ने ग़लबा किया और सो जाने का इरादा किया। रिसाला हसनुल अज़ीज़ को एक तरफ़ रख दिया लेकिन जब बन्दे ने दूसरी तरफ़ करवट बदली तो दिल में ख़्याल आया कि किताब की पुश्त (पीठ) हो गई इसलिए रिसाला हसनुल अज़ीज़ को उठा कर सर की तरफ़ रख लिया और सो गया। कुछ अर्सा के बाद ख़्वाब देखता हूं कि कलिमा शरीफ़ ला इला-ह इल्लल्लाह मुहम्मदुर् रसूलुल्लाह पढ़ता हूं लेकिन मुहम्मदुर् रसूलुल्लाह की जगह हुज़ूर (यानी अशरफ़ अली) का

नाम लेता हूं। इतने में दिल के अन्दर ख़्याल पैदा हुआ कि तुझ से ग़लती हुई, कलिमा शरीफ़ के पढ़ने में उसको सही पढ़ना चाहिये। इस ख़्याल से दोबारा कलिमा शरीफ़ पढ़ता हूं। दिल पर तो यह है कि सही पढ़ा जाये लेकिन ज़बान से बेसाख़्ता बजाये रसूलुल्लाह के नाम के अशरफ़ अली निकल जाता है। हालांकि मुझको इस बात का इल्म है कि इस तरह दुरुस्त नहीं लेकिन बे इख़्तियार ज़बान से यही कलिमा निकलता है। (यानी ला इला-ह इल्लल्लाह अशरफ़ अली रसूलुल्लाह) दो तीन बार जब यही सूरत हुई तो हुज़ूर को अपने सामने देखता हूं और यही चन्द शख़्स हुज़ूर के पास थे। लेकिन इतने में मेरी यह हालत हो गई कि मैं खड़ा खड़ा बवजह इसके कि रिक़्क़त तारी हो गई ज़मीन पर गिर गया और निहायत ज़ोर के साथ एक चीख़ मारी और मुझ को मालूम होता था कि मेरे अन्दर कोई ताक़त बाक़ी नहीं रही। इतने में बन्दा ख़्वाब से बेदार हो गया लेकिन बदन में बदस्तूर बे हिस्सी था और यह नाताक़ती का असर बदस्तूर था लेकिन हालते ख़्वाब व बेदारी में हुज़ूर ही का ख़्याल था लेकिन हालते बेदारी में कलिमा शरीफ़ की ग़लती पर जब ख़्याल आया तो इस बात का इरादा हुआ कि इस ख़्याल को दिल से दूर किया जाये, इस वास्ते कि फिर ऐसी कोई ग़लती न हो जाये इस ख़्याल से बन्दा बैठ गया और फिर दूसरी करवट लेकर कलिमा शरीफ़ की ग़लती के दुरुस्ती में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर दुरूद शरीफ़ पढ़ता हूं लेकिन फिर भी यह कहता हूं अल्लाहुम-म सल्लि अला सय्यिदिना व नबिय्यिना व मौलाना अशरफ़ अली हालांकि अब मैं बेदार हूं ख़्वाब में नहीं। लेकिन बे इख़्तियार हूं मजबूर हूं। ज़बान अपने क़ाबू में नहीं। एक दिन ऐसा ही कुछ ख़्याल रहा तो दूसरे दिन बेदारी में रिक़्क़त रही ख़ूब रोया और भी बहुत सी वजहें हैं जो हुज़ूर के साथ मुहब्बत के सबब हैं कहां तक अर्ज़ करूं।"

जवाबः- इस वाक़िआ में तसल्ली थी कि जिसकी तरफ़ तुम रुजूअ् करते हो वह बिऔनिही तआला मुत्तबअे सुन्नत है।

थानवी साहब की इस तालीम व तलक़ीन पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी साबिक़ प्रिन्सिपल मदरसा आलिया कलकत्ता मुदीरे बुरहान की तन्क़ीद मुलाहज़ा फ़रमाइये।

न मन तन्हा दरीं मैख़ाना मस्तम
जुनैदो शिब्ली व अत्तार शुद मस्त

बुरहान दिल्ली फरवरी सन् 52 ई० सफ़हा 107

> "अपने मुआमलात मे तावील (बचाव की दलील)व तौजीह (दलील लाना) और इग़माज़ (देख कर टाल जाना) व मुसामहत (चश्म पोशी) करने की मौलाना (अशरफ़ अली थानवी) में जो ख़ू थी इसका अन्दाज़ा एक वाक़िआ से भी किया जा सकता है कि एक मर्तबा किसी मुरीद ने मौलाना को लिखा कि मैंने रात ख़्वाब में देखा कि मैं हर चन्द कलिमए तशह्हुद सही सही अदा करने की कोशिश करता हूं लेकिन हर बार होता यह है कि 'ला इला-ह इल्लल्लाह' के बाद 'अशरफ़ अली रसूलुल्लाह' मुंह से निकल जाता है। ज़ाहिर है इसका साफ़ और सीधा जवाब यह था कि यह कलिमए कुफ़्र है। शैतान का फ़रेब और नफ़्स का धोका है तुम फ़ौरन तौबा करो और इस्तिग़फ़ार चाहो। लेकिन मौलाना थानवी सिर्फ़ यह फ़रमा कर बात आई गई कर देते हैं कि तुम को मुझ से बहुत ज़्यादा मुहब्बत है और यह सब उसी का नतीजा है।"

मत पूछिये कि दाग़ जिगर में कहां के हैं
कुछ आपके दिये हैं और कुछ आसमां के हैं

अलइमदाद की कुफ़री इबारत पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना अकबराबादी की गिरफ़्त व तन्क़ीद आपने मुलाहज़ा फ़रमाई। अब लगे हाथ मक्तूबाते शैख़ पर जनाब नज्मुद्दीन साहब इस्लाही के हाशिया की चन्द सतरें मुलाहज़ा फ़रमाईये जिससे अन्दरूने ख़ाना की नोक झोंक का पता चलता है।

मक्तूबाते शैख़ हिस्सा दो सफ़हा 26

> "मुरीद को शौक़ नहीं कि ऐसे अलफ़ाज़ लिखे या ज़बान से निकाले जो पैग़म्बरों के लिए मख़्सूस हैं। शैख़ुल इस्लाम मद्दज़िल्लहू उन बुज़ुर्गों में नहीं हैं कि मुरीद की हर बात की तौजीह करके और उसको मुहब्बत के दाइरे के अन्दर लाकर गुस्ताख़ बनायें बल्कि------होते हैं।"

इस तीर के निशाने पर बराहे रास्त अलइमदाद की इबारत है जिससे थाना भवन के मोअतक़िदीन मुर्ग़े बिस्मिल की तरह तड़प रहे हैं। गो इस्लाही साहब ने इशारे व किनाए में बात कही लेकिन बात इस क़दर वाज़ेह हो गई है कि अब उन्हें इन्कार की मजाल नहीं। बक़ौल शायर-

यूं तिरछी निगाहों से मुझे क़त्ल भी करना
फिर साफ़ मुकरना कि मैं इससे बरी हूं

रिसाला अलइमदाद की कुफ़री इबारत पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी का यह तबसेरा आप की नज़र से गुज़रा कि 'यह कलिमए कुफ़्र है' मगर फ़ाज़िले अकबराबादी यह न फ़रमा सके कि 'कलिमए कुफ़्र' पर राज़ी होना कैसा है। ज़ाहिर है वह एक अदीब हैं। मदरसा आलिया के प्रिन्सिपल और बुरहान के मुदीर हैं। इस वक़्त वह मन्सबे इफ़्ता पर फ़ाइज़ नहीं लिहाज़ा एक मुफ़्ती इस क़ानून के मातहत कुफ़्र से राज़ी होना कुफ़्र है' का फ़तवा दे सकता है जो मौसूफ़ के लिए भी क़ाबिले तस्लीम होगा और फ़तवा मुफ़्ती का ख़ाना साज़ न होगा बल्कि क़ानूने शरीअत की रौशनी में होगा जिस पर गुस्सा होने के बजाये अपनी ग़लतियों से तौबा करके ख़ुदा तरसी का सुबूत देना चाहिये। मगर इसको क्या कहिये कि इन्हीं इबारात पर आये दिन मुनाज़रा व मुजादला के लिए तबले जंग बजता रहता है एक तरफ़ तो जमीअतुल उलमा हिन्द इत्तेहाद बैनुल मुस्लिमीन का नारा बुलन्द करती है और दूसरी तरफ़ ऐसी ईमान सोज़ व कुफ़री इबारतें जो इफ़्तेराक़ बैनुल मुस्लिमीन का सबब हैं उन्हीं को हिर्ज़े जान बनाये हुए है गोया आस्मान की उतरी हुई कोई दस्तावेज़ उनके हाथ आ गई है। फ़ुक़हा मुहद्दिसीन और मुज्तहिदीन की किताबों पर नक़्दो नज़र की गुन्जाइश है मगर हिफ़ज़ुल ईमान, तक़वीयतुल ईमान और फ़तावा रशीदिया यह सब की सब मुनज़्ज़ल मिनस्समा हैं जिस पर तन्क़ीद व तबसेरा करना गोया वह्ीए इलाही से एलाने जंग है। मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह। अगर उलमाए देवबन्द व अराकीने जमीअतुल उलमा हिन्द के दिल में इसका सही एहसास है कि भारत की आज़ाद फ़ज़ा में मुस्लिम क़ौम चैन व सुकून की ज़िन्दगी गुज़ार सके और एहसासे कमतरी के इस होश रुबा दौर में इसका मुत्तहिदा प्लेट फार्म और मुश्तरका नज़रियए हयात हो तो मेम्बर साज़ी व शाख़ों के क़ियाम से पहले उन्हें यह कोशिश करनी चाहिये कि अकाबिरे देवबन्द के बाज़ ज़िम्मेदारों से बर बिनाए बशरियत जो ग़लतियां हुई हैं और आज तक वही किताबें इत्तेहाद बैनुल मुस्लिमीन

के बीच एक पार न वार पाने के काबिल खाड़ी बन कर खड़ी हैं उन्हें पाटने की कोशिश करनी चाहिये। अगर जमीअतुल उलमा ने इसके लिए कोई क़दम उठाया तो उसकी तारीख़ का एक नया बाब (दरवाज़ा) होगा। इसमें कोई शुबहा नहीं कि काम ज़ाहिर में बहुत ही हौसला शिकन व हिम्मत आज़मा है। अपने व ग़ैर दोनों से जंग करनी पड़ेगी मगर उस ख़ुदाए क़दीर की रहमतों से क्या बईद कि वह ग़ैब से कुछ ऐसे अस्बाब पैदा कर दे कि इस राह के नोकीले कांटे नर्म व नाज़ुक फूल बन जायें और मुद्दतों की बिछड़ी हुई क़ौम फिर शीर व शक्कर होकर अपनी किताबे ज़िन्दगी का कोई नया पन्ना उलट सके। यह किस क़दर हैरत अंगेज़ व तअज्जुब ख़ेज़ मामला है कि महज़ कुछ उलमा की ख़ातिर करोड़ों मुसलमानों का शीराज़ा बिखरा हुआ है और आज तक इतनी बड़ी अक्सरियत जो सदियों हुक्मरां रह चुकी हो वह अपना कोई मौक़िफ़ न मुतअय्यन कर सकी क्या इससे भी बढ़ कर मुस्लिम क़ौम की बद नसीबी का कोई वक़्त आएगा ?

फिर उलमाए देवबन्द की बाज़ किताबों की ऐसी इबारतें जिस पर सभी नुक्ता चीं हैं अगर उन से रुजूअ कर लिया जाये तो इसमें शर्म व हिजाब के क्या माना ? या उन्हें अपने हक़ में बाइसे नंग व आर क्यों समझा जाये ? जबकि शरीअते मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का यह क़ानूने मुहकम आफ़ताब से ज़्यादा रौशन है गुनाह से तौबा करने वाला ऐसे ही है गोया उससे गुनाह ही सरज़द न हुआ हो।' फिर यह भी कोई अक़्लमन्दी है कि बाज़ उलमाए देवबन्द की बाज़ इबारात को बे गुबार साबित करने के लिए करोड़ों मुसलमानों का इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ ख़तरे में डाल दिया जाये। गोया चन्द मुर्दों की क़ब्र पर करोड़ों मुसलमानों को भेंट चढ़ाया जा रहा है। इस पर तुर्फ़ा तमाशा यह कि क़ुलमबरदारे इत्तेहाद बन कर गली कूचों में फिर रहे। इख़्तिलाफ़ात की छोटी छोटी नालियों के पाटने से पहले उन बड़े बड़े दरियाओं को पाटिये जहां से इख़्तिलाफ़ात की अनगिनत व बेशुमार नदियां बह रही हैं। अगर आप लोगों के सीने में क़ौम व मिल्लत का सही दर्द व एहसास है तो बिला ख़ौफ़ [illegible] और [illegible] जिससे हिन्दी मुसलमानों की तारीख़ हमेशा के लिए [illegible] जाये और अगर चन्द किताबों के हेर फेर में उलझ कर [illegible] क़ौम को [illegible] कोशी व वफ़ा शनासी की तलक़ीन करते रहे तो [illegible] मुस्लिम क़ौम हमेशा यह शेअ्र दुहराती रहेगी-

हक़ से बः उड़े मसलेहत वक़्त पे जो करे गुरेज़
उसको न पेशवा समझ उस पर न एतेमाद कर

अगर क़ौम का एतेमाद हासिल करना है तो मीलाद, फ़ातिहा, उर्स व नियाज़ पर रज़्मगाहे मुजादला तलब करने से पहले हिफ़्ज़ुल ईमान, तक़वीयतुल ईमान जैसी किताबों पर ठन्डे दिल से ग़ौर कीजिये और अहले सुन्नत के जाइज़ व सही मुतालबे को तस्लीम करके दुनिया पर दीन की मताओ अज़ीज़ को तरजीह दीजिये और भारत के करोड़ों मुसलमानों जो महज़ मीलाद व फ़ातिहा के नाम दस्त व गरीबां हैं उनके सामने क़ौम व मिल्लत का तामीरी प्रोग्राम रख दीजिये। यही वक़्त का तक़ाज़ा है और वक़्त की पुकार है। काश आप लोगों के दिल में यह एहसास पैदा होता और क़ौम की ख़ातिर आप हज़रात कोई क़ुरबानी पेश कर सकते।

या जलअजब! यह कैसा दर्दनाक सानिहा है कि चन्द मौलवियों के इल्म व क़लम की लाज रखने के लिए करोड़ों मुसलमानों की क़ौमी व मुल्की इज़्ज़त व आबरू का जनाज़ा बे गोरो कफ़न पड़ा है। तहज़ीब व अदब की भरपूर महफ़िल में मुद्दतों से हट धर्मी व कट हुज्जती का नंगा नाच हो रहा है। मगर आज तक यह न हो सका कि शर्म व ग़ैरत से यह गर्दनें आस्तानए नबुव्वत पर झुक जायें, गोया मौलाना थानवी, मौलाना गंगोही, मौलाना इस्माईल ने जो कुछ लिख दिया वह पत्थर की लकीर है। ऐ दोस्तो, तुम कभी ठन्डे दिल से सोचो कि क्या सच मुच तुम्हारा ज़मीर यह गवारा करता है कि रसूले ख़ुदा "चमार से ज़्यादा ज़लील और ज़र्रए नाचीज़ से कमतर हैं और महबूबे ख़ुदा का इल्म, गाय बैल और जानवरों जैसा है।" ख़ुदा के लिए तुम अपने और मुस्लिम क़ौम के हाल पर रहम खाओ और क़ुदरते कायनात की उस गिरिफ़्त से डरो जो सबसे ज़्यादा सख़्त है और उसका अज़ाब दर्दनाक है। क्या तुम कभी यह नहीं सोचते कि आज की दुनिया में अगर तुम्हारे चहीते को कोई आंख दिखाये या उंगली उठाये तो तुम कट मरने के लिए तैयार हो जाते हो, इसी लिए ना कि वह तुम्हारा चहीता व महबूब है। फिर तुमने यह क्यों न सोचा कि जिस को तुम चमार या गांव का चौधरी कह रहे हो, वह महबूबे ख़ुदा है। क्या तुम क़हरे इलाही को अपने हक़ में चैलेन्ज नहीं दे रहे हो ? क्या तुम ने यह समझ रखा है कि तुम तो अपने महबूब की हिमायत में कोहे आतिश फ़शां बन सकते हो और ग़ैरते ख़ुदावन्दी को तुम्हारी दरीदा दहनी पर जुम्बिश भी न हो सकेगी। अब भी वक़्त है कि तअस्सुब व तंग नज़री से अलग थलग होकर इन्साफ़ पसन्दी

नेक नीयती से इन किताबों का मुताला करो और चन्द उलमा के नशाए मुहब्बत में सरशार होने के बजाये अगर मुमकिन हो तो कभी इश्के रसूल की ऐनक लगा कर इन किताबों को देखो, हो सकता है तौफ़ीके इलाही तुम्हारा साथ दे और तुम अपनी हड्डियों और बोटियों को अज़ाबे जहन्नम से महफ़ूज़ कर सको यह तो होता चला आया है और होता ही रहेगा-

सतीज़ा कार रहा है अज़ल से ता इमरोज़
चरागे मुस्तफ़वी से शरारे बू लहबी

और सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की यह पेशिन गोई भी पूरी होकर रहेगी कि मेरी उम्मत में तिहत्तर फ़िरके होंगे एक नाजी होगा और बाक़ी सब जहन्नमी होंगे और वह फ़िरक़ा नाजी अहले सुन्नत व जमाअत का है, जैसा कि सहाबा के सवाल पर हुज़ूर ने इरशाद फ़रमाया- मा अना अलैहि व सहाबी

बात बहुत दूर आ गई। रिसाला अलइमदाद की इबारत पर फ़ाज़िले अकबराबादी की तन्क़ीद और मक्तूबाते शैख़ पर मौलाना नज्मुद्दीन साहब इस्लाही के हाशिया की चन्द सतरें पेश कर रहा था अब इस ज़िम्न में अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल सफ़हा 64 की एक और इबारत मुलाहज़ा फ़रमाईये और मौलाना थानवी के बारे में उसूली व आईनी राय क़ाइम कीजिये।

> "गो हज़रत वाला (मौलाना थानवी) को सफ़र से तबई एअ्राज़ रहता लेकिन चूंकि अल्लाह तआला ने हज़रत वाला को हुज्जतुल्लाह फ़िल अर्ज़ बना कर दुनिया में भेजा था जिसका खुद हज़रत वाला को भी इल्मे ज़रूरी के दर्जे में एहसास था।"

नोट:- अब नाज़िरीन ही इन्साफ़ कर सकते हैं कि भला वह शख़्स जो अपने आपको इस रूए ज़मीन पर अल्लाह की हुज्जत व दलील समझता हो और यह एतक़ाद महज़ मुरीदीन ही को न था बल्कि खुद आँ वदौलत को न सिर्फ़ गुमान व ज़न के मर्तबा में था बल्कि इल्मे ज़रूरी के मर्तबे में हासिल था कि "यक़ीनन मैं अल्लाह की हुज्जत व दलील" होकर आया हूं तो ऐसे शख़्स से यह उम्मीद रखना कि वह अपनी ग़लतियों से रुजूअ् कर लेगा। रुजूअ् करने के यह माना होंगे गोया अल्लाह की हुज्जत व दलील झूटी हो गई।

यही नख़वत व ग़ुरूर (घमन्ड) पिन्दार व जहले मुरक्कब की वह मसनद है जिस पर थानवी साहब बैठ कर अपने मुरीद से ला इला-ह इल्लल्लाह अशरफ़ अली रसूलुल्लाह का कलिमा पढ़वाते थे।

बहुत शोर सुनते थे पहलू में दिल के
जो चीरा तो एक क़तरए ख़ूँ न निकला

के मुताबिक़ कहां तो वह शोरा शोरी और कहां ये बे नमकी। या तो मौलाना थानवी के इत्तेबाओ सुन्नत व पैरवीए असलाफ़ की धूम मची थी और कहां हिज़यान (बड़ बोल) व बुल फ़ुज़ूली (बकवास) का यह आलम कि 'अना रसूल व अना नबीयुल्लाह' की दावत देने लगे और-

ईमान लाने वाले ईमान ला रहे हैं

के मुताबिक़ आज तक मौलाना थानवी का कलिमा पढ़ रहे हैं। काश शख़्सियत परस्ती व कोराना (अन्धी) तक़लीद के कोढ़ी मरीज़ कभी यह सोच सकते कि मुतनब्बी व मुसैलमा कज़्ज़ाब के पैरो को मुत्तबओ सुन्नत कहना कहां तक दुरुस्त है ?

बुरा हो ऐसी असबियत और ग़ुलूए मुहब्बत का जो इन्सानों की आंख पर पट्टी बांध दे जिससे वह हक़ व बातिल का इम्तियाज़ न कर सके।

इसी उनवान की एक दूसरी कड़ी मुलाहज़ा फ़रमाईये और थानवी साहब के बारे में सही राये क़ाइम कीजिये।

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल स. 161ए

> "मौलाना मुहम्मद यह्या साहब कांधलवी रहमतुल्लाह अलैह ने जो हज़रत मौलाना गंगोही रहमतुल्लाह अलैह के ख़ादिमे ख़ास थे एक बार अहक़र से फ़रमाया कि मेरा अब तक गुमान था कि इस सदी के मुजद्दिद हज़रत मौलाना गंगोही क़ुद्देस सिर्रुहुल अज़ीज़ थे लेकिन अब मेरा यह ख़्याल है कि हमारे मौलाना रहमतुल्लाह अलैह का फ़ैज़ तो ख़ास था और ज़्यादा तर आप से उलमा फ़ैज़याब हुए लेकिन अब मैं देख रहा हूं कि मुसलमानों को इस वक़्त आम नफ़ा मौलाना थानवी से बहुत पहुंच रहा है इसलिए मुजद्दिदियत की शान उनमें ज़्यादा पाई जाती है मुमकिन बल्कि मज़नून है कि हज़रत (थानवी) का दर्जा मुजद्दिदियत से भी आली हो।"

अब यहां से फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी की एक मबसूत और मुफ़स्सल तन्क़ीद मुलाहज़ा कीजिये जो उन्होंने अशरफ़ुस्सवानेह के मुतअद्दिद मज़ामीन पर बुरहान सन् 52 ई० की मुख़्तलिफ़ इशाअतों में की है जिसमें "अकमलियत, मुजद्दिदियत अद्ल वैनुज़्ज़ौजैन" और मौलाना थानवी की दूसरी शादी का किस्सा ख़ुसूसियत से क़ाबिले दीद है।

बुरहान दिल्ली दिसम्बर सन् 52 ई० स. 65

> "मौलाना (थानवी) शरीके तज्दीद हैं मगर ख़ुद मुस्तक़िल बिज़्ज़ात मुजद्दिद नहीं क्योंकि एक मुजद्दिद में जो औसाफ़ व कमालात मौजूद होने चाहियें और जिनका हमने ऊपर ज़िक्र किया है उनमें से बाज़ औसाफ़ मौलाना थानवी में नहीं है।"

मौलाना थानवी की मुजद्दिदियत पर फ़ाज़िले देवबन्द का दूसरा तब्सेरा मुलाहज़ा फ़रमाइये-

बुरहान दिल्ली सितम्बर 52 ई०

> "जनाबे मुअल्लिफ़ (यानी मौलवी अब्दुलबारी मुअल्लिफ़े जामेउल मुजद्दिदीन) ने बार बार और बड़ी तहदी के साथ लिखा है कि हज़रत मौलाना थानवी नुरुल्लाह मरक़दहू अहदे हाज़िर के न सिर्फ़ मुजद्दिद बल्कि जामेउलमुजद्दिदीन यानी कामिल मुजद्दिद थे और दीन का कोई ऐसा शोबा नहीं है जिसकी तज्दीद हज़रत थानवी साहब ने न की हो। हमको इससे इख़्तिलाफ़ है।"

हस्बे ज़ैल तन्क़ीद व तब्सेरा में फ़ाज़िले देवबन्द ने एक हक़ीक़त की निक़ाब कुशाई की है जिससे अपने मामलात में हज़राते देवबन्द के इफ़रात व ग़ुलू का पता चलता है और बारगाहे नबुव्वत में उलमाए देवबन्द के जसारत व बेबाकी की निशानदेही करते हुए ऐसे जज़्बए मलऊन पर नफ़रीन व मलामत की है।

बुरहान दिल्ली अगस्त सन् 52 ई० स. 112-113

> "लेकिन यह कैसी अजीब बात है कि इन तमाम हक़ाइक़ के बर ख़िलाफ़ आज हमारे मुकर्रम मौलाना अब्दुलबारी नदवी का दावा है कि "ऐनें दीन वही है जो हज़रत मौलाना थानवी ने फ़रामया" क्या इसके इलावा जो कुछ है गुमराही और बे दीनी है।"

नोटः- उलमाए देवबन्द की किताबों के मुताला से यह अन्दाज़ा होता है कि रफ़्तारे ज़माना के साथ उनका दीन व इस्लाम भी बदलता रहता है। मौलाना गंगोही ने अपने ज़माना में फ़रमाया कि "तक़वीयतुल ईमान का रखना और पढ़ना ऐनें इस्लाम है" और कुछ दिनों बाद मौलाना अब्दुलबारी ने फ़रमाया "ऐनें दीन वही है जो हज़रत मौलाना थानवी ने फ़रमाया" यानी बहिश्ती ज़ेवर, हिफ़्ज़ुलईमान, अब देखिये आइन्दा किस का क़ौल व फ़ेअ्ल ऐनें इस्लाम क़रार पाता है। बक़ौल फ़ाज़िल अकबराबादी कि इसके इलावा जो कुछ है वह गुमराही और बे दीनी है।

मौलाना अब्दुलबारी ने बड़ी रिआयत से काम लिया कि मौलाना थानवी के इलावा सब को गुमराह व बे दीन ही समझा। अगर कहीं हुकूमत की तरफ़ से कुछ और इख़्तियारात मिल जाते तो अपने और थानवी साहब के इलावा सबको क़ाबिले गर्दन ज़दनी ही क़रार देते।

इस बेबसी में ज़ौक़े बशर का ये हाल है
क्या जाने क्या करे जो ख़ुदा इख़्तियार दे

जामेउल मुजद्दिदीन सफ़हा 151 की मुन्दर्जा ज़ैल तहरीर पर फ़ाज़िले अकबराबादी की मुन्सिफ़ाना राय-

> "जिस तरह अम्बिया अलैहिमुस्सलाम अपनी उम्मतों के लिए इस अहसन अमल का अकमल उसवा होते हैं उसी नबीयुल अम्बिया अलैहिस्सलातु वस्सलाम के दीन के थानवी मुजद्दिद की ज़िन्दगी तज्दीदी दर्जा में उम्मते मुहम्मदिया के लिए इस्लाम की अमली तालीमात का हर शोबा में कामिल व जामेअ़ नमूना थी।"

फिर इसके बाद स. 175 पर हज़रत थानवी की तज्दीदी करामात के ज़ेरे उनवान फ़रमाते हैं-

> "यही इस्लाह व तज्दीदी जामेईयत जो ज़ालिकल् किताब" वाले दीन के जामेउल मुजद्दिदीन की सैकड़ों किताबों के हज़ारों सफ़हात पर इस्लाही व तज्दीदी सूरत में फैली हुई है और जिस तरह ज़ालिकल् किताब उस दीन के पैग़म्बर का सबसे बड़ा मोअ्जेज़ा या सबसे बड़ी बुरहान व आयत थी उसी के इत्तेबाअ् में उसके थानवी मुजद्दिदे वक़्त की किताबें

अपनी कम्मियत व कैफ़ियत हर एतबार से उसकी तज्दीदी जामईयत की गव से बड़ी करामत है। आज जो शख़्स दीने इस्लाम के चेहरे को पूरे जमाल व कमाल के साथ बिल्कुल साफ़ व बे गुबार जामेअ् व कामिल ख़ुरन में नये सिरे से तज्दीद याफ़्ता और तरो ताज़ा देखना और पाना चाहता है वह अहदे हाज़िर के जामेउल मुजद्दिदीन की किताबी आयतों की तरफ़ अमलन व इल्मन रुजूअ् करके ख़ुद मुशाहिदा कर सकता है।

इसी तरह नबीए कामिल के मुत्तबअ़े कामिल के कलाम में भी कसरत से जगह जगह कशफ़ व तसर्रुफ़ात से अपनी क़तअन तबरीं फ़रमाई गई है और सारा ज़ोर बस वही या शरीअ़त के अहकाम व इत्तेबाअ् पर है।

नोटः- जामेउल मुजद्दिदीन की मुन्दर्जा बाला इबारत पर अगर उलमाए अहले सुन्नत की तरफ़ से कुछ लिखा या कहा जाता तो मौलाना अब्दुलबारी और थानवी साहब के मुत्तबेईन यह कह कर शोर व ग़ोग़ा मचाते कि देखो इन लोगों को सिर्फ़ यही एक काम रह गया है कि हम लोगों की किताबों की तग़लीत व तख़्तिया करते रहें। लेकिन अब देखना है कि नदवी साहब फ़ाज़िले अकबराबादी के मुक़ाबिल मोर्चा बन्दी में कितने दाँव और पैंतरे इस्तेमाल करते हैं और हार व जीत के अखाड़े में कितनी करवटें लेते हैं या महज़ यह कह कर ख़ामोश हो जायेंगे-

ख़ूने दिल, ख़ूने तमन्ना, ख़ूने शौक़
आपने जो कुछ किया अच्छा किया

यानी मैं तो थानवी साहब को जामेउलमुजद्दिदीन साबित कर दिखाता मगर आपने मेरी आरज़ूओं पर पानी फेर दिया। अब फ़ाज़िले अकबराबादी की तन्क़ीद मुलाहज़ा फ़रमाईये-

बुरहान दिल्ली अगस्त 52 ई०

"आपने देखा भला इस जोशे अक़ीदत की कोई इन्तेहा भी है कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए क़ुरआन पाक का इरशाद है इन्नल लज़ी बअ़ास फ़िल उम्मीईना रसूला तो यहां हज़रत मौलाना थानवी के लिए भी जगह जगह मुजद्दिदे मबऊस का ख़िताब है, वहां

लक़द काना लकुम फ़ी रसूलुल्लाहि अस्वतुन हस्ना। तो यहा भी लकुम फ़ी रसूलुल्लाहि अस्वतुन हस्ना का अक्स। वहां क़ुरआन मजीद आँहज़रत का मोअ्जेज़ा है तो यहां भी मौलाना थानवी की किताबें तज्दीदी करामत वहां ज़ालिकल् किताब। आयाते बय्यिनात तो यहा भी मौलाना थानवी की किताबों के मबाहिस "किताबी आयतें" अक़ीदत व इरादत का कितना ही जोश और ज़ोर हो आख़िर यह तो सोचना चाहिये था कि आफ़ताब बहरहाल आफ़ताब है और एक ज़र्रा कैसा ही चमकीला व दरख़्शाँ हो, बहरहाल ज़र्रा है। इस बिना पर यह कहां की अक़्लमन्दी है कि "ज़र्रा के सिफ़ात को आफ़ताब के सफ़हात पर मुन्तबिक़ करने की कोशिश की जाये" और ज़रा उनवान बदल कर यह बावर कराया जायेगा कि अब आफ़ताब ग़ुरूब हो गया है तो ज़र्रों से कस्बे ज़िया करना चाहिये।"

नोटः- काश अब भी उलमाए देवबन्द अपने गिरेबान में मुंह डाल कर सोचते कि अपने उलमा की तारीफ़ व तौसीफ़ और आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तौहीन व तन्क़ीस (ऐब निकालने) में उनके इफ़रातो तफ़रीत (कमी बेशी) का क्या आलम है ? जिस पर न सिर्फ़ उलमाए अहले सुन्नत ही बल्कि उनकी दर्सगाहे तरबियत का एक फ़ाज़िल भी चीख़ उठा। कलकत्ता के एक सफ़र में मुझे बा-वसूक़ ज़राये से मालूम हुआ कि इस तन्क़ीद व तब्सेरा पर बजाये ग़ौरो फ़िक्र करने के थानवी साहब के मुत्तबेईन ने कई सौ ख़ुतूत मुदीरे बुरहान के पास भेजे कि अपनी तहरीर वापस ले लो तुमने तो इल्मो अदब की भरी महफ़िल में हमारी इज़्ज़त व आबरू लूट ली। फ़ाज़िले देवबन्द होने के नाते तुम्हें कुछ तो हमारी जम्बा दारी (हिमायत) करनी थी ? यह सब कुछ होता रहा मगर फ़ाज़िले अकबराबादी डा० इक़बाल के इस शेअ्र से अपना दिल बहलाते रहे-

अपने भी ख़फ़ा मुझ से हैं बेगाने भी नाख़ुश
मैं ज़हरे हलाहल को कभी कह न सका क़न्द

मुदीरे बुरहान की मुन्दर्जा ज़ैल तन्क़ीद मौलवी अब्दुलबारी नदवी की इस इबारत पर है कि "मौलाना थानवी अपने को अकमल समझते थे" यानी हज़रत फ़रमाया करते थे-

अपने को अकमल समझना जाइज़ है अफ़ज़ल समझना जाइज़ नहीं।

सही फरमाया नदवी साहब ने जिसने अपने को हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़ समझा
हो अगर उसने अपने को अकमल जाना तो क्या गज़ब ढाया अगर वह अकमल
न होता तो हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़ ही क्यों होता गोया मन्तिक़ी उसूल के तहत शक्ले
अव्वल के यह दो टुकड़े हैं कि मौलाना थानवी हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़ थे। और
हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़ का अकमल होना ज़रूरी है। हद्दे औसत को साक़ित करने
के बाद नतीजा साफ़ ज़ाहिर है कि मौलाना थानवी का अकमल होना ज़रूरी है।
ख़्वाह पहली शक्ल के दोनों टुकड़े दलील के मुहताज हों या सर से पैर तक
ग़लत मगर नतीजा तो आपके हाथ आ ही जायेगा।

आप की इस बुक़राती पर फ़ाराबी, बू अली सैना, अल्लामा फ़ज़्ले हक़
ख़ैराबादी भी अपनी अपनी क़ब्रों में तहसीन व मरहबा कहते होंगे। नाज़िरीन भी
ख़्याल करते होंगे कि मैंने कैसी ख़ुश्क बहस छेड़ दी। लीजिये बक़ौल सौदा मैंने अपनी
गुफ़्तगू ख़त्म कर दी-

सौदा ख़ुदा के वास्ते क़िस्सा मुख़्तसर
अपनी तो नींद उड़ गई तेरे फ़साने में

अब अकमलियत के ज़ेरे उनवान मुदीरे बुरहान का तबसेरा मुलाहज़ा फ़रमाइये-
बुरहान दिल्ली मई 52 ई० स. 297

> "हज़रत थानवी को अकमल समझने का यह असर तो इस किताब में आम तौर पर और जगह जगह नुमायां है कि जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, इन (थानवी साहब) की औसाफ़ शुमारी में इस दर्जा गुलु और मुबालगा किया गया है कि उनको सहाबा व ताबेईन क्या माना अम्बिया से भी जा मिलाया है और दूसरी जानिब चूंकि कामिल दीन और जामेअ़ दीन वही है जो मौलाना थानवी के इरशादात और क़ौलो अमल से ज़ाहिर होता है, इस बिना पर हर वह अमल और फ़ेअ़्ल जो कि इस से मुख़्तलिफ़ हो चाहे असल इस्लामी तालीमात के एतेबार से कितना ही सही और दुरुस्त हो उसे भी मरदूद क़रार दिया जाये। चुनान्चे हिन्दुस्तान की तमाम इस्लामी जमाअ़तें, तमाम इस्लामी इदारे, सब उलमाए किराम व मशाइख़ मुअल्लिफ़ की बारगाहे अदालत में मुजरिम व ख़ताकार हैं। हम आगे चल कर जहां मुजद्दिदियत पर बात करेंगे बतायेंगे कि हज़रत थानवी अरबाबे अज़ीमत व दावत में से नहीं थे। बल्कि हज़रत शैख़ मुहम्मद थानवी और दूसरे सैकड़ों अकाबिर व मशाइख़ व उलमा की तरह अरबाबे रुख़सत में से थे लेकिन मुअल्लिफ़ जामिउल मुजद्दिदीन की जुरअत व जसारत का यह आलम है कि महज़ मौलाना थानवी को अकमल मान लेने की बिना पर उलमाए अज़ीमत और अरबाबे जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह पर भी बरस पड़े हैं और उनमें भी कीड़े निकालने की कोशिश की है।"

नोटः- इसके बाद फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी हज़राते देवबन्द की बारगाहे नबुव्वत व रिसालत में मुतलक़ुल ऐनानी (बे लगामी) और उनकी रसूल दुश्मनी से मुतअस्सिर होकर 'शिर्क फ़िर्रिसालत' के उनवान से लिखते हैं जिसकी हैसियत उलमाए देवबन्द के हक़ में लम्हए फ़िक्रिया की है और उलमाए अहले सुन्नत के जाइज़ मुतालबे पर ताईद व हिमायत की है।

बुरहान दिल्ली फ़रवरी सन् 52 ई० स० 108

शिर्क पिफ़र्रिसालतः- इस मक़ाम पर एक निहायत अहम और ज़रूरी नुक्ता जिसे अपने मुर्शिद के साथ ग़ाली अक़ीदत व इरादत रखने वाले मुरीद अक्सर भुल जाते हैं। हमेशा याद रखना चाहिये कि जिस तरह अल्लाह तआ़ला की ज़ात व सिफ़ात में किसी को शरीक मानना शिर्क फ़िल्लाह और कुफ़्र है इसी तरह आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के औसाफ़ व कमालाते नबुव्वत में किसी को शरीक जानना शिर्क फ़िर्रिसालत और अज़ीम तरीन मअ़सियत है।

घायल तेरी नज़र का बनौऐ दिगर हर एक
ज़ख़्मी कुछ एक बन्दए दरगाह ही नहीं

नोटः- मुदीरे बुरहान, की इस साफ़ और वाज़ेह तहरीर के बाद रिसाला अलइमदाद में ला इलाह इल्लल्लाह अशरफ़ अ़ली रसूलुल्लाह वाली इबारत को फिर ज़ेहन में ताज़ा कर लीजिये और इस पर मौलाना थानवी की रज़ामन्दी कि इसमें कोई मुज़ाइक़ा नहीं, चूंकि मैं मुत्तबअ़े सुन्नत हूं और तुम्हें मुझ से ग़ायत दर्जे की मुहब्बत है लिहाज़ा पढ़ो और ख़ूब जी भर कर पढ़ो गोया खुले बन्द मौलाना थानवी ने अपनी नबुव्वत व रिसालत का इक़रार किया। इसका नाम 'शिर्क फ़िर्रिसालत' नहीं बल्कि दावए नबुव्वत है। अब उलमाए अहले सुन्नत से न पूछिये बल्कि फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी से दरियाफ़्त कीजिये

कि ऐसे शख़्स के लिए क़ानूने शरीअत का क्या हुक्म है?

इस बात को तक़रीबन हर मुसलमान जानता है कि जिस तरह किसी नबी की नबुव्वत का इन्कार कुफ़्र है ऐसे ही ग़ैरे नबी की नबुव्वत का इक़रार भी कुफ़्र है और कुफ़्र पर राज़ी होना भी कुफ़्र है। यह शरीअत की एक खुली हुई रौशन दलील है न तो फ़लसफ़ा का कोई उक़्दए ला यनहल है और न ही मन्तिक़ी एच पेच की भूल भुलैया जिसमें बाल की खाल निकाली जाये या बात का बतंगड़ किया जाये। इसी ज़िम्न में थाना भवन के एक दूसरे पीर परस्त की बड़ और हिज़यान मुलाहज़ा फ़रमाइये जो पीर परस्ती की बुहरानी कैफ़ियत में अ़लल उमूम ऐसे ही आयें बायें शायें हाका करता है।

रिसाला, अलएहसान जिल्द 2 शुमारा माह मुहर्रमुलहराम सन् 1375 हि० सितम्बर सन् 1955 ई० स. 4

> "दूसरे आप (मौलाना थानवी) ने अपने नाइबीन की एक जमाअ़त छोड़ी कि अहले ज़माना अपने नये नये वाक़िआ़त और जदीद हालात में इन हज़रात से फ़ैज़याब हो सकें। नीज़ इसलिए कि यह हजरात तालिबीन की ज़रूरियात और हालात के मुताबिक़ राहे हक़ की तरफ़ उनकी रहनुमाई फ़रमाते रहें और इस तरह आपके बाद भी आपका फ़ैज़ बाक़ी रहे मिनजुमला इन्हीं हज़रात के मुर्शिदी व मौलाई मुहियुस्सुन्नत क़त् आख़्लाक़ माहियुल् बिद्अ़ति वन्निफ़ाक़ हज़रत मौलाना शाह मुहम्मद वसीयुल्लाह साहब दामत बरकातुहुम औ फ़ुयू ज़ुहुम् भी हैं आप की जामेइयत और कमाल के बारे में अपना ख़्याल तो यह है।"

आफ़ाक़हा गर्दीदा अम महरे बुताँ दर ज़ीदा अम
बिसयार ख़ूबाँ दीदा अम लेकिन तु चीज़े दीगरी

या

हुस्ने यूसुफ़ दमे ईसा यदे बैज़ा दारी
आँचे ख़ूबाँ हमा दारन्द तू तन्हा दारी

इसी का नाम है 'शिर्क फ़िर्रिसालत'

नोट।- यानी जिस तरह आदम से मसीह अ़लैहिस्सलाम तक जितने भी अम्बिया व रुसुल आये वह अ़लाहिदा अ़लाहिदा औसाफ़ व कमालात के हामिल थे मगर

रसूले कायनात ख़ातमुन्नबीईन सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम में वह तमाम फ़ज़ाइल व कमालात मजमुई हैसियत से पाये जाते थे। ऐसे ही मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह शाह वसीयुल्लाह साहब ख़लीफ़ा मौलाना थानवी भी अम्बिया व रुसुल के कमालात के जामेअ़ हैं।

पुम्बा कुजा कुजा नेहुम तन हमा दाग़ दाग़ शुद

मुदीरुल एहसान ने अपनी इस नापाक व नारवा इबारत में दो दावे किये हैं-

(1) गोया शाह वसीयुल्लाह ऐसे ही जामेअ़ कमालाते नबुव्वत हैं जिस तरह सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम।

"इसमें रसूले कायनात के साथ हमसरी व बराबरी का दावा है।"

(2) हज़रत यूसुफ़, हज़रत मूसा, हज़रत ईसा अ़लैहिमुस्सलाम में जो कमालात इन्फ़िरादी तौर पर थे वह मजमूई तौर पर शाह वसीयुल्लाह में हैं।

"इस में उन जलीलुल क़द्र अम्बिया व रुसुल की तौहीन है जो मूजिबे कुफ़्र है।"

आँखें अगर हैं बन्द तो फिर दिन भी रात है
इसमें क़ुसूर क्या है भला आफ़ताब का

अगर कोई सरफिरा अम्बिया व रुसुल की अ़ज़मत व तक़दीस को न माने तो इसमें उनका क्या बिगड़ जायेगा। अलबत्ता उस ख़ब्तुलहवास को ईमान के लाले पड़ जायेंगे और सच तो यह है अगर साहबे ईमान होता तो ऐसा लिखता ही क्यों ?

और मुझे तअ़ज्जुब है जनाब शाह वसीयुल्लाह साहब पर यह सब देख सुन कर ख़ामोश रहे और कोई तौबा नामा तक न शाया कराया। अगर ऐसे ही शाह साहबान को मुहियुस्सुन्नत और माहीए बिदअ़त का टाइटल दिया जाएगा तो गुमराह व बिदअ़ती किन को कहा जाएगा ? अपने पुजारी की वालिहाना अक़ीदत देख कर शाह साहब भी फूले न समाए होंगे और दिल ही दिल में ख़्याल किया होगा। अगर ऐसे ही दस पांच और मिल गए तब तो तावीज़ व गन्डे की मार्केट गरम ही हो जाएगी। इन्हीं शाह साहबान को देख कर डा० इक़बाल ने कहा है-

यही शैख़े हरम है जो चुरा के बेच खाता है
गलीमे बूज़र व दल्क़े उवैस व चादरे ज़हरा

अब से पहले तो आप हज़रात ने मौलाना गंगोही और मौलाना नानौतवी के मुआशक़ा की सरगुज़श्त मुलाहज़ा फ़रमाई है। अब मौलाना थानवी की इबरत अंगेज़

व-नतीजत आमेज़ शादी का हाल सुनिये जो उन्होंने आख़िरी उम्र में किसी कमसिन लड़की से की थी। जिस शादी को मौलाना थानवी ने तक़र्रुब इलल्लाह और हुसूले दरजात का ज़रीया क़रार दिया है यानी चिल्ला व मुजाहदात से जो बातें उन्हें हासिल न हुई थी बेगम साहब के आते ही वह तमाम मरातिब उन्हें हासिल हो गये। ऐसी ही फ़ैज़ बख़्श व इफ़्फ़त मआब शादी पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी का तबसेरा मुलाहज़ा फ़रमाइये।

बुरहान दिल्ली सन् 52 हि॰ बहवाला जामेउलमुजद्दिदीन स. 426।

मुहब्बत असर करती है चुपके चुपके
मुहब्बत की ख़ामोश चिंगारियाँ है

"मौलाना थानवी जैसा कि ख़ुद फ़रमाते हैं, दूसरा निकाह मुहब्बते दिली के इक़्तेज़ा से करते हैं, लेकिन शुहरत व वजाहते ख़ानगी चपक़लिश की वजह और बिरादरी में चे मी गोईयों की वजह से इस वाक़िआ के सबब मौलाना थानवी को जो ज़गतए दिमाग़ी (Complex) पैदा आ गया है उसकी वजह से अपने फ़ेअ़्ल की तावील व तौजीह में अजीब अजीब बातें कहते हैं। हालांकि सीधी बात यह थी कि मैंने अ़क़्दे सानी किया और यह शरअ़ में नाजाइज़ नहीं है। बस बात ख़त्म हो जाती लेकिन मौलाना (थानवी) कभी तो फ़रमाते हैं कि बे साख़्ता ज़ेहन में आया कि बहुत से दरजात मौक़ूफ़ हैं सुक़ूते जाह व बदनामी पर जिनसे तो अब तक तू महरूम है, पस इस वाक़िआ (यानी शादी) में हिकमत यह है कि तू बदनाम होगा और हक़ तआला दरजात अ़ता फ़रमायेंगे। कभी मौलाना थानवी फ़रमाते हैं, एक मसलेहत यह भी ज़ाहिर हुई कि इससे पहले मौत की महबूबियत की दौलत नसीब न थी। अल्हम्दु लिल्लाह कि इस वाक़िआ (शादी) से यह दौलत भी नसीब हो गई। फिर इरशाद होता है। मुझ को सवाने आख़िरत से तबअ़न कम दिलचस्पी थी, अब मालूम हुआ कि यह एक क़िस्म की कमी और इस्तिग़ना थी, अल्हम्दु लिल्लाह इस कमी का तदारुक हो गया। उसके बाद मौलाना थानवी का इरशाद है कि इल्म व तहम्मुल का ज़ौक़ न था। ख़ुदा तआला का एहसान है कि यह काम भी (याद शादी) पूरा हो गया। इसके इलावा और भी

बहुत सी मसलेहतें लिखी हैं जिन से मालूम होता है कि "मौलाना थानवी ने निकाहे सानी क्या किया" सुलूक व मअ़रेफ़त और तरीक़त व हक़ीक़त की सब्र आज़मा मन्ज़िलें यकक जुम्बिशे क़दम तय कर ली हैं जो मलकात व फ़ज़ाइल और कमालाते रूहानी व बातिनी सालहा साल के बाद मुजाहदा और रियाज़ते शाक़्क़ा के बाद भी हासिल नहीं होते वह अ़क़्दे सानी करते ही फ़ौरन मौलाना (थानवी) को हासिल हो गये।"

बुरहान दिल्ली फ़रवरी सन् 52 ई॰ स. 106।

"ग़ौर कीजिये फ़ितरते इन्सानी की यह कितनी बड़ी अख़्लाक़ी कमज़ोरी है कि एक शख़्स कोई काम महज़ लज़्ज़ते नफ़्स और हज़्ज़े जिस्मानी के लिए करता है लेकिन अपने अ़क़ीदतमन्दों में अपना वक़ार क़ाइम रखने के लिए इसको कमालात व मलकाते रूहानी व बातिनी के हुसूल का ज़रीया क़रार देता है। ख़ैर यह सब कुछ तो था ही इससे बढ़ कर ग़ज़ब यह है कि मौलाना थानवी हज़रत ज़ैनब के साथ आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के निकाह का वाक़िआ बयान फ़रमा कर अपने फ़ेअ़्ल को सुन्नत का इज़्तेरारी इत्तेबाअ़ क़रार देते हैं और दो वाक़िओं में सात वजूहे मुशाबहत व मुमासलत का पता देते हैं हालांकि यह साफ़ ज़ाहिर है कि कहां एक पैग़म्बर जिसकी हर क़ुव्वत व ताक़त बदर्जए कमाल और ग़ैर मामूली होती है और कहां एक वह शख़्स जिसके लिए एक बीवी भी ज़रूरत से ज़्यादा हो।"

जिस तरह मौलाना थानवी की आदतें ख़ुर्दा गीरी और एक मामूली सी बात में तश्क़ीक़ात और एहतेमालात की भरमार कर देने की थी इसी तरह अगर कोई शख़्स नुक्ता चीनी पर आजाये तो मौलाना थानवी की मज़कूरा बाला मसलेहतों और हिकमतों को बआसानी मजरूह कर सकता है मसलन वह कह सकता है।

(1) बदनामी हासिल करना महमूद नहीं मज़मूम है। हदीस में है कि तुहमत की जगहों से बचो।

(2) मौत की महबूबियत बेशक मुस्तहसन है मगर लिक़ाए रब के लिए या जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह की ग़रज़ से इसके बर ख़िलाफ़ दुनिया

से घबरा कर मौत तलब करना बुज़दिली और नामुरादी है जो इस्लाम में मज़मूम व क़बीह है।

(3) सवाबे आख़िरत से जितनी कम दिलचस्पी हो उसी क़दर अच्छा है ताकि इबादत बिल्कुल बे ग़रज़ व बे लौस हो।

(4) हिल्म व तहम्मुल वही महमूद है जो ताक़त व क़ुव्वत के साथ हो, बेचारगी के आलम में ग़ुस्सा पी जाना हिल्म नहीं कहलाता।

(5) वाक़िअ़ए नबुव्वत में और इस वाक़िआ में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ है। क्योंकि आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम का निकाह आसमान पर हुआ और यह ज़मीन पर, आँहज़रत ने हज़रत ज़ैनब का निकाह हज़रत ज़ैद से किया था जो आपके अ़ज़ीज़ क़रीब न थे। मौलाना (थानवी) ने अपनी मन्कूहा का निकाह अपने भांजे से किया। हज़रत ज़ैनब बेवा नहीं हुई थीं बल्कि हज़रत ज़ैद की मुतल्लक़ा थीं (स.107) मौलाना की बीवी मौलाना के साथ अ़क़्द से पहले बेवा हो गई थीं। आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम ने हज़रत हफ़सा को तलाक़े रजईया दी थी और मौलाना थानवी ने ख़ुद उस बीवी को तलाक़े रजईया दी जिनका यह मामला था। फिर एक शख़्स यह भी सवाल कर सकता है कि मौलाना थानवी जिसको सुन्नत का इज़्तेरारी इत्तेबाअ़ फ़रमाते हैं। यह आख़िर आमाले मन्दूबा व मुस्तहब्बा की कौन सी क़िस्म है ? और क्या शरीअ़त में इसकी कोई अहमियत है ?

नोट:-

बात सीधी कोई साहब की नज़र में नहीं आती
आपकी पोशाक को कपड़ा भी आड़ा चाहिये

नाज़िरीन ने मुलाहज़ा फ़रमा लिया कि "शादी" के एक वाक़िआ पर मौलाना थानवी ने कितने पैंतरे बदले और कैसे कैसे बल खाये। मुरीदीन व मुअ़तक़िदीन पर रंग जमाने और ज़ुहद व तक़द्दुस का रोब गांठने के लिए कितने शोशे पैदा किये मगर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी ने सारा भरम खोल दिया।

नाज़िरीन ख़ुद भी ख़्याल फ़रमायें कि मौलाना थानवी फ़रमाते हैं कि शादी से पहले मुझे मौत महबूब व पसन्दीदा न थी मगर बादे शादी मेरे क़ल्ब व जिगर में मौत

की महबूबियत समा गई। क्यों न हो जबकि शादी ही के लिए ज़िन्दा थे तो मौत से क्योंकर प्यार हो सकता था। मौत से प्यार तो बादे शादी होना ही चाहिये था-

जब तक मिले न थे तो जुदाई का था मलाल
अब यह मलाल है कि तमन्ना निकल गई

कितने पते की बात कही है फ़ाज़िल अकबराबादी ने कि "मौत की महबूबियत बेशक मुस्तहसन है मगर लिक़ाए रब के लिए या जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह की ग़रज़ से इसके बर ख़िलाफ़ दुनिया से घबरा कर मौत तलब करना बुज़दिली व नामुरादी है जो इस्लाम में मज़मूम व क़बीह है।"

मुदीरे बुरहान के मुन्दर्जा बाला टुकड़ों से मौलाना थानवी और उनकी बेगम साहबा की ना इत्तेफ़ाक़ी व ख़ाना जंगी व बाहमी कशमकश का पता चलता है जिससे मालूम होता है कि मौलाना थानवी की ज़िन्दगी दूभर हो गई थी। अब मौत की दुहाई देने के सिवा चारएकार ही क्या था। बक़ौल मिर्ज़ा ग़ालिब-

क़ैदे हयातो बन्दे ग़म असल में दोनों एक हैं
मौत से पहले आदमी ग़म से नजात पाये क्यों

जब तक मौलाना थानवी ने शादी न की थी उस वक़्त तो चुपके चुपके यह शेअ़र गुनगुनाते रहे-

दमे नज़अ़ चली आओ ख़ुदा रा
मैं अपनी मौत को भी टाल दूंगा

क्या तअ़ज्जुब कि तस्बीह के दानों पर भी यह शेअ़र रहा हो। मगर शादी होते ही पता चल गया कि ऐसी ज़िन्दगी से बेहतर मौत है। दिमाग़ बदल गया, तबीअ़त बदल गई, शादी का सारा नशा हिरन हो गया। "या हसरताह वा हसरताह" के नालए शबगीर ने राज़ अफ़शाँ कर दिया। अब तो मौलाना थानवी यह फ़रमाने लगे कि-

किस तरह फ़रियाद करते हैं बता दो क़ाइदा
ऐ असीराने चमन मैं तो गिरिफ़्तारों में हूं

ऐसे ही मौलाना थानवी फ़रमाते हैं कि शादी से पहले मुझे हिल्म व तहम्मुल महमूद व पसन्दीदा न था लेकिन बादे शादी मिज़ाज में तहम्मुल व बुर्दबारी की सलाहियत पैदा हो गई। फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी ने बात

बहुत ही ताक़ व उरियां अर्ज़ की कि "हिल्म व तहम्मुल वही महमूद है जो ताकत की जाय तो, बेचारगी के आलम में गुस्सा पी जाना हिल्म नहीं कहलाता।" यानी जब तक मुरीदों और शागिर्दों से साबका रहा उस वक़्त तक तो मौलाना थानवी पर हिल्म व तहम्मुल की परछाईं न पड़ सकी वह कभी ख़्याल में भी न ला सके कि तहम्मुल व बुर्दबारी किस चिड़िया का नाम है ? सब को बात बात पर डाँटते डपटते रहे। चुनान्चे ख़ुद इलाहाबाद के एक साहब थाना भवन की ख़ानक़ाह गये। दौराने क़याम में एक दिन किसी बात पर आँजनाब ने मौलाना थानवी को टोक दिया। बस इतनी सी बात पर थानवी साहब के क़हर व जलाल का कोहे आतिश फ़शां फट पड़ा और फ़रमाया कि अभी इस कमबख़्त को मेरी ख़ानक़ाह से बाहर कर दो। यह मुझ से सीखने आया है या मेरी इस्लाह करने आया है ? मुतवस्सिलीन के साथ तो थानवी साहब की डांट डपट का यह आलम था मगर शादी के होते ही जब नया साबक़ा गले पड़ गया तो भीगी बिल्ली बन कर हिल्म व तहम्मुल की राह इख़्तियार कर ली। यह तो फ़रमा न सके कि इस बारगाहे आली में दम मारने की मजाल नहीं, यहां तो "दुक दुक दीदम दम न कशीदम" पर अमल करना पड़ता है, जो कुछ भी ज़नाने फ़ौजे तर्जुमान से निकल जाये आमन्तु कहने के सिवा मजाले इन्कार नहीं। इसी को अकबर इलाहाबादी ने अपने अन्दाज़ में इस तरह कहा है-

अकबर कभी डरे नहीं दुश्मन की फ़ौज से
लेकिन अगर डरे हैं तो बीवी की नौज से

चुनान्चे ख़ुद फ़ाज़िले देवबन्द सईद अहमद अकबराबादी मौलाना थानवी की बद ख़ुल्क़ी का ज़िक्र करते हुए लिखते हैं-

> "आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का ख़ुल्क़े मुबारक यह था कि भूके भूके रहते और मेहमान की ख़ातिर तवाज़ोअ् करते थे। उसका काम ख़ुद अपने हाथ से करते थे लेकिन हमारे मौलाना थानवी का यह हाल है कि "मेहमानी बन्द" और अगर किसी मेहमान ने अज़ राहे मुरव्वत खाने में अपने साथ किसी को शरीक कर लिया है तो बस उसकी शामत ही आ गई है। रात के वक़्त दीवान ख़ाना में अगर ठहर गया है तो शिकन्जा में कस दिया गया है।"

चुनान्चे फ़ाज़िले देवबन्द एक मक़ाम पर ख़ुद अपनी आप बीती का तज़्किरा यूं करते हैं-

बुरहान दिसम्बर सन् 1953 ई॰ सफ़हा 366।

> "मौलाना (थानवी) की तशद्दुद पसन्दी और दुरुश्त मिज़ाजी की जो रिवायात बराबर सुनने में आती रहती थीं उनका असर यह हुआ कि क़ियामे देवबन्द के ज़माना में बारहा जी चाहने के बावजूद मौलाना की ख़िदमत में हाज़िरी की जुरअत कभी नहीं हुई जामेउल मुजद्दिदीन में इसी तरह के वाक़िआत नज़र से गुज़रे तो यह असर और क़वी हो गया।"

मौलाना थानवी की संगदिली व दुरुश्त मिज़ाजी का वाक़िआ सुन कर मुझे मुहतरमी आलीजनाब हकीम सय्यद क़मरुल इस्लाम साहब देहलवी मुक़ीम हाल मुम्बई के मतब की एक अदबी नशिस्त याद आ गई जिसमें मौलाना अबुल वफ़ा साहब फ़सीही, मौलाना अब्दुल क़य्यूम साहब अलीगढ़ी, मौलाना ज़ाहिदुलक़ादरी मुफ़्तीए आस्ताना हकीम नज्मुलहुदा साहब गयावी सभी शरीक थे और मजलिस का हर शख़्स अपने पसन्दीदा अशआर सुना रहा था। क़मर मियाँ का एक शेअर आपकी ज़ियाफ़ते तबअ् के लिए हाज़िर है-

मैं सर ता पा सुक़बत कश मगर इक दिल ही ना ज़ुक है
वह सर से पाँव तक नाज़ुक मगर इक दिल ही पत्थर है

नोटः- थाना भवन के ख़ाना साज़ मुजद्दिद की बद ख़ुल्क़ी व दुरुश्त मिज़ाजी व तशद्दुद पसन्दी का हाल फ़ाज़िले देवबन्द की ज़बानी आपने सुन लिया। जिससे थानवी ढोल के पोल का सही अन्दाज़ा हो गया होगा और यह बात भी समझ में आ गई होगी कि मुरीदीन ने थानवी साहब को उछालने में कैसे कैसे ग़लत प्रोपगन्डों को आलए कार बनाया है।

अब जामेउल मुजद्दिदीन की हस्बे ज़ैल इबारत पर फ़ाज़िल अकबराबादी का तबसेरा मुलाहज़ा फ़रमाइये।

> (1) थानवी साहब से मुतअ़ल्लिक़ मौलवी अब्दुलबारी साहब नदवी तहरीर फ़रमाते हैं कि "इल्म व अमल में हुदूद की रिआयत इस दर्जा थी कि लवाज़िमे बशरियत के साथ इससे ज़्यादा का तसव्वुर दुशवार है।"
>
> (2) इस अद्ल के एहतेमाम की इन्तेहा यह थी कि एक "बीवी" की बारी में दूसरी बीवी का ख़्याल लाना भी (थानवी साहब) ख़िलाफ़े

अद्ल ख़्याल फ़रमाते कि जिस की बारी है उसकी तरफ़ तवज्जोह में कमी होगी जो हक़ तल्फ़ी है।

बुरहान दिल्ली, मार्च 52 ई॰ सफ़हा 167 से 176 तक।

"हज़रत थानवी साहब अपनी दो बेगमात के दर्मियान जो अद्ल क़ाइम रखते थे वह एक अम्रे वाक़ेअ् है और कोई शुबहा नहीं कि अपने बाज़ फ़ज़ाइल व ख़साइल की तरह वह इसमें भी बहुत मुमताज़ थे लेकिन जनाबे मुअल्लिफ़ ने इसको जिस आबो ताब के साथ बयान किया है उसे देख कर हैरत होती है कि फ़लसफ़ा का एक उस्ताद साबिक़ तो दर किनार कोई मामूली दर्जा की समझ रखने वाला भी ऐसी बात कह सकता है ? इसके बाद मौलाना थानवी का एक वाक़िआ लिख कर दूसरों पर छींटे उड़ाने और कचोके लगाने की जो ख़ू मुअल्लिफ़ ने पैदा कर ली है उसके मुताबिक़ फ़रमाते हैं "भला यहाँ तक ज़ेहन भी किस का जा सकता है सिवाए उसके जो अपने क़ल्ब की हर जुम्बिश की निगरानी करता और हर वक़्त अपने को हक़ तआला के हुज़ूर में पाता और उसको हाज़िर व नाज़िर जानता हो।"

ग़ौर कीजिये जनाबे मुअल्लिफ़ ने हज़रत थानवी के इन्तेहाई अद्ल बैनुज़्ज़ौजैन की जो कैफ़ियत बयान की है यह अक़्ली व मन्तिक़ी और नफ़्सियाती तौर पर किस क़दर ग़लत और बे माना हैं और साथ ही उससे किस तरह आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तन्क़ीस होती है। अक़्ली और नफ़्सियाती तौर पर उसके ग़लत होने की वजह यह है कि इन्सानी ख़्याल पर कभी रोक टोक नहीं लगाई जा सकती उस पर हरगिज़ पहरा नहीं बिठाया जा सकता। यानी आप किसी ख़्याल की निस्बत लाख अहद करें कि इसे अपने दिल या दिमाग़ में घुसने ही न देंगे आप इसमें कामयाब नहीं हो सकते। (चन्द सतर बाद)

अरबी का एक शायर कहता है-

तर्जमा:- प्यारी मैंने तुझको उस वक़्त भी याद किया जबकि गन्दुमी रंग के तेज़ धार वाले ख़त्ती नेज़े (मैदाने जंग में) हमारे ख़ून से अपनी प्यास बुझा रहे थे और खटाखट चल रहे थे।

इस ख़्याल के आने में न मीलों और कोसों की दोअ़्दे मसाफ़त हाइल होती है और न ज़िन्दान व मेहन की आहिनी और ऊँची दीवारें-

तर्जमा:- मेरी महबूबा उम्मे सलसबील का ख़्याल मेरे पास आता है हालांकि मेरे और उसके दर्मियान में एक तेज़ रफ़्तार क़ासिद की एक महीना की मसाफ़त है।

एक दूसरा शायर कहता है-

तर्जमा:- मेरी महबूबा का ख़्याल मालूम नहीं किस तरह मेरे पास चला आया जबकि क़ैद ख़ाना का दरवाज़ा मेरे ऊपर बन्द था।

इस बिना पर मुअल्लिफ़ का यह दावा कि हज़रत थानवी एक बीवी की बारी में दूसरी बीवी का ख़्याल लाना भी ख़िलाफ़े अद्ल समझते थे सर ता सर ग़लत और बे बुनियाद है जैसा कि हमने अभी इशारा किया। जनाबे मुअल्लिफ़ के ख़्याल में ग़ालिबन हज़रत मौलाना थानवी के फ़ज़्ल व कमाल का एतेराफ़ इस वक़्त हो ही नहीं सकता जब तक कि एक निहायत मासूमाना अन्दाज़ में दूसरे हज़रात पर फ़ेक़रे न कसे जायें और उन पर तन्ज़ व तअ़्रीज़ न की जाये लेकिन निहायत अफ़सोस और बड़े शर्म की बात है कि इस मौक़ा पर वह (तर्जमा) बसा औक़ात किसी शय की मुहब्बत इन्सान को अन्धा व बहरा बना देती है के मुताबिक़ इस हद तक आगे बढ़ गये हैं कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तन्क़ीस कर बैठे हैं तारीख़ व सेयर और अहादीस की किताबों में साफ़ तौर पर मज़कूर है कि हज़रत सरवरे कौनैन को हज़रत ख़दीजा से इतनी मुहब्बत थी कि आप दुसरी बीवियों की बारी के दिनों में हज़रत ख़दीजा का ज़िक्र सोज़ो गुदाज़ के साथ इस तरह फ़रमाया करते थे कि अज़्वाजे मुतह्हरात को बाज़ औक़ात नागवारी तक हो जाती थी। हज़रत ख़दीजा के बाद आपको हज़रत आइशा से मुहब्बत थी और हज़रत आइशा भी उसे जानती थीं लेकिन इसके बावजूद फ़रमाती हैं कि मैंने ख़दीजा को नहीं देखा लेकिन मुझको जिस क़दर उनपर रश्क आता था किसी और पर नहीं आता था उसकी वजह यह थी कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हमेशा उनका ज़िक्र किया करते थे। एक मर्तबा मैंने इस पर

अपनी आ ज़ुर्दगी का इज़हार किया तो आपने फ़रमाया ख़ुदा ने मुझको उनकी मुहब्बत दी है। (सही मुस्लिम फ़ज़ाइले ख़दीजा)

गौर कीजिये मौलाना थानवी के नज़दीक तो दूसरी बीवी का ख़्याल लाना भी ख़िलाफ़े अद्ल है लेकिन यहां आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम सिर्फ़ ख़्याल ही नहीं लाते बल्कि ज़िक्र भी फ़रमाते हैं और ज़िक्र भी एक दो दफ़ा नहीं। भूल चूक से नहीं बल्कि हमेशा अ़मदन और क़स्दन।

(चन्द सतर बाद)

इसी तरह आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हज़रत आइशा से बहुत मुहब्बत थी। तारीख़ व सैयर की किताबों में कसरत से वाक़िआत मज़कूर हैं जिन से साबित होता है कि आप उस मुहब्बत का इज़हार मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से करते थे। हद यह है कि मर्ज़ुलवफ़ात में आप किसी दूसरी बीवी के घर में मुक़ीम थे कि दरियाफ़्त फ़रमाया कल मैं किसके घर में रहूंगा। अज़वाजे मुतह्हरात मन्शाए मुबारक समझ गईं। सब ने कहा आप जहां चाहें क़ियाम फ़रमायें। वक़्त आ गया था कि यह ख़ाकदाने आलम आफ़ताबे नबुव्वत के जस्दे उन्सुरी से महरूम हो जाये इस लिए ज़ोअ़्फ़ इस दर्जा हो गया था कि ख़ुद चल नहीं सकते थे। हज़रत अली और हज़रत अब्बास दोनों बाज़ू थाम कर हज़रत आइशा के हुजरा में लाये और बिलआख़िर यहां एक हफ़्ता क़ियाम फ़रमाने के बाद रफ़ीक़े आला से जा मिले।

गौर करो कितना नाज़ुक मक़ाम है। सय्यदे कौनैन के इस दुनिया से रेहलत का वक़्त आ गया है ऐसे मौक़ा पर हर रफ़ीक़ए हयात की तबई तौर पर ख़्वाहिश हो सकती थी कि आपकी वफ़ात उन्हीं के हुजरा में हो ताकि उस मौक़ा से फ़ाइदा उठा कर ज़्यादा से ज़्यादा कस्बे सआ़दत का शर्फ़ हासिल हो और फिर दूसरी बीवियों का दिन भी है लेकिन आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दिल में हज़रत आइशा के साथ ग़ैर मामूली मुहब्बत की वजह से उस वक़्त जो आरज़ू है आप उसको पोशीदा नहीं रखते लेकिन ग़ायत ख़ुल्क़ व करम के सबब ज़बाने इशारा से इसका इज़हार फ़रमाते हैं। (चन्द सतर बाद)

गौर करो इन सब वाक़िआत से क्या साबित होता है! यही ना कि

दिल में ख़्याल का लाना कुजा आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम एक बीवी की बारी में दूसरी हरमे मुहतरम का ज़िक्र तक करते थे और उनके साथ अपनी मुहब्बत का इज़हार भी फ़रमाते थे।

आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को मालूम था कि इससे दूसरी बीवियों को तबई तौर पर नागवारी हुई है लेकिन अद्ल उन्हीं चीज़ों में हो सकता है जो इन्सान के ख़ुद अपने इख़्तियार में हों और मुहब्बत चूंकि ग़ैर इख़्तियारी चीज़ है।

जो लगाए न लगे और बुझाये न बुझे

इस लिए इस बिना पर इसमें अद्ल का सवाल भी पैदा नहीं होता, ताहम कमाले अ़ब्दियत का तक़ाज़ा यह था कि हज़रत आइशा फ़रमाती हैं कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अज़्वाजे मुतह्हरात में अद्ल फ़रमाते थे और साथ ही दुआ़ करते थे।

ऐ अल्लाह यह मेरी तक़सीम उन चीज़ों में है जिनका मैं मालिक हूं पस तू मुझको मलामत न कर उन चीज़ों में जिनका तू मालिक है और मैं मालिक नहीं हूं।

अब इसके मुक़ाबिल मौलवी अब्दुलबारी साहब मुअल्लिफ़ जामेउल मुजद्दिदीन का बयान पढ़िये कि मौलाना थानवी एक बीवी की बारी में दूसरी बीवियों का ख़्याल लाना ख़िलाफ़े अद्ल समझते थे और बताइये कि अलअयाज़ बिल्लाह क्या इस जुमला का हासिल यह नहीं है कि इस मामला में मौलाना थानवी का मक़ाम आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से भी ऊँचा है कि जो काम आप (यानी सरवरे कौनैन) न कर सके वह मौलाना (थानवी) ने करके दिखाया। फिर मौलाना अब्दुलबारी नदवी ने मज़कूरा बाला जुमला के बाद जो यह लिखा है कि "भला यहां तक ज़ेहन भी किस का जा सकता है तो उसकी ज़द किस पर पड़ती है।"

बुरहान दिल्ली मई 1952 ई॰ स॰ 296।

> "मुमकिन है बाज़ क़ारईन को यह ख़्याल हो कि एक ज़रा सा फ़िक़रा और उस पर यह तवील गुफ़्तगू "छोटी सी बात थी जिसे अफ़साना कर दिया" लेकिन असल यह है कि तमाम गुमराहियों का सर-चश्मा अपने को अकमल समझना ही है इससे पहले शख़्सियत परस्ती पैदा होती है और यह आगे चल कर अवतार या देवता या उलूहियत के अक़ीदे की शक्ल इख़्तियार कर लेती है।"

बुरहान, दिल्ली फरवरी सन् 1952 ई॰ स॰ 110।

> "यह अक़ीदते मुफ़रता अच्छे अच्छे उलमा को भी बसा औक़ात किस तरह इफ़रात व तफ़रीत में मुब्तला करके बारगाहे रिसालत में बिलवास्ता गुस्ताख़ी का सबब बनती है।"

बुरहान दिल्ली मार्च सन् 1952 ई॰ स॰ 176।

"एक बुलन्द पाया बुज़ुर्ग को सिर्फ़ उसके मर्तबा व मक़ाम तक महदूद रखने को [illegible] तो उसके बर ख़िलाफ़ अगर पहले से मान लिया गया है कि उस बुज़ुर्ग को जामेउल मुजद्दिदीन ही साबित करना है तो फिर ज़ाहिर है कि जो भी थे पहले वाले थे और [illegible] पहले वालों की ज़द में अकाबिर मशाइख़ उलमा का क्या ज़िक्र पैग़म्बर और पैग़म्बर के साथी भी आ जायें तो ज़रा मुस्तबअद नहीं।

ऐ काश नाइक़ मुसन्निफ़ को मालूम होता कि कमबख़्त शैतान के राह मारने के तरीक़े एक नहीं हज़ारों हैं कभी वह बदी के रास्ते पर लगा कर इन्सान को ख़ुसरुद्दुनिया वल आख़िरह का मिस्दाक़ बनाता है और कभी नेकी में ग़ुलू पैदा करके [illegible] कर देता है।"

नोट- अगर उलमाए अहले सुन्नत की तरफ़ से यह आवाज़ उठाई जाती कि [illegible] जामेउल मुजद्दिदीन मौलवी अब्दुल बारी नदवी ने तौहीने रिसालत करके अपनी दुनिया व आख़िरत बरबाद की तो अब तक एक क़ियामत बरपा हो गई होती। थाना भवन से नज्द तक कुहराम मच गया होता मगर फ़ाज़िले [illegible] की तन्क़ीद व तब्सेरा पर सारी देवबन्दियत दम बख़ुद होकर [illegible]

रही है! थाना भवन का हर पुजारी सर ब-गिरेबाँ है मगर तौफ़ीक़े तौबा नसीब नहीं हो रही है। जब पीर व मुर्शिद ही बग़ैर तौबा चल बसे तो इन ग़रीब पुजारियों को तौबा की पूंजी कहां से हाथ आये ? इसी को कहते हैं ख़ुदाई मार, कहने वाले ने सच कहा है कि अल्लाह के यहां देर है अन्धेर नहीं है। अब तक तो हज़राते देवबन्द यह कह कर राहे फ़रार इख़्तियार करते थे कि हमारी किताबों से उलमाए बरैली व उलमाए बदायूं को लिल्लाही बुग़्ज़ हो गया है।

अब फ़रमायें कि मौलाना सईद अहमद अकबराबादी के लिए क्या फ़तवा है ?

नाज़िरीन ने अच्छी तरह महसूस कर लिया होगा कि जामेउल मुजद्दिदीन में जा बजा सरवरे कौनैन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तन्क़ीस व तौहीन की गई है और मौलाना थानवी को मर्तबए नबुव्वत से भी बढ़ाने की कोशिश की गई है। यही है देवबन्दी मिशन का मतमहे निगाह और कअ्बए मक़सूद कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपना जैसा बशर, ज़र्रए नाचीज़ से कमतर, चमार से ज़्यादा ज़लील, गाँव का चौधरी, बड़ा भैया, मर कर मिट्टी में मिलने वाला, हश्र में अपने अन्जाम से बे ख़बर, की तबलीग़ करो और जब मौलाना थानवी की बारी आये तो सर मुंडा के, पाएजाँमा चढ़ा के, गले फाड़ फाड़ कर, ख़ूब उचक उचक कर यह कहना कि वह अकमल थे, हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़ थे, मुजद्दिदे आज़म थे। उनके पाँव को धोकर पीना नजाते उख़रवी का सबब है और क्या कहना हमारे मुजद्दिदे आज़म का कि उन्होंने अद्ल बैनुज़्ज़ौजतैन के मुआमला में वह कर दिखाया जिसको रसूले ख़ुदा भी न कर सके यही वजह है कि अब हम देवबन्दी मुहम्मद रसूलुल्लाह के बजाए अशरफ़ अली रसूलुल्लाह का कलिमा पढ़ने लगे।

अब हम देवबन्दियों को मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़रूरत नहीं है जो ख़ुद अपनी बेटी के काम न आ सकेंगे और उन्हें यह भी नहीं मालूम कि क़ियामत में उनके साथ क्या मुआमला होगा अब हम लोगों के लिए तो हज़रत थानवी बहुत काफ़ी हैं उनका पाँव न मिल सकेगा तो उनकी क़ब्र ही धोकर पी लिया करेंगे जो हमारी नजात का बाइस होगा।

काश अब भी हज़राते देवबन्द सोचते कि इसी पीर परस्ती और मुरीदों की बेजा नियाज़मन्दी ने मौलाना थानवी का दिमाग़ इतना ऊँचा कर दिया था कि ला इलाह इल्लल्लाह अशरफ़ अली रसूलुल्लाह पढ़वाते और इस पर अपनी रज़ामन्दी की मुहर सब्त करते और देवबन्दी मकतबए फ़िक्र का यह आलम कि आज तक

यह अलइमदाद की इस इबारत को जुज़्वे ईमान बनाये है और सैफ़े यमानी में मौलाना मन्ज़ूर नोमानी ने इस इबारत की तौज़ीह व तावील पर वह गुल खिलाये हैं कि उन्हें भी देख कर अब शर्म आती होगी मगर यह न हो सका कि तक़वियतुल ईमान ही की रौशनी में यह कह देते कि चूंकि उसका ज़ाहिर दुरुस्त नहीं लिहाज़ा उसको ख़ारिज करके तौबा करनी चाहिये।

ख़ुदा जाने क्या हो गया है उलमाए देवबन्द को कि तौबा का नाम सुनते ही उन्हें बुख़ार आ जाता है। कोई करैला और गुलाब जामुन से चिढ़ता है मगर हज़राते देवबन्द तौबा से चिढ़ते हैं।

मौलाना थानवी ने अपनी दूसरी शादी के बाद एक मुजद्दिदाना व आरिफ़ाना ख़ुतबा इरशाद फ़रमाया था जिस पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी का तब्सिरा मुलाहज़ा फ़रमाइये और अन्दाज़ा कीजिये कि किस बुहरानी कैफ़ियत में जनाब थानवी साहब ने यह ख़ुतबा दिया था। इब्तेदाए इश्क़ में मौलाना (थानवी) मौलाना मुहम्मद अली जौहर के इस शेअ्र पर अमल पैरा थे-

इश्क़ ही बाइसे तक्वीन जहां है ग़ाफ़िल
तूने समझा है कि एक शुग़ल है बेकारी का

और बादे इश्क़ क्या हालत हुई उसको ख़ुतबा में मुलाहज़ा कीजिये।

बुरहान मार्च सन् 52 ई० ज़ेरे उनवान तअद्दुदे इज़्देवाज और शौहर का दस्तूरुल अमल।

"और सुनिये हज़रत मौलाना थानवी ने ग़ालिबन अक़्दे सानी के बाद अपने ज़ाती तजरबात से मुतअस्सिर होकर तअद्दुदे इज़्देवाज के मसला पर एक ख़ुतबा इरशाद फ़रमाया है जिसमें तअद्दुदे इज़्दवाज को हर रिआयती सिराते मुस्तक़ीम की तरह बाल से बारीक और तलवार से तेज़ तर बताया गया है और यहां तक फ़रमाया है "मन न कर्दम शुमा हज़र बकुनेद" फिर आगे चल कर इसमें जो क़बाहतें दुशवारियां और ख़ुसूमतें हैं उनका तज़्किरा करने के बाद तअद्दुद में पड़ना या तो दुनिया बरबाद व तल्ख़ करना है और या आख़िरत व दीन को तबाह करना है। इस सिलसिला में हमारी गुज़ारिश है कि बुलहवस रानी और लज़्ज़ते नफ़्स के लिए एक बार तअद्दुदे इज़्देवाज की राह इख़्तियार करना इस्लामी

तालीमात की रौशनी में पसन्दीदा नहीं है लेकिन यह चीज़ इस दर्जा क़बीह और लाइक़े इज्तेनाब भी नहीं है जितनी कि मौलाना थानवी के बयान से ज़ाहिर होती है।"

नोटः-

इब्तेदाए इश्क़ है रोता है क्या
आगे आगे देखिये होता है क्या

इब्तेदाए इश्क़ में तो यह आलम था कि यही "शादी" तक़र्रुब इलल्लाह का ज़रीया बनी थी। चिल्ला मुजाहदा, रियाज़त, इबादत, मुशक़्क़त से जो मरातिब व दरजात थानवी साहब को न हासिल हो सके थे वह बयक जुम्बिशे क़दम बेगम साहबा के आते ही हासिल हो गये। या तो सर ता सर वह फ़रिश्तए रहमत ही बन कर आई थीं या फिर ज़हमत ही ज़हमत साबित हुईं-

चेरा कारे कुनद आक़िल कि बाज़ आयद पशेमानी

काश यह फ़लसफ़ा पहले ही मौलाना थानवी सोच लिए होते मगर इसको क्या कहिये कि पीछे सोचने की आदत थी! अफ़सोस थानवी साहब को शादी ख़ाना बरबादी का एहसास उस वक़्त हुआ जब कि दुनिया व आख़िरत दोनों बरबाद हो गईं, बक़ौले जिगर-

टूट पड़ता है दफ़अतन जो इश्क़
बेशतर देरपा नहीं होता

किस क़दर हैरत की बात है कि थानवी साहब अगर दूसरी बीवी से निबाह न कर सके तो यह क्यों समझ बैठे कि सारी दुनिया उन्हीं की तरह है, कुछ न सही तो कम से कम नस्से क़ुरआनी का लिहाज़ करते कि क़ुरआन मजीद ने मुसलमानों को बयक वक़्त चार बीवियों की इजाज़त दी है तो क्या मआज़ल्लाह क़ुरआन मजीद भी मुसलमानों को दुनिया व आख़िरत के बरबाद करने की तल्क़ीन कर रहा है। आख़िरश सहाबए किराम और बहुत से औलियाए एज़ाम ने कई कई शादियां कीं तो क्या अलअयाज़ बिल्लाह मिन ज़ालिक, उन सब लोगों ने बक़ौले मौलाना थानवी अपनी दुनिया व आख़िरत बरबाद की। आज भी बहुत से खाते पीते सेहतमन्द व

तवाना लोग कई कई शादियां करते हैं उनमें अ़द्ल भी बाक़ी रखते हैं। मामूलाते दीनी व दुनियावी में भी कोई फ़र्क़ नहीं आता मगर मौलाना थानवी हैं कि सबको एक ही डन्डा से हांक रहे। उनकी नज़र में "सब धान बाईस पनसेरी है" कहां तो थानवी साहब शादी से पहले और शादी के वक़्त इतना मगन थे कि ख़्वाह बदनामी हो या रुसवाई मगर शादी होकर रहेगी और इस पर तुरफ़ा तमाशा यह कि ख़्वाहिशे नफ़्स व लज़्ज़ते जिस्मानी को इत्तेबाअ़े सुन्नत का इज़्तेरारी जज़्बा क़रार दिया। मगर क्या कहना बेगम साहबा का! कि पहुंचते ही उन्होंने मौलाना थानवी के नाम निहाद तसव्वुफ़ व तरीक़त का हुलिया टाइट कर दिया और वह दुरगत बनाई कि एड़ी का पसीना चोटी और चोटी का पसीना एड़ी आ गया। अब बेचारे इतने घबराए कि कुरआन व सुन्नत सभी भूल बैठे और आलमे बदहवासी में फ़रमाने लगे कि "जिसको अपनी दुनिया व आख़िरत बरबाद करनी हो" वह दूसरी शादी कर ले। मौलाना थानवी का यह हाल पढ़ कर ग़ालिब का एक शेअ़र याद आ गया।

इश्क़ ने ग़ालिब निकम्मा कर दिया
वरना हम भी आदमी थे काम के

अब मौलाना थानवी के मुजद्दिदाना ख़ुतबा पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी के पन्द व नसाएह मुलाहज़ा फ़रमायें।

बुरहान मार्च सन् 52 ई० सफ़हा 174।

"मुनासिब यह था कि हज़रत मौलाना थानवी इस मसला पर गुफ़्तगू करते वक़्त ज़रा वुसअ़ते नज़र से काम लेते और शख़्सी नफ़ा व ज़रर के इलावा क़ौमी मफ़ाद और अमज़ार (नुक़्सानात) और इज्तेमाई मसालेह व हुक्म को भी पेशे नज़र रखते। ख़ैर यह मसला तो अपनी जगह अलग नज़र व बहस का मुहताज है। अ़र्ज़ करने का मक़सद यह है कि तादादे इज़्देवाज की क़बाहतों को बयान फ़रमाने के बाद मौलाना (थानवी) ने उन लोगों के लिए जो उसमें मुब्तला ही हो जायें एक दस्तुरुल अ़मल भी लिखा है जिसमें आपने शौहर को बारह हिदायात दी हैं उनमें से तीन हिदायतें नम्बर 7,8,9 हस्बे ज़ैल हैं।"

(1) एक के साथ मुहब्बत का इज़हार दूसरे के सामने न करे।

(2) एक की तारीफ़ दूसरे से न करे।

(3) ग़रज़ एक का तज़्किरा दूसरे से न करे।

अब मौलाना थानवी की इन हिदायात को मुलाहज़ा फ़रमाईये और साथ ही साथ आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की सीरते मुक़द्दसा के जो बाज़ औक़ात ऊपर बयान किये गये हैं उन पर निगाह डालिये तो मालूम होगा कि-

(1) एक के साथ मुहब्बत का इज़हार दूसरे के सामने करते थे।

(2) एक की तारीफ़ दूसरे से करते थे।

(3) और एक का तज़्किरा भी दूसरे से करते थे।

अब फ़रमाइये आप किस को हक़ और क़ाबिले इत्तेबाअ़ क़रार देंगे ? हमारे फ़ाज़िल मुअल्लिफ़ (मौलाना अब्दुलबारी नदवी) का मौलाना थानवी की मज़कूरा बाला हिदायात के मुतअ़ल्लिक़ इरशाद अ़ललइतलाक़ है कि नुस्ख़ों के मुजर्रब व तीर बहदफ़ होने में शुबहा नहीं हर हर जुज़ हकीमाना व आ़रिफ़ाना है। अगर मुअल्लिफ़ का यह दावा सही है तो वह बतायें कि आँहज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की निस्बत उनका इरशाद क्या होगा ?

नोटः-

तनाक़ुज़ के पीछे तआ़रुज़ का शोर
तआ़रुज़ की दुम में तनाक़ुज़ की डोर

फ़ाज़िले अकबराबादी एक ही तआ़रुज़ व तनाक़ुज़ में हैरान व शश्दर हैं हालांकि उलमाए देवबन्द की इबारात में तनाक़ुज़ और तआ़रुज़ की हैसियत "सिलसिलए ग़ैर मतनाही" ब-माना 'ला तकुफ़ इला हदीन' की होती जा रही है जो तसलसुल मन्तिक़ियों की नज़र में मुहाल था वह अब मुमकिनुल वक़ूअ़ होता जा रहा है वाज़ेह रहे कि वहाबियों और देवबन्दियों की नज़र में मौलाना इस्माईल, मौलाना गंगोही, मौलाना थानवी की हैसियत मोअ़तबर नाई की है। जैसे कि एक वाक़िआ़ मशहूर है।

किसी शहर में कोई हज्जाम पहुंचा मुलाकात जजमान से करके बोला
कि बीवी तुम्हारी हुई आज बेवा मियां तुमको इस ग़म में मातम है ज़ेबा
सुना जब उन्हों ने बहुत रोये पीटे कि अफ़सोस बीवी हुई मेरी बेवा
तो अहबाब ने आकर उनको बताया कि बेवा हुई कैसे तुम तो हो जिन्दा
लगे कहने क़ासिद भी तो मोअ्तबर है
फिर उसको मैं किस तरह समझूंगा झूटा

बिल्कुल यही हाल उलमाए देवबन्द का है। मौलाना सईद अहमद अकबराबादी लाख कहते रहें कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह फ़रमाया है और उसके ख़िलाफ़ मौलाना ने यह फ़रमाया। लिहाज़ा किस पर अमल किया जाये? तो जवाब एक होगा और सिर्फ़ एक कि "हम मौलाना थानवी पर एतेबार कर चुके हैं।" मोअ्तबर नाई की बात झुटलाई नहीं जाती। क्या आज की दुनिया में इससे भी बढ़ कर शख़्सियत परस्ती की कोई जीती जागती मिसाल मिल सकती है कि ख़ुद देवबन्द का एक फ़ाज़िल कह रहा है कि मौलाना थानवी की यह हिदायात मुसलेहे आज़म सरवरे कौनैन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सीरते मुक़द्दसा के ख़िलाफ़ है इसके बावजूद हज़राते देवबन्द ख़्वाबे ख़रगोश में पड़े सांस डकार तक नहीं लेते। गोया यह गवारा है कि रसूले कायनात से रिश्ता व नाता टूट जाये मगर हकीमुल उम्मत मौलाना थानवी का दामन हाथ से न छूटे। अब जिसकी अक़्ल मारी गई है वह उलमाए देवबन्द की हां में हां मिलाता रहे और उनकी जी हुज़ूरी ही को हासिले ज़िन्दगी समझे लेकिन ख़ुदा ने जिसको थोड़ी बहुत अक़्ल दी है वह सोच सकता है कि उलमाए देवबन्द की नज़र में रसूले कायनात सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की क्या हैसियत है और उनके ख़ाना साज़ मुजद्दिदे आज़म मौलाना थानवी की क्या हैसियत है?

अब इसी उनवान की दूसरी कड़ी पर फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी का तब्सिरा मुलाहज़ा फ़रमाइये।

बुरहान मई 1952 ई० स० 318 ख़लीफ़ा मन्सूर या हारून रशीद का एक वाक़िआ बयान करने के बाद मुदीरे बुरहान तहरीर फ़रमाते हैं-

"यहां इस वाक़िआ के नक़ल करने का मक़सद सिर्फ़ यह दिखाना है कि हज़रत मालिक इब्ने अनस ऐसा इमाम आली मक़ाम अपने ही इज्तेहादात और इस्तिम्बातात को हर एक के लिए लाज़िमी नहीं क़रार

देता लेकिन हमारे फ़ाज़िल मुअल्लिफ़ (मौलाना अब्दुलबारी नदवी) का इरशाद है कि हज़रत थानवी मुजद्दिद नहीं जामेउल मुजद्दिदीन थे और उनको पाना व उनका दामन थामना दीन के असल व पाक सर-च मा तक पहुंचने और अमल की दीनी व दुनियवी बरकात व समरात हासिल करने के लिए ज़रूरी है।"

नोटः-इमामे आज़म अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाह अलैह ने इरशाद फ़रमाया कि क़ुरआन व हदीस की रौशनी में यह मेरी अपनी राय है और जिस पर मुझे क़ुदरत थी इसमें यह बेहतरीन राय है अगर कोई इस से उम्दा राय लाये तो औला बिस्सवाब है। इमाम शाफ़ई रहमतुल्लाह अलैह ने फ़रमाया कि जब तुम मेरे कलाम को हदीस के मुख़ालिफ़ पाओ तो मेरे कलाम को दीवार पर फ़ेंक दो। इमाम अहमद बिन हम्बल रहमतुल्लाह अलैह ने इसी से मिलती जुलती बात इरशाद फ़रमाई। इमाम यूसुफ़ व इमाम ज़ुफ़र फ़रमाते हैं कि हमारे क़ौल से फ़तवा देना उस वक़्त तक दुरुस्त नहीं ता वक़्ते कि मुफ़्ती यह जान न ले कि यह बात मैंने कहा से कही।

अइम्माए मुज्तहिदीन के हज़्म व एहतियात का तो यह आलम था मगर थानवी के पुजारी मौलाना अब्दुलबारी नदवी इरशाद फ़रमाते हैं कि "मौलाना थानवी को पाना और उनका दामन थामना असल व पाक सर-च मा तक पहुंचने और अमल की दीनी व दुनियवी बरकात व समरात हासिल करने के लिए ज़रूरी है।"

रसूले करीम, इमाम अबू हनीफ़ा, इमाम युसुफ़, इमाम मुहम्मद वग़ैरहुम का दामन हाथ में आये या न आये मगर मौलाना थानवी का दामन हाथ आना ज़रूरी है। ऐ काश! उलमाए देवबन्द की चिकनी चुपड़ी बातों पर सर धुनने वाले कभी यह भी सोच सकते कि-

निगाहे लुत्फ़ की इक इक अदा ने लूट लिया।
वफ़ा के भेस में इक बेवफ़ा ने लूट लिया

जामेउल मुजद्दिदीन की एक और इबारत पर फ़ाज़िल अकबराबादी का आख़िरी तब्सेरा लीजिये तो फिर हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर उलमाए देवबन्द की कलाबाज़ियां मुलाहज़ा फ़रमाइये।

बुरहान फरवरी 52 ई० स० 112,113

"हज़रत थानवी अलैहिर्रहमा का सबसे नुमायाँ और बड़ा कमाल राक़िम अहक़र (मौलवी अब्दुलबारी नदवी) की नज़र में यह था कि इल्म व अमल में हुदूद की रिआयत इस दर्जा थी कि हज़राते अम्बिया का तो ज़िक्र नहीं। वरना लवाज़िमे बशरियत के साथ उससे ज़ाइद का तसव्वुर दुशवार है और इसमें यक़ीनन उस निअ़मत का दख़ल था कि अल्लाह तआला ने बस्ततन फ़िलअमल का भी वाफ़िर हिस्सा अ़ता फ़रमाया था। जिस्मानी ख़िलक़त ज़ाहिरी व बातिनी हवास की सेहत और नतीजए एतेदाल मिज़ाज की लताफ़त में भी मुजद्दिदे उम्मत की ज़ात नबीए उम्मत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की परतौ थी।"

बुरहान दिल्ली फ़रवरी 52 ई॰ स. 114

"हज़राते अम्बिया का तो ज़िक्र ही नहीं वरना लवाज़िमे बशरियत के साथ उससे ज़ाइद का तसव्वुर दुशवार है। इस इबारत का मतलब बजुज़ इसके और क्या हो सकता है कि ताबेईन व तबअ् ताबेईन और अइम्माए एज़ाम व सिद्दीक़ीन व शुहदा तो क्या मौलाना थानवी का मक़ाम सहाबा से भी ऊँचा था क्योंकि सहाबी सब एक ही मर्तबे के नहीं थे उनमें आपस में भी फ़र्क़ मरातिब था और लवाज़िमे बशरियत के साथ उससे ज़ाइद का तसव्वुर ही न होना यह सब से ऊंचा मर्तबा है इस बिना पर मौलाना थानवी फ़र्दन फ़र्दन हर एक सहाबी से ऊँचे न सही बाज़ सहाबा से जो दूसरे सहाबा के मुक़ाबला में मफ़ज़ूल थे उनसे ला मुहाला थानवी साहब ऊँचे हो ही गये।"

काश अब भी अहले नज़र सोचते कि दारुल उलूम देवबन्द, तबलीग़ी जमाअत और जमीअ़तुल उलमाए हिन्द के नाम पर मुसलमानों का दीन व ईमान किस बुरी तरह ग़ारत किया जा रहा है और एक एक 'सुन्नी' को मिटाने के लिए कितने हरबे इस्तेमाल किये जा रहे हैं-

करम कोशियां हैं सितमकारियाँ हैं
बस इक दिल की ख़ातिर ये तैयारियां हैं

दोस्तो! देवबन्दियत और अहले सुन्नत यह दो मकतबाए फ़िक्र हैं। तौहीद व रिसालत पर गुफ़्तगू करते हुए उलमाए देवबन्द का यह कहना है कि रसूले ख़ुदा

हमारे जैसे बशर, ज़र्रए नाचीज़ से कमतर और चमार से ज़्यादा ज़लील थे। मआज़ल्लाह और उलमाए अहले सुन्नत का यह कहना है-

अल्लाह का महबूब भी कम पाया नहीं है
याँ जिस्म नहीं है तो यहां साया नहीं है

मुक़द्दमे की पूरी रूदाद तुम ने सुन ली अब फ़ैसला तुम्हारे हाथ है। यहां जब्र व इकराह का सवाल नहीं है। यह तो दीन व ईमान का सौदा है। जहन्नम के भड़कते हुए शोले और जन्नत के हसीन व दीदा ज़ेब महल दोनों पसे पर्दा हैं। ख़्वाह रसूल का दामन थाम कर जन्नत का दाख़िला लो या उन से कतरा कर और उन्हें गालियां देकर जहन्नम की आग में अपना ठिकाना बनाओ, याद रखो-

गन्दुम ज़े गन्दुम रोयद जौ ज़े जौ
अज़ मुकाफ़ाते अ़मल ग़ाफ़िल मशौ

गेहूं बोने वाला गेहूं काटता है और जौ की खेती करने वाला जौ काटता है। इस लिए तुम्हें भी अपने अ़मल से ग़ाफ़िल नहीं रहना चाहिये। रसूले ख़ुदा को गालियां देकर तुम जन्नत नहीं ले सकते। दुश्मने रसूल और बाग़ीए मुस्तफ़ा के लिए जन्नत में कोई जगह नहीं। जन्नत तो उनकी और उनके ग़ुलामों की है। इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरैलवी ने कितनी प्यारी बात फ़रमाई है-

वह जहन्नम में गया जो उनसे मुस्तग़नी हुआ
है ख़लीलुल्लाह को हाजत रसूलुल्लाह की

गुफ़्तगू यह हो रही थी कि "मौलवी यहूया कांधलवी ने कहा कि पहले तो मैं हज़रत मौलाना रशीद अहमद गंगोही को इस सदी का मुजद्दिद समझता था लेकिन अब मैं हज़रत मौलाना थानवी को न सिर्फ़ मुजद्दिद बल्कि मजनून कि हज़रत (थानवी) का दर्जा मुजद्दिदियत से आ़ली हो।"

मौलवी यहूया कांधलवी ने तो बात इशारे किनाए में कही थी मगर मुअल्लिफ़ जामेउल मुजद्दिदीन मौलवी अब्दुलबारी नदवी ने साफ़ साफ़ खुले बन्द कह दिया कि मौलाना थानवी का मर्तबा सहाबा और रसूले ख़ुदा से भी बुलन्द व बाला था जिसकी तफ़सील फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी के तबसेरा में गुज़र चुकी।

अब हिफ़्ज़ुल ईमान जैसी रुसवाए ज़माना किताब की एक दिलख़राश कुफ़

आमेज़ व गुस्ताख़ाना ईमान इबारत पर उलमाए देवबन्द की इल्मी बे माएगी बाहमी धींगामुश्ती धुक्का फ़ज़ीहती मुलाहज़ा कीजिये। बकौल किसी शायर के-

जैसा मौसम हो मुताबिक़ उसके मैं दीवाना हूं
मार्च में बुलबुल हूं जुलाई में परवाना हूं

यही हाल इस इबारत पर हज़राते देवबन्द का है कि उन्हें किसी करवट चैन नहीं आराम इबारत यह है।

हिफ़्ज़ुल ईमान मुसन्निफ़ मौलवी अशरफ़ अली थानवी स. 7

> "फिर यह कि आप की ज़ाते मुक़द्दसा पर इल्मे ग़ैब का हुक्म किया जाना अगर बक़ौले ज़ैद सही हो तो दरियाफ़्त तलब यह अमर है कि इस ग़ैब से मुराद बाज़ ग़ैब है या कुल अगर बाज़ उलूमे ग़ैबिया हैं तो उसमें हुज़ूर की क्या तख़्सीस है ऐसा इल्म तो ज़ैद व अमर बल्कि हर सबी व मजनून बल्कि जमीअ् बहाएम के लिए हासिल है।"

दिल के फफोले जल गये सीने के दाग़ से
इस घर को आग लग गई घर के चराग़ से

हिफ़्ज़ुल ईमान की यही वह इबारत है जिस पर मुल्क के तूलो अर्ज़ में मुनाज़रा व मुजादला होता रहता है। उलमाए अरब व अजम ने इस गन्दी व कुफ़्री इबारत से न सिर्फ़ इज़हारे बेज़ारी किया बल्कि इसके क़ाइल को काफ़िर व मुरतद क़रार दिया और इससे रुजूअ् करने व तौबा करने की तल्क़ीन की गई। चुंकि इस इबारत में आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की खुली हुई तौहीन है जो उलमाए अहले सुन्नत व उलमाए देवबन्द के दर्मियान मुत्तफ़िक़ा तौर पर मूजिबे कुफ़्र है। अल्लामा क़ाज़ी अयाज़ रहमतुल्लाह अलैह ने शिफ़ा शरीफ़ में यहां तक तहरीर फ़रमाया है कि अगर कोई शख़्स सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नअ्ले पाक को तहक़ीरन 'नुऐल' यानी हुज़ूर की जूती को जूतड़िया कह दे तो ऐसा शख़्स काफ़िर और वाजिबुल क़त्ल है चूंकि उस शख़्स ने आक़ाए दो जहां की उस नअ्ले मुबारक की तन्क़ीस की जो पाए नबुव्वत से मस हो चुकी है और क़दमे नाज़े नबुव्वत से उसे एक गूना निस्बत हासिल है।

इन सबके बावजूद शातिमे रसूल, बारगाहे नबुव्वत के गुस्ताख़ व बे अदब मौलाना थानवी के कान पर जूं तक न रेंगी महज़ यह ख़्याल करते हुए कि बात

मुश्तहिर हो चुकी है मस्जिद व मदरसा, दारुल इफ़्ता व ख़ानक़ाह, ख़वास व अवाम, ग़रज़ कि कूचा व बाज़ार तक यह बात पहुंच गई है। लिहाज़ा अब तौबा करने में बड़ी सुबकी व रुसवाई होगी दुनिया काफ़िर कहे या मुरतद मुसलमान लड़ें या मरें, मुनाज़रा हो या मुजादला, अज़मते इस्लाम बाक़ी रहे या लुट जाये। अरब व अजम में ग़म व गुस्से का इज़हार हो या नफ़रीन व मलामत। यह सब कुछ गवारा है मगर नोके क़लम पर आई हुई बात वापस न ली जाएगी।

मेरी माया नाज़ शोहरए आफ़ाक़ इबारत पर क़ौमे मुस्लिम मुझ से काई की तरह छट जाये तो मुझे क्या ग़म ? सलामत रहें अंग्रेज़ बहादुर और बाक़ी रहे उनकी राजधानी कि छः सौ रुपये माहाना 'अन दाता' की तरफ़ से गुज़र औक़ात के लिए मिल ही जाते हैं और मेरा भाई मज़हर अली सी.आई.डी. के बड़े ओहदे पर फ़ाइज़ है जब चाहूंगा इस इबारत पर मुअ्तरिज़ीन के ख़िलाफ़ रपट दिलवा कर एक एक को चुन चुन कर डेढ़ लाख के मकान में बन्द करा दूंगा। "सैयाँ भए कोतवाल अब डर काहे का है।"

यह ज़ाहिर है कि मुसलमान इतनी रक़म न दे सकता था जो अंग्रेज़ बहादुर के ख़ज़ाने से मिल रही थी। अंग्रेज़ अपने हरबे में कामयाब और थानवी साहब सुनहरी सिक्कों की झन्कार पर वाला व शैदा। यही थी अंग्रेज़ की वह डिप्लोमेसी चाल जिसके बल बूते वह सदियों से ज़ाइद भारत की सर ज़मीन पर मसीही परचम लहराता रहा। अंग्रेज़ ख़ुद सात समुन्दर पार गया मगर हिफ़्ज़ुल ईमान, तक़वीयतुल ईमान, बहिश्ती ज़ेवर, बराहीने क़ातिआ, अश्शिहाबुस्साक़िब, तहज़ीरुन्नास, सिराते मुस्तक़ीम, फ़तावा रशीदिया जैसी शर अंगेज़ किताबें मुनाज़रा के लिए छोड़ गया जिससे हिन्दी मुसलमानों का चैन व सुख जाता रहा यह एक ऐसी दर्द अंगेज़ व दुख भरी कहानी है जिसको लिखते हुए क़लम का जिगर शक़ हो जाता है-

कियामत ख़ेज़ है अफ़सानए पुर दर्दो ग़म मेरा
न खुलवाओ ज़बाँ मेरी न उठवाओ क़लम मेरा

मुख़्तसर यह कि इस इबारत पर भारत की ज़मीन अंगारा उगल रही थी और आसमान आग बरसा रहा था बात कुछ हल्की फुल्की न थी। नामूसे रिसालत का सवाल था। जिस पर बेदार मग़्ज़ व ज़िन्दा दिल मुसलमान सर धड़ की बाज़ी लगा देता है। न जाने कितने नौजवान हथेली पर सर लिये और कांधे पर कफ़न डाले मैदाने इश्क़ व मुहब्बत में यह कहते हुए कूद पड़े।

सर फ़रोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है
देखना है ज़ोर कितना बाज़ूए क़ातिल में है

मुसलमान हज़ार गुनहगार व सियहकार सही मगर उसके सीने में ईमान भरा दिल और उसकी रगों में इश्क़े रसूल का गरम गरम ख़ुन है। वह अपनी लुटती हुई इज़्ज़त व आबरू पर सब्र भी कर सकता है मगर आमिना के लाल महबूबे किर्दिगार सरकार मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इज़्ज़त व अज़मत पर ख़ून का आख़िरी क़तरा क़ुरबान कर देने में अपनी सआदत व नजात समझता है।

मुल्क की भरपूर आबादी में कुहराम मचा था कि हिफ़ज़ुल ईमान की इबारत वापस ले लो! उलमाए अहले सुन्नत का चैन व सुकून जाता रहा। न जाने कितने मुसलमानों ने अपने ऊपर दाना पानी हराम कर लिया कि ऐसी ज़िन्दगी से मौत बेहतर है जिस में जीते जी सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तौहीन व तन्क़ीस का रूह फ़रसा मन्ज़र देखना पड़े। बूढ़े, जवान, मर्द, औरत, सभी हिफ़ज़ुल ईमान की इबारत पर ख़ून के आँसू रो रहे थे-

इलाही क्यों नहीं उठती क़ियामत माजरा क्या है ?

मगर मौलाना थानवी और उनके मुक़ल्लिदीन ख़म ठोंक ठोंक दावते मुनाज़रा देते रहे हालांकि उलमाए अहले सुन्नत जानते थे कि-

न ख़न्जर उठेगा न तलवार उन से
यह बाज़ू मेरे आज़माए हुए हैं

लेकिन अहले सुन्नत का होशमन्द व मुस्तक़बिल आशना तबक़ा यह न चाहता था कि आपस में मुनाज़रा व मुबाहसा की नौबत आये वरना मुसलमानों में फूट पड़ जायेगी जिससे उनके दामने इत्तेहाद व इत्तेफ़ाक़ की धज्जियां तार तार हो जायेंगी। उलमाए अहले सुन्नत पूरी एतेदाल पसन्दी व सन्जीदगी से थानवी साहब और उनके हामिईन को समझाते रहे कि इन्सान कुछ फ़रि[illegible]ता नहीं उसकी तो ख़मीर में ख़ता व निस्यान है अगर आपसे लग़ज़िश व ख़ता हो गई तो क्या न अज़्जुब! दुनिया की अज़ीम तरीन हस्तियों के ज़बान व क़लम ने ठोकर खाई है फिर आप जैसे लोगों का ठोकर खाना तो अम्रे यक़ीनी है लिहाज़ा यह मक़ाम ज़िद व हठ धर्मी का नहीं है बल्कि कुफ़्र व ईमान का सवाल है। सोचिये और हज़ार बार सोचिये कि यह कोई सहीफ़ए इलाही नहीं जिसमें तरमीम व तन्सीख़ की गुन्जाइश न हो। आप [illegible] की इबारत है जिसके रद्दो बदल में आपको सौ फ़ीसद हक़ हासिल

मगर अफ़सोस कि इस मा क़ूल और वाज़ेह मुतालबा पर मौलाना थानवी ने कोई तवज्जोह न की। शायद उन्हें इस अन्देशे ने ग़लत रविश पर अड़े रहने पर मजबूर किया हो कि इबारत वापस लेने पर कहीं हलक़ए मुअतक़िदीन में कमी न हो जाये और मेरी लुटती हुई आबरू देख कर अंग्रेज़ बहादुर भी मुझ से आंखें फेर कर घर से बाहर न कर दें और इस शेअ्र का मिस्दाक़ बनना पड़े।

सुना करते थे आदम का निकलना ख़ुल्द से लेकिन
बहुत बे आबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले

सही है! जन्नत हाथ आये या न आये मगर पैरिस और लन्दन का बाग़ीचा तो मिल जाये ? अफ़सोस कि हयाते मुस्तआर ज़िन्दगीए नापाइदार के ऐशे आरिज़ी की ख़ातिर न जाने इन्सान क्या से क्या कर गुज़रता है-

वह इशरत मौत है या रब जो नज़र पर डाल दे पर्दे
वह दौलत क़हर है जो दिल को तुझ से बे ख़बर कर दे

ऐ परवरदिगारे आलम! अब इससे बढ़ कर क़ियामत की और क्या निशानी होगी कि तेरी ख़ुदाई में ऐसे भी सरकश व बाग़ी हैं जो तेरा खाते हैं और तेरे ही महबूब को गालियां देते हैं ?

ऐ कायनात के पालनहार! अब बात घर से बाहर आ चुकी है। आज इन्सानों की खुली आबादी में तेरे महबूब के इल्मे पाक को जानवर, पागल, मजनून के इल्म जैसा कहा जा रहा है। शैतान और मल्कुलमौत के इल्म को नस्से क़ुरआनी से साबित किया जाता है मगर आमिना के दुलारे के लिए इल्मे ग़ैब मानने वालों को मुशरिक कहा जाता है।

ऐ ख़ालिक़े अर्ज़ व समा! यह कैसा अन्धेर है कि नमाज़ में गाय बैल का ख़्याल लाने से तो नमाज़ हो, मगर तेरे प्यारे महबूब सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का ख़्याल लाने से नमाज़ फ़ासिद हो जाये।

ऐ कायनात के मालिक व मुख़्तार! यह वक़्त तेरे महबूब के जाँ निसारों पर कितना कठिन और उनकी अक़ीदत व मुहब्बत का कैसा संगीन इम्तेहान है कि हम जीते जी तेरे महबूब की बारगाहे बेकस पनाह में गालियों की बौछार देख रहे हैं। आज न जाने कितनी ऐसी रुसवाए ज़माना किताबें हैं जिसमें तेरे प्यारे महबूब की अज़मत व तक़दीस पर हमला है और इस्लामी लेबल पर कितने ऐसे स्टेज हैं जिस पर दिन दहाड़े नामूसे रिसालत की बे हुरमती पर शोला बार तक़रीरें हैं।

ऐ रब्बे क़दीर! हम तेरे इम्तेहान के काबिल नहीं अपनी इज्ज़ व नातवानी का एतराफ़ करते हुए हम तेरी बारगाहे अदालत में अहदो पैमान करते हैं कि उम्र के आख़िरी लम्हा तक तेरे और तेरे रसूल के दुश्मनों पर नफ़रीं व मलामत करते रहेंगे और उनकी हर गुस्ताख़ाना अज़्म तहरीर व तक़रीर का दन्दान शिकन (मुह तोड़) जवाब देते रहेंगे। तू हमें इस राह में इस्तिक़लाल व इस्तेहकाम अता फ़रमा और हमारे सीने को अपनी और अपने रसूल की मुहब्बत का गन्जीना बना दे।

ऐ अलीम व ख़बीर! तू दिलों के भेद का जानने वाला है, तू जानता है कि हमारा यह इख़्तिलाफ़ ज़र व ज़मीन की बुनियाद पर नहीं, जायदाद व दौलत के पेशे नज़र नहीं! बल्कि तेरे महबूब की बारगाह में वफ़ादारी का सवाल है जो तेरा और तेरे रसूल का है वह हमारे गले का हार है जो तेरे मुस्तफ़ा का बाग़ी है उससे हमें कोई रिश्ता व तअल्लुक़ नहीं। हमारा तो मसलक यह है-

छुट जाए अगर दौलते कौनैन तो क्या ग़म
छूटे न मगर हाथ से दामाने मुहम्मद ﷺ

बात कहां से कहां पहुंची, अर्ज़ यह कर रहा था कि हिफ़्ज़ुल ईमान की गन्दी इबारत पर हिन्दी मुसलमान तड़प रहा था और उलमाए देवबन्द माथा टेके तावील व तौजीह की राहें तलाश कर रहे थे। आख़िरश थाना भवन, गंगोह, देवबन्द, सहारनपुर के अकाबिर असाग़िर दारुन्नदवा में जमा हुए यह वही दारुन्नदवा है जिसका सदर जलालतुलआफ़ाक़ शैख़ नज्दी है। चुनान्चे शैख़ ही की सदारत में हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर एक मजलिसे मशावरत मुनअक़िद हुई। मौलाना थानवी बहुत ही मुज़महिल व निढाल थे। किसी ने इशारे की ज़बान में दरियाफ़्त किया। आख़िर यह हुज़्नी कैसी ? तो थानवी साहब यह कह कर ख़ामोश हो गये-

देख लो रूए रंगे नाकामी
यह न पूछो कि बेकसी क्या है

इस जवाब पर हाज़िरीने मजलिस को बड़ा तरस आया और इन्तेहाई रद्दो क़दह के बाद यह बात तय कर ली गई कि इबारत वापस लेने में बड़ी रुसवाई व बदनामी होगी। हम लोग कहीं मुंह दिखाने के क़ाबिल न रह जायेंगे। अपने व ग़ैर सभी हमारी इल्मी बे माएगी पर आवाज़ कसेंगे और तरह तरह के फ़िकरे चुस्त करेंगे। गोया हमारे इल्म व फ़ज़्ल का जनाज़ा निकल जाएगा। लिहाज़ा सलामती इसी में है कि रसूले ख़ुदा का दामन छोड़ कर बुकरात व सुक़रात के दामन में पनाह लो। ज़बान

व लुग़त हमारा साथ दे या न दे अपनी मन गढ़त दलीलें लेकर मैदान में फाट पड़ो।

कुछ तो लगेगी देर सवालो जवाब में

यह सुनते ही थाना भवन के मजुद्दिदे आज़म जनाब थानवी साहब के सूखे सूखे होंटों पर मुस्कुराहट खेल गई "डूबते को तिनके का सहारा" आगे बढ़ कर अपने चेले चापड़ और ज़ुर्रियत की पीठ पर शाबाशी का हाथ रखा और यह कहते हुए कि मुझे आज के दिन तुम जैसे सपूतों से यही उम्मीद थी "खिलखिला कर हँस पड़े।"

बात ख़त्म होते देख कर शैख़े नज्दी ने इजाज़त चाही कि अब जलसे की कार्रवाई ख़त्म होनी चाहिये। मगर एक तरफ़ से आवाज़ आई कि अभी एजेन्डे की एक दफ़ा बाक़ी रह गई है। यानी उन लोगों को नामज़द कर दिया जाये जो इस इबारत पर क़ुरआन व हदीस की दलील सुनने के इलावा अवामुन्नास की 'दलीलें' बजाए सुनने के खाने को तैयार हों।"

एजेन्डे की मा.क़ूलियत पर सब की गर्दन झुक गई और यकायक मजलिस पर सन्नाटा छा गया और आंखों आंखों में गुफ़्तगू शुरू हो गई।

पैग़ाम दिया है कभी पैग़ाम लिया है
नज़रों से मुहब्बत में बड़ा काम लिया है

चुनान्चे अरकाने मजलिस ने इशारों ही इशारों में कुछ लोगों का इन्तेख़ाब कर लिया और यह एलान करते हुए कि मौलवी मुर्तज़ा हसन दरभंगी, मौलवी हुसैन अहमद टांडवी, मौलवी अब्दु शकूर लखनवी, मौलवी मन्ज़ूर अहमद संभली को इस अहम काम के लिए तजवीज़ किया गया। जलसे की कार्रवाई ख़त्म कर दी गई। यह सुनते ही अरबए अनासिर अपने बुज़ुर्गों की ख़िदमत में यह कहते हुए आदाब बजा लाये-

क़ुरऐ फ़ाल बनामे मन दीवाना ज़दन्द

हिफ़्ज़ुल ईमान की आने वाली गुफ़्तगू पर यह एक तम्हीदी नज़रिया था। अब दारुन्नदवा की मुजव्वज़ा स्कीम के पेशे नज़र इन चारों हज़रात की क़ला बाज़ी और मबलग़े इल्म मुलाहज़ा फ़रमाइये लेकिन देवबन्दी सूरमाओं को अखाड़े में देखने से पहले थानवी साहब के मुरीदीन व मुतवस्सिलीन का एक ख़त पढ़ लीजिये। जिससे आपको अन्दाज़ा हो सके कि हिफ़्ज़ुल ईमान की इस ईमान सोज़ इबारत पर न सिर्फ़ उलमाए अहले सुन्नत ही को एतेराज़ था बल्कि थानवी साहब के मुख़लिस मुरीदीन

से भी न रहा गया तो ख़त भेज कर यह दरख़्वास्त व इल्तेजा की कि हकीमुल उम्मत से बसद मिन्नत व समाजत अर्ज़दाश्त है कि हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत ख़ारिज कर दी जाये या ऐसी मुनासिब तरमीम कर दी जाये जिससे रसूले करीम अलैहिस्सलातु वत्तस्लीम की तौहीन व तन्क़ीस का शायबा तक न रह जाये। अब उस ख़त की आगाज़ इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

देख उस क़ौम की तज़लील न होने पाये
अपने ऐवान में जिस क़ौम की आवाज़ है तू

नग़ख़ुरुल उनवान की बाज़ इबारात हिफ़्ज़ुल ईमान स. 18 मुसन्निफ़ मौलाना अशरफ़ अली थानवी।

"17 सफ़र सन् 1342 हि॰ को एक ख़त हैदराबाद दकन से जिसके कातिब का उनवान आम्मा मुख़लिसीन हैदराबाद दकन था और ज़रीया जवाब मंगाने का एक मुईन मौलवी साहब थे आया उस में हिफ़्ज़ुल ईमान की एक मशहूर इबारत के मुतअल्लिक़ "जिस पर मेहरबानों का एतेराज़ मशहूर है" दी थी कि उसकी तरमीम कर दी जाये और मुक़्तज़ियाते तरमीम का इज्तेमाअ् और मवानेअ् तरमीम का इरतेफ़ाअ् इन अल्फ़ाज़ में ज़ाहिर किया था।"

(1) ऐसे अल्फ़ाज़ जिसमें मुमासलते इल्मियते ग़ैबिया मुहम्मदिया को उलूमे मजानीन व बहाइम से तश्बीह दी गई है जो बादीयुन्नज़र में सख़्त मुए बे अदबी को मुशइर है क्यों ऐसी इबारत से रुजूअ् न कर लिया जाये ?

(2) जिसमें मुख़लिसीन हामेईने जनाबे वाला को हक़ बजानिब जवाब देही में सख़्त दुश्वारी होती है।

(3) यह इबारत तो आसमानी और इल्हामी इबारत नहीं कि जिसकी मख़्सूस सूरत और हैइयाते इबारात का अला हालिही व ब-अल्फ़ाज़ेही बाक़ी रखना ज़रूरी हो।

(4) यह सब जानते हैं कि जनाबे वाला किसी दबाव से मुतअस्सिर होने वाले नहीं और किसी से कोई तमअ् जाहो माल जनाब को मतलूब है बजुज़ इसके कि आम तौर पर जनाबे वाला की बे नफ़्सी का एतेराफ़ हो और हकीमुल उम्मत की शान से जो तवक़्क़ोअ् थी वह पूरी हो सके।

और इस मशवरा के साथ यह सवाल भी थे कि हुज़ूरे अक़दस सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के उलूमे ग़ैबिया जुज़िया मुहम्मदिया ज़ैद व अमर वग़ैरह की मुमासिल हैं या नहीं ?

(5) और जो शख़्स इस मुमासलत का क़ाइल हो उसका क्या हुक्म है ?

(6) और उलूमे ग़ैबिया जुज़िया मुहम्मदिया कमालाते नबुव्वत में दाख़िल हैं या नहीं ? इन्तहा मकतूब

न हो जाये कोई ख़ातिर कबीदा
बड़ा नाज़ुक तअल्लुक़ है दिलों का!

मुन्दर्जा बाला शेअ्र के पेशे नज़र हैदराबाद के हामेईन व मुख़लिसीन ने कैसा आजिज़ाना व नियाज़मन्दाना अरीज़ा हाज़िर किया मगर थानवी साहब हैं कि "मुर्ग़े की एक टांग" के मुताबिक़ हम तो जो कुछ लिख चुके वह पत्थर की लकीर है, आसमानी व इल्हामी किताबों में नस्ख़ होता रहे मगर हकीमुल उम्मत की शाने मुजद्दिदीयत के ख़िलाफ़ है कि वह अपनी किसी इबारत को ख़त्ते नस्ख़ मजरूह कर दें।

है मुरीदों को तो हक़ बात गवारा लेकिन
शैख़ो मुल्ला को बुरी लगती है दरवेश की बात

नाज़िरीन ने हैदराबाद के ख़त से यह अन्दाज़ा कर लिया होगा कि ख़ुद मौलाना थानवी के हामेईन को हस्बे ज़ैल बातों का एतेराफ़ है।

(1) इस इबारत में उलूमे ग़ैबिया मुहम्मदिया सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को उलूमे मजानीन व बहाइम से मुमासलत दी गई है।

(2) इस इबारत में बड़ी बे अदबी है।

(3) इस इबारत पर मुअ्तरिज़ीन को हम मुख़लिसीन व हामेईन कोई हक़ ब-जानिब जवाब नहीं दे पाते "यह और बात है कि धांदली करते हैं।"

(4) जबकि यह कोई आसमानी व इल्हामी इबारत नहीं तो इसको अला हालिही बाक़ी रखना कुछ ज़रूरी नहीं।

(5) लिहाज़ा मुनासिब यही है कि इस इबारत से रुजूअ् कर लिया जाये।

सुनाने चले हैं उन्हें क़िस्सए ग़म
बहुत दिल के हाथों से मजबूर होकर

हालात की नजाकत से मुतअस्सिर होकर परेशान हाल मुरीदीन ने मुन्दर्जा बाला पांच दफ़आत पर मुश्तमिल अ़रीज़ा मौलाना थानवी की ख़िदमत में हाज़िर किया। उन ग़रीबों का ख़्याल था कि 'थाना भवन' 'आनन्द भवन' का हम क़ाफ़िया है हो सकता है कि कुछ हम लोगों को भी सुख व आनन्द की भीक मिल जाये मगर थानवी साहब ने उनकी सारी आरज़ूओं पर पानी फेर दिया। थानवी साहब के ग़ाली व अन्धे मुअ़तक़िदीन शिकस्ता ख़ातिर होने के बावजूद यह कहते रहे-

यह आस्ताने यार है सेहने हरम नहीं
जब रख दिया है सर तो उठाना न चाहिये

गोया बज़बाने हाल वह यह कह रहे थे कि हमें जन्नत न चाहिये मौलाना थानवी का दामन चाहिये ख़्वाह जहन्नम ही में जायें।

लेकिन जिनकी ईमानी फ़रासत ने भांप लिया उन पर हक़ वाज़ेह हो गया कि गोबर व ग़लीज़ पर इत्रा व केवड़े का छिड़काव कारगर नहीं हो सकता लिहाज़ा वह यह कह कर अलग हो गये।

सदाक़त छुप नहीं सकती बनावट के उसूलों से
कि ख़ुश्बु आ नही सकती कभी काग़ज़ के फूलों से

उस गरोह का कहना था कि हमें रसूले करीम के दामन में पनाह लेकर जन्नत में जाना है मौलाना थानवी की बेजा हिमायत में हमें जहन्नम में झुलसना मन्ज़ूर नहीं और उनमें एक तीसरा तबक़ा मुअ़तदिल व सुलहे कुल हज़रात का पैदा हो गया जो यह कह कर अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनते हैं।

तुम ऐसों से फ़क़त साहब सलामत दूर की अच्छी
न तुम से दोस्ती अच्छी न तुम से दुश्मनी अच्छी

उनका कहना यह है कि हम लोग बहुत ही मुअ़तदिल व नाज़ुक मिज़ाज हैं न तो जहन्नम की तपिश बरदाश्त कर सकते हैं और न ही रोज़ रोज़ की ठन्डी हवा रास आ सकती है लिहाज़ा हमें तो जन्नत और जहन्नम का दर्मियानी हिस्सा 'ऐअ़राफ़' चाहिये ताकि दोनों से रस्मो राह रह सके कभी जन्नत की दहलीज़ पर और कभी जहन्नम की ड्योढ़ी पर।

गुफ़्तगू यह हो रही थी कि दारुन्नदवा ने हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर मुनाज़रा के लिए मौलवी मुर्तज़ा हसन, मौलवी हुसैन अहमद, मौलवी अ़ब्दुश्शकूर और मौलवी मन्ज़ूर का इन्तेख़ाब किया। अब आइये उन चीदा चीदा हज़रात की वह तावील व तौज़ीह मुलाहज़ा कीजिये। जिस पर मौलाना थानवी उम्र भर ख़ामोश रहे जो उनकी रज़ामन्दी की दलील है। अब थानवी साहब के वफ़ादारों की शातिराना चाल देखिये और हक़्क़े वफ़ादारी की दाद दीजिये।

शायद इसी का नाम है मजबूरीए वफ़ा
तुम झूट कह रहे हो मुझे एतेबार है

तौज़ीहुल बयान फ़ी हिफ़्ज़ुल ईमान मुअल्लिफ़ा मौलवी मुर्तज़ा हसन चाँदपुरी सुम्मा दरभंगी मतबा क़ासिमी देवबन्द ब-एहतेमाम मौलवी तय्यब।

"वाज़ेह हो कि ऐसा का लफ़्ज़ फ़क़त मानिन्द और मिस्ल ही के माना में मुस्तअ़मल नहीं होता बल्कि उसके माना इस क़दर और इतने के भी आते हैं जो इस जगह मुतअ़य्यन हैं।"

यानी हिफ़्ज़ुल ईमान वाली इबारत में लफ़्ज़े 'ऐसा' इतना और इस क़दर के माना में है मानिन्द या मिस्ल के माना में नहीं है।

तौज़ीहुल बयान स. 17

"इबाराते मुतानाज़ा फ़ीह में लफ़्ज़ ऐसा ब-माना इस क़दर और इतना है फिर तश्बीह कैसी ?"

यानी हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत में लफ़्ज़ 'ऐसा' माना में इतना और इस क़दर के है तश्बीह के माना में नहीं है। अब सुनिये सदरे देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद टांडवी की-

समझते थे रहेगी जंग महदूदे गुलो बुलबुल
मगर तख़्रीबे नज़्मे गुलिस्ताँ तक बात जा पहुंची

अश्शिहाबुस्साक़िब अ़लल्-मश्‌रिकिल् काज़िब् स.11 मौलवी हुसैन अहमद टांडवी मतबा क़ासिमी देवबन्द।

> "हज़रत मौलाना "थानवी" इबारत में लफ्ज़ ऐसा फ़रमा रहे हैं। लफ्ज़ इतना तो नहीं फ़रमा रहे हैं अगर लफ्ज़ इतना होता तो उस वक़्त अलबत्ता यह एहतेमाल होता कि मआज़ल्लाहहु.ज़ूर अलैहिस्सलाम के इल्म को और चीज़ों के बराबर कर दिया।"

यानी इस इबारत में लफ़्ज़ ऐसा तश्बीह के लिए है अगर इतना या इस क़दर होता तो अलबत्ता क़बाहत लाज़िम आती यह तावील मौलवी मुर्तज़ा की तावील के बिल्कुल बर-अक्स है।

आगे मौलवी हुसैन अहमद तहरीर करते हैं-

> "इससे भी क़तअ़ नज़र कर लें तो लफ़्ज़ ऐसा तो कलिमा तश्बीह का है।"

मौलाना टाण्डवी की यह वह इबारत है जिसने लफ्ज़ 'ऐसा' पर कलिमए तश्बीह की आख़िरी मुहर लगा दी।

ख़ुलासए कलामः- मौलवी मुर्तज़ा हसन दरभंगी का कहना यह है कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं है बल्कि माना में इतना और इस क़दर के है अलबत्ता अगर तश्बीह के माना में होता तो तौहीने नबुव्वत होती है जो मूजिबे कुफ़्र है और मौलवी टाण्डवी का कहना यह है कि लफ़्ज़ ऐसा तश्बीह के लिए है अगर माना में इतना या इस क़दर के होता तो तौहीने रिसालत होती जिससे कुफ़्र लाज़िम आता।

नतीजए कलामः- इस का हासिल यह है कि मौलवी मुर्तज़ा की तावील की बिना पर मौलवी हुसैन अहमद पर कुफ़्र लाज़िम आता है और मौलवी हुसैन अहमद की तावील व तौज़ीह के पेशे नज़र मौलवी मुर्तज़ा काफ़िर होते हैं और आज के देवबन्दी इन दोनों हज़रात को अपना मुक़्तदा व पेशवा जानते हुए दोनों के पैरो हैं लिहाज़ा दोनों का कुफ़्र तमाम देवबन्दियों ने अपने हक़ में क़बूल किया और क़बूले कुफ़्र का नतीजा ज़ाहिर है।

मन्ज़ूर है गुज़ारिशे अहवाले वाक़ई
अपना बयान हुस्ने तबीअ़त नहीं मुझे

इज़हारे हक़ीक़तः- बात अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कही गई बल्कि हिफ़्ज़ुल ईमान की गन्दी इबारत पर मौलवी मुर्तज़ा और मौलवी हुसैन अहमद की

तौज़ीह व तावील का जो नतीजा था वह ज़ाहिर कर दिया। किस क़दर शर्म व ग़ैरत की बात है कि आपस में एक दूसरे को काफ़िर बनाते रहे मगर यह तौफ़ीक़ न हुई कि इस इबारत को ख़ारिज करके कोई वाज़ेह और साफ़ इबारत दर्ज कर देते जो बिल्कुल बे गुबार होती। सच कहा है जिगर ने-

अल्लाह जिसे तौफ़ीक़ न दे इन्सान के बस का काम नहीं
फ़ैज़ाने मुहब्बत आ़म तो है इरफ़ाने मुहब्बत आ़म नहीं

अभी मौलवी मुर्तज़ा और मौलवी हुसैन अहमद में यह बहस चल रही थी कि अखाड़े के तीसरे पहलवान मौलवी मन्ज़ूर संभली भी लंगोट बांध कर "हल मिन मुबरिज़िन" कहते हुए मौलवी मुर्तज़ा की हमनवाई में मैदाने जंग में उतर पड़े।

भागोगे फेंक फेंक के तेग़ें लड़ाई से
लो मर्द हो तो अब न सरकना तराई से

अब सुनिये मौलवी मन्ज़ूर संभली की 'फ़तहे बरैली का दिलकश नज़ारा' सफ़हा 32।

> "हिफ़्ज़ुल ईमान की इस इबारत में भी ऐसा तश्बीह के लिए नहीं है बल्कि वह यहां बेदूने तश्बीह के इतना के माना में है।"

सफ़हा 40 की दूसरी इबारत-

> "हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत में भी जैसे कि मैं ब-दलाइले क़ाहिरा साबित कर चुका हूं वह (यानी लफ़्ज़ ऐसा) बग़ैर तश्बीह के इतना के माना में है।"

सफ़हा 48 की तीसरी इबारत

> "ऐसा तश्बीह के इलावा दूसरे मानों में भी मुस्तअ़मल होता है और हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत में वह बिला तश्बीह के इतना के माना में मुस्तअ़मल होता है।"

सफ़हा 34 की चौथी इबारत

> "हिफ़्ज़ुल ईमान की इस इबारत में भी 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं है।"

गोया मौलवी मन्ज़ूर व मौलवी मुर्तज़ा इस बात पर मुत्तफ़िक़ हैं कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं है बल्कि माना में इतना या इस क़दर के है। चुनान्चे सफ़हा 35 पर रक़मतराज़ हैं।

"अगर बिलफ़र्ज़ इस इबारत का वह मतलब हुआ जो मौलवी सरदार अहमद साहब बयान कर रहे हैं। जब तो हमारे नज़दीक भी मूजिबे कुफ़्र है।"

अब से तक़रीबन पचीस बरस पहले मौलवी मन्ज़ूर साहब व सुल्तानुल मुनाज़िरीन इमामुल मुदर्रिसीन हज़रत मौलाना सरदार अहमद साहब क़िबला के दर्मियान हिफ़्ज़ुल ईमान की इसी इबारत पर एक मुनाज़रा बरेली शरीफ़ में हुआ था जिसकी सदारत सय्यदी व मुर्शिदी उस्तादे मुहतरम मुजाहिदे मिल्लत हज़रत मौलाना अलहाज मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला बानी दारुल उलूम जामिया हबीबिया इलाहाबाद ने फ़रमाई थी। मौलाना सरदार अहमद साहब क़िबला का यह फ़रमाना था कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए है और मौलवी मन्ज़ूर अहमद साहब का कहना यह था कि लफ़्ज़ 'ऐसा' माना में इतना या इस क़दर के है। इसी का तज़्किरा करते हुए मौलवी मन्ज़ूर साहब ने यह कहा कि अगर इस इबारत का वह मतलब हुआ मौलवी सरदार अहमद साहब बयान कर रहे हैं जब तो हमारे नज़दीक भी मूजिबे कुफ़्र है।

अब से पहले यह बात गुज़र चुकी है कि मौलवी हुसैन अहमद साहब का यह कहना है कि लफ़्ज़ 'ऐसा' महज़ तश्बीह के लिए है। अब नाज़िरीन ही फ़ैसला फ़रमायें कि मौलवी मन्ज़ूर साहब के इस इक़रार के बाद मौलवी हुसैन अहमद साहब पर शरीअते इस्लामी का क्या हुक्म है ?

नाज़िरीन ज़रा वुसअत से काम लेकर यह ख़्याल फ़रमायें कि देवबन्दी चहार दीवारी में किस बुरी तरह तकफ़ीर बाज़ी का बाज़ार गरम है। यह तो हज़राते देवबन्द का एक पसन्दीदा व मरगूब तरीन मश्ग़ला है कि जब ज़रा सी फ़ुरसत मिली तकफ़ीर की मशीन गन चालू कर दिया और फिर न देखा आव न देखा ताव, ज़द पर जो भी आता गया ठोकते चले गये। जिस तरह बिच्छू डंक मारने में अपनी फ़ितरत से मजबूर है ऐसे ही उलमाए देवबन्द मुसलमानों को काफ़िर, मुशरिक और बिदअती बनाने में अपनी फ़ितरत व जिबिल्लत से मजबूर हैं उनकी मिसाल तो ऐसी ही है जैसे 'सपेरा' जिसके कांधे पर दो पेटारी होती है। एक में 'अजगर' और दूसरी में 'नागिन' ऐसे ही हज़राते देवबन्द के भी कांधे पर दो पेटारी होती है। एक में 'शिर्क का अजगर' और दूसरी में 'बिदअत की नागिन' और जिस तरह सपेरा ख़ुद तो

अजगर व नागिन से मानूस व बे ख़ौफ़ होता है कभी उसको गले का हार बनाता है और कभी वही नागिन उसकी कलाइयों में चूड़ी की तरह लिपट जाती है मगर देखने वालों का रोंगटा रोंगटा खड़ा हो जाता है। ऐसे ही उलमाए देवबन्द के लिए उनका ख़ुद साख़्ता शिर्क व बिदअत ओढ़ना बिछौना है। मगर ग़रीब मुसलमानों के जमघटे में यह शोबदा बाज़ी कि अजमेर गये तो शिर्क और महफ़िले मीलाद किया तो बिदअती। जैसा मौलवी क़ासिम नानौतवी कलियर शरीफ़ जाते वक़्त रुड़की ही से पैदल हो जाते थे और शाहजहानपुरी हज़रात बहराइच शरीफ़ के उर्स में हाज़िर होते हैं और गांधी जी के साथ मौलवी हिफ़्ज़ुर्रहमान साहब नाज़िमे जमीअतुल उलमा हिन्द ने ख़्वाजा क़ुतुब रहमतुल्लाह तआला अलैह की दरगाह शरीफ़ में क़व्वाली सुनी। उनके लिए यह सब जाइज़ है मगर मुसलमानों से यह बाज़ीगरी कि-

अंधेर नगरी चौपट राजा टके सेर भाजी टके सेर खाजा

के मुताबिक़ देवबन्द की मार्केट में शिर्क व बिदअत की क़ीमत टके सेर भी न रह गई।

यह सब अंग्रेज़ बहादुर की करिश्मा साज़ी है। बक़ौल मौलाना सय्यद अब्दुल हक़ साहब क़ादरी के कि-

भुस में आग लगा कर जमालो दूर खड़ी हैं

अपना तो नशेमन जल रहा है और अंग्रेज़ बहादुर सात समुन्दर पार से ताली बजा रहे हैं मगर आज तक उलमाए देवबन्द को होश न आया ?

अभी मौलवी मन्ज़ूर साहब, मौलवी मुर्तज़ा साहब और मौलवी हुसैन अहमद साहब के दर्मियान जंग हो रही थी कि अखाड़े के चौथे पहलवान मौलवी अब्दुश्शकूर लखनवी यह कहते हुए सामने आये-

ऐसे महल पे दोस्तो रख़्ना गरी है ख़ुद कुशी
तुम भी इसी जहाज़ में हम भी इसी जहाज़ में

बात ऐसी कहनी चाहिये कि 'सांप मर जाये और लाठी भी न टूटे' यह क्या तमाशा है कि एक शख़्स का इस्लाम साबित करने के लिए सब की बुनियादें खोखली किये देते हो भला बताओ तो सही इन तावीलात व तौजीहात की बिना पर हम में कौन मुसलमान रह गया ? अगर ऐसा तश्बीह के माना में लिया जाये तो मौलवी मुर्तज़ा और मौलवी मन्ज़ूर से रिश्तए हयात टूट जाये और अगर इतना या इस क़दर

के माना में लिया जाये तो मौलवी हुसैन अहमद काफ़िर हुए जाते हैं। लिहाज़ा मेरी राय मानो और तौजीह व तावील के चक्कर में न पड़ो। यह ऐसी मख़्दूश और उलझी हुई इबारत है कि जिस क़दर तावील के हेर फेर में उलझोगे उसी क़दर एतेराज़ात के दलदल में फंसे जाओगे। यह मुमकिन कि कांटे क़बाए गुल पहन कर गले का हार बन जायें। सोचो तो सही क्या यह हो सकता है कि आसमान के बिखरे हुए तारों की अन्जुमन में तारीकीए शब पर सपेदए सहर का धोका हो-

शबे दैजूर तारों से संवरती है अबस शैदा
बुरी सूरत किसी को कब भली मालूम होती है

यही हाल इस बेजान इबारत का है जो तौजीह व तावील के हसीन दोपट्टे में ज़ीबा ज़ेब नहीं बन सकती। तावील की हसीन चिलमन मुरझाये हुए चेहरे का रुखा फीकापन न छुपा सकेगी। यह वह ख़िज़ाँ रसीदा चमन है जिस पर तावीलात की मूसलाधार बारिश भी बहार न ला सकेगी। लिहाज़ा दीवाना न बनो, बद हवास होने से काम नहीं बनता, अक़्लो ख़िरद से काम लो।

लखनवी साहब ने अपनी पूरी लखनवियत से काम लेते हुए मैदाने जंग के थके मांदे सिपाहियों को मुख़ातब किया और उनकी साहिराना तर्ज़े ख़िताबत पर सब के सब जंगजू सिपाही हमा तन सवाल बन कर खड़े हो गये और बयक ज़बान होकर सब ने कहा कि मालूम होता है कि ख़ुदा ने हम लोगों के हक़ में फ़रिश्तए रहमत बना कर भेजा है। लिल्लाह अब देर न कीजिये। बताइये!! हां जल्द बताइये वह फ़रार की कौनसी राह है जिस से हमें छुटकारा मिल सके। यह सुनते ही ख़ारजी साहब इरशाद फ़रमाते हैं।

नुसरते आसमानी सफ़हा 27

> "कि जिन सिफ़त को हम मानते हैं उसको रज़ील चीज़ से तश्बीह देना यक़ीनन तौहीन है और रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ाते वाला में सिफ़ते इल्मे ग़ैब नहीं मानते और जो माने उसको मना करते हैं लिहाज़ा इल्मे ग़ैब की किसी शिक़ को रज़ील चीज़ में बयान करना हरगिज़ तौहीन नहीं हो सकती।"

देखा आपने कि गुरु घन्टाल कितनी कितनी दूर की कौड़ी लाये 'रहे बांस न बजे बांसुरी' यानी सब से आसान तरीक़ा यह है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि

वसल्लम के लिए इल्मे ग़ैब ही का इन्कार कर दिया जाये न तौहीन या इतना या इस क़दर का सवाल तो उस वक़्त होता है जब कि रसूले ख़ुदा के लिए इल्मे ग़ैब माना जाये हम ख़ुद मानते भी नहीं और मानने वालों को मना करते हैं कि ख़बरदार-ख़बरदार रसूले ख़ुदा के लिए इल्मे ग़ैब न मानना वरना हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत का हम जवाब न दे सकेंगे। यह बात मौलवी अब्दु शकूर साहब ने मोंगेर के मुनाज़रा में कही थी।

लखनवी साहब बात तो कह गये मगर अन्दरूने ख़ाना से वाक़िफ़ न थे इस लिए उनका ख़्वाब शर्मिन्दए ताबीर न हो सका। चुनान्चे बात ख़त्म होने के बजाए और बढ़ गई 'घर का भेदी लंका ढाये' के मुताबिक़ दरभंगी साहब इल्मे ग़ैबे रसूल के सुबूत में किताबें लेकर खड़े हो गये।

छिड़ा था बज़्म में कल तज़्किरा मिज़्गाने अबरू का
बढ़ी कुछ इस क़दर तेग़ों सनाँ तक बात जा पहुंची

चुनान्चे अब मौलवी अब्दुश्शकूर साहब पर मौलवी मुर्तज़ा हसन दरभंगी का पहला वार मुलाहज़ा फ़रमाइये-

तौज़ीहुल बयान अला हिफ़्ज़ुल ईमान स. 13

> "बयाने बाला से यह साबित हो गया कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जो इल्मे ग़ैब हासिल है न उस में गुफ़्तगू है और न यहां हो सकती है।"

इस इबारत में इल्मे ग़ैबे रसूल का इक़रार है।

अब सफ़हा 4 की इबारत सुनिये-

> "हिफ़्ज़ुल ईमान में इस अम्र को तस्लीम किया गया है कि सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इल्मे ग़ैब बा अताए इलाही हासिल है।"

ऐसे ही अश्शिहाबुस्साक़िब सफ़हा 114 पर मौलाना टांडवी लिखते हैं।

> "ग़रज़ कि लफ़्ज़ आलिमुलग़ैब के माना में मौलाना (थानवी) ने दो शिक़ें फ़रमाई है और एक शिक़ को सब में मौजूद मानते हैं यह नहीं कह रहे हैं कि जो इल्मे ग़ैब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हासिल था वह सब में मौजूद है बल्कि इस माना को सब में मौजूद मानते हैं।"

इसी तरह रूदादे मुनाज़रा बरैली के सफ़हा 80 पर मौलवी मन्जूर साहब संभली ने इक़रार किया।

> "तमाम कायनात यहां तक कि नबातात व जमादात को भी मुतलक़न बाज़ गुयूब का इल्म हासिल है और यही हिफ़ज़ुल ईमान की इबारत का पहला अहम जुज़ है।"

और सफ़हा 89 पर आँजनाब फ़रमाते हैं-

> "हिफ़ज़ुल ईमान की इबारत में तौहीन का शायबा भी नहीं और इसमें ज़ैद व अमर और सिबयान व मजानीन और हैवानात व बहाइम के लिए मुतलक़ बाज़ ग़ैब का इल्म तस्लीम किया गया है न कि वह इल्म जो वाक़ेअ् में सरवरे कायनात सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को हासिल है।"

नतीजाः- अब अखाड़े के तीन पहलवान मौलवी मुर्तज़ा, मौलवी हुसैन अहमद और मौलवी मन्ज़ूर एक तरफ़ हो गये और लखनवी साहब तन्हा पड़ गये। इस तरह लखनवी साहब की हसरत व आरज़ू पर ओस पड़ गई और अपना मुंह लेकर रह गये। गोया वह तीनों हज़रात इस अम्र के क़ाइल हुए कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इल्मे ग़ैब था और लखनवी साहब को इससे इन्कार रहा। लिहाज़ा थाना भवन की फ़ौज के दो टुकड़े हो गये। नफ़्से इल्मे ग़ैब के होने और न होने के इख़्तिलाफ़ पर लखनवी साहब एक तरफ़ और मलेट्री के तीन फ़ौजी अफ़सर एक तरफ़ और लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए है या इतना व इस क़दर के माना में है, इस इख़्तिलाफ़ की बुनियाद पर टांडवी साहब अकेले हैं। और मौलवी मुर्तज़ा व मौलवी मन्ज़ूर एक तरफ़।

अभी आपस में इख़्तिलाफ़ चल ही रहा था कि दरभंगी साहब ने संभली साहब से फ़रमाया, काश! मौलवी हुसैन अहमद सल्लमहू, हम दोनों की बात मान लिये होते कि 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं है बल्कि माना में इतना या इस क़दर के है तो हम लोग इस भंवर से निकल कर साहिल से हमकिनार हो गये होते। मगर [illegible] टांडवी सल्लमहू का कि उर्दू मुहावरात तक से बे ख़बर व ना आशना हैं [illegible] भी [illegible] न हो सका कि ज़बाने उर्दू में लफ़्ज़ 'ऐसा' के क्या माना हैं। [illegible] का कि टांडवी ने अपनी किताब अश्शिहाबुस्साक़िब सफ़हा 111 पर लिख दिया कि [illegible] में लफ़्ज़ 'ऐसा' तो कलिमा तश्बीह का है। काश! टांडवी [illegible] की किताब तौज़ीहुल बयान सफ़हा 13 की यह इबारत देख लिये [illegible]

> "इबारते हिफ़ज़ुल ईमान में ऐसा को तश्बीह के लिए लेना ग़लत है इस लिए कि इस सूरत में इबारते हिफ़ज़ुल ईमान में एक और कलाम मह.ज़ूफ़ मानना पड़ेगा बल्कि तश्बीह की सूरत में इबारते हिफ़ज़ुल ईमान का मतलब ही ख़ब्त हो जाएगा।"

इसी लिए सफ़हा 14 पर बादल की घन गरज से ज़्यादा बुलन्द आहंग होकर मैंने लिख दिया है कि-

> "जिस की अक़्ले सलीम में अब भी मतलब न आये और फिर भी यह कहे कि नहीं इस इबारत में सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सरीह गाली है या कम से कम यह इबारत तन्क़ीसे शाने वाला को मौहूम है तो चाहिये कि वह अपनी ख़ुश क़िस्मती पर रोये, कलाम का क़ुसूर नहीं उसकी अक़्ल की ख़ूबी है।"

यानी जो शख़्स यह कहे कि इस इबारत में लफ़्ज़ ऐसा तश्बीह के लिए है उसको अपनी अक़्ले सलीम पर मातम करना चाहिये। यह इबारत का क़ुसूर नहीं बल्कि उसका ज़ेहनी फ़ुतूर है। इस लिए सदर देवबन्द मौलवी हुसैन अहमद को अपनी ख़ुश फ़हमी पर रोना चाहिये। इख़्तेतामे गुफ़्तगू पर मौलाना दरभंगी ने मौलाना संभली से फ़रमाया। भला बताओ तो सही कि किस क़दर क़ानूनी मोशिगाफ़ी और ज़ेहनी काविश के बाद हिफ़ज़ुल ईमान की उलझी हुई इबारत का हम लोगों ने एक हल तलाश किया था मगर अज़ीज़ी हुसैने अहमद ने लड़कपन से काम लेते हुए एक नई शिक़ पैदा करके हमारी उलझनों में मज़ीद इज़ाफ़ा कर दिया।

सुलझ जाती है इक उलझन तो मुश्किल और बढ़ती है
किसी सूरत मुहब्बत की परेशानी नहीं जाती

अभी मौलवी मुर्तज़ा साहब यह फ़रमा ही रहे थे कि अपनी मसनदे सदारत पर मौलवी हुसैन अहमद साहब ने फ़रमाया "नास हो मौलाना मुर्तज़ा और मौलवी मन्ज़ूर का कि मैंने मौलाना थानवी के बचाव व फ़रार की एक राह निकाली थी कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए है, माना में इतना या इस क़दर के नहीं है मगर यह दोनों "दरभंगी और संभली" ख़म ठोक कर मेरे मुक़ाबिल आ गये कि तुम ग़लत कहते हो। लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं बल्कि माना में इतना या इस क़दर के है। ऐ काश यह दोनों मेरी बात तस्लीम कर लेते तो हिफ़ज़ुल ईमान की इबारत

एतेराज़ात के दलदल से निकल कर बिल्कुल बे गुबार व रौशन हो जाती। देखो तो सही कहां हम दूसरों से लड़ने गये थे मगर आपस ही में लड़ कर एक दूसरे का पैराहन चाक कर बैठे। एतेराज़ात का ख़त्म होना तो दर किनार न जाने एतेराज़ात के कितने शाख़साने फूट पड़े और सवालात के नये नये पहलु पैदा हो गये।"

अभी सदरे देवबन्द यह फ़रमा ही रहे थे कि किसी तालिबे इल्म ने दबी ज़बान से हैदराबाद के मुख़लिसीन व हामिईन के ख़त का ज़िक्र करते हुए अर्ज़ किया कि जब इस इबारत में इतने उलझावे हैं तो इस ख़त के पेश नज़र आप लोग उससे रुजूअ क्यों नहीं कर लेते।

यह सुनते ही सदरे देवबन्द की पेशानी पर पसीना आ गया। शर्म व ख़जालत से गर्दन झुक गई मगर यह कहते हुए बात आई गई कर दी कि "मियां! अब तो तीर तरकश से बाहर निकल चुका है और बात तश्त अज़ बाम हो चुकी है। अफ़सोस तो यह है कि बात किसी ग़ैर की नहीं बल्कि अपने ही उस्ताद भाई की है लिहाज़ा अब तो क़ियामत तक इस को निबाहना पड़ेगा और क्या तुम्हारा यह ख़्याल है कि हम और मौलाना थानवी अपनी कमज़ोरियों और ख़ामियों से बे ख़बर हैं, ऐसा नहीं है।"

यह राज़ो नियाज़े मुहब्बत हैं नासेह
न मैं बे ख़बर हूं न वह बे ख़बर हैं

हम दोनों हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत के सुक़्म व ख़राबी पर अच्छी तरह मुत्तलअ हैं।

उधर मौलाना टांडवी अपने तलबा में बैठकर मातम कर रहे थे कि इसी दर्मियान अखाड़े के चौथे खिलाड़ी मौलवी अब्दुश्शकूर साहब ने लखनऊ पाटा नाला की एक नशिस्त में इरशाद फ़रमाया है ज़रा देखो तो अपनों का भोलापन।

क्या इसलिए तक़्दीर ने चुनवाए थे तिनके
बन जाये नशेमन तो कोई आग लगा दे

हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर मुद्दतों सर पीटने व दीदा रेज़ी करने के बाद मैंने जवाब की एक उम्दा शकल पैदा की थी जिसमें इतना, इस क़दर और तश्बीह का कोई सवाल ही न था। साफ़ साफ़ कह देते कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इल्मे ग़ैब था ही नहीं। मगर न पुछिये इन तीनों ख़मौलवी मुर्तज़ा, मौलवी हुसैन अहमद, मौलवी मन्ज़ूर की बुक़राती का आलम कि सआदतमन्दी व दानाई से तस्लीम कर लेने के बजाए हमारे सामने सीना तान कर खड़े हो गये कि तुम ग़लत

और झूट कहते हो। और इस पर बचकाना व तिफ़्लाना हिमाक़त यह की कि अपनी ही किताबें उलट उलट कर मुझे दिखाने लगे कि मौलाना थानवी इल्मे ग़ैबे रसूल के क़ाइल थे ख़्याल तो फ़रमाइये कि मुझ से मुनाज़रा करने का वक़्त था ? ग़ैर ही क्या कम थे। मुनाज़रा के लिए "आजकल तो उन से ही नातिका तंग है" और कम से कम यह लोग इतना तो सोचते कि झूट सच से नहीं साबित किया जाता। झूट को झूट ही से साबित करना पड़ता है।

ऐ काश वह तीनों मेरी बात मान लेते तो सारा झगड़ा ख़त्म था मगर इन लोगों ने आपस की जंग से दूसरों के हाथ एक आहिनी तलवार दे दी जो सुबहे क़ियामत तक हमारी गर्दन पर खटाखट चलती रहेगी और न जाने हमारी आने वाली नस्ल हमारे मुतअल्लिक़ क्या राय क़ाइम करेगी ?

हाए अफ़सोस कि ग़ैरों के हाथ तो अपना आशियाना यूं ही भसम हो रहा था मगर अपने भी साथ न दे सके।

आग दी सय्याद ने जब आशियाने को मेरे
जिन पे तकिया था वही पत्ते हवा देने लगे

हालांकि जो बात मैंने कही थी कुछ अपनी फ़ितरत से नहीं कही थी। मौलाना रशीद अहमद भी कुछ ऐसा ही फ़रमा चुके हैं।

अभी है इख़्तिलाफ़े जामो मीना राज़ की हद तक
न जाने क्या हो गर पीरे मुग़ाँ तक बात जा पहुंची

अब सुनिये पीरे मुग़ाँ जनाब मौलवी रशीद अहमद गंगोही की कि जिन से अल्लाह तआला ने वादा कर लिया था कि झूट उनकी ज़बान से न निकलवाएगा "ख़्वाह वह ख़ुद बोलता रहे।"

फ़तावा रशीदिया जिल्द सोम स. 37

> "इल्मे ग़ैब ख़ास्सा हक़ तआला का है इस लफ़्ज़ को किसी तावील से दूसरे पर इतलाक़ करना ईहामे शिर्क से ख़ाली नहीं।"

फ़तावा रशीदिया जिल्द दोम स. 10।

> "यह अक़ीदा रखना कि आपको इल्मे ग़ैब था सरीह शिर्क है।"

अब से पहले यह बात मालूम हो चुकी है कि मौलाना थानवी, मौलाना मुर्तज़ा हसन, मौलाना टांडवी और मौलाना मन्ज़ूर संभली यह सब के सब इस बात के

काइल हैं कि ब-अताए इलाही रसूले ख़ुदा को इल्मे ग़ैब हासिल था।

अभी तक तो मौलाना थानवी के इस्लाम की ख़ैर मनाई जा रही थी और उनको मुसलमान साबित करने के लिए रेत की दीवार उठाई जा रही थी मगर इसी दर्मियान में ख़ानकाहे गंगोह से एटम बम और हाइडरोजन बम दोनों के धमाके की वहशतनाक आवाज़ आई कि इल्मे ग़ैब ख़ास्सए हक़ तआला है यहां तक कि किसी तावील से भी इसका इतलाक़ दूसरों पर दुरुस्त नहीं इसलिए रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए इल्मे ग़ैब मानना सरीह शिर्क है। एटमी आवाज़ के सुनते ही थानवी पुरसाओं के पांव तले की ज़मीन खिसक गई, औसान ख़ता कर गये और आलमे बदहवासी में एक दूसरे का मुंह तकने लगे। चेहरे पर हवाईयाँ उड़ने लगीं बग़लें झांकने लगे, मुंह उतर गया, तबीअत निढाल हो गई, उदास होकर आपस में कहने लगे अगर बरेली, बदायूं, मारेहरा और ख़ैराबाद वग़ैरह की आवाज़ होती तो हम कौन सी यह कहकर अपना पीछा छुड़ा लेते कि उन लोगों से हमारी पुरानी जंग है। जब से हमारी बाज़ कुफ़्री इबारतों पर उन लोगों ने हमें काफ़िर कहा उस दिन से हम उन्हें बिदअती कहते हैं। अगरचे अब से पहले हम भी उन्हीं बिदआत के मुरतकिब थे और उन मरासिम को बिदअते हसना समझ कर करते थे और यह 'सुन्नी' तो औलिया की क़ब्रों पर महज़ नियाज़ व फ़ातिहा के लिए जाते हैं लेकिन जब हमें उन बिदआत में ग़ुलू था तो नियाज़ व फ़ातिहा तो एक तरफ़ 'नानौता' के बुज़ुर्गों की क़ब्र की मिट्टी उखाड़ लाते थे यह था हमारी क़ब्र परस्ती का आलम और यह 'सुन्नी' तो अजमेर व कलियर में जूता पहन कर चलते हैं। मगर हमारे पीरे मुग़ां गंगोही साहब तो आस्तानए गंगोह के पाएख़ाना का एहतेराम करते थे और यह सुन्नी तो अपने पीरों और बुज़ुर्गों की महज़ दस्त बोसी व क़दम बोसी करते हैं लेकिन हमारी अक़ीदत केशी का यह आलम था कि मौलाना थानवी के पाँव धोकर पीने को नजाते उख़रवी का सबब समझते थे।

तज़्किरतुर्रशीद हिस्सा अव्वल स. 113

"मौलवी आशिक़ इलाही मेरठी देवबन्दी ने कहा कि वल्लाहिल अज़ीम मौलाना थानवी के पैर धोकर पीना नजाते उख़रवी का सबब है।"

लेकिन अब सुन्नियों की जलन और उनसे बुग़्ज़ व एनाद की बिना पर इन तमाम चीज़ों को हम बिदअते सय्येआ कहते हैं। अब क़ब्र से मिट्टी लाना तो दर किनार ख़्वाजा अजमेर के गुम्बद पर नजासत फेंकते हैं और औलियाए किराम की क़ब्र पर

जाने वालों को बिदअती और क़ब्र पुजवा कहते हैं।

हां! अगर सुन्नी हज़रात हमें काफ़िर कहना छोड़ दें तो हम उन्हें बिदअती कहना छोड़ दें जिस तरह अब से पहले उर्स, मीलाद, क़ियाम में हिस्सा लेते थे और उसको बाइसे सआदत जानते थे फिर इन तमाम मरासिम में हिस्सागीर हो जायें और यह तो हमारे बाप दादा से होता चला आया है। चुनान्चे हमारे रूहानी जद्दे आला हज़रत हाजी इमदादुल्लाह साहब मुहाजिरे मक्की तो हर साल महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुनअक़िद करते और खड़े होकर सलात व सलाम पढ़ते और उसमें लज़्ज़त महसूस करते जैसा कि फ़ैसला हफ़्त मसला में दर्ज है मगर इसको क्या कहिये।

नचा मारा है यकसर क्या अरब और क्या अजम सबको
ख़ुदा ग़ारत करे इस इख़्तिलाफ़े दीनो मज़हब को

जब से हम लोग इस इख़्तिलाफ़ में उलझे शबरात का हलवा, ईद की सेवईयें, मुहर्रम का खिचड़ा, ग्यारहवीं का पुलाव, मीलाद की शीरीनी सब हम पर हराम हो गई। हालांकि शबरात के एक दिन आगे पीछे से हलवा खाते हैं, साल के मुख़्तलिफ़ हिस्सों में सेवईयें खाते पीते हैं। मुहर्रम के इलावा खिचड़ा और खिचड़ी खाते हैं। हलवाई की दुकान पर रस गुल्ला और गुलाब जामुन दोनों खाते हैं। मगर इन तारीख़ों में अब खाते हुए शर्म आती है। चूंकि अब हम सुन्नियों की ज़िद में इस को बिदअत कह चुके हैं, बांह पकड़ने की लाज है। वरना हम भी जानते हैं कि यह न तो बिदअत है और न हराम अलबत्ता यह ज़रूरी है कि चन्द पैसों की बचत ज़रूर हो जाती है। मगर ख़ुदा ग़ारत करे 'फ़िल्मी दुनिया' को कि नियाज़ व फ़ातिहा को शिर्क व बिदअत कहकर जो पैसा बचा लेते हैं वह सिनेमा की नज़र हो जाता है। इससे अच्छा तो यही था कि अपने मां बाप की फ़ातिहा दिला देते। ख़ुदा जाने क्या हो गया है हमारे उलमाए देवबन्द को कि शिर्क व बिदअत पर तो ख़ूब ख़ूब लच्छेदार तक़रीरें करते हैं मगर कभी सिनेमा के ख़िलाफ़ नहीं बोलते। मालूम नहीं उन लोगों की तरफ़ से उन्हें कितनी रक़म मिल गई है।

अभी अंग्रेज़ी अख़बार दि मेसेज (The Message) के लिए बम्बई में एक लाख से ज़्यादा चन्दा हुआ था जिस में फ़िल्म एक्टरों ने भी काफ़ी हिस्सा लिया था। हो सकता है इन्हीं सब वुजूह ने ज़बान पर ताले लगा दिये हों। बहरहाल कुछ भी हो नियाज़ व फ़ातिहा से तो रुपये की बचत हो जाती है मगर सिनेमा लूट लेता है।

इस मक़ाम पर मुझे मौलाना ब्रह्मचारी रहमतुल्लाह अलैह की एक बात याद

आई। एक बार मौक़ा को वहाबियों और देवबन्दियों ने अपने जलसे में मदऊ किया और वहां जलसे के साथ एक नशिस्त मुशायरे की भी थी जिस की तरह यह थी-

मौलादो फातिहा का भी करना हराम है

अराकीने जलसा ने मौलाना को भी शिरकते मुशायरा पर मजबूर किया, चुनान्चे आपने इस पर गिरह लगाई जो सुनने से तअल्लुक़ रखती है।

कन्जूर मक्खी चूस वहाबी के माल पर
मौलादो फातिहा का भी करना हराम है

बात बहुत दूर आ गई! गुफ्तगू यह थी कि मौलाना थानवी, मौलाना मुर्तज़ा हसन दरभगी, मौलाना टाडवी और मौलाना मन्ज़ूर संभली इन लोगों ने इल्मे गैबे रसूल का इक़रार किया और लखनवी साहब ने जंग की जज़्बाती रविश में गंगोही साहब के दामन में पनाह लेते हुए यह ज़ाहिर कर दिया कि रसूले ख़ुदा के लिए इल्मे गैब मानना सरीह शिर्क है और जब इस पर भी यारान तरीक़त मुतमइन न हो सके तो लखनवी साहब ने इमामुल ताइफा मौलवी इस्माईल देहलवी की तक़वीयतुल ईमान पढ़ कर सुनानी शुरू कर दी, जो आख़िरी सिपर व ढाल थी।

तक़वीयतुल ईमान स. 23।

> "गैब का दरियाफ़्त करना अपने इख़्तियार में हो जब चाहे कर लीजिये यह अल्लाह साहब ही की शान है।"

गोया देवबन्दियों का ख़ुदा कोई जाहिल व कुन्दए नातराश है उसे उलूमे गैबिया बिलफ़ेअ़ल हासिल नहीं बल्कि उसमें क़ुव्वत है कि जब ज़रूरत आन पड़े तो ख़ज़ानए गैब को खोल कर हस्बे ज़रूरत मालूम कर ले और फिर उसको मुक़फ़्फ़ल करके कुन्जी अपने क़ब्ज़ा में लेकर अपनी पुरानी कुर्सी पर बैठ जाये जो उसके बैठने से चर चर बोलती है। यह है देवबन्दी मकतबए फ़िक्र में तौहीद का तसव्वुर। अलअयाज़ बिल्लाह मिन ज़ालिक।

ऐसे ही तक़वीयतुल ईमान स. 10 पर इमामुल वहाबिया वहियायना लिखते हैं-

> "फिर ख़्वाह यूं समझे कि यह बात उनको अपनी ज़ात से है या ख़्वाह अल्लाह के देने से गरज़ इस अक़ीदे से हर तरह शिर्क साबित होता है।"

गंगोही साहब और देहलवी साहब के नादिर शाही हुक्म ने थानवी साहब की सारी इज़्ज़त को ख़ाक में मिला दिया और यह सुनते ही मैदाने जंग के शहसवारों

में फूट पड़ गई। बिलआख़िर हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत एतेराज़ात के जिस निशाने पर थी वहीं की वहीं रह गई, बल्कि थाना भवन के नव आज़मूदा व ना तजर्बाकार सिपाहियों ने अपने तफ़व्वुक़ व बरतरी के इज़हार में सवालात व जवाबात का एक ख़त्म न होने वाला सिलसिला क़ाइम कर दिया और उनकी पूरी जिद्दो जहद 'कोह कन्दन व काह बर आवुर्दन' की हैसियत भी न पैदा कर सकी और आपसी पन्जा आज़माई और तकफ़ीर बाज़ी के यह थके मांदे सिपाही अपना अपना मोर्चा छोड़ कर थाना भवन का रुख़ किया।

वाज़ेह रहे कि दारुन्नदवा की मुजव्वज़ा स्कीम फेल हो चुकी है और बात ख़त्म होने के बजाए बाहमी इफ़्तेराक़ व इन्तेशार का बाइस बन गई और दूसरों से नबर्द आज़मा होना तो दर-किनार आपस की जंग में एक एक हड्डियां चटख़ गई! काफ़िरगरी का बाज़ार कुछ इस तरह गरम हुआ कि जैब व गरीबां की धज्जियां सलामत न रह सकीं। चुनान्चे इश्तेहारात और किताबों का बुक़चा सर पर लिए उफ़्ता व ख़िज़ां हांपते कांपते 'अन दाता' की बारगाह में हाज़िरी के लिए रवाना हुए।

थाना भवन पहुंचते ही मौलाना थानवी ने अपने जंगजू शिकस्त ख़ुर्दा सिपाहियों का पुर तपाक ख़ैर मक़दम किया। "गुर्ग बारां दीदा" के पेशे नज़र थानवी साहब ने हर एक को अपने सीने से लगाया और हर एक से फ़ातिहाना मुस्कुराहट के साथ इरशाद फ़रमाया कि मेरी जीत के लिए यही क्या कम है कि मैं इस मैदान में अकेला न रह गया। यह बात और है कि मुआख़ज़ा की लिस्ट में सरे फ़ेहरिस्त मेरा नाम होगा और हस्बे तरतीब उसी फ़ेहरिस्त में तुम सब का नाम होगा।

वरना हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर अब तक जो गोला बारी थी उसके निशाने पर तन्हा मेरी खोपड़ी थी, देखो मेरे सर पर एक बाल न रह गये। ख़ुदा का शुक्र है कि तुम लोगों ने हिफ़्ज़ुल ईमान की ताईद करके मुझको अकेला न छोड़ा और आइन्दा के लिए भी तुम से यही उम्मीद है कि तज़ल ज़ुल और तज़ब ज़ुब की ख़ारदार झाड़ियों में न उलझोगे बल्कि हर जगह मेरी ताईद व हिमायत में पेश पेश नज़र आओगे याद रखो आज तुम ने मेरा साथ दिया है कल क़ियामत में शातिमाने रसूल के लिए बारगाहे ख़ुदावन्दी से जो जगह मुतअ़य्यन की जाएगी उसमें उस वक़्त तक न जाऊँगा ता वक़्ते कि तुम सब को वहां पारसल न करा दूं।

थानवी साहब की मुन्दर्जा बाला सियासी गुफ़्तगू से सिपाहियों की जान में जान आई वरना उन गरीबों का इस अन्देशे से ख़ून ख़ुश्क हुआ जा रहा था कि कहीं

ख़ानकाह के शिकन्जा में कस दिये गए तो ख़ुदा ही हाफ़िज़।

अब मजलिस बरख़ास्त होने वाली थी कि मौलवी अब्दुश शकूर साहब लखनवी ने इशारे की ज़बान में दरियाफ़्त फ़रमाया 'आली जाह' हम सुन्नियों के मुक़ाबिल तो इस इबारत पर फ़ने सिपहगरी के ऐसे ऐसे दाँव दिखलायेंगे कि उन्हें छटी का दूध याद आ जाएगा और जब अपनी हार देखेंगे तो सलामत रहे हमारा 'थाना भवन' कि हुकूमत के जितने थाने हैं वह सब इसी हेड क्वार्टर के ब्रांच हैं। हम आलीजाह के इरशादात व फ़रमुदात के बमूजिब 'या रसूलल्लाह' का नारा तो बुलन्द नहीं कर सकते वरना शिर्क हमारा गला घोंट देगा। अलबत्ता जब अपनी शिकस्त का यक़ीने कामिल हो जाएगा तो 'या पुलिस अलमदद' का नारा लगाते हुए थानों में पहुंच जायेंगे और नज़्मे अम्न, बलवा, और फ़साद के नाम पर मुनाज़रा की रोक थाम करके सारी कार्रवाई ख़त्म करा देंगे। मगर आलीजाह यह तो फ़रमायें कि जो फूट आपस में पड़ गई है उसका क्या इलाज है।

थानवी साहब, यह सुनते ही अपनी उस मसनद पर बैठ गये जिसके ऊपर एक कतबा आवेज़ां था और ब-ख़त्ते जली यह तहरीर था। नशिस्तगाह जामेउल मुजद्दिदीन, हुज्जतुल्लाह फ़िलअर्ज़, अकमलुन्नास और बिरादर सी.आई.डी. वग़ैरह वग़ैरह और इन्तेहाई तमकनत व नख़वत से फ़रमाया कि पहले तुम लोग अपने इख़्तिलाफ़ात बयान करो तब मैं अपनी राय दे सकता हूं। यह सुनते ही लखनवी साहब ने अर्ज़ किया।

"आली जाह! मेरा कहना यह था कि मौलाना थानवी साहब इल्मे ग़ैबे रसूल के क़ाइल नहीं।" न पूछिये इतनी सी बात पर मौलाना मुर्तज़ा, मौलाना टांडवी, मौलवी मन्ज़ूर यह सब के सब बुरी तरह मुझ पर बरस पड़े। हालांकि मैं ने अपने इस दावे की दलील में फ़तावा रशीदिया और तक़वीयतुल ईमान से भी हवाला पेश किया मगर इन लोगों ने गोया न मानने की क़सम खा ली है। अब आलीजाह इरशाद फ़रमायें कि इस बारे में क्या हुक्मे नातिक़ है जिस से सुकूने क़ल्ब हासिल हो?

थानवी साहब। देखो तुमने ऐसी बात छेड़ दी कि न कहने वाली बात भी कहनी पड़ गई-

छुपा रखा था जिसको मुद्दतों से दिल में ऐ अनवर
हज़ार अफ़सोस वह शरहो बयाँ तक बात जा पहुंची

क्या तुम्हें नहीं मालूम कि मौलाना रशीद अहमद गंगोही वही हैं जिनके हसब

व नसब पर मौलाना इस्माईल देहलवी ने बड़ा संगीन हमला किया है। चुनान्चे तक़वीयतुल ईमान स. 5 व 6 की इबारत सुनो।

> "कोई नाम रखता है अली बख़्श, पीर बख़्श, गुलाम मुहीयुद्दीन गुलाम मुईनुद्दीन, यह सब झूटे मुसलमान सच शिर्क में गिरिफ़्तार हैं।"

फिर तक़वीयतुल ईमान स. 64 पर है।

> "कोई नाम रखता है नबी बख़्श, शीतला बख़्श, गंगा बख़्श सो यह आदमी मरदूद हो जाते हैं।"

बक़ौल मौलाना गंगोही जिस तक़वीयतुल ईमान का पढ़ना और रखना ऐने इस्लाम है और उसके तमाम दलाइल किताबुल्लाह और अहादीस से माख़ूज़ हैं, जब ऐसी किताब का क़ानून तुम ने सुन लिया तो अब मौलाना रशीद अहमद गंगोही का पिदरी नसब नामा सुनो।

तज़्किरतुर्रशीद स. 13

"रशीद अहमद इब्ने हिदायत अहमद बिन पीर बख़्श बिन गुलाम हुसैन बिन गुलाम अली और मादरी नसब नामा देखो।

रशीद अहमद बिन करीमुन्निसा बिन्ते फ़रीद बख़्श बिन क़ादरी बख़्श बिन मुहम्मद सालेह बिन गुलाम मुहम्मद।"

अब तुम लोग ख़ुद ही फ़ैसला करो कि पीर बख़्श का पोता और फ़रीद बख़्श का नवासा, तक़वीयतुल ईमान की रौशनी में क्या हुआ। बात चूंकि अपने घर की है वरना मैं ख़ुद ही सराहतन कह देता लेकिन तुम लोगों की अक़्ल व दानिश पर मेरा भरोसा है कि मेरा मक़सदे गुफ़्तगू समझ लिया होगा? और ज़हमत तो यह आन पड़ी है कि तक़वीयतुल ईमान को ऐने इस्लाम कह कर मौलाना गंगोही ने ख़ुद ही अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारी है वरना यह मुमकिन था कि हम जवाब की कोई शक्ल पैदा करते और हां क्या तुम लोगों ने बहिश्ती ज़ेवर नहीं देखा, मैंने भी तो यही लिखा है जो तक़वीयतुल ईमान में मौलाना इस्माईल ने तहरीर फ़रमाया है "मालूम होता है कि तुम लोग किताबों का मुताला नहीं करते" इस लिए मेरी आख़िरी नसीहत है कि हवाला में मौलाना गंगोही का नाम पेश करते वक़्त बड़ी एहतियात से काम लेना अगर यह बातें छप न गई होतीं तो हम उन्हें हज़म कर लेते मगर अब तो उनकी इशाअत हो चुकी है। अपने और ग़ैर सभी मुत्तलअ् हैं इस लिए

अब यह इबारतें हमारे हक़ में ऐसी ही हैं जैसे "साँप के मुंह में छछूंदर" जो उगलते न बने न निगलते बने।

अभी सिलसिलए कलाम जारी था कि लखनवी साहब फिर बोल उठे-

आलीजाह! हमने माना कि गंगोही साहब ऐसे थे या वैसे थे मगर हज़रत मौलाना इस्माईल साहब भी तो फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए इल्मे ग़ैब मानना सरीह शिर्क है कम से कम उनकी बात तो तस्लीम की जा सकती है।

थानवी साहब ने फ़रमाया पागल न बनो, होश व ख़िरद से काम लो और अपनी किताबों का मुताला करो क्या तुम्हें यह नहीं मालुम कि मौलाना गंगोही पर तो सिर्फ़ हमारी और मौलाना इस्माईल की तलवार चली है मगर मौलाना इस्माईल को तो तमाम ही उलमाए देवबन्द ने जाहिल, मुलहिद, ज़िन्दीक़, दीन से बे बहरा और न जाने क्या क्या लिखा है।

यह सुनते ही पूरे मजमा पर सन्नाटा छा गया और थानवी साहब ने माथे का पसीना पोंछते हुए फ़रमाया कि अगर तुम्हें मेरी बातों पर एतेबार व भरोसा न हो तो हवाला सुनो।

ईज़ाहुल हक़ मुरत्तबा मौलवी इस्माईल देहलवी स. 35 व 36।

> "तन्ज़ीहे ऊ मकामी अज़ ज़मानो मकान व जेहतें इस्बात रूयत बिला जेहत व मुहाज़रात--- हमा अज़ क़बीले बिदआते हक़ीक़त अस्त अगर साहबे आँ एतेक़ादाते मज़कूरा रा अज़ जिन्से अक़ाइदे दीनिया मी शुमारद---"

सवालः- मौलवी इस्माईल देहलवी की मज़कूरा वाला इबारत पर इस्तिफ़सार किया गया। यानी क्या इरशाद है उलमाए दीन का उस शख़्स के बारे में जो कहे कि अल्लाह तआला को ज़मानो मकान से पाक और उसका दीदार बे जेहत हक़ मानना बिदअत है और यह क़ौल कैसा है- बय्यिनू व तुवज्जिरू॰

जवाबः- यह शख़्स अक़ाइदे अहले सुन्नत से जाहिल और बे बहरा और वह म क़ूला कुफ़्र है। वल्लाहु अअ्लम॰

बन्दए रशीद अहमद गंगोही (निशाने मुहर)

नोटः- यानी मौलाना रशीद अहमद गंगोही ने मौलवी इस्माईल देहलवी को

जाहिल और बे बहरा और उनके क़ौल को कुफ़्र क़रार दिया।

अब इस जवाब पर दूसरे अकाबिरे उलमाए देवबन्द की तस्दीक़ व दस्तख़त मुलाहज़ा कीजिये।

लाओ तो क़त्ल नामा ज़रा मैं भी देख लूं
किस किस की मुहर है सरे महज़र लगी हुई

सही जवाबः- अशरफ़ अली अफ़ी अन्हु

"हक़ तआला को ज़मान व मकान से मुनज़्ज़ा मानना अक़ीदए अहले ईमान है और इसका इन्कार इलहाद व ज़िन्दिक़ा है और दीदारे हक़ तआला आख़िरत में बे कैफ़ व बे जेहत होगा। मुख़ालिफ़ इस अक़ीदा का बद दीन व मुलहिद है।"

कतबहु अज़ीज़ुर्रहमान अफ़ी अन्हु
(निशाने मुहर)
मुफ़्ती मदरसा देवबन्द

सही जवाबः- बन्दा महमूद हसन अफ़ी अन्हु, मुदर्रिस अव्वल देवबन्द "वह हरगिज़ अहले सुन्नत नहीं।"हर्ररहुलमिस्कीनु अब्दुल हक़

सही जवाबः- महमूद हसन मुदर्रिसे दोम मदरसा शाही मुरादाबाद।

"ऐसे अक़ीदे को बिदअत कहने वाला दीन से नावाक़िफ़ है।"

अबुल वफ़ा सनाउल्लाह
(निशाने मुहर)

ख़ुद आप अपनी आग में जलने का लुत्फ़ है
अहले तपिश को आतिशे सपना न चाहिये

थानवी साहब। अब तुम लोगों ने देख लिया कि मौलवी इस्माईल के जाहिल, ज़िन्दीक़, मुलहिद वग़ैरह होने पर तमाम ही उलमाए देवबन्द का इत्तेफ़ाक़ है। लिहाज़ा हवाला में मौलाना इस्माईल का नाम पेश करते हुए बड़ी एहतियात बरतना। इस ग़रीब को अपनों ही ने आग की दहकती हुई भट्टी में झोंक कर ख़ाकिस्तर कर दिया। यही सोच कर तो अग़ियार ने शाह साहब की तरफ़ ख़ुसूसी तवज्जोह नहीं की कि वह आप अपनी मौत मर रहे हैं।

लखनवी साहब। आली जाह! क्या यह बात आप लोगों को मालूम न थी कि यह इबारत मौलाना इस्माईल की है, आख़िरश यह कैसा ज़ुल्म है उनके साथ।

थानवी साहब। तुमने भी एक-कही अगर यही मालूम होता तो ऐसा फ़तवा

ही क्यों देते। "अरे यह फ़तवा है या गुठ्ठल छुरी से उन्हें ज़बह करना है।" मैंने मौलाना गंगोही के फ़तवे पर एतेमाद करते हुए तस्दीक़ कर दी थी, मुझे क्या मालूम था कि मौलाना गंगोही मौलाना इस्माईल की किताबों से इस क़दर बे ख़बर होंगे। चुनान्चे ख़ुद उन्होंने बाद में इज़हारे अफ़सोस किया। देखो फ़तावा रशीदिया हिस्सा दोम सफ़हा 160

"ईज़ाहुल हक़ बन्दा को याद नहीं क्या मज़मून और किस की तालीफ़ है।"

नोट:- क़त्ल के बाद अब पशीमानी से क्या फ़ाइदा ?

शेअ्र:- वह आये हैं पशीमाँ लाश पर अब
तुझे ऐ ज़िन्दगी लाऊँ कहां से

नाज़िरीन ने उलमाए देवबन्द के फ़तावा की हक़ीक़त देख ली कि फ़तवा ला इल्मी में दिया गया है। अगर यह बात मालूम होती कि यह मौलाना इस्माईल की इबारत है तो ज़िन्दीक़ व मुलहिद व जाहिल लिखते हुए हाथ कांप जाता और क़लम टूट जाता और अगर आपको मेरी राय से इत्तेफ़ाक़ न हो तो "हाथ कंगन को आरसी क्या है।" आज ही इस इबारत पर उलमाए देवबन्द से इस्तिफ़्सार कीजिये और देखिये कि इस इबारत पर जाहिल व मुलहिद कहने के बजाए इसकी कितनी हसीन तावील करते हैं जैसा कि अभी मौलवी महदी हसन मुफ़्तीए देवबन्द ने मौलाना क़ासिम नानौतवी की एक इबारत पर ला इल्मी के मातहत कुफ़्र का फ़तवा दिया है और जमाअ़ते इस्लामी वालों ने उछालना शुरू किया और यह बात इल्म में आई कि यह इबारत किसी और की नहीं बल्कि ख़ुद बानीए दारुल उलूम देवबन्द की है तो हाथ के तोते उड़ गये। और तरह तरह की तावीलात से इस इबारत पर मुलम्मअ् साज़ी करने लगे जिसकी तफ़सील मैं अगले सफ़हात में पेश करूंगा।

मुख़्तसर यह कि अभी थानवी साहब, देहलवी साहब पर उलमाए देवबन्द के इस फ़तवा का ख़ुलासा दे रहे थे जिसमें उन्हें ज़िन्दीक़, जाहिल और मुलहिद वग़ैरह का फ़तवा दिया गया है कि इसी दर्मियान में मौलाना मन्ज़ूर संभली बोल उठे।

संभली साहब- आली जाह! हमने तो यह भी सुना है कि शाह इस्माईल ने अपनी लग़ज़िशों से तौबा कर लिया था।

थानवी साहब- बरख़ुरदार अभी तुम तिफ़्ले मकतब हो। क्या तुम ने फ़तावा रशीदिया नहीं देखी कि यह अहले बिदअ़त का इफ़्तेरा है और कम से कम यह तो

ख़्याल रखते कि हम लोग अपनी लग़ज़िशों और ग़लतियों से रुजूअ् नहीं करते। अगर हम में इतना ही एहसासे कमतरी होता या हम इस क़दर बुज़दिल व कमज़ोर होते तो अब तक हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत वापस ले लेते, ग़ालिबन तुम शैख़ नज्दी की तारीख़ भूल गये, देखो वह रौंदए दरगाह कर दिया गया मगर मुंह की निकली हुई बात वापस न ली। अपने अस्लाफ़ व अकाबिर की तारीख़ हमेशा याद रखनी चाहिये, ज़रा सोचो तो सही हर चन्द हुक्मे ख़ुदावन्दी हुआ मगर इस अ़लमबरदारे तौहीद की ग़ैरत ने गवारा न किया कि यह सरे नियाज़ कहीं और झुक जाये और बराबर वह यही कहता रहा कि मुझे तुझ से काम न कि आदम और नूरे मुहम्मद से सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम।

न ग़रज़ किसी से न वास्ता मुझे काम अपने ही काम से
तेरे ज़िक्र से तेरे फ़िक्र से तेरी याद से तेरे नाम से

हमें नंगे अस्लाफ़ नहीं बल्कि फ़ख़्रे अस्लाफ़ बनना चाहिये जब हमारे सामने एक सच्चे पक्के कट्टर मुवह्हिद की पुरानी तारीख़ मौजूद है तो हम उलमाए मुवह्हिदीन को इसी को मशअ़ले राह बनाना चाहिये। चुनान्चे मैं तुम्हें यक़ीन दिलाता हूं कि मौलाना इस्माईल ने तौबा नहीं की बल्कि यह उन पर इफ़्तेरा है। देखो फ़तावा रशीदिया हिस्सा अव्वल सफ़हा 62।

> "और तौबा करना उनका (यानी मौलवी इस्माईल देहलवी का) बाज़ मसाइल से महज़ इफ़्तेराए अहले बिदअ़त है।"

अभी गुफ़्तगू हो रही थी कि मौलाना टांडवी ने अ़र्ज़ किया-

मौलाना टांडवी- आलीजाह! आपने लखनवी को तो मुतमइन कर दिया लेकिन हमारे और दरभंगी साहब और संभली साहब के दर्मियान जो इख़्तिलाफ़ पड़ गया है उसका क्या हल है ?

थानवी साहब- वह कैसा इख़्तिलाफ़ ?

टांडवी साहब- मेरा यह कहना है कि हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत में लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए और दरभंगी साहब व संभली साहब का कहना यह है कि लफ़्ज़ 'ऐसा' इतना या इस क़दर के माना में है।

यह सुन कर थानवी साहब ज़रा संभल कर बैठ गये और ज़बाने हाल से किसी पंडित जी की एक दिलचस्प कहानी सुनाई। फ़रमाया कि-

एक पन्डित जी से किसी ने अपनी हामिला बीवी के लिए दरियाफ़्त किया कि गुरू जी हमारी बीवी को लड़का होगा या लड़की ?

पन्डित जी ने ज़ाइचा व पतरा देख कर उस्तादी दाँव इस्तेमाल करते हुए जवाब दिया "बेटी न बेटा।"

साइल के रुख़सत होने के बाद पन्डित जी के चेला ने दरियाफ़्त किया कि गुरू जी आपने ऐसा क्यों फ़रमाया ? हो सकता है ईश्वर की दया हो जाये और भगवान अपने कृपा से उसकी कोख भर दें।

यह सुनकर पन्डित जी ने फ़रमाया- "बेटा" जाए उस्ताद ख़ाली अस्त, इसको तुम क्या जानो अभी कुछ दिनों और मेरे चरणों में रह कर विद्या हासिल करो तब कहीं यह भेद तुम्हारी ज्ञान में आ सकेंगे।

अच्छा तुम मुझ से क़रीब आओ तो मैं तुम्हें बताऊँ। देखो अगर उसको बेटी हो गई तो उसको इस तरह लिखा पढ़ा जाएगा।

बेटी.... न बेटा यानी 'न' बेटा से मुतअ़ल्लिक़ होगा और अगर बेटा हुआ तो इस तरह लिखा पढ़ा जाएगा।

बेटी न--बेटा यानी 'न' बेटी से मुतअ़ल्लिक़ हो जाएगा और अगर कुछ न होतो बात वाज़ेह है। बेटी न बेटा।

यह वाक़िआ सुना कर थानवी साहब ने फ़रमाया- इसलिए मुनासिब यह है कि हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत में लफ़्ज़ 'ऐसा' गोल कर जाओ। जिस मुनाज़रा में तश्बीह के माना लेने से छुटकारा मिल जाये वहां तश्बीह के माना लेना और जिस मुनाज़रा में इतना या इस क़दर के माना में जान बच जाये वहां इतना के माना में ले लेना और जहा किसी भी माना के लेने में रिहाई न मिल सके तो कभी तश्बीह के माना लेना और कभी इतना के माना में और जब इससे भी नजात न मिले तो 'या पुलिस अलमदद' का सहारा तो काफ़ी है आख़िरश थाना भवन का हेड क्वार्टर किस दिन काम आएगा ? लिहाज़ा मैं तुम तीनों की तौज़ीह व तशरीह से मुत्तफ़िक़ हूं अब बात आगे न बढ़ाओ जो कुछ हो गया यही क्या कम है ?

साक़ी का एहतेराम भी लाज़िम है ऐ सबा
हर हर क़दम पे लग़ज़िशे बेजा न कीजिये

यह कह कर थानवी साहब ने इस अफ़साने को यूं ही नातमाम व अधूरा छोड़

दिया जिस पर रहती दुनिया तक हाशिया आराई होती रहेगी। यह सुनकर थाना भवन के थके मांदे सूरमा व बहादुर अपने अपने घर को लौटे। अभी कुछ दूर चले थे कि संभली साहब ने 'बिगुल' बजा दिया जिस पर सब के कान खड़े हो गये और-

संभली साहब ने बड़ी मतानत से अर्ज़ किया "हुज़ूर वाला! अभी तक इस गुफ़्तगू का यह गोशा मेरी समझ में न आ सका कि हम इस बात के क़ाइल हैं कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तश्बीह के लिए नहीं है बल्कि माना में इतना या इस क़दर के है। अगर तश्बीह लिया जाये तो हम भी कहते हैं कि इसमें रसूले कायनात सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तौहीन है, जो मूजिबे कुफ़्र है। और मौलाना टांडवी का इसरार यह है कि लफ़्ज़ 'ऐसा' तो कलिमए तश्बीह है और इस इबारत में भी त बीह के लिए मुतअ़य्यन है। अगर इतना या इस क़दर के माना में लिया जाये तो टांडवी साहब की नज़र में एहानते रसूल होती है जो मूजिबे कुफ़्र है। लिहाज़ा हमारी तावील की बिना पर मौलाना टांडवी पर कुफ़्र आइद होता है और मौलाना टांडवी की तावील की बिना पर हम दोनों काफ़िर हो जाते हैं इसलिए अगर इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरैलवी और उनके दूसरे हम ख़्याल व हम-अक़ीदा उलमाए अहले सुन्नत हम लोगों की तकफ़ीर करते हैं तो वह लोग अपने फ़तवे में हक़ बजानिब है और सच तो यह है कि उन लोगों ने अपनी तरफ़ से कोई बात नहीं कही। नाहक़ हम आये दिन उन से उलझते रहते हैं।"

यह सुन कर मौलाना मुर्तज़ा हसन दरभंगी ने इरशाद फ़रमाया-

साहिल को देख देख के यूं मुतमइन न हो
कितने सफ़ीने डूबे हैं साहिल के पास ही

दरभंगी साहब- "क्या तुम्हें नहीं मालूम अब से पहले मैं अपनी किताब अशद्दुल अ़ज़ाब में इस बहस की वज़ाहत कर चुका हूं, मालूम होता है तुम्हारा मुताला बहुत कमज़ोर है। देखो अशद्दुल अ़ज़ाब स. 13।"

"अगर ख़ाँ साहब (यानी इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िल बरैलवी रज़ियल्लाहु अन्हु) के नजदीक बाज़ उलमाए देवबन्द वाक़ई ऐसे ही थे जैसा कि उन्होंने समझा तो ख़ानसाहब (इमाम अहमद रज़ा) पर उन उलमाए देवबन्द की तकफ़ीर फ़र्ज़ थी अगर वह उनको काफ़िर न कहते तो वह ख़ुद काफ़िर हो जाते, जैसे उलमाए देवबन्द ने जब मिर्ज़ा साहब

> (ग़ुलाम अहमद क़ादियानी) के अक़ाइदे कुफ़रीयह मालूम कर लिये और वह क़तअन साबित हो गये तो अब उलमाए इस्लाम पर मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ाइयों को काफ़िर व मुरतद कहना फ़र्ज़ हो गया अगर वह मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ाइयों को काफ़िर न कहें तो वह ख़ुद काफ़िर हो जायेंगे जो काफ़िर को काफ़िर न कहे वह ख़ुद काफ़िर है।"

नोट:- मुजरिम उनको समझा था क़ुसूर अपना निकल आया

हक़ तो यह है कि रसूले करीम अलैहिस्सलातु वत्तस्लीम का मुंह बोलता मोअ्जिज़ा है जिस पर तमाम ही उलमाए देवबन्द सर बगरीबां व हैरान हैं, मौलाना मुर्तज़ा हसन देवबन्दी की मुन्दर्जा बाला इबारत से आज के झगड़ालू कट हुज्जत देवबन्दियों को सबक़ लेना चाहिये।

(1) मसलन आज के चन्द नादान देवबन्दी बड़े भोले भाले बन कर यह कहते हैं कि "काफ़िर को भी काफ़िर न कहना चाहिये।" मगर उनके पेशवा मौलवी मुर्तज़ा हसन साहब फ़रमाते हैं "जो काफ़िर को काफ़िर न कहे वह ख़ुद काफ़िर है।"

(2) ऐसे ही बाज़ नाख़्वांदा व बाज़ पढ़े लिखे देवबन्दी यह कहते हैं कि मौलाना थानवी का मुआमला उनके साथ है न कि हमारे साथ। मगर मौलवी मुर्तज़ा हसन देवबन्दी फ़रमाते हैं कि उलमाए देवबन्द पर सिर्फ़ मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद की तकफ़ीर फ़र्ज़ न थी बल्कि उनके मुत्तबेईन मिर्ज़ाईयों की तकफ़ीर भी फ़र्ज़ थी। चुनान्चे उलमाए देवबन्द ने मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ाइयों दोनों को काफ़िर व मुरतद कहा। ऐसे ही थानवी साहब और थानवी साहब के मुत्तबेईन दोनों का एक ही हुक्म होगा।

(3) ऐसे ही बाज़ देवबन्दी बड़े सीधे सादे बन कर यह कहते हैं कि देखो इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरेलवी की कितनी ज़्यादती है कि उन्होंने बाज़ अकाबिर उलमाए देवबन्द को काफ़िर कह दिया मगर मौलवी मुर्तज़ा हसन देवबन्दी फ़रमाते हैं कि अगर मौलाना अहमद रज़ा ख़ान साहब उलमाए देवबन्द की कुफ़रीयात पर मुत्तलअ् होने के बाद हज़राते देवबन्द की तकफ़ीर न करते तो वह ख़ुद काफ़िर हो जाते। जैसा कि उलमाए देवबन्द मिर्ज़ा साहब के कुफ़्र पर मुत्तलअ् होने के बाद अगर उनकी तकफ़ीर न करते तो वह ख़ुद काफ़िर हो जाते। लिहाज़ा यह मुआमला ऐसे ही है जैसा कि उलमाए देवबन्द ने मिर्ज़ा साहब और मिर्ज़ाइयों की तकफ़ीर की।

आप देखें तो सही रब्ते मुहब्बत क्या है
अपना अफ़साना मिला कर मेरे अफ़साने से

काश आज के देवबन्दी उलमा अपने मुक़्तदा व पेशवा जनाब मौलवी मुर्तज़ा हसन दरभंगी साबिक़ मुदर्रिस व नाज़िम शोबाए तबलीग़ दारुल उलूम देवबन्द जैसी शख़्सियत के मुन्दर्जा बाला उसूलों पर ग़ौर व फ़िक्र करते और आस्तीनें उठा कर लड़ने के बजाए नेक नीयती से अपने ईमान व आक़िबत की ख़ैर मनाते जिसमें उनकी भी फ़लाह थी और करोड़ों मुसलमान उनके शर व फ़साद से महफ़ूज़ हो जाते।"

मुख़्तसर यह कि मौलाना मुर्तज़ा हसन दरभंगी की गुफ़्तगू सुन कर मौलवी मन्ज़ूर साहब यह कह कर ख़ामोश हो गये कि हमारी मिसाल तो ऐसी ही है कि "दूसरों की आंख में तिनका देखने वाले को अपनी आँख की शहतीर नज़र नहीं आती" हम अब तक तो यह समझते थे कि उलमाए अहले सुन्नत ने हमारे साथ बड़ी ज़्यादती बरती है मगर हक़ीक़त आश्कारा हो गई कि हम अपने किये की सज़ा भुगत रहे हैं जिसका कोई इलाज नहीं मगर हुज़ूर वाला यह तो फ़रमायें कि जब हमारी पोज़ीशन इतनी कमज़ोर है तो हम किस बल बूते पर उलमाए अहले सुन्नत से मुनाज़रा करेंगे।

सरे मन्ज़िल पहुंच कर पस्त हिम्मत होती जाती है

दरभंगी साहब ने फ़रमाया। बात तो तुम सच कहते हो मगर देखो अपनी जमाअत में नाक ऊँची करके चलना है और इमामुल मुनाज़िरीन, सुल्तानुल मुनाज़िरीन वग़ैरह का ख़िताब लेना है तो हिम्मत करके दो एक मुनाज़रा कर लेना अपने रूदाद की इशाअत तो अपने हाथ रहेगी, जिस तरह चाहना नमक मिर्च लगा कर उसकी इशाअत करना, सच को झूट और झूट को सच अपनी हार को फ़तहे मुबीन और दूसरों की जीत को शिकस्ते फ़ाश लिखते हुए कौन तुम्हारी कलाई थाम लेगा? ख़ूब ख़ूब डींगे मारना और ऐसा भी हो सकता है कि मुनाज़रा से पहले ही रूदाद छपा लेना दूसरे हलक़ों में मुनाज़रा से पहले ही तक़सीम करा देना और जिस जगह हो वहां बादे मुनाज़रा उसको तक़सीम करना।

चुनान्चे जमशेदपुर के मुनाज़रा में जो फ़ाज़िले गिरामी मौलाना अरशद साहब मुफ़्तीए जमशेदपुर, मौलवी अब्दुल लतीफ़ आज़मी उस्ताद मौलवी मन्ज़ूर नोमानी से इसी हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर हुआ उसकी फ़तहे मुबीन का पोस्टर मुनाज़रा से दो दिन पहले कटक और मऊनाथ भंजन में तक़सीम हो चुका। मुनाज़रा से पहले

अपनी जीत का पोस्टर शाया करते वक़्त ऐसे सफ़ेद झूट पर न तो उन्हें क़ुरआन याद आया होगा और न ही हदीस, इनसे तो महज़ मौलाद व क़ियाम और उर्स व फ़ातिहा के सुबूत में काम लिया जाता है, हालांकि जिस मुनाज़रा की फ़तहे मुबीन का इ श्तेहार शाया किया गया उसमें उन्हें ऐसी मुंह की खानी पड़ी कि आज तक मौलवी अब्दुल लतीफ़ बौखला कर 'खिसयानी बिल्ली खम्बा नोचे' के मुताबिक़ आयें, बायें, शायें हांकने लगे, फिर तो ऐसी बे पर की उड़ाई जिस पर तमाम देवबन्दियों की शर्म व नदामत से गर्दन झुक गई। इसी इबारत पर बरैली शरीफ़ का मुनाज़रा मौलवी मन्ज़ूर साहब और मौलाना सरदार अहमद साहब के दर्मियान हुआ था जिस में बौखला कर मौलवी मन्ज़ूर ने कहा "रसुलुल्लाह तो भुके मरा करते थे" मआज़ल्लाह। इसी जुमला पर उस्तादे मुहतरम मौलाना मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला ने मौलवी मन्ज़ूर को गरजती हुई आवाज़ में फटकारा था कि मन्ज़ूर मुनाज़रे का मक़सद यह है कि तौहीने नबुव्वत से तुम्हारी ज़बान रोकी जाये और अफ़सोस कि इस्तिख़्फ़ाफ़े नबुव्वत तुम्हारी फ़ितरते सानिया बन चुकी है ऐसे गलीहर हो कि बग़ैर गाली गुलूज के तुम अपनी गुफ़्तगू पर क़ाबू याफ़्ता नहीं अगर तुम्हारी ज़बान में कीड़े रेंग रहे हैं जिससे तुम्हें बग़ैर गाली दिये चैन नहीं तो सरवरे आलम को नहीं बल्कि हबीबुर्रहमान को गालियां दे लो।

याद रहे यह हबीबुर्रहमान उसी मर्दे मुजाहिद का नाम है जो नामूसे रिसालत की ख़ातिर गाज़ीपुर व सुल्तानपुर जेल की मुशक़्क़तें झेल कर अभी पन्द्रह महीने बाद ज़मानत पर रिहा हुआ है जिसका नाम सुनते ही असग़र गोंडवी का यह शेअ़र याद आ जाता है।

यहां तो उम्र गुज़री है इसी मौजी तलातुम में
वह कोई और होंगे सैरे साहिल देखने वाले

जहां तक क़ुव्वते हाफ़िज़ा मेरी रफ़ाक़त कर रहा है हिफ़्ज़ुल ईमान की इसी इबारत पर मौलवी मन्ज़ूर संभली और शेर बेशए अहले सुन्नत मौलाना हश्मत अली ख़ां रहमतुल्लाह अलैह के दर्मियान भदरी ज़िला आज़मगढ़ (अब ज़िला मऊ) में मुनाज़रा हुआ था उस मुनाज़रा में मौलवी मन्ज़ूर की बद हवासी का क्या आलम था, उसकी शहादत में शेर का नाम ही काफ़ी है, जिनके तआ़रुफ़ में अक्सर व बेश्तर मैं इस शेअ़र से काम लेता हूं।

* मुनाज़रे बुदावन रान 1354 स. 140

किस शेर की आमद है कि रन कांप रहा है
रन एक तरफ़ चर्ख़े कुहन कांप रहा है

अभी 9,10,11 नवम्बर 1958 ई० को फ़ख़्रे मिल्लत मौलाना सय्यद मुज़फ़्फ़र हुसैन साहब कछौछवी के ज़ेरे एहतेमाम एक मुनाज़रा सर ज़मीने अहमदाबाद में होने वाला था। मौलाना की तक़रीर पर बाज़ वहाबियों, देवबन्दियों ने छेड़ छाड़ की थी लिहाज़ा मुजाहिदे मिल्लत मौलाना मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला सदर आल इन्डिया तबलीग़े सीरत के उस उसूल पर अमल करते हुए कि "छेड़ो मत, छेड़ जाये तो छोड़ो मत" मौलाना सय्यद मुज़फ़्फ़र हुसैन साहब ने देवबन्दियों की अच्छी तरह ख़बर ली, इस मुनाज़रा के लिए शेर बेशए अहले सुन्नत मौलाना हश्मत अली ख़ान साहब क़िबला, मुफ़्तीए कानपुर हज़रत मौलाना रिफ़ाक़त हुसैन साहब, मुफ़्तीए सम्भल हज़रत मौलाना अजमल शाह साहब, सहबानुल हिन्द मौलाना अबुल वफ़ा साहब फ़सीही, फ़ातेहे जमशेदपुर हज़रत मौलाना अरशद साहब क़ादरी, फ़ाज़िले बिहारी हज़रत मौलाना मुहम्मद इसहाक़ साहब ख़तीब जामा मस्जिद बोरसद, आलिमे जलील हज़रत मौलाना अशफ़ाक़ हुसैन साहब नईमी मुफ़्तीए जोधपुर, अलम बरदार अहले सुन्नत हज़रत मौलाना हाजी अली मुहम्मद साहब नाज़िम जमाअ़ते रज़ाए मुस्तफ़ा गुजरात, दफ़्तर इन्चार्ज तबलीग़े सीरत मौलाना निसार अहमद साहब मुबारकपुरी, फ़ाज़िले गिरामी मौलाना मुशाहिद रज़ा ख़ां साहब पीलीभीती, राक़िमुल हुरूफ़ मुश्ताक़ अहमद निज़ामी यह सब के सब पहुंच गये थे। मुनाज़रे की तारीख़ वही थी जिन दिनों हिन्दुओं की दीवाली पड़ रही थी, इसी मुनासबत से ख़तीबे अस्र हज़रत मौलाना अबुल वफ़ा साहब फ़सीही ने बरजस्ता एक शेअ़र कहा जिसमें शेर बेशए अहले सुन्नत का तआ़रुफ़ भी है और साथ ही साथ यह शेअ़र रूदादे मुनाज़रा अहमदाबाद का ख़ुलासा व निचोड़ भी है, शेअ़र सुनिये और ग़ाइबाना तौर पर फ़सीही साहब को दाद दीजिये।

अल्लाह रे किस शेर से अब पड़ गया पाला
हिन्दू की दिवाली है वहाबी का दिवाला

अभी चन्द बरस हुए हिफ़्ज़ुल ईमान की इसी इबारत पर 'कवाथ' ज़िला आरा (बिहार) में एक मुनाज़रा हुआ था जिसमें अहले सुन्नत की तरफ़ से मौलाना अबुल वफ़ा फ़सीही और देवबन्दियों की तरफ़ से मौलवी अतीक़ुर्रहमान साहब मुनाज़िर थे, अहले सुन्नत के स्टेज पर फ़सीही साहब के इलावा सुल्तानुल मुनाज़िरीन हज़रत

मौलाना रियासत हुसैन साहब क़िबला, शम्सुल उलमा हज़रत मौलाना मुहम्मद निज़ामुद्दीन साहब मुदर्रिसे अव्वल मदरसा आलिया रामपुर, फ़ातेहे जमशेदपुर हज़रत मौलाना अरशद साहब क़ादरी और राक़िमुल हुरूफ़ मुश्ताक़ अहमद निज़ामी था और देवबन्दी स्टेज पर मौलवी अतीक़ुर्रहमान साहब के इलावा तक़रीबन दो दर्जन मौलवी ई क़दर और आं क़दर मौजूद थे, इस मुनाज़रा में देवबन्दियों की बद हवासी की यह कैफ़ियत थी कि उनका मुनाज़िर किताब को अपनी पुश्त के निचले हिस्सा पर लेकर खड़ा हुआ अहले सुन्नत के मुनाज़िर से न रहा गया तो फ़सीही साहब ने उठ कर यह फ़रमाया कि मौलाना किताब को मक़ामे ग़लीज़ से हटा लीजिये इस में किताब की तौहीन है। यह सुनते ही देवबन्दी मुनाज़िर ने कहा मौलाना चूंकि इसमें मौलाना अहमद रज़ा साहब का नाम है इस लिए इनको यहीं से लगाये हुए हैं।

नाज़िरीन! इसी से देवबन्दियों की इल्मी शराफ़त व गन्दी ज़ेहनियत का अन्दाज़ा करें कि वह किस क़दर गुस्ताख़ व बे अदब वाक़ेअ् हुए हैं, हर चन्द अहले सुन्नत की तरफ़ से तहज़ीब व शराफ़त, अदब व एहतेराम की तल्क़ीन की जाये मगर वह अपनी कज बहसी से मजबूर हैं "मुल्ला आँ बाशद कि चुप न शवद" के मुताबिक़ कुछ न कुछ बक बड़ाना ही रहेगा।

तक़रीबन सन् 1951 ई० की बात है बिरादरे गिरामी हज़रत मौलाना मुहम्मद सलीम साहब ख़तीब जामा मस्जिद व मुहतमिम जामिया अरबिया सुल्तानपुर की दावत पर एक जलसा में गया था उन दिनों मौलवी अब्दुल बारी देवबन्दी की दावत पर मौलवी युनुस ख़ालिद लखनवी भी सुल्तानपुर में बिराजमान थे, चुनान्चे मौलवी युनुस ख़ालिदी ने मुझे चैलेन्जे मुनाज़रा दिया और तक़रीबन तीन दिन तक तहरीरी मुनाज़रा का सिलसिला जारी रहा एक बार मौलवी युनुस साहब ने मुझ से दरियाफ़्त किया कि "आप बहैसियते मुस्लिम गुफ़्तगू करेंगे या बहैसियत ग़ैर मुस्लिम ?"

चुनान्चे उनके इस जुमले पर मैंने हस्बे ज़ैल चन्द सवालात किये।

(1) इस्लाम व ईमान का फ़र्क़ ?

(2) ईमान के बसीत व मुरक्कब होने में मुहद्दिसीन के इख़्तिलाफ़ात की वज़ाहत और क़ौले राजेह की तअ्यीन ?

(3) नहवी उसूल से ग़ैर के वजूहे एअ्राब ?

(4) मन्तिक़ी बुनियाद पर हैसियत के सभी अक़साम मअ् अमसिला।

(5) (क) इस्लाम व ईमान दो मफ़हूम कुल्ली हैं या जुज़ई ? अगर जुज़ई हैं-

(ख) तो निस्बते अरबआ (तसावी, तबायुन, आम ख़ास मुतलक़, आम ख़ास मिन वजहिन) में से कौन सी निस्बत है ? और अगर दो मफ़हूम जुज़ई हैं ?

(ग) तो जुज़ई हक़ीक़ी हैं या इज़ाफ़ी ?

(घ) और जुज़ई हक़ीक़ी व इज़ाफ़ी का मक़सिम क्या है ?

ग़रज़ की इस जुमले के हर हर टुकड़े पर मैंने सवालात क़ाइम किये और आख़िर में लिख दिया कि जवाब देकर दो सौ रुपये का नक़द इनाम लीजिये। यह देखते ही लखनवी साहब के मुंह में पानी आ गया। यहां तक कि 9 जून अब्दुल्लाह गंज का मैदान मुनाज़रे के लिए मुतअय्यन हो गया। अहले सुन्नत के स्टेज पर मेरे इलावा शम्सुल उलमा हज़रत मौलाना मुहम्मद निज़ामुद्दीन साहब क़िबला व फ़ख़्रे मिल्लत हज़रत मौलाना सय्यद मुज़फ़्फ़र हुसैन साहब कछौछवी, आलिमे जलील हज़रत मौलाना मुहम्मद सलीम साहब ख़तीब सुल्तानपुर और बुलबुले हिन्द जनाब अजमल साहब सुल्तानपुरी मौजूद थे।

इस मुनाज़रे में मौलवी युनुस साहब ख़ालिदी का हाल बिल्कुल ऐसे ही था कि अस्सलामु अलैकुम। जवबा, 'बैंगन तोड़ रहा हूं' मैं दरियाफ़्त करता था कि इस्लाम व ईमान में कौन सी निस्बत है तो आंजनाब कभी तो यह फ़रमाते कि 'निस्बत' की तारीफ़ सुग़रा व कुबरा में मौजूद है। हालांकि इस जवाब को सवाल से कोई तअल्लुक़ नहीं। और जब ज़्यादा वहशत होती तो बुहरानी कैफ़ियत में फ़रमाते "निज़ामी साहब! मैं आपको जानता हूं कि आप जमीअतुल उलमा के कट्टर दुश्मन हैं।"

चन्द ही नशिस्त के बाद वुकला और दूसरे पढ़े लिखे हज़रात यह कह कर जाने लगे कि देवबन्दियों ने किस जाहिल को बुलवाया है जो अपने मुख़ातिब की गुफ़्तगू भी नहीं समझ पाता। और लोहर दकन के हाजी मुहम्मद हनीफ़ साहब वग़ैरह यह कह कर मुख़ातब करते कि "ख़ालिदी साहब! क्या यह दो सौ रुपया आपको काट रहा है जवाब देकर रुपया क्यों नहीं लेते ?"

ग़रज़ कि ख़ालिदी साहब इतनी देर तक कुछ न कुछ हांकते रहे जब तक यह उम्मीद थी कि अभी फ़ैज़ाबाद की ट्रेन से मौलवी अब्दुश्शकूर साहब या कोई और आ जाएगा मगर जब यह मालुम हुआ कि ट्रेन आ गई और कोई नहीं आया तो ख़ालिदी साहब का सांस फूलने लगा और ज़बान में लुक्नत आ गई। बाज़ू पकड़ कर बदिक़्क़त तमाम लोगों ने उन्हें उठाया ऐसा महसूस होता था कि लक़वा या फ़ालिज पड़ गया हो, अपने मुनाज़िर का यह हाल देख कर वकील माशूक़ अली

तो वहाबियों के सरगना ये दौड़ते हुए 'थाना' पहुंचे और इज़्ज़त व आबरू की दुहाई देते हुए नकदे दामन के सहारे 'फोर्स' लेकर पहुंच गये और मुनाज़रा की कार्रवाई दरहम बरहम करा दी। मौलाना थानवी ने हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर यही आख़िरी हरबा अपनाया था जिसको आज तक उलमाए देवबन्द इस्तेमाल कर रहे हैं।

न पूछिये मौलाना थानवी का हाल जिन्हें रसूले करीम की तौहीन और अपने फ़ज़्ल व कमाल के इज़हार में इन्तेहाई गुलु था। अब चन्द हवाले और मुलाहज़ा फ़रमा लीजिये तो दूसरे उनवान पर गुफ़्तगू की जाये।

मौलवी इस्माईल देहलवी ने तो अपनी किताब 'सिराते मुस्तक़ीम' में अपनी धाया गाँई के मुताबिक यह लिख मारा कि नमाज़ में आँहुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम का ख़्याल लाना गाय बैल के ख़्याल लाने से बदर्जहा बदतर है। मआज़ल्लाह। यानी गाय बैल के ख़्याल में डूब जाने से तो नमाज़ हो जाएगी मगर रसूलुल्लाह का ख़्याल लाते ही नमाज़ फ़ासिद हो जाएगी। यह है देवबन्दी धर्म में नमाज़ की हकीक़त। मगर अब सुनिये थानवी साहब की।

मलफ़ूज़ाते अशरफ़ुल उलूम बाबत माहे रमज़ान सन् 1355 हिजरी सफ़हा 84 नम्बर 298।

> "किसी ने ख़त में लिखा कि अगर आप (थानवी साहब) की सूरत का तसव्वुर कर लूं तो नमाज़ में जी लगता है, फ़रमाया जाइज़ है, दो शर्त से- एक यह कि एतेक़ाद में मुझे हाज़िर व नाज़िर न समझे। दूसरी शर्त यह है कि उसकी इत्तेलाअ् किसी को न दे यह तसव्वुर ख़तरात के इलाज के दर्जा में है क्योंकि यह भी तवज्जोह इलल्लाह होने का एक ज़रीया है इससे तवज्जोह और यकसूई इलल्लाह होगी पस मक़सूद का मुक़दमा है ख़ुद मक़सूद नहीं।"

ग़ज़ब ख़ुदा का! यह अंधेर तो देखिये कि महबूब किर्दिगार सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम के ख़्याल लाने से नमाज़ जाती रहे मगर मौलाना थानवी की सूरत का तसव्वुर, मुक़द्दमए इबादत और तवज्जोह इलल्लाह का ज़रीया क़रार पाये। क्यों न हो-

ख़ुदा सर दे तो सौदा किसी ज़ुल्फ़े पेचाँ का

मौलाना थानवी साहब के दरजात उस वक़्त तक पायए तकमील को न पहुंचते ता वक़्ते कि बेगम साहिबा न आ गईं यानी मौलाना थानवी की नमाज़ में बेगम साहिबा का तसव्वुर तक़र्रुब इलल्लाह का ज़रीया था और मुरीदीन की नमाज़ में थानवी साहब का तसव्वुर। अलबत्ता यह बात महल्ले ग़ौर है कि बेगम साहिबा की नमाज़ में किस का तसव्वुर तवज्जोह इलल्लाह का ज़रीया था।

सिराते मुस्तक़ीम की इबारत का तज़्किरा करते हुए मुझे अपने मुहिब्ब मुख़लिस अन्दलीबे गुलशने रिसालत जनाब राज़ साहब इलाहाबादी का एक शेअ़र याद आ गया-

वह सज्दा तो सज्दा हुआ ही नही
कि सर झुक गया दिल झुका ही नही

एक बार जनाब राज़ साहब अपने अदबी दोस्त जनाब उम्मीद साहब सीवानी को मेरे पास बग़र्ज़े मुलाक़ात लाये। दफ़्तर पासबान में कुछ देर शेअ़रो सुख़न की मजलिस गरम रही, जनाब उम्मीद साहब वक़्त के एक कामयाब शायर हैं, उन्होंने भी अपना कलाम पेश फ़रमाया जिसका एक शेअ़र मौक़ा व महल के मुनासिब हाज़िर है-

वाए नाकामीए ज़ाहिद कि जबीं पर उसकी
दाग़े सज्दा तो बना दाग़े मुहब्बत न बना

हज़राते देवबन्द का यही हाल है कि पेशानी तवे की कालिख से ज़्यादा काली हो जाये मगर दिलों पर नूरे नबुव्वत की झलक न पड़ सके। बक़ौले हस्सानुल हिन्द जनाब बेकल साहब बलरामपुरी कि देवबन्दियों की सियाही पेशानी पर उभर आई है।

थानवी साहब की रसुल दुश्मनी से भरपूर एक और इबारत मुलाहज़ा कीजिये और उनकी गन्दा ज़ेहनियत पर मातम कीजिये।

रिसाला अलइमदाद माहे सफ़र सन् 1335 हि०

> "एक ज़ाकिर सालेह को मकशूफ़ हुआ कि अहक़र (अशरफ़ अली थानवी) के घर हज़रत आइशा आने वाली हैं, उन्होंने मुझ से कहा! मेरा (अशरफ़ अली का) ज़ेहन मअन् उसी तरफ़ मुन्तक़िल हुआ कि कमसिन औरत हाथ आएगी कि इस मुनासबत से कि हुज़ूर सल्लल्लाहु तआला अलैहि वसल्लम ने हज़रत आइशा से निकाह किया तो हुज़ूर का सिन शरीफ़ पचास से ज़्यादा था और हज़रत आइशा बहुत कम उम्र थीं वही क़िस्सा यहां है।"

नोटः- वहशत में हर एक नक़्शा उलटा नज़र आता है
मजनूं नज़र आती है लैला नज़र आता है

यही हाल है थानवी साहब का! कुजा उम्मुल मोमिनीन सय्येदा तय्येबा ताहिरा हज़रत आइशा सिद्दीक़ा रज़ियल्लाहु अन्हा, जिनकी दीनी फ़रासत और तफ़क्क़ुह फ़िद्दीन पर अजिल्लाए सहाबा व ख़ुलफ़ाए राशिदीन को एतेमाद व भरोसा था, जिनकी शाने इफ़्फ़त पर आयात का नुज़ूल हुआ। सहाबा के पुर पेच मसाइल की गिरहों को जिनके नाख़ुने तदब्बीर ने खोल दिया! जिसने बिला वास्ता दर्सगाहे नबुव्वत से फ़ैज़ हासिल किया हो। जिसके मुक़द्दस व पाकीज़ा हुजरा में बारहा जिब्राईल अमीन वहीए इलाही लेकर हाज़िर हुए हों। हां वही! सय्येदा आइशा जिनके लिए कुरआन मजीद का इरशादे मुहकम है कि

और कहां मौलाना थानवी की बेगम जिनके आते ही मौलाना थानवी की दुनिया व आख़िरत दोनों बरबाद हो गई। कहां महबूबे ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हरमे मुहतरम और कहां मौलाना थानवी की बेगम।

चे निस्बत ख़ाक रा बा आलमे पाक

वह सय्येदा आइशा! जिनका तज़्किरा क़ुरआन मजीद में, जिनका ज़िक्रे जमील अहादीसे रसूल में जिनके महासिने अख़्लाक़ तारीख़े इस्लाम में, ग़रज़ कि जिन का तज़्किरा ख़ानए काबा और मस्जिदे नबवी में, मस्जिद, ख़ानक़ाह में, जिनका तज़्किरा सिद्दीक़ीन, सालेहीन, शुहदा, अइम्मए मुज्तहिदीन, अकाबिर मुहद्दिसीन, उलमा व औलिया की ज़बानों पर ग़रज़ कि वह आइशा जिनका तज़्किरा फ़र्श पर अर्श पर, मलाइका की बज़्मे क़ुदुस में यहां तक कि बारगाहे उलुहियत में।

अफ़सोस है कि थानवी साहब की नापाक व नजिस ज़ेहनियत पर "छोटा मुंह बड़ी बात" अपनी ख़बासते बातिनी की बिना पर फ़रमाते हैं। "वही क़िस्सा यहां भी है जैसा कि महबूबे किर्दगार और सय्येदा आइशा की शादी का था।" मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह और आंजनाब की बाज़ारी बोल तो मुलाहज़ा फ़रमाइये कि "मैं समझ गया कि कोई कमसिन औरत हाथ आएगी।" इस जुमला में 'हाथ आएगी' का टुकड़ा ख़ुसूसियत से क़ाबिले तवज्जोह है, अहले अदब व अहले ज़बान अच्छी तरह वाक़िफ़ हैं कि इसका मौक़ए इस्तेमाल क्या है। "और कमसिन औरत हाथ आएगी" का जुमला मौलाना थानवी के लज़्ज़ाते नफ़्सानी व जज़्बाए शहवानी पर

किस हद तक ग़म्माज़ है। मुरीदीन तो यह समझ चुके थे कि हज़रत पीरो मुर्शिद ज़ईफ़ व नातवां हो चुके हैं मगर पीर साहब बुढ़ापे में भी इश्क़ बाज़ी कर बैठे।

जां बाज़ों के सीने में अभी और भी दिल है
फिर देखिये इक बार मुहब्बत की नज़र से

इस पर ग़ज़ब यह ढाया कि उसी शादी को तक़र्रुब इलल्लाह का ज़रीया क़रार दिया। "एक तो करैला और वह भी नीम चढ़ा।"

कुछ अजब इत्तेफ़ाक़ है, अकाबिरे देवबन्द के जितने भी फ़ज़ाइल व मनाक़िब हैं वह सब ख़्वाब ही के रास्ते आते हैं, जब वहशत बढ़ती है तो किसी न किसी मन गढ़त ख़्वाब से अपने मौलवियों और मदरसे की फ़ज़ीलत बयान करते हैं। एक ख़्वाब मुलाहज़ा कीजिये। बराहीने क़ातेआ मतबूआ साढोरा स. 26।

> "एक सालेह, फ़ख़्रे आलम अलैहिस्सलाम की ज़ियारत से ख़्वाब में मुशर्रफ़ हुए तो आपको उर्दू में कलाम करते देख कर पूछा कि आपको यह कलाम कहां से आ गई आप तो अरबी हैं ? फ़रमाया जब से उलमाए मदरसा देवबन्द से हमारा मुआमला हुआ हम को यह ज़बान आ गई। सुबहानल्लाह इससे रुतबा इस मदरसा का मालूम हुआ।"

नोटः- जनाब अमीर ने तो यह फ़रमाया था कि -

हज़रत का इल्म इल्मे लदुन्नी था ऐ अमीर
हज़रत वहीं से आये थे लिखे पढ़े हुए

इस शेअ्र में मुबालग़ा से काम नहीं लिया गया बल्कि इसमें उस हदीस का मफ़हूम है जैसा कि रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया "मेरे रब ने मेरी बेहतरीन तालीम व तरबियत फ़रमाई" यह तो हुज़ूर का फ़रमाना है मगर उलमाए देवबन्द का यह कहना है कि उस तालीम में कुछ कमी थी जिसकी तकमील मदरसा देवबन्द में हुई। मसलन सरकारे दो आलम उर्दू न जानते थे मगर उस वक़्त आई जब हमने 'उलमाए देवबन्द' से सीखा। यह है उस्ताद बनने का जज़्बए मलऊन कभी तो बड़े भाई का रिश्ता जोड़ा और कभी उस्तादी व शागिर्दी का और ख़ुद आंजनाब की उर्दू का यह आलम है कि "आप को यह कलाम कहां से आ गई" इतनी ख़बर नहीं कि कलाम मुज़क्कर है या मुअन्नस मगर उस्ताद बनने का जज़्बए शैतनत उकसा रहा था कि लिख मारो ख़्वाह दाग़ की रूह अपनी क़ब्र में तड़पती

ही क्यों न रहे। क्या हज़रत दाग़ ने इसी देवबन्दी उर्दू की तारीफ़ में कहा था।

उर्दू है जिसका नाम हमें जानते हैं दाग़
सारे जहां में धूम हमारी ज़बां की है

दाग़ न सही तो कोई जानशीनें दाग़ ना खुदाए सुख़न हज़रत नूह नारवी से दरियाफ़्त करें कि इस देवबन्दी उर्दू ने आपकी शायराना फ़ितरत और नाज़ुक तबीअत पर क्या सितम ढाया ? ग़ालिबन अभी तक यह देवबन्दी उर्दू शोअ़राए लखनऊ की नज़र से नहीं गुज़री वरना अब तक कोई एजीटेशन हो गया होता और---जनाब हाफ़िज़ शफ़ीक़ुर्रहमान मरहूम का हलक़ए अदब भी इससे शनासा नहीं वरना अब तक उनके लताइफ़ व ज़राइफ़ की फ़ेहरिस्त में इसको जगह मिल गई होती।

ऐ काश उलमाए देवबन्द कभी मक़ामे नबुव्वत की अ़ज़मत व बरतरी का सही अन्दाज़ा करके अपनी गन्दी व तौहीन आमेज़ इबारात पर सन्जीदगी से ग़ौर करते और सोचते कि क्या यह शायाने शाने नबुव्वत है। अल्लाह का नबी मदरसा देवबन्द में आकर उर्दू हासिल करे हालांकि यह वही नबीए मुहतरम है कि जो कभी बिलवास्ता और कभी बिला वास्ता जिब्रईल अमीन अपने रब्बे क़दीर से हम-कलाम होता है। शफ़ीक़ साहब ने कितनी प्यारी बात कही-

वह सो जायें तो मेअ़राजे मनामी
वह जागें तो ख़ुदा से हमकलामी

मदरसा देवबन्द की तारीफ़ के लिए और भी बहुत से केसस व वाक़िआत मिल जाते मगर उनको क्या कहिये कि तन्क़ीसे नबुव्वत ही से हज़राते देवबन्द के ज़ौक़े तालीफ़ की तिशनगी बुझती है हालांकि अगर यह लोग ग़ौरो फ़िक्र से काम लेते तो यह हक़ीक़त वाज़ेह हो जाती कि सरकारे दो आलम का उर्दू ज़बान में गुफ़्तगू करना उलमाए देवबन्द की ज़बान अ़रबी से जहल व ला इल्मी की दलील है। चूंकि आक़ाए दो आलम जानते थे कि यह नाम निहाद अ़रबी मदरसा है मगर यहां के लोग अ़रबी समझते नहीं इसलिए उर्दू में गुफ़्तगू फ़रमाई।

जनाब थानवी साहब के जज़्बए ख़ुद सिताई की दूसरी चन्द मिसालें जिल्द दोम में मुलाहज़ा फ़रमाइयेगा। अब थाना भवन से चल कर अयोध्या पहुंचिये और एक खद्दर पोश की ज़िन्दगी का जाइज़ा लीजिये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर का सरसरी जाइज़ा

यह कांग्रेसी मुल्ला मैं तुमको बताऊं क्या है
गांधी की पालीसी के अ़रबी में तर्जुमा है

(अकबर इलाहाबादी)

जनाब मौलवी हुसैन अहमद साहब टांडवी जमीअ़तुल उलमा और दारुल उलूम देवबन्द के सदर थे जिनकी सबसे पहली तालीफ़ "अश्शिहाबुस्साक़िब अलल् मश्रिक़िल काज़िब" है जिसको देख कर टांडवी साहब की आवारगीए क़लम का पता चलता है। मुफ़्तीए संभल हज़रत मौलाना अजमल शाह साहब क़िबला ने "रद्दे शिहाबे साक़िब" में छः सौ चालीस गालियों की फ़ेहरिस्त मुरत्तब की है जो जनाब टांडवी ने सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरैलवी रज़ियल्लाहु अन्हु की शाने गिरामी में इस्तेमाल की हैं।

जिन में से दस पांच तज़्किरा इस लिए किया जाता है कि जनाब माहिरुल क़ादरी साहब मुदीरे फ़ारान, जनाब रूही साहब मुअल्लिफ़ आईनए सदाक़त, तकफ़ीरी अफ़साने के मुअल्लिफ़ और जनाब असअद साहब अपने गरीबान में मुंह डाल कर अपने शैख़ की मशीख़त मुलाहज़ा फ़रमायें।

मुजद्दिदुत्तकफ़ीर, धोका बाज़, फ़रेबी, मक्कार, मुजद्दिदुत्तज़लील, दज्जाले बरैलवी, इफ़्तेरा पर्दाज़, दरोग़ गो, बुहतान तराश, दज्जाले नापाक मुजद्दिदुल मुफ़्तरीन शैतनत का जाल फैलाने वाला, रवाफ़िज़ के छोटे भाइ अहले हवा व बिदअ़ इबलीस लईन का शागिर्द, गुमराह बे दीन, कज फ़हम, बे अक़्ल, बे इल्म, बे शुऊर, या ललअ़जब। एक सौ बीस सफ़हे की "शिहाबुस्साक़िब" में छः सौ गालियां अब इसी से अहले नज़र टांडवी साहब की सन्जीदगी या उनकी हिज़यान गोई का अन्दाज़ा कर सकते हैं हालांकि सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरैलवी रज़ियल्लाहु अन्हु की ज़ाते गिरामी वह है जिनको उलमाए अरब व अ़जम ने न जाने कितने अ़ज़ीमुल मर्तबत व रफ़ीउद्दरजात अलक़ाब व ख़िताब से याद किया है, जिन में से दो चार का तज़्किरा किया जाता है।

आ़लिमे जलील, अ़ल्लामा कामिल, उस्ताज़े माहिर, दक़ाइक़ का ख़ज़ाना, रौशन सितारा, नादिरे रोज़गार, वहीदे अस्र, यगानए वक़्त, सदी का मुजद्दिद,

साहबे अद्ल, आलिमे बा अमल, मर्कज़े दाइरए उलूम, करीमुन्नफ़्स, अकाबिर उलमा की आँखों की ठंडक साहबे तसानीफ़े मशहूरा व रसाइले कसीरा, मुस्तहब्बात व सुनन, वाजिबात व फ़राइज़ पर मुहाफ़िज़, क़लम का बादशाह, ज़बान का धनी, आशिके रसूल, इरफ़ान व मअ्‌रेफ़त वाला, वलीए कामिल, आरिफ़ बिल्लाह, क़ुतबे वक़्त, मम्बऔ इल्म, शरीअत व तरीक़त का संगम वग़ैरह वग़ैरह। वह अपने फ़ज़ाइल व महासिन में इतने बुलन्द हैं कि उनके तलवे तक अपने सर की रिसाई नहीं, इमामुल मुहतरम ही के एक शेअ्‌र पर इस उनवान को ख़त्म किये देता हूं।

मुल्के सुख़न की शाही तुम को रज़ा मुसल्लम
जिस सम्त आ गये हो सिक्के बिठा दिये हैं

इस में शुब्हा ही क्या है जिस उनवान पर क़लम उठाया इल्म व फ़न के दरिया बहा दिये, सैफ़े क़लम की रवानी का यह आलम कि चुन चुन के एक एक का सर क़लम कर दिया। कोई सोचे तो सही एक तरफ़ वहाबिया, दियाबना की टिड्डी दिल फ़ौजें फक्कड़ थी, और दूसरी जानिब एक नहीफ़ व नातवाँ जो पैकरे इल्मो अदब था बयक वक़्त फ़तावा रशीदिया, तक़्वीयतुल ईमान, तहज़ीरुन्नास, बराहीने क़ातेआ जैसे मुसन्निफ़ीन का नातिक़ा बन्द कर दिया जिस से उनके चेहरे पर ओस पड़ गई और किज़्बों का बाज़ार सर्द पड़ गया यह वही इमाम अहमद रज़ा हैं जब उनका परचमे इक़बाल लहराया तो पूरब व पच्छिम, उत्तर व दक्षिण के अकाबिर व अआ़ज़िम ने ख़िराजे अक़ीदत पेश किया, आज भी जिसका जी चाहे फ़तावा अफ़्रीक़ा, हुस्सामुल हरमैन, फ़तावा रज़विया जैसी बुलन्द पाया किताबों को देखकर अपना इत्मीनान हासिल कर ले, हम उन्हीं के अल्फ़ाज़ में आज भी उन्हें इस तरह याद करते हैं-

क्यों रज़ा आज गली सूनी है
उठ मेरे धूम मचाने वाले

अफ़सोस का मक़ाम है कि वक़्त की ऐसी मुमताज़ शख़्सियत से मुतअल्लिक़ मौलाना टांडवी के ऐसे गन्दा ख़्यालात, हालांकि यह वही टांडवी हैं जिनके बारे में डा॰ इक़बाल का कहना है-

अजम् हनूज़ न दानन्द रुमूज़े दीं
ज़ि देवबन्द हुसैन अहमद ईं चे बुलअजबी अस्त

और मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी की राय यह है-

मसलए क़ौमियत स. 63

> "मैं साफ़ कहता हूं कि उन (मौलवी हुसैन अहमद) के नज़दीक कौंसिलों और एसेम्बलियों की शिरकत का एक दिन हराम और दूसरे दिन हलाल कर देना एक खेल बन गया है इस लिए कि उनकी तहलील व तहरीम हक़ीक़ते नफ़्सुल अमरी के इदराक पर तो मबनी नहीं महज़ गांधी जी की जुम्बिशे लब के साथ उनका फ़तवा गर्दिश करता है।"

लगे हाथ दारुल उलूम देवबन्द के मुफ़्ती का एक फ़तवा मुलाहज़ा कर लीजिये जो मौलवी क़ासिम नानौतवी से मुतअल्लिक़ है।

'तजल्ली' स.15 फ़रवरी मार्च सन् 57 ई॰

> "अब हम आपको यह बता दें कि 'माहनामा दारुल उलूम' के क़लमकारों को अगर जुनैद व ग़ज़ाली या इमाम अबू हनीफ़ा की भी किसी इबारत के मुतअल्लिक़ ग़लती से यह यक़ीन हो जाये कि मौलाना मौदूदी की है तो उनके मफ़हूम और ताबीरात को वह इलहाद व ज़िन्दिक़ा और खुल्ले एतेज़ाल की हदों से मिलाने की कोशिश करेंगे और ख़ुश होंगे कि क़ौम की बड़ी ख़िदमत अन्जाम दी है।"

अब ज़रा इस फ़तवे पर ख़्याल फ़रमाइये जो मौलाना क़ासिम की एक इबारत को मौलाना मौदूदी की तहरीर समझ कर दो साल बाद मुफ़्तियाने दारुल उलूम देवबन्द ने दिया और उसकी पूरी तफ़सील न सिर्फ़ 'तजल्ली' अप्रैल सन् 65 में छपी बल्कि 'दावत' दिल्ली और बहुत से अख़्बारों में छपी और मुहतमिम दारुल उलूम को मानना पड़ा कि हां यह फ़तवा हमारे ही मुफ़्तियों ने दिया है, ज़रा एक बार फिर उस फ़तवे के अल्फ़ाज़े मुक़द्दसा मुलाहज़ा फ़रमा लिये जावें।

"ऐसे अक़ीदे वाला काफ़िर है (यानी मौलवी क़ासिम नानौतवी) जब तक तज्दीदे ईमान और तज्दीदे निकाह न कर ले उससे क़तऐ तअल्लुक़ करें।"

इस घर को आग लग गई घर के चराग़ से

अहले सुन्नत के मुक़ाबिल कहां तो यह ढोंग रचाया जाता है कि काफ़िर को भी काफ़िर न कहो शायद मुसलमान हो जाये और मशग़ला काफ़िर साज़ी का यह आलम कि बानीए दारुल उलूम देवबन्द मौलवी क़ासिम नानौतवी तक को न छोड़ा,

आख़िरश उन्हें काफ़िर बना ही कर रहे अब तहज़ीरुन्नास ही पर रोना क्या।

मैं इस आरिफ़ाना तजाहुल के सदक़े
हर इक दिल को छेदा मेरा दिल समझ के

मौलाना टांडवी से मुतअल्लिक मौलाना अबु मुहम्मद इमामुद्दीन रामनगरी की राय।

तजल्ली स. 55 फ़रवरी मार्च सन् 57 ई॰

> "आजकल की सियासत का संगे बुनियाद प्रोपगन्डा है, एक ज़माने से मौजूदा सियासत के साथ हज़रत मौलाना मदनी की वाबस्तगी ने उनके मिज़ाज व मज़ाक़ को भी प्रोपगन्डे के सांचे में ढाल दिया है।"

"तजल्ली" स. 63 फ़रवरी/मार्च 57 ई॰

> "मआज़ल्लाह! कितने फ़ितना अंगेज़ तवह्हुमात हैं क्या किसी ज़िम्मेदार शख़्स के क़लम से इतने ग़ैर ज़िम्मेदाराना और ख़िलाफ़े हक़ीक़त अल्फ़ाज़ निकल सकते हैं? इसी शर अंगेज़ी और इफ़्तेरा परदाज़ी का नतीजा है कि हज़रत मौलाना मदनी और अकाबिरे देवबन्द के मुअतक़िदीन, मुतअस्सिरीन जमाअते इस्लामी से तअल्लुक़ रखने वालों को मस्जिद की इमामत और मदरसों की मुदर्रिसी से अलाहिदा कर देते हैं।"

मौलाना टांडवी जिनको उनके मुतवस्सिलीन भी शर अंगेज़ फ़ितना परदाज़ समझते हों। अगर उन्होंने सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरैलवी को छः सौ गालियाँ दीं तो क्या मक़ामे तअज्जुब!

मौलाना राम नगरी की नज़र में मौलाना टांडवी कम ज़र्फ़ थे। 'तजल्ली' स. 64 फ़रवरी व मार्च सन् 57 ई॰।

"लेकिन मौलाना मदनी ने मौलाना मौदूदी के इस हुस्ने ज़न को तलबीस क़रार दिया है, जिस की निस्बत इसके सिवा और क्या अर्ज़ किया जाये कि यह ज़र्फ़ ज़र्फ़ की बात है, मौलाना मौदूदी ने अपने ज़र्फ़ से काम लिया और मौलाना मदनी ने अपने ज़र्फ़ से।"

'तजल्ली' स. 67 फ़रवरी मार्च सन् 57 ई॰।

"मुझे बड़े रन्ज व अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है हज़रत मौलाना मदनी

ने किसी मसले और किसी मुआमले में भी हक़ीक़त पसन्दी और ज़िम्मेदारी से काम नहीं लिया।"

तजल्ली स. 69 फ़रवरी मार्च 57 ई॰, मौलाना टांडवी से मुतअल्लिक़ एक शेअर सुनिये-

गवर्नमेन्ट की ख़ैर यारो मनाओ
अनलहक़ कहो और फांसी न खाओ

तजल्ली स. 69 फ़रवरी मार्च सन् 57 ई॰।

"मौलाना मौदूदी का ज़ेरे बहस जवाब हो या हमारा यह जाइज़ा दोनों का मक़सद हज़रत मौलाना मदनी के बुहतान व इफ़्तेरा की तरदीद है हम में से किसी का म गला भी काफ़िर साज़ी नहीं है, इस क़िस्म की मुहिम तो हज़रत मौलाना मदनी ने ही चला रखी है।"

इख़्तेतामे गुफ़्तगू से पहले मुनासिब जानता हूं कि 'अश्शिहाबुस्साक़िब'[1] से मुतअल्लिक़ उन्हीं के घर का नज़रिया पेश कर दिया जाये बल्कि मौलाना टांडवी के एक तिलिम्ज़े रशीद की राय जो देवबन्द ही के फ़ाज़िल हैं और टांडवी साहब के मिज़ाज आशना हैं।

रद्दे शिहाबे साक़िब[2] पर नक़द व नज़र करते हुए जनाब आमिर साहब उस्मानी का नज़रिया तजल्ली फ़रवरी मार्च सन् 59 ई॰।

> "मुसन्निफ़ ने शुरू में शिहाबे साक़िब में से 640 ऐसे अल्फ़ाज़ की फ़ेहरिस्त दे दी है जो उनके लफ़्ज़ों में मोटी मोटी गालियाँ हैं वाक़ई मौलाना मदनी ने इस किताब में जिस तरह अल्फ़ाज़ इस्तेमाल फ़रमाये हैं उन्हें मोटी मोटी गालियाँ न सही, मुहज़्ज़ब गालियां कहना ज़रूर हक़ बजानिब है।"

आमिर साहब अब कौन आपको समझाये! मौलाना मौदूदी और जमाअते इस्लामी से मुतअल्लिक़ मौलाना टांडवी के नर्म व नाज़ुक जुमले आप बरदा त न कर सके 'तजल्ली' के सफ़हात के सफ़हात सियाह कर डाले, उस्ताद व शागिर्द का रिश्ता व नाता होने के बावजूद उन्हें आपने बीच चौराहे पर नंगा खड़ा कर दिया, और सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा के बारे में 640 ऐसे फूहड़ और ना-रवा कलिमात

(1) मौलाना टांडवी की किताब है। (2) मुफ़्तीए संभल मौलाना अजमल शाह की किताब जो शिहाबे साक़िब के रद में है।

जिनके कहने में लखनऊ के मस्ख़रे भी शरमायें यह आपकी नज़र में मुहज़्ज़ब गालियां हैं, इसके सिवा अब और क्या कहा जाये।

निशाने बर्गे गुल तक भी न छोड़ा इस बाग़ में गुलचीं
तेरी क़िस्मत से रज़्म आराईयां हैं बाग़बानों में

हां जनाब आमिर साहब! एक बात तो फ़रमाइये कि 'रद्दे शिहाबे साक़िब' पर तबसेरा करते हुए आपने हज़रत अल्लामा मौलाना अजमल शाह साहब पर तअ़्न व तश्नीअ़् की है कि 'अश्शिहाबुस्साक़िब' को मौलाना टांडवी की मअ़्रेकतुल आरा किताब कहना दुरुस्त नहीं है चुनान्चे आपके अल्फ़ाज़ यह हैं-

तजल्ली फ़रवरी मार्च सन् 59 ई० स. 79।

> "किताब की लोह पर मौलाना हुसैन अहमद रहमतुल्लाह अलैह की किताब 'शिहाबे साक़िब' को देवबन्दियों की मअ़्रेकतुल आरा किताब लिखा गया है, यह मुसन्निफ़ की ख़ुश फ़हमी है कोर और कज फ़हम अक़ीदतमन्दों के सिवा कोई भी सन्जीदा देवबन्दी यह ग़लत फ़हमी नहीं रखता।"

अब आप ही से दरियाफ़्त करना है कि मौलवी हबीबुर्रहमान आज़मी शैख़ुल हदीस उस्ताद मौलवी मन्ज़ूर अहमद साहब नोमानी को यह कोर और कज फ़हम देवबन्दी हैं या कोई सन्जीदा देवबन्दी हैं, उन्होंने 'शिहाबे साक़िब' को मौलाना टांडवी का फ़ाज़िलाना रिसाला कहा है, हवाला मुलाहज़ा हो-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 22

> उसी दौर की यादगार आपका फ़ाज़िलाना रिसाला 'अश्शिहाबुस्साक़िब' है जिस में बरेलवी फ़ितना की आपने बेख़ कुनी की है।

अब आप और मौलवी हबीबुर्रहमान साहब आज़मी आपस में समझौता कर लें कि आप दोनों में कौन कज फ़हम और कौन सन्जीदा है और इतना ही नहीं ख़ुद अपने शैख़ुल्मशीन वक्तआसमान की 'शिहाबे साक़िब' से मुतअ़ल्लिक़ राय मुलाहज़ा कीजिये और इबारत के तेवर से समझने की कोशिश कीजिये "कि यह अन्दाज़े बयान किसी मअ़्रेकतुल आरा किताब के लिए हो सकता है या किसी घटिया किताब के

लिए, यह बात और है कि वह हमारी नज़र में घटिया दर्जे और थर्ड क्लास की भी नहीं है मगर आपकी दुनिया में वह मअ़्रेकतुल आरा है। इस लिए रद्दे शिहाबे साक़िब के मुसन्निफ़ मौलाना अजमल शाह साहब को आप तअ़्ना देने में हक़ बजानिब नहीं हैं।"

मक्तूबाते शैख़ जिल्द दोम स. 297,298,299।

> "बेशक किताबे अश्शिहाबुस्साक़िब अ़लल मशरिक़िल काज़िब मेरी पहली तस्नीफ़ है जो कि मौलवी अहमद रज़ा ख़ाँ के रद्दे हुस्सामुल हरमैन के ख़िलाफ़ लिखी गई है।"

यह बहस जुमला मुअ़्तरेज़ा के तौर पर आ गई, मक़्सूदे निगारिश यह है कि 'शहाबुस्साक़िब' के तर्ज़े तहरीर पर ख़ुद फ़ुज़लाए देवबन्द को भी नदामत व पशेमानी है।

तजल्ली फ़रवरी मार्च सन! 59 ई० स. 64।

> "साथ ही यह भी तस्लीम करते हैं कि न सिर्फ़ अश्शिहाबुस्साक़िब का अन्दाज़े तहरीर वाक़ई ग़ैर महमूद व लाइक़े इज्तेनाब है बल्कि हम वहाबियों के और भी बु.ज़ुर्गों से कहीं कहीं अज़ राहे बशरियत अल्फ़ाज़ व अन्दाज़ की ऐसी लग्ज़िशें हो गई हैं कि उन्हें क़ाबिले इस्लाह कहना चाहिये।"

जादू वह है जो सर चढ़ के बोले

कैसी हिरमाँ नसीबी है कि एहसासे ख़ता व इस्लाह के बावजूद इस्लाह की तरफ़ कोई क़दम नहीं उठता बल्कि उस तरफ़ तवज्जोह दिलाने से चैलेन्जे मुनाज़रा दिया जाता है।

ख़ुद बदलते नहीं क़ुरआँ को बदल देते हैं

अब अश्शिहाबुस्साक़िब और मौलाना टांडवी से मुतअ़ल्लिक़ आमिर साहब की आख़िरी राय मुलाहज़ा कीजिये। तजल्ली फ़रवरी मार्च 59 ई० स. 84 कालम 2

> "हम मौलाना मदनी के मुहिब्बीन व मुक़ल्लिदीन चाहें तो इस किताब से ख़ासी इबरत पकड़ सकते हैं। मौलाना मौसूफ़ ने अश्शिहाबुस्साक़िब में मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी के साथ इन्साफ़ नहीं किया था (चन्द सतर बाद) और बाज़ अक़ाइद के बारे में इल्मी इख़्तिलाफ़ की बजाए

> तबर्रा बाज़ी और सब्बो शत्म का रास्ता इख़्तियार किया था गोया हमियते दीन और हिमायते हक़ के जज़्बा में ग़ैर मामूली हद तक मुश्तइल हो जाना और इल्मी सक़ाहत को जज़्बाती हैजान की ताख़्त से न बचाना उनका (मौलाना टाडवी का) देरीना वस्फ़ रहा है।"

यह है शिहाबे साक़िब और मौलाना टाडवी से मुतअ़ल्लिक़ फ़ाज़िले देवबन्द की राय अगरचे यह और बात है कि मौलाना टांडवी ने सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा को जो कुछ कहा है वह आ़मिर साहब की निगाह में मुहज़्ज़ब गाली है और जब टांडवी साहब ने आ़मिर साहब के चहीते मुहम्मद बिन अ़ब्दुल वहाब नज्दी की तरफ़ रुख़ किया तो टांडवी साहब गलीहर और तबर्रा बाज़ हो गये। जनाब आ़मिर साहब के इस मुख़ालिसाना फ़ैसला पर इसके सिवा और क्या कहा जाये।

तीर पे तीर चलाओ तुम्हें डर किसका है
सीना किसका है मेरी जान जिगर किस का है

तस्वीर का दूसरा रुख़

चूंकि शिहाबे साक़िब का तज़्किरा आ गया था इस लिए ज़ैली और ज़िमनी तौर पर चन्द इशारे कर दिये गये वरना इसकी तफ़सीली बहस जिल्द दोम में आयेगी। अब मौलाना टांडवी के जानिसारों की पीर परस्ती और ग़ुलूए मुहब्बत में बे पर की उड़ान मुलाहज़ा कीजिये और अन्दाज़ा कीजिये कि हर वह चीज़ जो अजमेर व कलियर में शिर्क व बिदअ़त है वह मौलाना टांडवी की बारगाह में ऐने इस्लाम व इत्तेबाए अस्लाफ़ व सालिहीन की आईनादार है।

लुत्फ़े जानाँ धीरे धीरे आफ़ते जाँ हो गया
अब्रे रहमत इस तरह बरसा कि तूफ़ाँ हो गया

इस वक़्त मेरे पेशे नज़र जनाब क़ारी फ़ख़रुद्दीन साहब गयावी की 'नज़रे अ़क़ीदत' नामी किताब है जिसके तआ़रुफ़ में मौलाना सय्यद मुनाज़िर अहसन गीलानी की एक सतर मुलाहज़ा फ़रमायें ताकि इत्मीनाने क़ल्ब हासिल हो।

नज़रे अ़क़ीदत स. 3

> "आज आपके हाथों में रूहुल क़ुदुस की ताईद याफ़्ता शायरी का एक नमूना पेश हो रहा है।"

इसी किताब का वह शेअ़्र जो सरे वरक़ लाया गया है मुलाहज़ा फ़रमायें।

दो मदीना वाले मेरे दिल के मालिक बन गये
इक नबी अल्लाह का और इक वली अल्लाह का

अब तक तो पूरी मिल्लते इस्लामिया यही जानती और समझती रही कि 'मदीने वाले' से इशारा मदनी ताजदार आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की तरफ़ होता है, लेकिन अब इसमें बटवारा हो गया कि इससे मुराद सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम है या खद्दर पोश अयोध्या वासी मौलाना टाडवी है ?

तौहीद परस्ती के नशा में बे लगाम शराबी की तरह यह कह गये 'जिसका नाम मुहम्मद या अली वह किसी चीज़ का मुख़्तार नहीं।' और पीर परस्ती का यह आलम कि मौलाना टांडवी दिल के मालिक बन बैठे। और यह उलटी मन्तिक़ समझ में न आई कि हज़रत बिलाल जैसे आशिक़े रसूल को 'हबशी' और हज़रत सलमान को 'फ़ारसी' और हज़रत सुहैब को 'रोमी' कहा जाये लेकिन अयोध्या वासी को मदनी कहा जाये।

हैराँ हूं दिल को रोऊँ कि पीटूं जिगर को मैं
मुक़द्दर हो तो साथ रखूं नौहा गर को मैं

नज़रे अ़क़ीदत स. 5 की चन्द सतरें मुलाहज़ा फ़रमायें-

"यह (यानी मौलाना टांडवी) इन्सान है या कोई फ़रिश्ता ?? नहीं नहीं!! मेरा ज़िद्दी क़ल्ब इसको भी तस्लीम करने पर आमादा न हुआ कि वह अनवारे क़ुदसिया का सर चश्मा फ़रिश्ता हो सकता है।" चन्द सतर बाद।

तो फिर आख़िर वह क्या है ? वह इन्सान ही है ?? अगर है तो होगा लेकिन हां हां वह इन इन्सानों जैसा इन्सान तो नहीं है (और यक़ीनन नहीं है) जिन्हें आ़म तौर पर आंखें देखतीं, कान उनकी बात सुनने और दिल उनकी सुहबतों से तअस्सुरात के हिस्से हासिल करते रहते हैं।" चन्द सतर बाद-

"ज़्यादतीए तफ़क्कुर ने तहय्युर को फ़रावानी बख़्शी और बिल आख़िर किसी फ़ैसला की हद तक पहुंचते हुए क़ल्बे मुज़्तर अ़क़ीदत व मुहब्बत की ज़न्जीरों में जकड़ गया।"

अब फ़ैसला नाज़िरीन के हाथ है कि जनाब टांडवी साहब के बारे में गयावी साहब कोई फ़ैसला न कर सके लेकिन दारुल उलूम देवबन्द के शैख़ुल हदीस से

लेकर चपरासी तक का यह आख़िरी फ़ैसला है कि सय्यदे आलम महबूबे किर्दिगार सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हमारे जैसे एक बशर थे एक मामूली बशर थे या महज़ बशर थे वग़ैरह वग़ैरह देवबन्दी मकतबए फ़िक्र का एक बे शुऊर बच्चा जिसको पाएजामा बांधने की तमीज़ नहीं वह बर ख़ुर्दार भी यह कहते फिरते हैं कि रसूलुल्लाह तो हमारे जैसे बशर थे ज़्यादा से ज़्यादा ऐसे ही जैसे 'गाँव का चौधरी' मआज़ल्लाह सुम्म मआज़ल्लाह यह है हज़राते देवबन्द की एक नापाक ज़ेहनियत मगर मुझे इजाज़त दें जनाब गयावी साहब कि जब उनके पीर व मुर्शिद मौलाना टांडवी ख़ुदा व नबी न थे इन्सान और फ़रिश्ता भी नहीं थे तो आख़िरश थे क्या ? जिन्न, देव, भूत वग़ैरह वग़ैरह उस वक़्त आलमे हैरानी में कोई फ़ैसला न कर सके तो अब ब-दुरुस्तगीए होशो हवास कोई फ़ैसला सादिर फ़रमायें।

नज़रे अक़ीदत स. 39

मेरी बिगड़ी बना दे कर दे मेरा काम ऐ साक़ी
क़ियामत तक न भूलूंगा मैं तेरा नाम ऐ साक़ी

इस शेअ्र में मौलाना टांडवी से बिगड़ी बनाने और हाजत रवाई की दरख़्वास्त है अलबत्ता दुरूदे ताज पढ़ना शिर्क है चूंकि इसमें रसूले ख़ुदा से हाजत रवाई की इल्तेजा है।

नज़रे अक़ीदत स. 7

"मैं बारहा बाज़ बाज़ जिस्मानी अमराज़ में मुब्तला हुआ और शाफ़ीए मुतलक़ के उस प्यारे बन्दे (यानी टांडवी) की सिर्फ़ ज़ियारत करके शिफ़ा की दौलत से माला माल हुआ।"

नज़रे अक़ीदत सफ़हा 7 हस्बे ज़ैल इबारत में इक़रारे तवस्सुल के साथ पीर परस्ती का तेवर मुलाहज़ा कीजिये।

"मैंने जिस दुआ में भी इस मज़हरे अनवारे ख़ुदावन्दी का तवस्सुल किया वह दुआ फ़र्श से चल कर यक़ीनन अर्श तक पहुंची और ख़िलअते क़बूलियत का इक्तेसाब करके रही थीं इससे क्या! मैंने देखा, और बहुत कुछ देखा, तुम्हें नज़र न आया तो छोड़ो! लिल्लाह मुझे न छेड़ो।"

न छेड़ ऐ नकहते बादे बहारी राह अलग अपनी
तुझे अटखेलियां सूझी हैं हम बेज़ार बैठे हैं

नज़रे अक़ीदत स. 11

"तेरे (यानी मौलाना टांडवी) क़दमों से लिपट कर अपनी कामरानी की सिफ़ारिश कराना चाहूंगा तेरे पीछे पीछे शाफ़ेअे महशर क़ासिमे जामे कौसर तक पहुंचने की तमन्ना करूंगा।" चन्द सतर बाद-

"तेरी अदना सी तवज्जोह भी इन्शाअल्लाह तआला मेरी नजात के लिए काफ़ी होकर रहेगी।"

देवबन्दी धर्म में तो रसूले ख़ुदा अपनी बेटी फ़ातिमा के काम न आयेंगे बल्कि ख़ुद हुज़ूर को अपना हाल नहीं मालूम कि उनके साथ क़ियामत में क्या मुआमला होगा मगर टांडवी की अदना सी तवज्जोह गयावी साहब की नजात के लिए काफ़ी है।

नज़रे अक़ीदत स. 15

ख़ुदा तक मैं रसाई चाहता हूं
वसीला है मेरा वह शैख़े आज़म

नज़रे अक़ीदत स. 18

शफ़ीउल वरा तक पहुंच जाऊँगा मैं
पकड़ लूंगा जब हश्र में तेरा दामाँ

नज़रे अक़ीदत स. 19

अली से मिली तुझको मुश्किल कुशाई
न क्यों मुश्किलें फिर हमारी हो आसाँ

जब पीर को मुश्किल कुशा कहने को जी चाहा तो मौलाए कायनात की मुश्किल कुशाई का इक़रार किया।

नज़रे अक़ीदत स. 23

तुम्हारे मर्तबा तक फ़िक्र की परवाज़ क्या पहुंचे
तो फिर मैं किस तरह कह दूं कि तुम क्या हो कहां तुम हो

नज़रे अक़ीदत स. 25

हमें भी गर तवक़्क़ोअ् है तो क्या बेजा तवक़्क़ोअ् है
कि ताजो तख़्त लाया है हमारा यूसुफ़े सानी

इस में सय्येदुना यूसुफ़ अलैहिस्सलाम से मुवाज़ना व मुक़ाबला है।

नज़रे अक़ीदत स. 27

याद हक़ का ये बाबे अव्वल कि यादे महबूबे हक़ हो दिल में
वसीला अपना न हो जो कोई तो ख़ाक यादे ख़ुदा करेंगे
करेंगे अख़ज़े फ़ुयूज़ उससे वह पास हो या न हो हमारे
हम उसका नक़्शा जमा के दिल में अब उससे उल्फ़त किया करेंगे

फ़ुयूज़ व बरकात के लेने में क़ुर्ब व बुअद का कोई सवाल नहीं।

नज़रे अक़ीदत के मुन्दर्जा बाला चन्द अशआर से नाज़िरीन यह फ़ैसला कर सकते हैं कि अपने बुज़ुर्गों के तवस्सुल में हज़राते देवबन्द को किस हद तक ग़ुलू है।

अब यहीं पर चन्द लम्हे के लिए मुदीरे फ़ारान जनाब माहिरुल कादरी साहब की तवज्जोह चाहता हूं अभी कि आंजनाब ने फ़ारान का तौहीद नम्बर शाया किया जिस में शिर्क व बिदअत और वसीला का रद्द करते हुए रक़मतराज़ हैं।

फ़ारान तौहीद नम्बर स 10

> "इन्तेहा यह है कि किसी क़ुरआनी दुआ में 'बहक़्क़े फ़लां' या यह कि या अल्लाह तू फ़लां नबी के वसीला से हमारी दुआ क़बूल फ़रमा तक नहीं मिलता।"

जनाब आमिर साहब आपको उलमाए मुवह्हिदीन (उलमाए देवबन्द) के फ़ज़ायल में क़सीदा ख़्वानी और गुल अफ़शानी से पहले लाज़िम था कि बिलइस्तीआब न सही तो जस्ता जस्ता ही उनके अक़ाइद का मुताला फ़रमा लेते। अगर आपको क़ुरआन में 'बहक़्क़े फ़लां' न मिल सका तो अपने शैख़ुल इस्लाम का शजरा ही उठा कर देख लेते।

बने हम संगदिल मजबूर होकर उस सितमगर से
जवाब आख़िर हमें देना पड़ा पत्थर का पत्थर से

शैख़ुल इस्लाम नम्बर स 7 सन् 1955 ई०।

"अल्लाहुम्म बिजाहे कुतबुल आलम सय्येदुना व मुर्शिदुना मौलाना सय्यद हुसैन अहमद मदनी व बिजाहे रशीद अहमद गंगोही व बिजाहे हाजी इमदादुल्लाह यहां तक कि उनतालीस (39) नम्बर में बिजाहे अमीरुल मोमिनीन बाबे मदीनतुल इल्म सय्येदुना अली इब्ने तालिब और चालीसवें मर्तबा में बिजाहे सय्येदुल अम्बिया वल मुर्सलीन सय्येदुना मौलाना मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम।"

अब आप फ़रमायें यह बिजाहे फ़लां वही है जो आपको आयाते क़ुरआनी में न मिल सका या यह कुछ और है ? तअज्जुब है कि क़ुरआन की किसी आयत में नबी और रसूल के तवस्सुल का कोई इशारा तक आप न पा सके और आप ही के घर में क़ुतबे आलम व शैख़े आलम का वसीला ढूंडा जा रहा है। शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 160 कालम नम्बर 1 का एक और हवाला मुलाहज़ा फ़रमाइये।

"मौलाना क़ासिम नानौतवी का शजरा बाइसे बरकत होता है, यह शजरा जो हज़रत नानौतवी ने फ़ारसी में नज़्म फ़रमाया है ख़ास असर रखता है।"

माहिर साहब आप उन पुराने खिलाड़ियों के अभी नये साथी हैं आप को ख़ुद भी अन्दरूने ख़ाना की ख़बर नहीं, आप हम अहले सुन्नत को बिदअती और क़ब्र पुजवा कहते हैं। फ़रमाइये मौलाना क़ासिम नानौतवी के बारे में आपकी क्या राय है। मुलाहज़ा फ़रमाइये सवानहे क़ासमी जिल्द दोम स. 30 मुरत्तेबा मौलाना सय्यद मुनाज़िर अहसन गीलानी-

"अपने बुज़ुर्गों से मैंने सुना है कि कलियर शरीफ़ तशरीफ़[1] ले जाते तो रुड़की से पैदल नंगे पाँव हो लेते और शब को रौज़ा में दाख़िल होकर केवाड़ बन्द कर देते थे और तमाम रात हज़रत साबिर साहब के मज़ार पर तन्हाई में गुज़ारते।"

फ़रमाइये यह भी क़ब्र परस्ती और बिदअत है या इसके सिवा कुछ और है।

मताए दीनो दानिश लुट गई अल्लाह वालों की
यह किस काफ़िर अदा का ग़मज़ए ख़ूं रेज़ है साक़ी

अब शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 81 की चन्द सतरें मुलाहज़ा फ़रमायें।

> "ज़ाइरीन व मुअ़तक़िदीन दूर दराज़ मक़ामात से आकर मस्जिद के कोना कोना में भरे रहते हैं, ज़ुहर की नमाज़ के बाद हज़रत (टांडवी) का यह मामूल होता कि मुसल्ला के इर्द गिर्द रखे हुए पानी की बोतलों और शीशों पर दम करते। बादे अर्ज़ां लोगों की दरख़्वास्तें पढ़ कर उनकी हाजतें दुआ व तावीज़ वग़ैरह से मुतअ़ल्लिक़ पूरी करते।"

1 यानी मौलाना क़ासिम नानौतवी

माहिर साहब! .कुरआन की किसी आयत में इसका भी सुबूत है या नहीं ? या कम से कम मामुलाते नबुव्वत या ख़ुलफ़ाए राशिदीन ही की ज़िन्दगी में उसकी कोई मिसाल आप दे सकते हैं या नहीं ? कभी आपने ग़ौर फ़रमाया कि जो दुआ तावीज़ देवबन्द की चहार दीवारी में शिर्क व बिदअत है वह सिलहट पहुंच कर कैसे मामुलात में दाख़िल हो गई ? कुछ तो है जिसकी पर्दा दारी है। चूंकि फ़ारान तौहीद नम्बर में आपने उलमाए देवबन्द की ताईद व हिमायत का एक पार्ट अदा किया है, हर .फ़ुरूई मसला को आप .कुरआन व सुन्नत ही की ज़न्जीर में जकड़ना चाहते हैं, चुनान्चे मौलाद, फ़ातिहा, उर्स वग़ैरह जैसे मसाइल के जवाज़ में आपने हर जगह .कुरआन व सुन्नत ही का मुतालबा किया है तो इसी मुतालबे का हक़ हमें भी पहुंचता है अब इसी ज़िम्न में दो चार रिवायतें आप और भी मुलाहज़ा फ़रमायें।

> "फ़रमाया, (यानी मौलाना टांडवी) चेचक के लिए सूरए रहमान नीले धागे पर इस तरह पढ़े कि हर "फ़बि अईयि आ लाई रब्बिकुमा तुकज़्ज़िबान" पर एक गिरह लगा कर दम कर दिया करे और बतौरे तिफ़्ज़े मा तक़दम बच्चों के गले में डाल दे इन्शाअल्लाह हिफ़ाज़त रहेगी।"

शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 160 कालम नम्बर 1

> फ़रमाया, नज़रे बद के लिए सात मिर्चें लेकर सात बार सूरए फ़ातिहा पढ़ कर दम करके मरीज़ के सर के गिर्द फिरा कर आग में डाल दे।

माहिर साहब! कभी इन हवालाजात की भी फ़िक्र आपको हुई है ? नारए रिसालत की ईजाद पर तो आप बराग़ पा हैं और न जाने कितनी जली कटी सुनाई, आख़िरश यहां पहुंच कर क्यों आपके मुंह में दही जम गया है ? आख़िरश रुड़की से नंगे पाँव पैदल जाना, रात भर दरवाज़ा बन्द करके आस्ताना के अन्दर रहना, अल्लाहुम्म बिजाहे कुतुबे आलम मौलाना रशीद अहमद गंगोही का पढ़ना, सिलहट पहुंच कर बोतलों और शीशियों पर दम करना, चेचक के लिए नीले धागे का गन्डा बनाना, नज़रे बद के लिए सात दम की हुई मिर्चों को आग में डालना, यह सब .कुरआन की किस आयत का तर्जुमा है ? या .कुरआन सिर्फ़ मीलाद व क़ियाम, उर्स व फ़ातिहा के लिए नाज़िल हुआ है, आपके इन्साफ़ व दियानत से मेरा मुतालबा है कि किसी मिशन के बुनियादी व कलीदी ज़ाबते से मुंह मोड़ कर बाज़ अवाम की

मामूलियात को झन्डा बना कर नगर नगर फिरना और उनकी आड़ में उलमा व मशाइख़ को तअ्ना देना कहां तक दुरुस्त है ? उलमाए अहले सुन्नत का मुतालबा देवबन्दी अवाम से नहीं है बल्कि उनके सरख़ीले जमाअत और अमीरे कारवां से है। जिन की लग़ज़िश पर आप भी शिकवा सन्ज हैं। हो सकता है आप भूल बैठे हों मगर हमें याद है लीजिये आप ही की चीज़ आपके सामने पेश किये देता हूं।

यक गया हूं जुनूं में क्या क्या कुछ
कुछ न समझे ख़ुदा करे कोई

फ़ारान तौहीद नम्बर स. 19

> "हां यह ज़रूर है कि बाज़ मुव्वहिदीन उलमा (उलमाए देवबन्द) से लफ़्ज़ों में बे एहतियाती ज़रूर हो गई है, बात क़रीना और ख़ूबसूरती के साथ मुहतात अन्दाज़ में कहनी चाहिये थी -- चन्द सतर बाद-- मगर साथ ही इसका भी हमें एतेराफ़ है कि लफ़्ज़ों की बे एहतियाती और बद सलीक़गी के सबब ख़ुद उनके मिशन को इससे नुक़्सान पहुंचा है। मुख़ालिफ़ीन ने इस लफ़्ज़ी ऊंच नीच और इज़हारे बयान की बे एतेदाली को नमक मिर्च लगा कर अवाम मुसलमानों के सामने पेश किया और उनका यह हरबा कामयाब रहा। तख़्तए गुल पर जो कीचड़ के छींटे पड़ गये थे। फ़रीक़े मुख़ालिफ़ ने उन्हें इतना नुमायाँ किया कि जैसे यह फूल का तख़्ता नहीं बल्कि सारे का सारा घूरा और तमाम का तमाम मज़बला है।"

अपने इदारिये की दूसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

> "अहले बिदअ़त ने उन वहाबियों और देवबन्दियों की किताबों के बाज़ ग़ैर मुहतात जुमलों और ग़ैर मुअ़तदिल इबारतों का इस ज़ोर शोर से प्रोपगन्डा किया है कि इस तस्वीर के तमाम रौशन और ताबनाक पहलू अवाम की निगाहों से ओझल हो गये हैं।"

कुफ़्र टूटा ख़ुदा ख़ुदा कर के   लाए उस बुत को इल्तेजा करके

मुनासिब होगा कि यहीं पर अपने रफ़ीक़े क़लम जनाब आमिर साहब उस्मानी की भी राय मुलाहज़ा फ़रमा लें।

'तजल्ली' फ़रवरी मार्च सन् 59 ई० स. 84 आंजनाब रद्दे 'शिहाबे साक़िब' पर तबसेरा करते हुए रक़मतराज़ हैं।

> "अश्शिहाबुस्साक़िब का अन्दाज़े तहरीर वाक़ई ग़ैर महमूद और लाइक़े इज्तेनाब है। बल्कि हम वहाबियों के और भी बुज़ुर्गों से कहीं कहीं अज़राहे बशरियत अल्फ़ाज़ व अन्दाज़ की ऐसी लग़ज़िशें हो गई हैं कि उन्हें क़ाबिले इस्लाह कहना चाहिये।"

जनाब माहिर साहब! आपकी निगाह में उलमाए देवबन्द ग़ैर मुहतात, बे क़रीना, ग़ैर मुअ्तदिल और बद सलीक़ा हैं और जनाब आमिर साहब की नज़र में मौलाना टांडवी का अन्दाज़े तहरीर ग़ैर महमूद, लाइक़े इज्तेनाब बल्कि तबर्रा बाज़ी और सब्बो शत्म मौलाना टांडवी का देरीना वस्फ़ है। ऐसे ही आमिर साहब का कहना है कि हम वहाबियों के बुज़ुर्गों से ऐसी लग़ज़िशें हुई हैं जो क़ाबिले इस्लाह हैं।

तक़वीयतुल ईमान की एक इबारत से मुतअ़ल्लिक़ जनाब आमिर साहब का कहना है।

"कितना ख़तरनाक अन्दाज़े बयान है कितने लरज़ा देने वाले अल्फ़ाज़ हैं।" तजल्ली फ़रवरी मार्च सन् 57 ई० स 17

फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी की राय हस्बे ज़ैल है।

बुरहान दिल्ली मार्च सन् 52 स. 173

> "और बताइये कि अलअयाज़ बिल्लाह इस जुमले का हासिल यह नहीं है कि इस मामला में मौलाना थानवी का मक़ाम आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से भी ऊँचा है। जो काम आँहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम न कर सके वह मौलाना थानवी ने कर के दिखा दिया।"

बुरहान मार्च सन् 52 स. 170।

> "निहायत अफ़सोस और बड़े शर्म की बात है कि वह मौक़ा पर यह दुब्किकश शाइयी वअमी व यासिमुन के मुताबिक़ इस हद तक आगे बढ़ गये हैं कि आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तन्क़ीस कर बैठे हैं।"

इस क़िस्म की चन्द दर चन्द मिसालें पिछले सफ़हात में गुज़र चुकी हैं। मौलाना टांडवी से मुतअ़ल्लिक़ मौलाना राम नगरी की राय गुज़र चुकी, यानी मौलाना टांडवी फ़ितना परवर, शर अंगेज़, कम ज़र्फ़, ग़ैर ज़िम्मेदार, मुफ़्तरी बुहतान तराश, काफ़िर साज़, और भी न जाने क्या क्या थे?

मौलाना सय्यद अबुल आला साहब की राय है कि मौलाना हुसैन अहमद के फ़तावे क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी में नहीं होते बल्कि गांधी जी के जुम्बिशे लब पर गर्दिश करते हैं। यह एक बड़ी लम्बी दास्तान है। मैं कहां तक आपको सुनाऊं और कब तक आप सुनेंगे। यह चन्द मिसालें देकर आपका इन्साफ़ चाहता हूं कि आप दूसरों को छोड़िये ख़ुद आपकी निगाह में जो ग़ैर मुहतात, बद सलीक़ा व बे क़रीना है वह आपके गले का हार क्यों है? कभी आपने यह सोचने की ज़हमत फ़रमाई है कि आप की यह राय और फिर उलमाए देवबन्द से आपका साठ गांठ देख कर दुनिया आपके बारे में क्या राय क़ाइम करेगी? और माहिर साहब सच सच फ़रमाइये जो आपके हुज़ूर बे क़रीना बद सलीक़ा हो क्या उससे भी आपका याराना हो सकता है? अगर नहीं तो उन लोगों से क्योंकर रस्मो राह जो बारगाहे रिसालत में बद सलीक़ा व बे क़रीना हैं, कभी ठन्डे दिल से सोचिये क्या आपकी राय और आपका तर्ज़े अमल देख कर आपके दिल का चोर गिरिफ़्त में नहीं आता? आख़िरश यह क्या अंधेर है कि अगर किसी का क़लम आप या आपकी जमाअ़त से मुतअ़ल्लिक़ बहक जाये तो आप आग बगोला हो जायें सन्जीदगी व मतानत के पैराहन में आग लगा कर लंगोट बांधे 'हल मिम्बारिज़िन' पुकार उठें। क्या सिर्फ़ इस लिए कि उसने आप या आप की जमाअ़त को निशाना बनाया। जिसकी ज़िन्दा मिसाल में मौलाना अमीन इस्लाही, मौलाना मन्ज़ूर नोमानी वग़ैरह का नाम लिया जा सकता है। कितना दिल ख़राश व ईमान सोज़ मक़ाम है कि अपने व अपनी जमाअ़त से मुतअ़ल्लिक़ आप किसी की बद सलीक़गी को न बरदाश्त कर सकें लेकिन सय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बारगाह का मुजरिम व ख़ताकार यक लख़्त माफ़ कर दिया जाये।

जब सरे महशर वह पूछेंगे बुला के सामने
क्या जवाबे जुर्म दोगे तुम ख़ुदा के सामने

जनाब माहिर साहब! यह बड़ी नाज़ुक बारगाह है, यहां तो हर क़दम फूंक फूंक कर उठाना पड़ता है, सच कहा कहने वाले ने-

वा ख़ुदा दीवाना बाश व बा मुहम्मद होशियार

अगर आप अपनी जमाअ़त और अपने मुतअ़ल्लिक़ किसी का तेज़ व तुन्द लब व लहजा नहीं बरदाश्त कर सकते तो ठन्डे दिल से सोचिये कि बारगाहे रिसालत में गुस्ताख़ाना शिआरों का जुर्म क्योंकर नज़र अन्दाज़ किया जा सकता है ?

यह ईमान व अक़ीदे का मसला है, इसलिए इसको रस्मो रिवाज और आपसी रवादारी के तराज़ू में तौलने के बजाए ईमान व अक़ीदे की कसौटी पर परखने की कोशिश कीजिये। अपने ही मुअ़तक़िदात के पेशे नज़र मुझे मअ़ज़ूर समझ कर मेरी जसारत को माफ़ फ़रमाईगा अगर दिल के किसी गोशे में ईमान का कोई हिस्सा बाक़ी रह गया हो तो अपना मुआमला उसी अ़दालत में पेश कर दीजिये और फ़ैसले के बाद अपने तर्ज़े अ़मल पर नज़र सानी कीजिये। अगर बारे ख़ातिर न हो तो आरिफ़ बिल्लाह मौलाना आसी अ़लैहिर्रहमा का एक शेअ़र सुन लीजिये जो आदाबे नबुव्वत से मुतअ़ल्लिक़ है।

ऐ पाए नज़र होश में आ कूए नबी है
आंखों से भी चलना तो यहां बे अदबी है

माहिर साहब! यह वही हज़रत आसी अ़लैहिर्रहमा हैं जिनके एक शेअ़र पर आपने तौहीद नम्बर में और जनाब नज़ीर अहमद साहब रहमानी ने 'रद्दे अक़ाइदे बिदइया' में बड़ी ले दे मचाई है। रहमानी साहब ने तो असल शेअ़र ही में कतर बियोंत करके वह सितम ढाया है जो उन्हीं जैसे साहबे क़लम को ज़ेब देता है। क्यों न हो रहमानी साहब ग़ैर मुक़ल्लिद ठहरे अगर असल शेअ़र पेश कर देते तो तक़लीद का इल्ज़ाम सर पर आ जाता लेकिन आईये मैं आपको एक नये ख़ुदा का पता देता हूं अगर आइन्दा कभी शिर्क नम्बर की इशाअ़त का मौक़ा मिले तो अपने खद्दर पोश ख़ुदा को भी इसी में शुमार कर लीजियेगा। हवाला देखिये और सर धुनिये-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 59

> तुमने कभी ख़ुदा को भी अपने गली कूचों में चलते फिरते देखा है ? कभी ख़ुदा को भी उसके अ़र्शे अ़ज़मत व जलाल के नीचे फ़ानी इन्सानों से फ़रोतनी करते देखा है ? तुम कभी तसव्वुर कर सके कि रब्बुल आलमीन अपनी किब्रियाईयों पर पर्दा डाल के तुम्हारे घरों में भी आकर रहेगा।

माहिर साहब! अब आइन्दा एहतियात से काम लीजियेगा। जिसको आपने शैख़ुल इस्लाम मौलाना हुसैन अहमद समझ रखा है, मआ़ज़अल्लाह, वही अल्लाह तआ़ला है जो अपनी किब्रियाई पर पर्दा डाल कर उतर आया है। आइन्दा जब शिर्क नम्बर में आप अपने मअ़बूदों की फ़ेहरिस्त मुरत्तब कीजियेगा तो उसमें खद्दर पोश ख़ुदा को भी शामिल कर लीजियेगा। मेरे अपने ख़्याल में इस हवाला को देखते ही आपके बुग़्ज़ व अ़नाद का नशा हिरन हो जाएगा।

माशाअल्लाह आप तो शायर भी हैं। हज़रत आसी अ़लैहिर्रहमा के शेअ़र में आपने महज़ माना हक़ीक़ी ही से लेकर गुफ़्तगू की है। मजाज़, तश्बीह, इस्तेआ़रा, उमूमे मजाज़ वग़ैरह को अपने क़रीब फटकने नहीं दिया। आपके इन्साफ़ व दियानत से यही तवक़्क़ोअ़ है कि शैख़ुल इस्लाम नम्बर की मुन्दर्जा बाला इबारत में भी आप महज़ माना हक़ीक़ी से काम लेकर अपनी दियानत का सुबूत देंगे। आपने तो ख़ुद ही अपने हक़ में तावील व तौजीह के सारे दरवाज़े बन्द कर लिये हैं।

माहिर साहब! ज़रा एक बात फ़रमाइये क्या आप लोगों का ख़ुदा भी कांग्रेसी है जिसने अपनी किब्रियाई पर खद्दर का पर्दा डाल लिया और यह तो फ़रमाइये क्या मुन्कर नकीर भी कांग्रेसी हैं कि आप के शैख़ुल इस्लाम उस मय्यत की नमाज़े जनाज़ा न पढ़ाते, जिसका कफ़न खद्दर का न होता ताकि खद्दर में देख कर मुन्कर नकीर भी अपनी जमाअ़त का मेम्बर समझें।

हवाला मुलाहज़ा कीजिये शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 25

> "अगले दिन अपने स्कूल के साथियों में यह ख़बर सुनी कि मौलाना (टाइवी) ने एक जनाज़े की नमाज़ के वक़्त सख़्त नाराज़गी का इज़हार किया क्योंकि कफ़न खद्दर का नहीं था।"

फ़रमाइये क़ुरआन की किस आयत या सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि वसल्लम की किस हदीस में है कि मय्यत का कफ़न खद्दर ही का होना चाहिये। इसी का नाम है 'इहदीस फ़िद्दीन' अपने इदारिया में हर चन्द सतर बाद आपने अहले सुन्नत को बिदअ़ती फ़रमाया है। अब कहिये यह आपके शैख़ुल इस्लाम की बिदअ़त कैसी रही ?

ज़ाहिदे तंग नज़र ने मुझे काफ़िर जाना
और काफ़िर यह समझता है मुसलमान हूं मैं

क़ारईन ने हवालाजात के चन्द इशारों से उलमाए देवबन्द की धांदली का सही अन्दाज़ा कर लिया होगा कि एक ही बात को कहीं जाइज़ कहना और कहीं नाजाइज़ व बिदअत, कहीं हलाल व कहीं हराम कहना यह उनके बायें हाथ का खेल है, इसी ज़िम्न में चन्द हवालाजात और भी मुलाहज़ा फ़रमायें-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर 7

> "और अक्सर यह भी फ़रमाया करते थे (यानी मौलाना टांडवी) कि हमें जो कुछ मिला इसी सिलसिलए चिश्तिया से मिला, जिस का खाए उसी का गाए।"

वाह रे दीदा दिलेरी! इन्हीं जुमलों को हम कह कर मुशरिक और बिदअती हो जायें और आंजनाब कह कर शैख़ुज़्ज़मीन वलआसमान बन जायें।

मक्तूबाते शैख़ जिल्द दो नम्बर 103 स. 272।

> "चौधरी साहब मरहूम ने हज़रत मदनी की मुस्तअमल लाठी की फ़रमाइश की थी लाठी से उसी तरफ़ इशारा है। बुज़ुर्गों के तबर्रुकात पर सल्फ़े सालिहीन का अमल दर आमद है।"

टांडवी साहब की मुस्तअमल लाठी को तबर्रुकात में शामिल करने के लिए सल्फ़े सालिहीन का अमल दर आमद सुबूत के लिए काफ़ी है लेकिन उर्स व क़ियाम के लिए किताब व सुन्नत ही से सुबूत मिलना चाहिये।

जो चाहे आप का हुस्ने करिश्मा साज़ करे

शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 108

> "हज़रत (टांडवी) की ख़्वाहिश के मुवाफ़िक़ उस तौलिया की जिस में हज़रत ने आख़िरी हज्जे बैतुल्लाह का एहराम बांधा था कफ़न की क़मीस बनाई गई और उस क़मीस में उन तबर्रुकात को जो हज़रत को जान से ज़्यादा अज़ीज़ थे क़ल्ब की जानिब पैवस्त करके कफ़ना दिया गया।"

अजमेर व कलियर, कछौछा, बहराइच, कालपी, फुलवारी, बिहार, बदायूं, बरैली के आस्ताना जात में बुज़ुर्गों के तबर्रुकात की ज़ियारत शिर्क व बिदअत क़रार

पायें, ग़ौस पाक की एबा, महबूबे इलाही की कुलाह सपेदा ख़ातूने जन्नत की चादर सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मुए मुबारक से चिढ़ने वाले टांडवी की लाठी कलेजे से लगाये बैठे हैं। यह अपना अपना नसीब और अपनी अपनी तक़दीर है।

किसी की क़िस्मत में लाठी है किसी के नसीबे में कुलाह, कोई माहिर साहब से यह भी दरियाफ़्त करे कि तबर्रुकात को कफ़नाने के लिए क़ुरआन की किस आयत से सनदे जवाज़ हासिल किया गया है? फिर तबर्रुकात को क़ब्र में ताक़चा बना कर रखना चाहिये या मय्यत के सीना पर? हज़रत शैख़ सड़ गले होंगे ता तबर्रुकात का क्या हश्र हुआ होगा?

अब जनाब क़ारी मुहम्मद तय्यब साहब मुहतमिम दारुल उलूम देवबन्द की क़ब्र परस्ती मुलाहज़ा कीजिये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 14 कालम नं॰ 2

> "जो मक़बूलियत ज़िन्दगी में थी वही मौत के बाद भी रही और बाक़ी है। मज़ार हर वक़्त ज़ियारतगाह बना रहता है, यहां तक कि रात को एक एक बजे भी जाने वाले गये तो मज़ार पर लोगों को पाया। उसी महबूबियत का नतीजा है।"
>
> गिलए जफ़ाए वफ़ा नुमा जो हरम को अहले हरम से है
> किसी बुतकदे में बयाँ करूं तो कहे सनम भी हरि हरि

जनाब क़ारी मुहम्मद तय्यब साहब उसी दारुल उलूम के मुहतमिम हैं जहां मज़ारात के ढाने का दर्स दिया जाता है मगर हज़रत शैख़ के मज़ार पर एक एक बजे रात तक मेला लगा देख कर बांछें खिल गईं और यही मेला हज़रत टांडवी की मक़बूलियत और महबूबियत की दलील बन गया। अजमेर व कलियर और दूसरे आस्तान जात पर तो ताले लगाने की स्कीम हैं यहां धूल उड़ते देख कर कलेजा ठन्डा होगा। मगर हज़रत टांडवी के यहां मेला लगा कर तस्कीने क़ल्ब का सामान फ़राहम किया जाता है। अगर क़ारी साहब को ज़हमत न हो तो एक हवाला और मुलाहज़ा फ़रमायें। शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 29 कालम नं॰ 4, अज़ जनाब मुनीर अहमद साहब थानवी।

> "दूसरे दिन हज़रत[1] ने दिन का अक्सर हिस्सा मेरे साथ बसर किया और सेह पहर हज़रत मौलाना क़ासिम नानौतवी की क़ब्र पर ले गये। क़ब्र के इर्द गिर्द उस वक़्त एक दो बकरियां चर रही थीं।"

अब क़ारी साहब ही फ़रमायें कि अगर हज़रत शैख़ की क़ब्र का मेला महबूबियत और निशाने क़बूलियत है तो मौलवी क़ासिम नानौतवी की क़ब्र के इर्द गिर्द बकरियों का चरना यह किस बात की अलामत व निशानी है ? और बकरियों ही पर क्या मौक़ूफ़ घोड़े गधे हर एक जानवर रौंदते होंगे। इसी मसलेहत के पेशे नज़र अइम्मये अहले सुन्नत ने उलमा, सुलहा, शुहदा और औलिया की क़ब्रों पर गुम्बद वग़ैरह बनाकर उन्हें महफ़ूज़ करके उनकी इज़्ज़त व हुरमत को बरक़रार रखा है।

नाज़िरीन के ज़ेहन व फ़िक्र से यह बात ओझल नहीं होनी चाहिये कि इस वक़्त मैं उन शवाहिद को पेश कर रहा हूं कि अजमेर व कलियर, बदायूं और बरेली के जो मरासिम उलमाए देवबन्द की नज़र में शिर्क व बिदअत हैं वही मरासिम उनकी चहार दीवारियों में न सिर्फ़ मुबाह व तहसीन बल्कि बाइसे फ़ख़्र व मुबाहात हैं। इसी सिलसिला की एक और जीती जागती मिसाल मुलाहज़ा कीजिये और कभी उलमाए देवबन्द से साबिक़ा पड़े तो ख़ुद उन्हीं के आईने में उनकी तस्वीर दिखला दीजिये।

मक्तूबाते शैख़ जिल्द दोम स. 336 (बक़िया हाशिया मक्तूब नम्बर 136)

> "यह ख़्याल उस वक़्त से पैदा हुआ जब से मौदूदियत जो गंगोह में सूरते फ़ितना इख़्तियार किये हुए है। कुछ तबादलए ख़्यालात और कुछ उनके अख़बारात का मुताला तरदीदन किया गया। यह लोग (जमाअते इस्लामी वाले) सहाबा तक को मुतजाविज़ कहते हैं चुनान्चे हज़रत अली व इब्ने उमर व हज़रत आइशा रज़ियल्लाहु अन्हुम को एहयाए तबलीग़े दीन में मुतजाविज़ अनिल एतेदाल के अल्फ़ाज़ इख़्तियार किये हैं। नीज़ ख़ुद मसलके एतेदाल में फ़रमाते हैं कि मैंने अश्ख़ासे माज़ी व हाल के बिला वास्ता दीन को किताब व सुन्नत से समझा है। नीज़ हज़रत हाजी (इमदादुल्लाह) अलैहिर्रहमा व मुजद्दिद अल्फ़े सानी अलैहिर्रहमा के मुतअल्लिक़ लिखते हैं कि इन हज़रात ने इब्तेदाअन ज़िन्दगी में तो अच्छा काम किया मगर आख़िर उम्र में ऐसी मस्मूम ग़िज़ा

1. यानी मौलाना टांडवी

> मुसलमानों को दे गये हैं कि आज तक मुसलमान उस के ज़हर से महफ़ूज़ नहीं हैं और भी तन्क़ीदात तसव्वुफ़ पर बहुत की है। बाज़ अहले गंगोह दूसरे बाज़ हज़रात अबू सईद अलैहिर्रहमा के मज़ार पर जाने से रोकते हैं और कहते हैं कि एक सन्यासी है जो पत्थरों में पड़ा है और यह मशहूर मक़ूला है मौदूदियों का कि देवबन्द और मज़ाहिरुल उलूम में क़ुरबानी के मेंढे तैयार किये जाते हैं। इस वक़्त अर्ज़ करने का मक़सद है कि आया हम खुल कर इन लोगों (मौदूदियों) को जवाब दें क्यों कि ख़ास कर गंगोह से वास्ता है।"

यह एक बहुत ही मानी ख़ेज़ सवाल है जो मौलाना टांडवी से किया गया था जनाब शैख़ का जवाब मुलाहज़ा फ़रमाने से पहले सवाल का तेवर मुलाहज़ा कीजिये। गंगोह के मौदूदी हज़रात अबू सईद अलैहिर्रहमा के मज़ार पर जाने से रोकते हैं। अब चूंकि गंगोह का मुआमला है लिहाज़ा हम मौदूदियों का मुक़ाबला करें या ख़ामोश रहें ?

अब मुआमला अजमेर व कलियर का नहीं है बल्कि अपनी ख़ानक़ाह गंगोह का है। दुनिया की हर ख़ानक़ाह सुनसान व वीरान हो जाये मगर थाना भवन और गंगोह की ख़ानक़ाह पर आंच न आये। यहां चहल पहल रहे, एक एक बजे रात तक मेला लगे। ख़ूब धूम धड़ाका रहे, चादर, गागर, ऊद व अम्बर यह सब गंगोह व थाना भवन के बाहर शिर्क व बिदअत हैं। इन आस्ताना जात पर पहुंच कर शिर्क व बिदअत और ग़ैरुल्लाह की परस्तिश के फ़तावे नज़रे आतिश हो जाते हैं। अब हज़रत शैख़ुज़्ज़मीन वलआसमान का जवाब सुनिये। मक्तूबाते शैख़ जिल्द दोम सफ़हा 351।

> "जमाअते इस्लामी के मौलवियों के मुबल्लिग़ इल्म व तहक़ीक़ की बेबसी इल्म व ख़िरद की कमी का इससे ज़बरदस्त कोई सुबूत नहीं हो सकता कि उन नादानों को अभी तक ताज़ीम व एहतेराम और बुत परस्ती में कोई फ़र्क़ नज़र नहीं आता है। हालांकि ताज़ीम और इबादत दो अलग-अलग चीज़ हैं, ग़ैरुल्लाह की ताज़ीम कुल्लियतन मम्नूअ् नहीं अलबत्ता ग़ैरुल्लाह की इबादत शिर्के जली है।"

काश कोई हज़रते नासेह से इतना पूछ ले
कौन है वह ख़ुद जो दीवानों को समझाने चले

जमाअ़ते इस्लामी के बुग्ज़ व अ़ेनाद में जनाब टांडवी अन कही कह गये।

यह भी ख़ूब रही उलमाए अहले सुन्नत को उम्र भर क़ब्र पुजवा और बिदअ़ती कहते कहते जनाब टांडवी की ज़बान घिस गई हर चन्द उलमाए अहले सुन्नत ने समझाया कि जनाब वाला इबादत व ताज़ीम में बुअ़्दुल मशि्रकैन है। हम अहले सुन्नत औलिया अल्लाह के मज़ारात पर क़ब्र की परस्तिश व इबादत के लिए नहीं जाते बल्कि अदबन व ताज़ीमन इक्तेसाबे फ़ुयूज़ व बरकात के लिए हाज़िर होते हैं। हम साहबे क़ब्र को ख़ुदा या ख़ुदा का हमसर नहीं जानते उन्हें अल्लाह का बरगुज़ीदा बन्दा और महबूबे इलाही समझ कर हाज़िर होते हैं। मगर जनाब टांडवी और उनके रुफ़क़ा व मुत्तबेईन एक न सुनते! जो नहीं आप लोग तो क़ब्र पूजते हैं लेकिन जब गंगोह की जमाअ़ते इस्लामी ने नातिक़ा बन्द किया तो जनाब टांडवी को उलमाए अहले सुन्नत ही के दामन में पनाह मिली और मौदूदियों का वही जवाब दिया जो उलमाए अहले सुन्नत की तरफ़ से उन्हें जवाब मिलता था।

अल्लाह रे ख़ुद साख़्ता क़ानून का नैरंग
जो बात कही फ़ख़्र वही बात कहीं नंग

जो बात गंगोह की ख़ानक़ाह में ब-शक्ले अदब व एहतेराम बाइसे फ़ख़्र व सआ़दत है बेऐनिही वही बात अजमेर व बहराइच में बाइसे नंग है (अपने नंगे अस्लाफ़[1] होने की लाज रख ली, नंगे अस्लाफ़ से और क्या तवक़्क़ोअ़ हो सकती है) और महज़ जवाब दो पर बस नहीं बल्कि अपने देरीना वस्फ़ यानी झगडालू होने की वजह से मौदूदियों के बलगे इल्म व तहक़ीक़ की बेबसी और इल्म व ख़िरद की बे मायगी पर भी चोट कस गये ऐसा मालूम होता है कि उन ग़रीबों से कभी कोई रस्मो राह नहीं।

न सभी दैहर से वाक़िफ़ न आईने वफ़ा जाने
[illegible] ऐ दै मुरव्वत रहने वाला तू कहां का है

1. मौलाना [illegible] अपनी दस्तख़त में अपने को नंगे अस्लाफ़ लिखा करते थे, [illegible] [illegible] जिल्द 2 में मुलाहज़ा कीजिये।

अब तो जनाबे शैख़ के मुत्तबेईन को अ़क़्ल व ख़िरद से काम लेना चाहिये, दूसरों को बिदअ़ती व क़ब्र पुजवा कह कर अपने शैख़ के अ़क़ीदे व अमल का मज़ाक़ न उड़ायें वरना आसमान का थूका ——— होकर रहेगा।

इसी ज़िम्न में एक दूसरा हवाला मुलाहज़ा कीजिये जो इसी सवाल से मुतअ़ल्लिक़ है। मक्तूबाते शैख़ जिल्द दोम स. 353।

> "पस ख़ुलासए बहस यह है कि जो लोग रसूले ख़ुदा के सिवा पर तन्क़ीद रवा रखते हैं और उनकी इत्तेबाअ़ को ज़ेहनी ग़ुलामी बनाने और इनको मेअ़यारे हक़ बनाने की नफ़ी करते हैं बल्कि ख़ुदा के सिवा एहतेराम और ताज़ीम को बुत परस्ती कहते हैं ऐसे लोग सख़्त गुमराही में मुब्तला हैं अल्लाह तआ़ला उनको तौबा की तौफ़ीक़ बख़्शे और बे अदबी से बचाए।"

ख़ुदा की लाठी में आवाज़ नहीं होती। यह है औलिया अल्लाह की मार अपनी बारगाह के सर फिरे से भी कहलवा ही के छोड़ा "ग़ैरुल्लाह की ताज़ीम और आस्तानए औलिया के ज़ाइरीन को बुत परस्त कहने वाला सख़्त गुमराही में मुब्तला है अल्लाह तआ़ला उसको तौबा की तौफ़ीक़ बख़्शे और बे अदबी से बचाये।" अब इसको तो जनाब आमिर के मौलवी असअ़द सल्लमहू जिन्हें हज़रते शैख़ के बजाए उनके ख़ुलफ़ा ने शैख़ की तरफ़ से ख़िलाफ़त[1] दे दी है वही बेहतर बता सकते हैं कि ख़ुद जनाबे शैख़ को भी तौबा की तौफ़ीक़ हुई थी या नहीं ? मगर कम से कम शैख़ के मुत्तबेईन को तो अपने ख़्यालाते फ़ासिदा व अ़क़ीदए बातिला से तौबा करनी ही चाहिये जिसकी सूरत यह होगी कि काली कोठरी में तौबा करने के बजाए किसी वली के आस्ताना पर तौबा की जाये।

सितारों से आगे जहां और भी है

इसी मक़ाम पर एक और रिवायत मुलाहज़ा फ़रमाइये। शैख़ुल इस्लाम नम्बर स. 430 कलाम नं॰ 4 अज़ जनाब मौलवी नज्मुद्दीन साहब इस्लाही।

बुते काफ़िर अदा पर्दे से बाहर आने वाला है

1. तजल्ली फ़रवरी मार्च सन् 59 ई॰ स॰ 80 जिन मुरीदों ने इन (शैख़) की [illegible] इनके साहबज़ादे को ख़िलाफ़त तक तफ़वीज़ फ़रमा दी है।

"और बाज़ अहलुल्लाह की ज़िन्दगी में हमको हुसैनी तादिश और नवरनी झलक भी नजर आई और हमने उस ज़ाते मुजस्समुस्सिफ़ात को अल्लाह की देन समझ कर उसके आस्ताना की ख़ाक को अपने लिए कौनैन की बका और दुनिया व माफ़ीहा का ख़ुलासा समझा और उस राह में खोना ही अगर पाना है तो हम कह सकते हैं कि हम उसके दरबारे गुहर बार से महरूम नहीं रहे।"

जिसे चाहें उसे हक़ मानते हैं जिसे चाहें ख़ता गर्दानते हैं
मुसल्लम ऊँट और हाथी निगल कर
यह बैठे, मच्छरों को छानते हैं

बग़दादे मुक़द्दस और अजमेरे मुअ़ल्ला की ख़ाक पर पाँव तक न पड़े वरना शिर्क व बिदअ़त का क़हर फूट पड़ेगा। लेकिन आस्तानए टांडवी की ख़ाक दौलते कौनैन और ख़ुलासए कायनात है।

ख़ुदा जब दीन लेता है तो अक़्ल भी छीन लेता है

यह बौखलाहट और बद हवासी नहीं तो और क्या है ? जब इन्सान की अ़क़्ल का दीवालिया होता है तो कुछ ऐसे ही हांका करता है। आख़िरश कब तक इन्साफ़ व दियानत का ख़ून होता रहेगा।

हट छोड़िये बस अब सरे इन्साफ़ आइये
इन्कार ही रहेगा मेरी जान कब तलक

आख़िरी गुज़ारिश

नाज़िरीन को अच्छी तरह याद होगा कि मैंने 'पेशे लफ़्ज़' में इस अमर का इज़हार कर दिया है कि 'ख़ून के आँसू' के तमाम हवालाजात उलमाए देवबन्द की किताबों से दिये जायेंगे चुनान्चे उसी एहतेमाम से मैंने इसकी तरतीब दी है अब 'जिल्दे अव्वल' को ख़त्म करते हुए यह गुज़ारिश है कि हर चन्द कोशिश करने के बाद पूरे मज़ामीन को एक जिल्द में न पेश कर सका जिसकी वजह अपनी अ़दीमुल फ़ुरसती के इलावा बर वक़्त कातिब का न मिलना भी है। जिल्दे दोम बिल्कुल तैयार है उसकी इशाअ़त में महज़ इतनी ताख़ीर होगी कि जिल्दे अव्वल से मुतअ़ल्लिक़ अहबाब व नाज़िरीन की रायें हासिल कर ली जायें ताकि जिल्दे दोम में उसका लिहाज़ रखा जाये।

जिल्दे अव्वल से मुतअ़ल्लिक़ हमें आप लोगों की राय का इन्तेज़ार रहेगा। ख़ून

के आंसू का यह हिस्सा अगले हिस्सा के लिए तम्हीद व दीबाचा की हैसियत रखता है। इन्शाअल्लाह तआ़ला जिल्दे दोम को भी देख कर आप पुकार उठेंगे कि अ़क़ाइदे बातिला के परख़चे उड़ गये और देवबन्दियत ने ख़ुद अपने हाथों अपनी क़ब्र बनाई है।

यह क़िस्सए लतीफ़ अभी ना तमाम है
जो कुछ बयाँ हुआ वह आग़ाज़े बाब था

परवरदिगारे आलम की बारगाह में दुआ है कि वह हम सब को अपने प्यारे हबीब अ़लैहिस्सलातु वत्तस्लीम के वसीले और सरकारे ग़ौसियत मआब व सरकारे ग़रीब नवाज़ रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हुमा के सदक़े अ़क़ाइदे बातिला से महफ़ूज़ रखे और ईमान पर ख़ातिमा फ़रमाये-

एक ज़रूरी अ़र्ज़दाश्त

कुछ न पूछिये आज के दौरे इब्तेला व आज़माइश में उलमाए अहले सुन्नत कितनी कठिनाईयों और दुशवारियों से गुज़र रहे हैं, आसमान के नीचे और ख़ुदा के बिछाये हुए इस फ़र्श पर यही वह उलमाए अहले सुन्नत हैं जिनकी राह में क़दम क़दम पर कांटे बिछाये गये हैं, मगर यह मर्दाने ख़ुदा वक़्त का हर ग़म झेलते हुए आगे ही बढ़े, उन्हें अपने से ज़्यादा अपनी क़ौम का एहसास है और ऐशे दुनिया से ज़्यादा आक़िबत की बाज़ पुर्स का ख़्याल है।

(1) आज देवबन्द की चहार दीवारी से हमारे ख़िलाफ़ यह आवाज़ उठाई जाती है कि हम क़ब्र पुजवे और बिदअ़ती हैं। अपने तरीक़े कार के मुताबिक़ अपनी तरफ़ से कुछ कहने के बजाए उन्हीं के घर का एक सवाल व जवाब हाज़िर किया जाता है।

तजल्ली देवबन्द मई सन् 61 ई० सफ़हा 19

सवालः---------------अज़ अब्दुलवहीद ज़िला बहराइच

अल्हम्दु लिल्लाह नाचीज़ ने जब से होश संभाला उलमाए देवबन्द का मुअ़तक़िद रहा है। शिर्क व बिदअ़त, मेला व अअ़रास से मुतअ़ल्लिक़ जो नज़रिया उलमाए देवबन्द का है नाचीज़ भी उससे बिल्कुल मुत्तफ़िक़ है। यह समझ कर कि यही नज़रियए इस्लाम है। कुछ अ़र्सा से मौलाना अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी और मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहब नाज़िमे जमीअ़तुल उलमा उ० प्र० के वअ़ज़ के सिलसिले से उर्स के मौक़ा पर दरगाह सय्यद सालार मसऊद ग़ाज़ी पर तशरीफ़ लाते हैं और दरगाह में जो आम लंगर जारी होता है उसमें से खाते और एक सौ रुपया नज़राना वसूल करते हैं, रक़म जो नज़राने के तौर पर लेते हैं और जिससे

लंगर पकाता है वह सब चढ़ावे की आमदनी होती है जिसको हम सब दुरुस्त नहीं समझते हैं। इस साल उर्स के मौका पर तो कमाल ही हो गया, वह यह कि मजार पर मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहब ख़ुद चढ़ावा चढ़वा रहे थे। मौलाना का यह रवैया देख कर बहुत से लोग जो मज़ारात पर चढ़ावा चढ़ाने और चढ़ी हुई चीज़ों को अपने इस्तेमाल में लाने को बुरा समझने लगे थे अब तज़बज़ुब में पड़ गये हैं। कहते हैं कि जब एक देवबन्दी आलिम मजार पर चढ़ावा चढ़वा रहे, और चढ़ी हुई रकम में से नजराना लेता है तो हमें चढ़ावा चढ़ाने और चढ़ी हुई चीज़ों के इस्तेमाल करने में क्या हर्ज है। यह भी वाज़ेह हो कि मज़ार पर चढ़ी हुई चादर भी मज़कूरा बाला मौलवी साहबान बराबर ले जाते हैं।

जवाब : तजल्ली देवबन्द मई सन् 61 ई० स. 19 कालम 2

मौलाना अबुल वफ़ा और मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहब वाक़िअतन देवबन्दी मकतबए फ़िक्र से तअल्लुक़ रखते हैं या नहीं ? इसमें हमे शक है लेकिन वाक़िअतन अगर उनका यह दावा है कि वह देवबन्दी मसलक के आदमी हैं और दूसरे लोग भी उन्हें देवबन्दी ही मसलक का तर्जुमान समझते हैं तो अच्छी तरह सुन लीजिये कि देवबन्दियत किसी नसली या वतनी ख़ुसुसियत का नाम नहीं जो एक बार चिपकने के बाद मरते दम तक छुटने ही का न नाम ले, क़ुबूरी बिदअ़तों की हौसला अफ़ज़ाई उर्सों में शिरकत और नज़र व नियाज़ के मज़मूम झमेलों से तअल्लुक़े ख़ातिर का घिनावना नज़ारा देखने के बाद हर आक़िल व बालिग बिला तअम्मुल कह सकता है कि अगर यह लोग पहले देवबन्दी थे तो अब नहीं रहे। देवबन्द जिस तर्ज़ फ़िक्र का नाम है उसमें इन बिदआ़त की कोई गुन्जाइश नहीं, कोई शख़्स देवबन्दियत का दावेदार होते हुए भी इस तर्ज़े फ़िक्र का अमली मुज़ाहरा करता है तो दो ही बातें हो सकती हैं या तो वह सरीहन धोका दे रहा है या वह इब्नुल वक़्त है गंगा गये तो गंगा राम और जमुना गये तो जमुना दास।

इतना न बढ़ा पाकीए दामाँ की हिकायत
दामन को ज़रा देख ज़रा बन्दे क़बा देख

नोट:- 'यह गंगा राम' और जमुना दास' वही हैं जो देवबन्दी मकतबए फ़िक्र के तर्जुमान कहलाये जाते हैं मगर नाज़िरीन ने सवाल व जवाब पढ़ कर उन हज़रात

(1) मौलवी अबुल वफ़ा साहब।
(2) मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब नाज़िमे जमीअतुल उलमा उ०प्र०।

के कैरेक्टर व किरदार का अन्दाज़ा कर लिया होगा कि जिस ख़ानक़ाह में यह घुसने न पायें तो वहां के जुमला मरासिम पर शिर्क व बिदअ़त की छाप लगायें और जहां से सौ रुपये नज़राना और पगड़ी के लिए मज़ार की चादर मिल जाये वहां के मुजाविर बन बैठें। कहीं तो यह नारा है क़ब्र उखाड़ो और कहीं यह तुरफ़ा तमाशा कि चादर चढ़ाओ नज़राना लाओ।

यह हैं देवबन्दियों के सरख़ीले जमाअत व अमीरे कारवाँ जिनके मुतअल्लिक़ ख़ुद उन्हीं के भाई बिरादरी का कहना है कि ऐसे लोग मश्कूक, धोका बाज़ व इब्नुल वक़्त हैं गंगा गये तो गंगा राम और जमुना गये तो जमुना दास। अब कोई हज़राते देवबन्द से दरियाफ़्त करे कि उर्स जाइज़ है या नाजाइज़ ? तो शायद यही जवाब मिलेगा कि अजमेर व कलियर का नाजाइज़ है और गंगोह व तहराइन का उर्स जाइज़।

जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

(2) और देवबन्द का दूसरा फ़ितना हमारे ख़िलाफ़ यह है कि 'सुन्नी उलमा' तो सबको काफ़िर बनाते हैं, इस सिलसिला में बतौरे इख़्तेसार इतनी सी बात अर्ज़ करनी है कि यह उलमाए अहले सुन्नत पर सरासर इल्ज़ाम व बुहतान है, वह सब को काफ़िर नहीं कहते, हां काफ़िर को काफ़िर कहते हैं और काफ़िर को कहना क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी में दुरुस्त है। क़ुरआन मजीद में मोमिन, मुश्रिक, काफ़िर, मुनाफ़िक़ हर एक का तज़्किरा है जो जैसा था वैसा ही कहा गया है। अलबत्ता उलमाए देवबन्द की काफ़िर गरी का यह आलम है कि राफ़ज़ी, ख़ारजी, नासबी, मोअ़तज़ली, क़ादियानी, जमाअ़ते इस्लामी पर कुफ़्र व गुमराही का फ़तवा देने के साथ साथ ख़ुद बानीए दारुल उलूम देवबन्द मौलवी मुहम्मद क़ासिम नानौतवी और मौलवी मुहम्मद इस्माईल देहलवी तक को काफ़िर, मुलहिद, ज़िन्दीक़ और न जाने क्या क्या कह डाला है। अब उन से कोई पूछे कि इस दुनिया में उनके इलावा कोई मुसलमान है भी या नहीं ?

दूसरों की आँख में तिनका देखने वाले को अपनी आँख की शहतीर नज़र नहीं आती।

ऐ दोस्तो! जिस तरह मसलए तलाक़ में मुफ़्तीए देवबन्द को यह फ़तवा देने का इख़्तियार है ज़ैद की बीवी को तलाक़े मुग़ल्लज़ा वाक़ेअ़ हो गई और फ़तवा पाने के बाद मुस्तफ़्ती नाचे कूदे शोर व हंगामा फैलाये तो सारी दुनिया उसका मज़ाक़

उड़ाएगी कि ऐ नादान अगर तू तलाक़ ही न देता तो तुझ को यह फ़तवा क्यों दिया जाता। ऐसे ही अगर हिफ़्ज़ुल ईमान, बराहीन क़ातेआ, तहज़ीरुन्नास वग़ैरह की कुफ़्री इबारात पर उलमाए अरब व अजम ने उनकी तकफ़ीर की है तो उन उलमा के ख़िलाफ़ आफ़त उठाने के बजाए उन्हें अपने गरीबान में मुंह डाल कर कभी अपनी किताबों का मुताला करना चाहिये अगर वह तौहीने रिसालत न करते तो उन पर कोई हुक्म ही क्यों सादिर किया जाता ? फ़तवा देने वाले मुजरिम नहीं हैं बल्कि उन किताबों के लिखने वाले मुजरिम व ख़ताकार हैं।

यह वाज़ेह रहे कि जिस तरह देवबन्द की चहार दीवारी में उर्स व फ़ातिहा, मीलाद व क़ियाम की कोई गुन्जाइश नहीं है, ऐसे सुन्नी नुक्तए फ़िक्र पर इस्तिख़्फ़ाफ़े नबुव्वत व एहानते रिसालत की परछाईं तक नहीं पड़ सकती। अगर आपको यह जुर्म गवारा है तो उस दिन का इन्तेज़ार कीजिये जब कि मरने के बाद क़ब्र में नकीरैन सवाल करेंगे।

'मा तक़ूलु फ़ी हाज़ार्रुजुलुन' इनके बारे में क्या कहते हो ? तो क्या आप हज़रात वहां भी यही जवाब देंगे कि हमारे बड़े भैया हैं, हमारे ही जैसे मामूली बशर हैं, गाँव के चौधरी हैं, ज़र्रए नाचीज़ से कमतर हैं वग़ैरह वग़ैरह और क्या जवाब देकर अज़ाबे क़ब्र से आपको छुटकारा हासिल होगा ?

फूल की पत्ती से कट सकता है हीरे का जिगर
मर्दे नादाँ पर कलामे नर्मो नाज़ुक बे असर
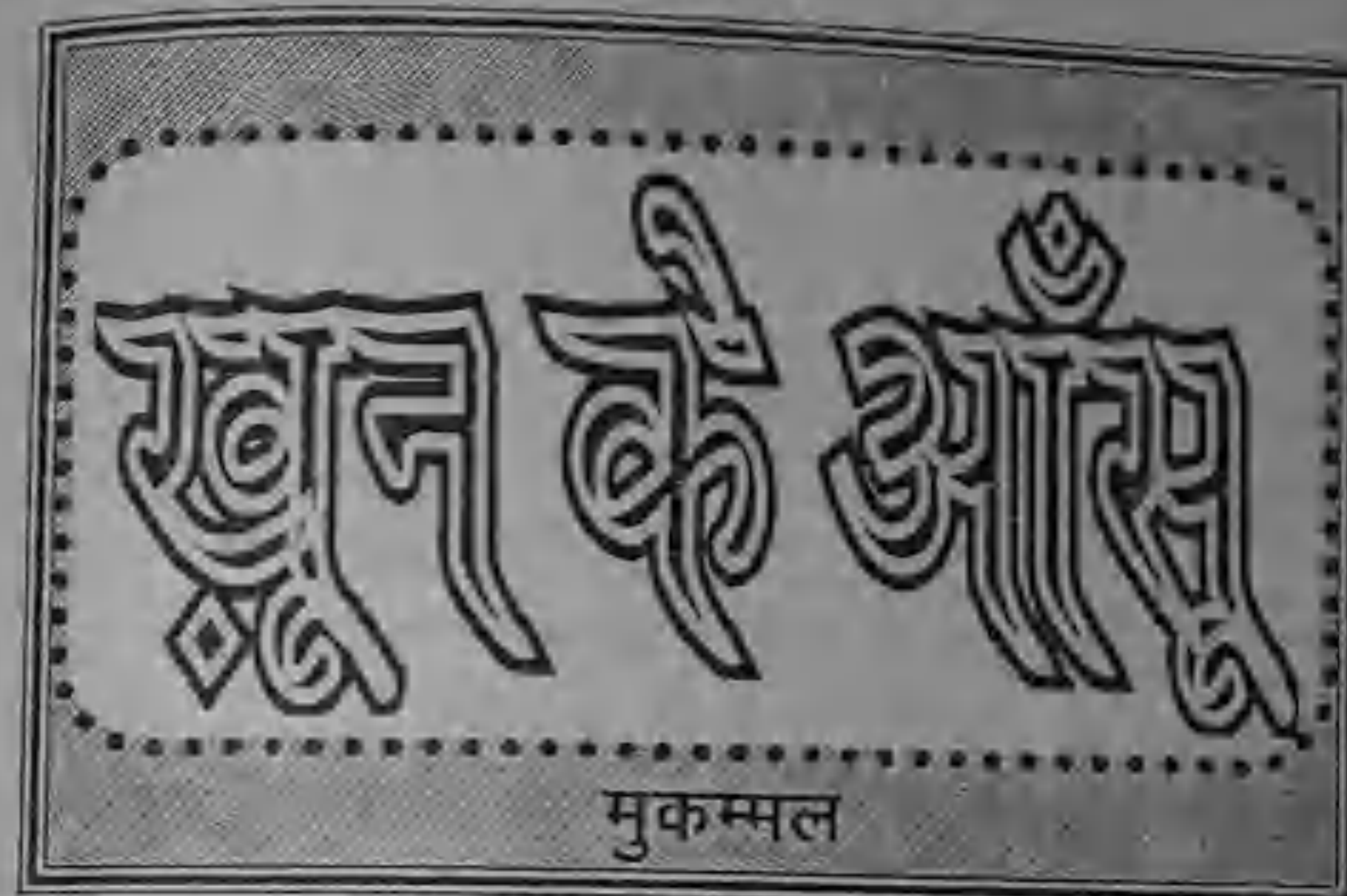
ख़ून के आँसू

मुकम्मल

यानी उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी का जीता जागता मुज़ाहरा और उनकी सैकड़ों किताबों का ख़ुलासा व निचोड़

लेखक

ख़तीबे मशरिक़ मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी

हिन्दी अनुवाद :

साजिद हाशमी

बएहतेमाम

हाफ़िज़ मुहम्मद क़मरुद्दीन रज़वी

नाशिर

रज़वी किताब घर

425, उर्दू मार्केट, मटिया महल, जामा मस्जिद, दिल्ली-110006 ★ फोन : 011-23264524, 55393370

मुक़द्दमा

मेरी तक़रीर तबओ यार को बेचैन करती है
ग़लत क्या है यही कहता हूं जो दिल पे गुज़रती है

यह सुन कर आपको हैरत होगी कि "ख़ून के आँसू" का पहला एडीशन सिर्फ़ डेढ़ माह के एक मुख़्तसर से वक़्फ़ा में ख़त्म हो गया। अभी बहुत से बुज़ुर्गों और दोस्तों को दफ़्तर की तरफ़ से एज़ाज़ी नुस्ख़ा भी नहीं भेजा गया था कि हमें उनसे मअज़ेरत करनी पड़ी।

अब दूसरे एडीशन के लिए कापी प्रेस जा चुकी है, किताब की मांग और आर्डर की भरमार से हम यह फ़ैसला न कर सके कि फ़ौरी तौर पर अभी हमें इसके कितने एडीशन निकालने पड़ेंगे यह जो कुछ भी है उस ख़ुदाए क़दीर की बे पायाँ रहमतों का नतीजा है कि उसने अपने एक आजिज़ बन्दे से ऐसा काम लिया जो हर तबक़े में ब-नज़रे क़बूल देखा गया। मेरे एहसास व शुऊर के किसी गोशे में भी यह जज़्बए पिन्दार कारफ़रमा नहीं कि मैंने कोई नुमायां काम अन्जाम दिया है। उलमाए देवबन्द की जिन छुपी छुपी बातों को मैंने आ कारा किया है वह कुछ इफ़्तेराई व मन गढ़त कहानी नहीं है बल्कि चन्द सच्चाईयों पर कुछ पर्दे पड़े थे उस हिजाब को मैंने पूरी जुरअत व दियानत से उलट दिया। अब उस दरीचे से झांक कर आप उनकी तस्वीर ही नहीं बल्कि नीयत व इरादे का भी पता लगा सकते हैं। देवबन्द की जिन रिवायात व वाक़िआत को मैंने सुपुर्दे क़लम किया है अब वह बातें सेग़ए राज़ में न थीं बल्कि उन्हें छुपा कर अब उनके लिए भी जीना आसान न था।

किया अफ़्शा जिन्होंने दार पर मन्सूर को खींचा
कि ख़ुद मन्सूर को मुश्किल था जीना राज़दां होकर

'ख़ून के आँसू' की इशाअत पर आज जिन लोगों को मुझ से शिकायत है उन्हें

सन्जीदगी से यह ग़ौर करना चाहिये कि वह अपनी बरहमी में किस हद तक हक़ बजानिब हैं। सच तो यह है कि मैंने काम अपना नहीं बल्कि उनका किया है। असातीन व अकाबिरे देवबन्द के जो महासिन व फ़ज़ाइल हज़ारों सफ़हात पर फैले हुए थे मैंने पूरी दीदा रेज़ी से उनके बाग़ीचा की एक एक कलियों और फूलों को यकजा किया है और एक गुलदस्ता की शक्ल में उनके रू बरू पेश कर दिया है अब इसको क्या कीजिये कि वह जिस कली और फूल को मोंगरा, मोतिया, नरगिस और यासमीन समझ बैठे थे वह मदार और धतूरा निकले। मैंने तो यह सोच कर क़लम उठाया था-

कौन खोलेगा तेरे दिल की गिरह बाद मेरे
कौन सुलझाएगा उलझा हुआ गेसु तेरा

मगर इसके बावजूद न जाने क्यों मिज़ाजे यार बरहम है।

उलमाए देवबन्द की एक आम शिकायत है कि हमारे मुक़ाबिल उलमाए अहले सुन्नत की तक़रीर व तहरीर का लबो लहजा इन्तेहाई तुन्द व तेज़ व नाख़ुशगवार होता है मैंने जिल्दे अव्वल में उनकी इस धांदली पर भी रौशनी डाली है कि यह महज़ उनका इफ़्तेरा और बुहतान है जिसकी शहादत में अश्शिहाबुस्साक़िब मुसन्निफ़ मौलवी हुसैन अहमद साहब के अन्दाज़े तहरीर का हवाला दिया गया है जिसमें उन्होंने मुक़्तदाए अहले सुन्नत सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरेलवी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु को छः सौ चालीस गालियां दी हैं इन हवालाजात के बाद भी मेरा क़लम क़ाबू से बाहर नहीं हुआ बल्कि हज़राते देवबन्द से इतनी ही गुज़ारिश की है।

रिन्दाने मय परस्त सियाह मस्त ही सही
ऐ शैख़ गुफ़्तगू तो शरीफ़ाना चाहिये

गो हम आप की नज़र में उर्स व मीलाद वाले सही मगर बात तो शरीफ़ों जैसी होनी चाहिये।

"ख़ून के आँसू" जिल्दे अव्वल का जो मुताला कर चुके हैं उन्हें इस अमर का बख़ूबी एहसास होगा कि मैंने कोई बात अपनी तरफ़ से नहीं कही और मेरे अपने ख़्याल में किताब के इस अन्दाज़े फ़िक्र व तहरीर ने हर दिमाग़ को अपील करने में बड़ी हद तक कामयाबी हासिल की है। अब आपके सामने दूसरी जिल्द हाज़िर है इसमें भी उसी एहतेमाम का मिन व अन लिहाज़ रखा गया है अपनी तरफ़ से कुछ कहने के बजाए उन्हीं की बातें पेश करके मुआमला अवाम की अदालत में पेश कर दिया गया है।

उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी और अपने बुज़ुर्गों के साथ उनके वालिहाना इश्क़ व मुहब्बत की तस्वीर कशी के बाद मैंने इतना ही इशारा किया है कि-

इब्लीस हो, सुक़रात हो, सरमद हो कि मन्सूर
खुद आगही हर हाल में गर्दन ज़दनी है

मैंने उन्हीं की किताबों से उनके ग़लत पिन्दार का एक तफ़सीली ख़ाका हाज़िर किया है जिस में रंग व रौग़न के लिए बरैली या बदायू से कुछ लेने के बजाए थाना भवन, नानौता, गंगोह, देवबन्द ही से सारा मैटेरियल हासिल किया है। जिस पर आज पूरी दुनियाए देवबन्दियत अंगुश्त बदन्दाँ है।

किताबे दहर में एक बाबे हैरत है मेरी हस्ती
मुझे देखो मैं बैठा हूं तुम्हारी दास्ताँ होकर

"ख़ून के आँसू" जिल्दे अव्वल मौलवी हुसैन अहमद साहब के एक नातमाम तज़किरे पर ख़त्म कर दी गई है। किताब के तसलसुल को बाक़ी रखते हुए जिल्दे दोम की इब्तेदा सदरे देवबन्द ही से की जाएगी फिर उसके बाद उनकी किताबों के मुख़्तलिफ़ हवालाजात से देवबन्दी अक़ाइद पर सैर हासिल गुफ़्तगू होगी। मुझे वहम व गुमान भी न था कि जिल्दे दोम के इशाअत की इस क़दर जल्द बाज़ी आजाएगी चुनान्चे मैं जिल्दे अव्वल की इशाअत के बाद 'मेअ्यारे हक़' और 'इमाम अहमद रज़ा' की तदवीन व तरतीब में लग गया था। मगर तक़ाज़े के ख़ुतूत ने मुझे इस क़दर झिंझोड़ा कि 'मेअ्यारे हक़' और 'इमाम अहमद रज़ा' का काम अधूरा छोड़ कर "ख़ून के आँसू" जिल्दे दोम की तरतीब में लग जाना पड़ा। अब पूरी किताब का मुताला करके नाज़िरीन ही इन्साफ़ फ़रमायें कि बक़ौल हज़राते देवबन्द हम सुन्नियों ने उन्हें बदनाम किया था कि ख़ुद उनके आवारगीए क़लम ने उन्हें तबाह किया। कहने वाले ने कितने पते की बात कही-

आप कहते हैं किया हम को ग़ैरों ने तबाह
बन्दा परवर यह कहीं अपनों का ही काम न हो

मुक़दमा में इस अमर की वज़ाहत भी ज़रूरी जानता हूं कि मुताला से पहले यह बात ज़ेहन नशीन कर ली जाये कि ईमान व अक़ीदे की बुनियाद पर आज दो अलग अलग स्कूल हैं देवबन्द और बरैली और उन दोनों का यह कहना है कि हक़ व सदाक़त हमारे साथ है। आपको "ख़ून के आँसू" के सफ़हात पर यही तलाश करना है कि वाक़िअतन हक़ पर कौन है। अगरचे इस किताब में तस्वीर का एक

ही रुख़ मराहतन पेश किया गया है। यानी उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी, तज़ाद बयानी, हक़ाइक़ से मुंह मोड़ कर हट धर्मी और कट हुज्जती वग़ैरह वग़ैरह लेकिन देवबन्दी अक़ाइद पर गुफ़्तगू करते हुए बरैलवी अक़ाइद की तरफ़ ख़ुद से कुछ इशारे हो ही जाते हैं जिसकी तह तक पहुंचना आपकी काविशे फ़िक्र का काम है।

मसलन बतौरे तक़ाबुल और मुवाज़ना अगर यह बात कही जाये कि उलमाए देवबन्द के हस्बे ज़ैल अक़ाइद हैं-

(1) उलमाए देवबन्द ख़ुदावन्दे क़ुद्दूस के अलावा अपने पेशवा मौलवी रशीद अहमद गंगोही को भी मुरब्बीए ख़लाइक़ कहते हैं।

हवाला : मरसिया रशीद अहमद गंगोही मुसन्निफ़ मौलवी महमूद हसन सफ़हा 12।

ख़ुदा उनका मुरब्बी वह मुरब्बी थे ख़लाइक़ के
मेरे मौला मेरे हादी थे बेशक शैख़े रब्बानी

(2) उलमाए देवबन्द का अक़ीदा है कि हज़रत ईसा इब्ने मरयम अलैहिस्सलाम तो सिर्फ़ मुर्दों को ज़िन्दा कर सकते थे मगर मौलाना रशीद अहमद गंगोही मुर्दों को ज़िन्दा करते और ज़िन्दों को मरने न देते।

नोटः- हालांकि आँ बदौलत ख़ुद मर गये।

मुर्दों को ज़िन्दा किया ज़िन्दों को मरने न दिया
इस मसीहाई को देखें ज़री इब्ने मरयम

(3) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मौलवी रशीद अहमद गंगोही का काला कलूटा ग़ुलाम यूसुफ़े सानी था।

हवाला : मरसिया रशीद अहमद गंगोही सफ़हा 11

क़बूलियत इसे कहते हैं मक़बूल ऐसे होते हैं
उबैदे सूद का उनके लक़ब है यूसुफ़े सानी

नोटः- जब मौलाना रशीद अहमद गंगोही का कलूटा ग़ुलाम यूसुफ़े सानी था तो फिर गंगोही साहब के गोरे चिट्टे चहीते प्यारे मौलवी क़ासिम नानौतवी जिनको गंगोही साहब ख़ानक़ाहे गंगोह में एक चारपाई पर ले के लेटते उनका क्या मर्तबा था? (इसका हवाला जिल्द अव्वल में गुज़र चुका है।)

(4) उलमाए देवबन्द के नज़दीक आरिफ़ाने बिल्लाह ख़ानए कअ्बा में पहुंच कर गंगोह को तलाश करते हैं।

हवाला मरसिया रशीद अहमद गंगोही सफ़हा 13

फिरे थे कअ्बा में भी पूछते गंगोह का रस्ता
जो रखते अपने सीनों में थे ज़ौको शौके इरफ़ानी

(5) उलमाए देवबन्द का अक़ीदा है कि दीन व दुनिया के हाजत रवा मौलाना गंगोही हैं।

हवालाः मरसिया सफ़हा 10

हवाइज दीनो दुनिया के कहां ले जायें हम या रब
गया वह क़िबलए हाजाते रूहानी व जिस्मानी

नोटः रसूले करीम, मौला अली, सरकार हुसैन, ग़ौसे आज़म, ग़रीब नवाज़ को हाजत रवा समझना देवबन्दी अक़ीदे की बिना पर शिर्क है। चूंकि ग़ैरुल्लाह से मदद मांगी गई।

(6) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मौलाना गंगोही सारे आलम के मख़्दूम हैं और पुरी कायनात उनकी फ़रमांबरदार है।

हवालाः मरसिया रशीद अहमद गंगोही 'टाइटल पेज की इबारत' मख़्दूमुल कुल मताउलआलम जनाब मौलाना रशीद अहमद गंगोही।

(7) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मौलाना गंगोही का हुक्म क़ज़ाए मुबरम है जो हुक्म कभी टल नहीं सकता।

हवालाः मरसिया सफ़हा 8

न रुका पर न रुका पर न रुका' इसका जो हुक्म था। सैफ़ क़ज़ाए मुबरम

नोटः मालूम नहीं इस उर्दू से लखनऊ स्कूल को इत्तेफ़ाक़ है या नहीं?

इसें तो इस वक़्त उनके चन्द अक़ाइद की तरफ़ इशारा करना है।

(8) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मौलाना रशीद अहमद गंगोही सिद्दीक़े अकबर और फ़ारूक़े आज़म दोनों ही थे।

हवालाः मरसिया गंगोही सफ़हा 16

वह थे सिद्दीक़ और फ़ारूक़ फिर कहिये अजब क्या है
शहादत ने तहज्जुद में क़दमबोसी की गर ठानी

(9) देवबन्दी अक़ीदे में सय्येदुना इमाम आली मक़ाम सरकार हुसैन का मरसिया जला देना चाहिये।

हवालाः फ़तावा रशीदिया हिस्सा सोम, सफ़हा नम्बर 103 उन का जला देना या ज़मीन में दफ़न कर देना ज़रूरी है।

नोटः मौलाना गंगोही का मरसिया लिखा जाये, छापा जाये, पढ़ा जाये, फ़रोख़्त किया जाये। यह सब दुरुस्त है मगर सरकार हुसैन का मरसिया जला देना ज़रूरी है।

(10) उलमाए देवबन्द के नज़दीक सही रिवायत के साथ भी मुहर्रम में ज़िक्रे शहादत इमाम हुसैन दुरुस्त नहीं।

हवालाः फ़तावा रशीदिया हिस्सा सोम सफ़हा 114

मुहर्रम में ज़िक्रे शहादत हसनैन अलैहिमस्सलाम करना अगरचे रिवायत सहीहा हो या सबील लगाना, शरबत पिलाना, चन्दा सबील और शरबत में देना या दूध पिलाना दुरुस्त और तशब्बुहे रवाफ़िज़ की वजह से हराम है।

(11) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मुहर्रम का शरबत और दूध वग़ैरह तो हराम है मगर हिन्दुओं के त्योहार होली, दिवाली वग़ैरह में हिन्दुओं से पुड़ी वग़ैरह लेना और खाना दुरुस्त है।

हवाला : फ़तावा रशीदिया हिस्सा दोम सफ़हा 107

हिन्दू त्योहार में होली या दिवाली में अपने उस्ताद या हाकिम व नौकर को खार या पुड़ी (पूरी) या और कुछ खाना बतौरे तोहफ़ा भेजते हैं उन चीज़ों का लेना और खाना उस्ताद व हाकिम व नौकर मुसलमान को दुरुस्त है या नहीं? जवाब दुरुस्त है।

(12) उलमाए देवबन्द का अक़ीदा है कि सहाबए किराम को काफ़िर कहने वाला अहले सुन्नत व जमाअत से ख़ारिज न होगा।

हवालाः फ़तावा रशीदिया हिस्सा दोम सफ़हा 111

जो शख़्स सहाबए किराम में से किसी की तकफ़ीर करे वह मलऊन है ऐसे शख़्स को इमामे मस्जिद बनाना हराम है और वह अपने इस कबीरा के सबब सुन्नत जमाअत से ख़ारिज न होगा।

(13) उलमाए देवबन्द के नज़दीक मजलिसे मीलाद शरीफ़ अगरचे बग़ैर क़ियाम के हो और ब-रिवायते सही हो तब भी नाजाइज़ है।

हवालाः फ़तावा रशीदिया हिस्सा दोम सफ़हा 83

इन्अ़ेक़ादे मजलिसे मीलाद बेदूने क़ियाम ब-रिवायते सही दुरुस्त है या नहीं?

जवाबः- इन्अ़ेक़ाद मजलिसे मौलूद हर हाल में नाजाइज़ है?

नोटः- बावजूद मौलाना गंगोही के पीर व मुर्शिद हाजी इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की हर साल मीलाद शरीफ़ करते और क़ियाम में लज़्ज़त महसूस करते 'फ़ैसला

हफ़्त मसला"

अलबत्ता मौलाना थानवी के नज़दीक दुनियावी मनफ़अत के पेशे नज़र महफ़िले मीलाद शरीफ़ में शरीक होना दुरुस्त है। जिल्द अव्वल में हवाला गुज़र चुका है।

(14) उलमाए देवबन्द के नज़दीक बस्तियों में फिरने और नजासत खाने वाला कव्वा खाना दुरुस्त और सवाब है।

हवाला: फ़तावा रशीदिया हिस्सा दोम सफ़हा 145

सवाल:- जिस जगह ज़ाग़े मअ़रूफ़ा को अक्सर हराम जानते हों और खाने वाले को बुरा कहते हों तो ऐसी जगह उस कव्वा खाने वाले को कुछ सवाब होगा या न सवाब होगा न अज़ाब।

जवाब:- सवाब होगा।

(15) उलमाए देवबन्द के नज़दीक उम्मती अमल में नबी के बराबर हो सकता है बल्कि नबी से बढ़ सकता है।

हवाला: तहज़ीरुन्नास मुसन्निफ़ मौलवी मुहम्मद क़ासिम नानौतवी सफ़हा 5

अम्बिया अपनी उम्मत से अगर मुमताज़ होते हैं तो उलूम ही में मुमताज़ होते हैं बाक़ी रहा अमल इसमें बसा औक़ात बज़ाहिर उम्मती मसावी हो जाते हैं। बल्कि बढ़ जाते हैं।

(16) उलमाए देवबन्द के नज़दीक सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के इल्म से शैतान का इल्म ज़्यादा है और शैतान के इल्म की ज़्यादती क़ुरआन और हदीस से साबित है और हुज़ूर की वुसअ़ते इल्म के लिए उनके नज़दीक कोई नस्से क़त्ई नहीं।

हवाला: बराहीने क़ातेआ' मुसन्निफ़ मौलवी ख़लील अहमद अम्बेठवी मुसद्देक़ा मौलवी रशीद अहमद गंगोही सफ़हा 51

अलहासिल ग़ौर करना चाहिये कि शैतान व मलकुल मौत का हाल देख कर इल्मे मुहीत ज़मीन का फ़ख़्रे आलम को ख़िलाफ़े नुसूसे क़त्ईया के बिला दलील महज़ क़ियासे फ़ासिदा से साबित करना शिर्क नहीं तो कौन सा ईमान का हिस्सा है शैतान व मलकुल मौत को यह वुसअ़त नस से साबित हुई फ़ख़्रे आलम की वुसअ़ते इल्म की कौनसी नस्से क़त्ई है जिस से तमाम नुसूस को रद करके एक शिर्क साबित करता है।

(17) ऐसे ही उलमाए देवबन्द का अक़ीदा है कि अल्लाह तआ़ला का झूट बोलना मुमकिन है बल्कि झूट बोल चुका "रसूलुल्लाह के इल्म ऐसा तो जानवर, पागल, मजनून का इल्म है, रसूलुल्लाह बड़े भाई जैसे हैं।" पैग़म्बर अपनी उम्मत का ऐसे ही सरदार है जैसे गाँव का चौधरी, "रसूले ख़ुदा हमारे जैसे बशर थे।" रसूले ख़ुदा मर कर मिट्टी में मिल गये नमाज़ में रसूलुल्लाह का ख़्याल लाना, गाय बैल के ख़्याल में डूब जाने से बदर्जहा बद तर है वग़ैरह वग़ैरह।

नोट:- 17 में उलमाए देवबन्द के जो अक़ाइद लिखे गये हैं उसकी तफ़सील मअ़ हवालाजात अगले सफ़हात पर मुलाहज़ा फ़रमायें।

इस सादगी पर कौन न मर जाये ऐ ख़ुदा
लड़ते हैं मगर हाथ में तलवार तक नहीं

नोट:- हज़राते देवबन्द अहले सुन्नत के मरासिम को शिर्क व बिदअ़त तो कह गये मगर आज तक अपने दावे की कोई भी क़ाबिले तस्लीम दलील न दे सके। बात यह हो रही थी कि उलमाए देवबन्द के अक़ाइद की सराहत में उलमाए अहले सुन्नत के अक़ाइद की तरफ़ इशारा हो ही जाता है और ख़ुन के आँसू पढ़ कर आपको यही फ़ैसला करना है कि कौन आशिक़े रसूल है और कौन शातिमे रसूल किस के ज़बान व क़लम में एहतियात व अदब है और किस के ज़बान व क़लम में गुस्ताख़ी व बे अदबी। हमारा काम तो महज़ पैग़ाम पहुंचाना है वरना मैं जानता हूं।

बशर की क़ुव्वतों से हर कजी सीधी नहीं होती
ख़ुदा ही की वह ताक़त है जो सबको ठीक करती है

दोस्तो! ईमान व अक़ीदे के कुछ इशारे थे जिनकी बिना पर ख़ून के आँसू मुरत्तब की गई वरना और भी बहुत से उनवानात पर क़लम उठाया जा सकता है। तुम ही बताओ क्या आज का यह रूह फ़रसा और घिनौना मन्ज़र देख कर कलेजा मुंह को नहीं आता कि कव्वा खाना और चौराहे पर खड़े होकर मुसलमान आस्तीनें उठा उठा कर इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर मुबाहसा व मुजादला करता है आज हम महज़ इस बुनियाद पर टुकड़े टुकड़े हो गये कि मीलाद में क़ियाम दुरुस्त है या शिर्क व बिदअ़त। ऐसे ही न जाने कितने मसाइल हैं कि जिन्हें शिर्क व बिदअ़त की सही तारीफ़ नहीं आती मगर वह हर तशिस्त में शिर्क व बिदअ़त की रट करते रहते हैं। आज हमारी ज़बान पाएमाल हो रही है हमारे इक़्तेसादियात व मआ़शियात की राहें रोज़ ब रोज़ तंग होती जा रही हैं ऐसी परेशान हाल और

ज़ख़्म ख़ुर्दा क़ौम के लिए उलमाए देवबन्द ने आज तक तो कोई डाक्टर ख़ाना तो न खोला मगर मीलाद व फ़ातिहा करने वालों के लिए हज़ारों फ़ौजी अड्डे बना दिये गये। जहां से हर सुबह व शाम गोला बारी होती रहती है। क्या वाक़िअतन उर्स व नियाज़ मीलाद व क़ियाम ऐसा ही जुर्म है कि उसकी बुनियाद पर करोड़ों मुसलमानों से अलग थलग आपने डेढ़ ईंट की अलग मस्जिद बना रखी है या अब महज़ बात की लाज रखी है अगर लाज ही रखने का जज़्बा कार फ़रमा है तो ख़ाना साज़ अक़ीदे की लाज नहीं बल्कि इस्लाम और मुसलमानों की लाज रखिये और कभी इस नज़ाकत पर भी ग़ौर कीजिये कि आपने करोड़ों मुसलमानों को महज़ इस जुर्म में छोड़ रखा है कि यह मीलाद व क़ियाम उर्स व नियाज़ वाले हैं उन करोड़ों को आप से यह शिकायत है आपने महबूबे ख़ुदा आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शाने गिरामी में गुस्ताख़ी व बे अदबी करके आमियाना व सोक़ियाना गालियाँ तक दी। आख़िरश आप ही फ़रमायें रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ज़र्रए नाचीज़ से कमतर और चमार से ज़्यादा ज़लील कहना यह गाली नहीं तो और क्या है? आपकी नज़र में यह भी कोई मन्तिक़ व फ़लसफ़ा या मआनी व बयान का कोई उलझा हुआ मसला है? क्या आप की नज़र में ज़र्रए नाचीज़, चमार, ज़लील जैसे अल्फ़ाज़ के मानी देखने के लिए लुग़त उठाने की ज़रूरत है अगर नहीं है और यक़ीनन नहीं है तो फिर ऐसे अक़ीदे के परचार के क्या माना? ऐसी सरीह और वाज़ेह इबारत की तौजीह व तावील के क्या माना? और अगर बिलफ़र्ज़ यह अल्फ़ाज़ आपकी नज़र में मुहताजे तावील है तो क्या दूसरों को भी आप इजाज़त मरहमत फ़रमायेंगे कि वह भी आपके लिए यही अल्फ़ाज़ बोल कर उसकी तावील करें। अगर आप अपने हक़ में गवारा नहीं कर सकते और यक़ीनन गवारा न करेंगे। तो लिल्लाह इन्साफ़ का ख़ून न कीजिये बताइये और सच सच बताइये कि फिर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए आप के ज़मीर ने क्योंकर गवारा किया कि उनको ज़र्रए नाचीज़ से कमतर और चमार से ज़्यादा ज़लील कहा जाये और आज इन इबारात के वापस लेने का आपसे मुतालबा किया जाये तो ठन्डे दिल से सोचने के बजाए आप आमादए जंग नज़र आते हैं। बर सरे राह उलमाए देवबन्द की ज़ेहनियत व नाफ़हम ज़ेहनियत पर एक ताज़ा वाक़िआ सुनिये जिसके लिखते हुए मेरी आंख नमनाक है और क़लम कांप रहा है।

अभी पहली दूसरी तीसरी जून 1961 ई० को मौलाना अनीस आलम के ज़ेरे

एहतेमाम सोभन ज़िला दरभंगा में तीन रोज़ा सरकारे मदीना कान्फ्रेन्स मुनअक़िद हुई थी जिसमें राक़िमुल हुरूफ़ भी शरीक था। ज़ुहर व अस्र के दर्मियान एक फ़ाज़िले देवबन्द तशरीफ़ लाये और हम लोगों से फ़रमाया कि आप लोग रोज़ा व नमाज़ की बात तो कुछ नहीं कहते महज़ ईमान व अक़ीदा पर तक़रीर करते हैं। और इतना ही नहीं बल्कि उलमाए देवबन्द की तकफ़ीर भी करते हैं। आख़िरश उलमाए देवबन्द के तकफ़ीर की वजह क्या है? मैंने जवाबन कहा कि उन लोगों ने सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को गालियां दी हैं और आक़ाए दो जहां की तौहीन मुत्तफ़िक़ा तौर पर मूजिबे कुफ़्र है और बतौरे मिसाल मैंने हिफ़्ज़ुल ईमान की कुफ़्री इबारत पेश कर दी। इस पर फ़ाज़िले देवबन्द ने कहा कि गाली की भी तो तावील हो सकती है और बसा औक़ात गाली का देना ऐब नहीं होता मैंने कहा कि इसकी मिसाल आप दीजिये जहां गाली देना ऐब न हो। अब जवाब सुनिये और सर पीटिये।

फ़ाज़िले देवबन्द ने कहा जैसे साला बहनोई को और बहनोई साले को गाली देता है या समधी अपने समधी से मज़ाक़ करता है। ग़ुस्से को पी कर और हवास को बदिक़्क़त तमाम क़ाबू में रख कर मैंने दरियाफ़्त किया कि फिर यह भी फ़रमा दीजिये कि उलमाए देवबन्द का महबूबे ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कौन सा रिश्ता है? जिसकी बिना पर आप लोगों को मज़ाक़ और गाली की इजाज़त हो। क्या क़ुरआने हकीम की यह आयत देवबन्द की चहार दीवारी तक नहीं पहुंची।

अभी मैं कह ही रहा था कि उस शख़्स के दिमाग़ की चूल खिसक गई है या कुछ दिनों बाद यह ऐसी किताब लिखेगा जो तक़वीयतुल ईमान और हिफ़्ज़ुल ईमान के हक़ में सोने पर सुहागा का काम देगी कि मजमा में बरहमी पैदा हुई और बाज़ जोशीले जूता लेकर खड़े हो गये। किसी तरह बच बचाव करके उसको मजलिस से बाहर कर दिया गया।

अहले मिल्लत के लिए मुझको है मातम करना
उनकी ख़ातिर है मुझे बज़्म में गिरयाँ होना

अभी गुज़श्ता बरस की बात है मैं बसिलसिलए तक़रीर गुजरात के दौरे पर गया था ख़ास शहर भड़ूच में मेरी तक़रीर हो रही थी आज मेरी तक़रीर का उनवान 'मसलए मेअ्राजे जिस्मानी' था। तक़रीर अपने शबाब पर थी कि एक रुक़्आ आया। जिसका मज़मून हस्बे ज़ैल है।

"क्या आप के बुज़ुर्गों को सर्दी लगती है जो उनके क़ब्र पर चादर डाल देते हैं।"

मैं ने कहा जी हां आरिफ़ाने बिल्लाह अल्लाह तआला के महबूब हैं जब उन्हें दफ़न किया जाता है तो जन्नत की न जाने कितनी खिड़कियां खोल दी जाती हैं और जन्नत की हवा में ठंडक[1] होती है जब आपके बुज़ुर्गों को सुपुर्दे ख़ाक किया जाता है तो जहन्नम की खिड़कियां खुल जाती हैं अगर उनकी क़ब्र पर चादर डाली जाये तो चादर भी जल कर ख़ाक हो जाए शायद कोई ऐसा साबिक़ा पड़ चुका है। इसी लिए उलमाए देवबन्द चादर के पीछे पड़ गये हैं ताकि उनका भरम बाक़ी रह जाये यह तो कह नहीं सकते कि चादर जल जाएगी। इसमें बे आबरूई है इस लिए शिर्क व बिदअ़त के मन गढ़त फ़तावे लेकर खड़े हो गये वरना औलियाए किराम की शान तो यह है।

मरके टूटा है कहीं सिलसिलए क़ैदे हयात
फ़र्क़ इतना है कि ज़न्जीर बदल जाती है

इन मिसालों का मक़सद सिर्फ़ यह है कि आप इससे देवबन्दी मकतबए फ़िक्र के रुजहानात का अन्दाज़ा करें कि वह रसूले ख़ुदा और औलियाए किराम की बारगाह में किस हद तक बे अदब व गुस्ताख़ हैं यही वह एलल व अस्बाब हैं जिन्होंने "ख़ून के आँसू" लिखने पर मुझे उभारा-

यह अपनी अपनी आदत है और अपना अपना शीवा है

के मुताबिक़ वह सरकारे अबद क़रार को अपना जैसा बशर कहते रहें और हमारी निगाहें तो उनकी एक एक अदा पर क़ुरबान हैं।

यूं मुस्कुराए जान सी कलियों में पड़ गई
यूं लब कुशा हुए कि गुलसिताँ बना दिया

मुश्ताक़ अहमद निज़ामी
14 अगस्त 1961 ई॰

1. ऐसी ठन्ड जिस से तकलीफ़ पहुंचे यह बात बतौरे लतीफ़ा कही गई वरना अज़मते औलिया के इज़हार के लिए चादर डाली जाती है वग़ैरह।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर का सरसरी जाइज़ा

कहीं रूस का बद्दुआ कहीं चीन का बद्दुआ
हज़रते शैख़ की महफ़िल में बदरुद्दीन का बद्दुआ

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 95

मौलाना हुसैन अहमद साहब मूड में होते तो अपनी बच्ची इमराना से यही शेअ़र पढ़वाते थे चूंकि इस वक़्त हज़रते शैख़ ही का तज़्किरा है इस लिए उन्हीं के महबूब व पसन्दीदा शेअ़र से उनके ज़िक्र का आग़ाज़ किया जाता है। इसको तो फ़ख़्रे मशरिक़ अ़ल्लामा शफ़ीक़ जौनपुरी बतायें कि मुन्दर्जा बाला शेअ़र किस बहर में है हमें तो बर सरे राह यह दिखाना है कि मौलाना हुसैन अहमद के पसन्दीदा अशआर कुछ ऐसे ही बे तुके क़िस्म के हुआ करते थे जिस से उनके ज़ौक़े अदब का अन्दाज़ा किया जा सकता है इस पर तुरफ़ा तमाशा यह कि हज़रत शैख़ कोई मामूली दर्जा के इन्सान न थे बल्कि इस ख़ाकदाने गीती में वह ख़ुलासए कायनात बन कर आये थे।

शैख़ुल इस्लाम सफ़हा 130

ख़ुदा के लिए यह तो मुश्किल नहीं है
हो आलम का मजमुआ इक फ़र्दे वाहिद

मुनासिब यह है कि यहीं पर तक़वीयतुल ईमान की एक इबारत पेश कर दी जाये जिससे हज़राते देवबन्द की रसूल दुश्मनी का सही अन्दाज़ा हो सकेगा।

तक़वीयतुल ईमान सफ़हा 37

"वह शहन्शाह एक आन में चाहे तो करोड़ो नबी मुहम्मद के बराबर पैदा कर डाले।"

नोटः- जब तौहीने नुबुवत और तन्क़ीसे रिसालत के जज़्बए मलऊना ने उकसाया तो अल्लाह तआला की क़ुदरत व किब्रियाई के इज़हार का यह अन्दाज़

इख़्तियार किया कि अगर वह चाहे तो मुहम्मद के बराबर करोड़ों नबी पैदा कर डाले और जब अपने शैख़ुल इस्लाम को मक़ामे नुबुवत से भी ऊँचा कर दिखाना हुआ तो अल्लाह तआला की क़ुदरत और उसके उलुए मर्तबत का बयान इस तरह किया गया कि अल्लाह तआला की क़ुदरत से यह बईद नहीं कि वह मौलाना हुसैन अहमद को ख़ुलासए कायनात बना दें।

अहबाब की यह शाने हरीफ़ाना सलामत
दुश्मन को भी यूं ज़हर उगलते नहीं देखा

सच जानिये जिन कलिमात की अदाएगी में ज़बाने कुफ़्र लुकनत खा जाये उसकी अदाएगी में उलमाए देवबन्द को झिझक तक महसूस नहीं होती। और यह तो उनका बहुत ही पुराना वतीरा है कि जब कभी भी शाने रिसालत घटानी मक़सूद हुई तो इख़्तेराई तौहीद का झन्डा लेकर खड़े हो गये और उसी की आड़ में सब्बो शत्म व तबर्रा बाज़ी पर उत्तर आये जिसकी शहादत में तक़वीयतुल ईमान वग़ैरह से चन्द दर चन्द मिसालें पेश की जा सकती हैं और इस पर सितम बालाए सितम यह कि जब उनकी याचा-गोई और ख़ुराफ़ात पर हक़ बजानिब सवालात किये गये तो नादिम व शर्मिन्दा होने के बजाए - उज़्रे गुनाह बद तर अज़ गुनाह के मुताबिक़ जंग व जिदाल की बिल्कुल निचली सतह पर उतर आये। यहां तक कि उलमाए अहले सुन्नत की तरफ़ गढ़ी हुई किताबें और उनकी फ़र्ज़ी इबारात को मन्सूब करके उन्हें बदनाम व रुसवा करने की नाकाम कोशिश की गई। उलमाए देवबन्द की इस क़िस्म की हया सोज़ और रकीक हरकात का मुशाहदा रिसाला सैफुन्नक़ी के मुताला में हो सकेगा जो उलमाए देवबन्द की इफ़्तेरा पर्दाज़ी व बुहतान तराशी का पूरे पूरे जामिन व कफ़ील है यह रिसाला किसी एक दिमाग़ का तराशीदा व ख़राशीदा नहीं बल्कि देवबन्द के असाग़िर व अकाबिर की मुश्तरका पार्टी सर जोड़ कर बैठी और मुत्तफ़िक़ा तौर पर रिसाला सैफुन्नक़ी की तरतीब दी गई, गोया इस जुर्म व ख़ता में देवबन्द का पूरा स्टाफ़ बराबर का शरीक है।

अब सैफुन्नक़ी के हवाले से चन्द जाली और गढ़ी हुई किताबें और उसकी फ़र्ज़ी इबारत व फ़र्ज़ी प्रेस का नाम सुन कर हज़राते देवबन्द की जसारत व ढिटाई का सर धुनिये।

आंख जो कुछ देखती है लब पे आ सकता नहीं
महवे हैरत हूं यह दुनिया क्या से क्या हो जाएगी

(1) सैफुन्नक़ी सफ़हा 3 पर एक फ़र्ज़ी व जाली किताब बनाम "तोहफ़तुल मुक़ल्लिदीन" जो सय्येदुना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िल बरैलवी क़ुद्देस सिर्रुहू के वालिद माजिद इमामुल उलमा हज़रत अल्लामा मुहम्मद नक़ी अली ख़ान साहब क़ुद्देस सिर्रुहू के नामे नामी से मन्सूब की गई है और फ़र्ज़ी प्रेस सुबहे सादिक़ सीतापुर का हवाला भी दे दिया गया है।

---

(2) इसी तरह सैफुन्नक़ी ही के सफ़हा 20 पर एक गढ़ी हुई किताब तोहफ़तुल मुक़ल्लिदीन को हज़रत फ़ाज़िले बरैलवी क़ुद्देस सिर्रुहू के जद्दे अमजद सिराजुल अतक़िया हज़रत मौलाना रज़ा अली ख़ाँ क़ुद्देस सिर्रुहू की तरफ़ मन्सूब किया और ब-कमाले ढिटाई मतबूआ लखनऊ भी लिख दिया। सफ़हा 12

(3) और इतने ही पर बस नहीं बल्कि उसी सैफुन्नक़ी के सफ़हा 14 पर एक गढ़ी हुई किताब बनाम 'मिरअतुल हक़ीक़त' आक़ाए निअ़मत हुज़ूर सय्येदुना सरकार ग़ौसे आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु की तरफ़ मन्सूब करके ख़सिरद् दुन्या वल् आख़ि-रह के मिस्दाक़ हुए और अपनी बिगड़ी हुई आदत के मुताबिक़ इस किताब पर भी लिख दिया मतबूआ मिस्र सफ़हा 18

(4) यह न समझिये कि किज़्ब व इफ़्तेरा और जाल व साज़िश की यह मुहिम यहीं पर आके ख़त्म हो गई बल्कि अपने काले झूट पर सफ़ेद झूट की मुहरे तौसीक़ सब्त करने के लिए सैफुन्नक़ी के सफ़हा पर फ़ाज़िले बरैलवी क़ुद्देस सिर्रुहू के वालिद माजिद का फ़र्ज़ी निशाने मुहर भी बना दिया जिसकी सूरत यह है-

1 3 0 1
नक़ी अ़ली सुन्नी हनफ़ी

हालांकि हज़रत की मुहरे मुबारक का नक़्श यह था-

1 2 6 9
मौलवी रज़ा अली ख़ाँ
मुहम्मद नक़ी ख़ाँ वल्द

लुत्फ़ तो यह है कि मुहर गढ़ी गई फिर भी बात न बन सकी सूरते हाल यह है कि हज़रत का विसाल 1297 में हुआ और नक्शए मुहर में 1301 हि० कन्दा है जिसका नतीजा यह निकला कि विसाल शरीफ़ के चार साल बाद मुहर तैयार हुई है।

पहले अपने जुनूं की ख़बर लो
फिर मेरे इ क़ को आज़माना

नोटः- मेरे अपने ख़्याल में शायद ही दुनिया के किसी गोशा में ऐसी मकरूह व गन्दा मिसाल मिल सकेगी जो हज़राते देवबन्द के दामने तक़द्दुस की झालर बनी हुई है। कोई सोचे तो सही! किस क़दर हैरत अंगेज़ और तअज्जुब ख़ेज़ बात है कि अपने ख़ुराफ़ात का एतेराफ़ न करते हुए उस पर पर्दा डालने के लिए चन्द दर चन्द ग़लतियों का इरतेकाब करना और जुरअत व दीदा दिलेरी का यह आलम कि अलअमान वल-हफ़ीज़ फ़र्ज़ी किताब, मन गढ़त इबारात, जाली प्रेस तक का एलान कर देना। सच तो यह है कि इस क़िस्म की जसारत वही लोग कर सकते हैं जिनके कान कभी शर्म व हया जैसे अल्फ़ाज़ से आश्ना तक न हुए हों।

इसके बावजूद ज़ुह्द व तक़वा और इत्तेबाऐ सुन्नत का वह बुलन्द बांग नारा जिस से तसन्नुअ् और रिया के सनमे अकबर का भी कलेजा दहल जाये। अब नाज़िरीन ही इन्साफ़ फ़रमायें कि अगर मुत्तक़ी व परहेज़गार ऐसे ही लोगों को कहा जाता है तो ग़ैरे मुत्तक़ी किस को कहा जाएगा ?

दोस्तो! अगर तुमने उलमाए अहले सुन्नत को बदनाम करने का बेड़ा उठा रखा है तो कम से कम ऐसी बातें करो जिससे तुम्हारा दामन तो सलामत रह सके।

दुश्नामे यार तबऐ हज़ीं पर गिराँ नहीं
ऐ दोस्त अपनी सुबकीए आवाज़ देखना

हज़रात! यह तो सैफुन्नक़ी का हवाला था जिसकी तरतीब में देवबन्दी मशिनरी का हर कल पुर्ज़ा यकसाँ मुतहर्रिक नज़र आया। अब मौलाना हुसैन अहमद की रुसवाए ज़माना किताब अश्शिहाबुस्साक़िब जो उलमाए बरैली के रद् में लिखी गई है उसके चन्द हवालाजात मुलाहज़ा फ़रमा कर मौलाना टांडवी की ढिटाई और दीदा दिलेरी की दाद दीजिये। जिस में उन्होंने मन गढ़त किताब, जाली प्रेस, और फ़र्ज़ी इबारात को पेश करके इल्मे मक़ाफ़त के ख़िलाफ़ ऐसा घिनौना अन्दाज़े इस्तिदलाल इख़्तियार किया है जिसको सुन कर हर साहबे इल्म की गर्दन शर्म व हया से झुक जाएगी।

रहे मन्ज़िल में सब गुम हैं मगर अफ़सोस तो यह है
अमीरे कारवाँ भी है उन्हीं गुमकर्दा राहों में

शिहाबे साक़िब सफ़हा 12

"जनाब शाह हमज़ा साहब मारेहरवी मरहूम ख़ज़ीनतुल औलिया मतबूआ कानपुर सफ़हा 15 में इरक़ाम फ़रमाते हैं। इल्मे ग़ैब सिफ़ते ख़ास है रब्बुल इज़्ज़त की जो आलिमुल ग़ैबे व शहादा है जो शख़्स रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को आलिमुल ग़ैब कहे वह बे दीन है इस वास्ते कि आपको बज़रीया वही के उमूरे मख़्फ़िया का इल्म होता था जिसे इल्मे ग़ैब कहना गुमराही है वरना जमीअ् मख़्लूक़ात नऊज़ुबिल्लाह आलिमुल ग़ैब है।"

नोटः-

मक़सूद न बुलबुल है न तूती न क़ुमरी
मतलब तो चमन वालों का नावक फ़ेगनी है

सय्येदुल आरिफ़ीन हज़रत अल्लामा मौलाना सय्यद शाह हमज़ा मियां मारेहरवी रहमतुल्लाह अलैह की ख़ज़ीनतुल औलिया नाम की कोई किताब है ही नहीं। जब किताब ही नहीं तो कानपुर में छपने या उसमें सफ़हा 12 या मुन्दर्जा बाला इबारत के होने न होने का कोई सवाल ही नही पैदा होता अलबत्ता यह ख़्याल किया जाता है कि मौलाना टांडवी क़लम उठाने से पहले ही अपना दिमाग़ी तवाज़ुन खो चुके थे। यही वजह है कि ऐसे इब्तेज़ाल व गिरावट पर उतर आये जिसकी मिसाल शायद ही कहीं ढूंडने से मिल सकेगी।

ईं कार अज़ तू आयद व मर्दा चुनीं कुनन्द

शिहाबे साक़िब की एक दूसरी मन गढ़त रिवायत मुलाहज़ा कीजिये।

शिहाबे साक़िब सफ़हा 22

"मौलवी रज़ा अली ख़ाँ साहब हिदायतुल इस्लाम मतबूआ सुबहे सादिक़, सीतापुर सफ़हा 30 में फ़रमाते हैं हुज़ूर सय्यदे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इल्मे ग़ैब बिलवास्ता था यानी बज़रीया वही के तालीमन मालूम होता था और यह अला क़दरे मरातिब सब को हासिल है और इल्मे ग़ैब मुतलक़ व बिज़्ज़ात का एतेक़ाद रखना भुफ़्ज़ी इलल कुफ़्र है और नस्से क़तई के ख़िलाफ़ इसमें तावील और हेर फेर करना बे दीन का काम है।"

इतनी काविश न कर मेरी असीरी के लिए
तू कहीं मेरा गिरिफ़्तार न समझा जाये

सिराजुल उलमा, हज़रत अ़ल्लामा मौलाना मुफ़्ती रज़ा अली ख़ाँ साहब क़ुद्दस सिर्रुहू ने हिदायतुल इस्लाम नामी कोई किताब तस्नीफ़ ही नहीं फ़रमाई तो फिर किसी इबारत, सफ़हा सतर या प्रेस के तजस्सुस व तलाश से क्या फ़ाइदा ? क्या आज की दुनिया में इस से भी बढ़ कर इत्तेहाम बन्दी व बुहतान तराशी की कोई जीती जागती मिसाल मिल सकती है।

कुछ आज ही नहीं बल्कि बरसहा बरस से उलमाए देवबन्द की सदाक़त को चैलेन्ज है कि अगर उनमें राई के दाना बराबर भी हक़ पसन्दी का कोई हिस्सा बाक़ी रह गया हो तो ख़ज़ीनतुल औलिया और हिदायतुल इस्लाम को मन्ज़रे आम पर लाकर अपनी हक़ गोई का सुबूत दें। वरना तौबा व इस्तिग़फ़ार का दरवाज़ा कल भी खुला था और आज भी है अब भी शर्म व नदामत से गर्दन झुका कर ताइब हो जायें।

मुरीदे सादा तो रो रो के हो गया ताइब
ख़ुदा करे कि मिले शैख़ को भी यह तौफ़ीक़

और यह मुतालबा कुछ इधर ही से नहीं बल्कि मौलाना टांडवी की गोद के तरबियत याफ़्ता मौलाना आमिर उस्मानी का भी यही मुतालबा है। रद्दे शिहाबे साक़िब पर तबसेरा करते हुए मौलाना उस्मानी ने मौलाना टांडवी के ख़ल्फ़े अकबर मौलवी असअ़द साहब को मुख़ातिब किया है कि ख़ज़ीनतुल औलिया और हिदायतुल इस्लाम से मुतअ़ल्लिक़ जो मौलाना टांडवी पर इल्ज़ाम है उसका जवाब देना असअ़द सल्लमहू औद इल्महू की ज़िम्मेदारी है। मुलाहज़ा फ़रमाइये-

"किताब के लबो लहजे से सख़्त वहशत ज़दा होने के बावजूद इतना हम इन्साफ़न ज़रूर कहेंगे कि मुसन्निफ़ ने मौलाना मदनी पर एक इल्ज़ाम बड़ा भयानक और फ़िक्र अंगेज़ लगाया है उनका कहना है कि जिन दो किताबों ख़ज़ीनतुल औलिया और हिदायतुल इस्लाम से शिहाबे साक़िब में बाज़ इक़्तेबासात दिये गये हैं वह फ़िलहक़ीक़त मन घड़त हैं जिन मुसन्निफ़ों की तरफ़ उन्हें मन्सूब किया गया है उन्होंने कभी हरगिज़ हरगिज़ यह किताबें नहीं लिखीं।"

सर्द आहें गर्म आंसू, आंसुओं में ख़ूने दिल
कह रहे हैं इस तरह अफ़साना दर अफ़साना हम

नोटः- इसी के साथ मौलाना उस्मानी ने मौलाना टांडवी की सफ़ाई में कुछ जवाबात भी दिये हैं जिन जवाबात को उस्मानी साहब ने ख़ुद ही क़ियास और तुक बन्दी से ताबीर किया है नाज़िरीन ख़ुद ही अन्दाज़ा कर सकते हैं कि अगर मुजीब ही की निगाह में जवाबात की हैसियत तुक बन्दी की है तो फिर उसका वज़न ही क्या रह जाता है चुनान्चे चन्द सतर बाद उस्मानी साहब रक़मतराज़ हैं।

तजल्ली फ़रवरी मार्च 59 ई॰

"ताहम यह क़ियासात हैं बल्कि महज़ अ़क़्ली तुक बन्दियां हैं हक़ यह है कि तहक़ीक़ी और मा'क़ूली जवाब या तो मौलाना मदनी के बुलन्द इक़बाल साहबज़ादे मौलवी असअद तुल उमरुहु के ज़िम्मा है या फिर उन मुरीदीन व मुतवस्सिलीन के ज़िम्मे है जो बजा तौर पर मौलाना की अ़क़ीदत व मुहब्बत में सरशार हैं।"

नोटः- मुन्दर्जा बाला इबारत से यह बात वाज़ेह हो गई कि मौलाना उस्मानी के पास इसका कोई सही जवाब न था वरना वह इस क़िस्म की लचर तुक बन्दी और क़ियास आराई के हेर फेर में पड़ने के बजाए ख़ुद ही तहक़ीक़ी और मा'क़ूली जवाब देकर मुआ़मला साफ़ कर लेते अलबत्ता अब मौलाना असअ़द साहब से गुज़ारिश है कि अगर मेरा मुतालबा उनके बरहमीए मिज़ाज का बाइस बन सकता है तो अपने उस्मानी साहब की तस्कीने ख़ातिर के लिए कोई जवाब मरहमत फ़रमा कर बिला वास्ता न सही बिलवास्ता ही मेरा पैग़ाम क़बूल फ़रमायें।

बर्गे हिना पे लिखता हूं मैं दर्दे दिल की बात
शायद की रफ़्ता रफ़्ता लगे दिलरुबा के हाथ

अब देखना है कि मौलवी असअ़द साहब अपने वालिदे बुज़ुर्गवार की सफ़ाई में कोई सन्जीदा और मा'क़ूल बयान देकर अपने ख़ल्फ़े सादिक़ होने का सुबूत देते हैं या उस्मानी साहब की तरह क़ियास आराई व तुक बन्दी से काम लेकर जग हंसाई का मौक़ा देंगे अलबत्ता बर सरे राह उस्मानी साहब से एक ज़रूरी बात अ़र्ज़ करनी है कि किसी भी किताब पर नक़्द व नज़र करने से पहले उसके हर गोशे की तहक़ीक़ कर लेना ज़रूरी है। मसलन यही किताब रद्दे शिहाबे साक़िब जो इस वक़्त मौज़ूए सुख़न बनी हुई है उस पर तबसेरा करते हुए आप रक़मतराज़ हैं-

तजल्ली फ़रवरी व मार्च 1961 ई॰

"नीज़ हो सकता है मुसन्निफ़ के ज़ेहन में यह भी हो रहा हो कि मैं पाकिस्तान में हूं यहीं के अवाम में ज़्यादा तर मेरी किताब इशाअ़त पाएगी देवबन्दी बेचारे

मज़कूरा किताबों की पोटली बांध कर पाकिस्तान आने और क़रिया ब क़रिया उनका नक्क़ारा कराने से तो रहे हम या तो उनके ऐलान को पी जायें। या इसकी भी साफ़ तरदीद कर देंगे कि यह बहावी कमबख़्त झूटे हैं। ज़ाहिर है कि इन अल्फ़ाज़ के छाप देने में हाथी घोड़े तो नहीं लगते।"

क्यों किसी ग़ैर से मैं शिकवए बेदाद करूं
लुत्फ़ जब है कि तुझी से तेरी फ़रियाद करूं

नोटः- क़ुरबान जाइये उस्मानी साहब की उस अक़्ल व दानिश पर कि रद्दे शिहाबे साक़िब पाकिस्तान में तबअ् हुई तो आंजनाब ने अपनी ख़ुश फ़हमी से यह भी तय कर लिया कि इसका मुसन्निफ़ पाकिस्तानी है। हालांकि वाक़िआ यह है कि किताब तो पाकिस्तान में छपी मगर उसके मुसन्निफ़ मुफ़्तीए संभल मौलाना अजमल शाह साहब संभल ज़िला मुरादाबाद के रहने वाले हैं और संभल उनकी मुस्तक़िल क़ियामगाह है फिर उक्त किताब की इशाअत हिन्द व पाक में यकसाँ तौर पर हुई है इस लिए उसकी जवाबदेही हिन्द व पाक के देवबन्दियों पर यकसाँ तौर पर आइद होती है। सिलसिलए जवाब में इस क़िस्म की धांदली और तुक बन्दी से काम नहीं चलता जिसको जनाब उस्मानी साहब ने इख़्तियार कर रखा है। बिलफ़र्ज़ अगर उसके मुसन्निफ़ पाकिस्तानी होते तो क्या पाकिस्तान देवबन्दियों से ख़ाली है ? या देवबन्दियों की तरफ़ से जवाब देने के तन्हा आप ही ठेकेदार हैं।

अलावा अज़ीं यह तो फ़रमाइये जब कि क़ियास आराई व तुक बन्दी के तहत आपने इतना रकीक हमला किया है तो कहीं ठोस व मुदल्लल जवाब इरशाद फ़रमाते तो न जाने कितनी मोटी मोटी गालियों से नवाज़ते। आख़िर साहब हालात की सही इत्तेलाअ् न रखते हुए यूं ही बे मुहाबा लिख देना शायद आपने अपने अकाबिर से बतौरे वरसा पाया है। लीजिये आप के इत्मीनाने क़ल्ब की ख़ातिर इसकी भी वज़ाहत ज़ाहिर किये देता हूं। अपने हकीमुल उम्मत मौलाना थानवी का एक आसमानी व मुल्तानी क़ानून मुलाहज़ा फ़रमाइये।

रस्मे दयारे हुस्न से ना आ ना था मैं
बेधड़क कह उठा जो पुकारा ख़ुद आपने

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 32

आख़िर में एक निहायत अहम और मुफ़ीद बात का लिख देना भी मैं ज़रूरी समझता

हूं जो हज़रत मौलाना अबुल महासिन मुहम्मद सज्जाद साहब रहमतुल्लाह अलैह ने मुझ से फ़रमाया था कि हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली थानवी की मजलिस में हज़रत शैख़ुल इस्लाम का तज़्किरा हुआ तो हज़रत हकीमुल उम्मत ने फ़रमाया-मौलाना हुसैन अहमद की मुख़ालफ़त करने वालों के सूए ख़ातिमा का अन्देशा है।

कुछ इशारों ही से कह दे तेरे चितवन के निसार
किस पर तौले हुए तलवार है अबरू तेरा

अब कहीं दूर जाने की ज़रूरत नहीं थानवी साहब के ख़ुलफ़ा व मुतवस्सिलीन सिर्फ़ इतना इरशाद फ़रमायें कि मौलवी शब्बीर अहमद उस्मानी का ख़ातिमा कैसा हुआ ? इस लिए कि टांडवी साहब और उस्मानी साहब के दर्मियान ग़ायत दर्जा की मुख़ालफ़त और चश्मक थी इस कहानी को मुझ से नहीं बल्कि फ़ाज़िले देवबन्द मौलाना सईद अहमद अकबराबादी सदर शोबए दीनियात मुस्लिम यूनीवर्सिटी अलीगढ़ की ज़बानी सुनिये।

बुरहान दिल्ली, नवम्बर सन् 52 ई॰ सफ़हा 308 309

"लेकिन उन्हीं ख़ुतूत का वह हिस्सा जिनमें मौलाना[1] मुल्की सियासत या मुआमलात दारुल उलूम देवबन्द के सिलसिला में अपने बाज़ मुआसरीन[2] की निस्बत रन्ज व मलाल और कबीदगीए ख़ातिर का इज़हार किया है" चन्द सतर बाद वाक़िआ यह है कि हज़रत मौलाना टांडवी 1942 ई॰ की तहरीक के सिलसिला में क़ैदे फ़रंग में थे और देवबन्द के सदर हज़रत मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी और मुहतमिम मौलाना मुहम्मद तय्यब थे कांग्रेस की तहरीक में हिस्सा लेने के बाइस दारुल उलूम देवबन्द में चन्द नागवार वाक़िआत पेश आये। हज़रत मौलाना टांडवी को उनकी निस्बत उनके बाज़ हाशिया नशीनों ने जो इत्तेलाआत जिस रंग में पहुंचायें मौलाना आख़िर इन्सान ही थे फ़रि ता नहीं थे और न पैग़म्बर की तरह मासूम थे (यानी मौलवी शब्बीर अहमद उस्मानी) से तबअ़न रन्जीदा और मलूल होना नागुज़ीर था इन ख़ुतूत में इसी मलाल का इज़हार किया गया है। लेकिन तस्वीर का एक दूसरा रुख़ यह भी है कि जंगे आज़ादी वतन के सर फ़रोश सिपाही जिनको न तालीम से दिलचस्पी थी और जो न मदरसा के क़वाइद व ज़वाबित की परवा करते थे उन लोगों ने तौहीन व तज़लील का कोई ऐसा तरीक़ा नहीं था जो हज़रत

(1) यानी मौलाना टांडवी (2) इशारा है मौलाना शब्बीर अहमद उसमानी की तरफ़।

मौलाना शब्बीर अहमद उसमानी के हक़ उठा न रखा हो चुनान्चे मौलाना मरहूम ने ख़ुद हम से कई मर्तबा इन्तेहाई गमगीन और आबदीदा होकर फ़रमाया कि इन लोगों ने देवबन्द में मेरा रहना तो कुजा घर से निकल कर मस्जिद तक आना अजीरन कर दिया है। और मैं यह सोच रहा हूं कि डाभील या हैदराबाद मुक़ीम हो जाऊं यह लोग मौलाना रहमतुल्लाह अलैह के ख़िलाफ़ क़ल्मी इश्तेहारात निकालते थे अशआर लिखते थे और उनको गली गली और कूचा कूचा में मुश्तहिर कराते थे मौलाना के सामने से गुज़रते तो तौहीन आमेज़ नारे लगाते हुए जाते थे।

नोटः- चुनान्चे मौलाना अकबराबादी की इस साफ़ गोई पर मकतूबाते शैख़ के फ़ाज़िल मुरत्तिब ने रोना रोया है कि घर की ढकी छुपी बातों को तश्ते अज़ बाम नहीं करना चाहिये था। मुलाहज़ा फ़रमाइये-

मकतूबाते शैख़ जिल्दे अव्वल सफ़हा 30

"फ़ाज़िले अकबराबादी ने रक़ीमुल हुरूफ़ को तअ्ना दिया है बे एहतियाती का और यह ख़्याल नहीं रहा कि मौलाना उसमानी के बारे में क्यों वे एहतियाती के मुरतकिब हो कर मरहूम की तशहीर इन फ़िक़्रों के ज़रीया फ़रमा रहे हैं, लोगों ने तौहीन व तज़्लील का कोई तरीक़ा ऐसा न छोड़ा था जो हज़रत मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी के हक़ में उठा रखा हो चुनान्चे मौलाना मरहूम ने ख़ुद हमसे कई मर्तबा इन्तेहाई गमगीन व आबदीदा होकर फ़रमाया कि उन लोगों ने देवबन्द में मेरा रहना तो कुजा घर से निकल कर मस्जिद तक आना अजीरन कर दिया है।"

ऐसा न हो ये दर्द बने दर्दे ला दवा
ऐसा न हो कि तुम भी मदावा न कर सको

नोटः- नाज़िरीन ने मुन्दर्जा बाला इक़्तेबासात से अन्दरूने ख़ाना की नोक झोंक का अन्दाज़ा कर लिया होगा कि मौलाना टांडवी और मौलाना उस्मानी में कितने शदीद इख़्तिलाफ़ात थे यहां तक कि मौलाना टांडवी के तलामिज़ा व मुतवस्सिलीन मौलाना उस्मानी के ख़िलाफ़ गन्दे इश्तेहारात तक निकालते उनके ख़िलाफ़ नारे लगाते वग़ैरह वग़ैरह तो अब थानवी साहब के मुरीदीन को चाहिये कि वह थाना भवन से दरियाफ़्त करें कि आया मौलाना थानवी के दस्तूरी क़ानून के बमूजिब मौलाना उस्मानी का ख़ात्मा बिलख़ैर हुआ या बिलसू ? जुमला मुअ्तरेज़ा के तौर पर जनाब माहिर साहब मुदीर फ़ारान की तवज्जोह चाहता हूं कि आंजनाब ने फ़ारान तौहीद नम्बर में नारए रिसालत पर बड़ी ले दे मचाई है कि इसका कुरआन व सुन्नत से कहीं सुबूत नहीं मिलता तो ख़ता माफ़ कभी देवबन्द के इन नारों पर भी आपके कान खड़े हुए जो मौलाना उस्मानी के ख़िलाफ़ बुलन्द किये जाते थे। नारए रिसालत से तो आपका कलेजा छलनी हो गया मगर देवबन्द के इन्सानियत सोज़ नारों पर आपके क़लम में जुम्बिश तक न आई। माहिर साहब यह बात इन्तेहाई क़ल्क़ और दुख की है कि तौहीद नम्बर देखने के बाद यह राय क़ाइम करनी पड़ी कि फ़ारान का तौहीद नम्बर रसूल दुश्मनी की जीती जागती नंगी तस्वीर है।

हां मैं थानवी साहब के मुरीदीन से यह दरियाफ़्त कर रहा था मौलाना उस्मानी का क्या अन्जाम हुआ ? मुमकिन है बसिलसिलए जवाब यह बात कही जाये कि मरने से पहले दोनों में सफ़ाईए क़ल्ब हो गई थी इस लिए मैं इस मक़ाम पर इस हक़ीक़त का भी इज़हार ज़रूरी जानता हूं कि उस्मानी साहब और टांडवी साहब के इख़्तिलाफ़ात मरते दम तक रहे। इसको भी दर असल देवबन्दी मौलाना अकबराबादी के क़लम से मुलाहज़ा फ़रमायें।

बुरहान दिल्ली, नवम्बर 52 सफ़हा 309

"इस मजमूआ के ख़ुतूत 120, 129, 130, 131 में ज़ाहिर है कि मौलाना टांडवी का गोशए नज़र मौलाना उस्मानी और मौलाना मुहम्मद तय्यब की तरफ़ था उनमें से मुअख़्ख़िरुज़्ज़िक्र तो उस वक़्त भी मुहतमिम थे और आज भी हैं और बक़ैदे हयात हैं इस लिए उन्होंने तो इस मजमूआ के शुरू में जो मुक़द्दमा लिखा है उसमें अपनी मख़्सूस मुतसव्विफ़ाना ज़बान में यह लिख कर कि मौलाना मदनी के मुआमलात की नौईयत और उफ़्तादे तबअ् से वाज़ेह है कि उन पर बुग़्ज़ फ़िल्लाह का ग़लबा है अपने दिल का बोझ हलका कर लिया और इस लतीफ़ तरीक़ा पर कि ग़ालिबन फ़ाज़िले मुरत्तिब को इस का एहसास भी नहीं हुआ वरना वह इस को शरीके इशाअ़त ही नहीं करते रह गये। मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी तो वह अब इस दुनिया में नहीं इस लिए अब कौन उनकी तरफ़ सफ़ाई पेश करे और कौन कहे।"

भूल जा गुज़रे हुए दिन भूल जा
बादे मुर्दन अब न रख दिल में मलाल

नोटः- मौलाना अकबराबादी अपनी नेक नीयती के तहत इख़्तिलाफ़ात के भूल जाने की तल्क़ीन फ़रमा रहे हैं शायद कि उन्हें यह नहीं मालूम कि मौलाना थानवी की तलवारें बे नियाम अब से पहले अपना किरदार अदा चुकी है। यानी मौलाना हुसैन अहमद की मुख़ालफ़त करने वालों के सूए ख़ात्मा का अन्देशा है। अब देवबन्द की

चहार दीवारी से दो चार क़दम और आगे बढ़ कर थाना भवन चलिये और थानवी साहब के ख़ाना साज़ आईने में ख़ुद आँ बदौलत की तस्वीर देखिये।

मक्तूबाते शैख़ जिल्दे दोम सफ़हा 298 और 299 पर टांडवी साहब रक़मतराज़ है-

"हां, उन (थानवी साहब) की राय दरबारए तहरीके आज़ादीए हिन्द ग़लत समझता हूं इस बारे में मेरा यक़ीने कामिल है कि मेरे और हज़रत थानवी के उस्ताद हज़रत शैख़ुल हिन्द की राय निहायत सही और वाजिबुल इत्तेबाअ् है।"

नोटः- अब फ़रमाइये कि मौलाना थानवी का ख़ातिमा बिलख़ैर हुआ या बिस्सु ?

नहीं कहा जा सकता कि मौलाना थानवी ने मौलाना टांडवी से इख़्तिलाफ़ मोल लेकर अपना ठिकाना कहां बनाया ? ज़ाहिर है जिसका ख़ातिमा बिलख़ैर न होगा उसको आग के अंगारों के सिवा जगह ही क्या मिल सकती है। इसी को कहते हैं एक तीर से दो शिकार। न तो थानवी साहब ने उस्मानी साहब को छोड़ा न ही ख़ुद अपने को बल्कि इस इख़्तिलाफ़ में क़ारी तय्यब साहब भी बराबर के शरीक हैं। चुनान्चे मुलाहज़ा फ़रमाइये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 47

"अलबत्ता मुझे उन 'मौलाना हुसैन अहमद' से हुज्जत के साथ इख़्तिलाफ़ है अगर वह हुज्जत ख़त्म हो जाये तो मैं उनके मातहत अदना सिपाही बन कर काम करने को तैयार हूं।"

नोटः- यह तो ज़िमनी बात थी जो बर-सबीले तज़्किरा आ गई थी अब मौलाना टांडवी की बारगाह में उनके अक़ीदत केशों की वालिहाना मुहब्बत और जोशे अक़ीदत के चन्द और नमूने मुलाहज़ा फ़रमाइये।

किसी और का नहीं बल्कि हज़रत शैख़ का तज़्किरा है।

जमाले यार की रअ्नाईयां अदा न हुई
हज़ार काम लिया मैंने ख़ुश बयानी से

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 12

"और अब हम यह देखते हैं कि वह 'यानी टांडवी' आलमे नूर में रहते हैं उनकी आंखों में भी नूर है, उनके दाहिने नूर है, उनके बायें नूर है उनके चारों तरफ़ नूर ही नूर है वह ख़ुद नूर हो गये हैं।"

नोटः- देवबन्दी अक़ीदे की बुनियाद पर रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मर कर मिट्टी में मिल गये मगर मौलाना टांडवी मरने के बाद नूर ही नूर हो गये-

जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

देवबन्दी धर्म में मौलाना महमूदुल हसन एक नूर थे और मौलाना टांडवी मरने के बाद भी ज़िन्दा हैं मुलाहज़ा कीजिये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 14

"शैख़ुल हिन्द मौलाना महमूदुल हसन रहमतुल्लाह अलैह एक नूर थे तो शैख़ुल इस्लाम मौलाना हुसैन अहमद मदनी उस नूर की ज़िया और चमक थे चन्द सतर के बाद दूसरे कालम में-

यह अल्लाह वाले मरने के बाद भी ज़िन्दा रहते हैं सदियां गुज़र जाने पर भी दिलों में उनकी रूह दौड़ती रहती है और उनकी महबूबियत बदस्तूर क़ाइम रहती है।"

इश्क़ करना है तो फिर इश्क़ की तौहीन न कर
या तो बेहोश न हो, हो तो फिर होश में न आ

नोटः- मौलाना टांडवी की क़ब्र पर हर वक़्त मेला झमेला लगा रहता है जो उनकी महबूबियत की दलील है मुलाहज़ा फ़रमाइये-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 14

"जो मक़बूलियत ज़िन्दगी में थी वही मौत के बाद भी रही और बाक़ी है मज़ार। हर वक़्त ज़ियारतगाह बना रहता है यहां तक कि रात को एक एक बजे भी जाने वाले गए तो मज़ार पर लोगों को पाया।"

नोटः- अगर क़ारी तय्यब साहब के ख़ातिरे नाज़ुक को ठेस न पहुंचे तो उनसे दरियाफ़्त करना है कि मौलाना टांडवी की क़ब्र का मेला झमेला तो उनकी नज़र में दलीले महबूबियत है फिर आख़िरश अजमेर मुअल्ला, बहराइच शरीफ़, ख़्वाजा क़ुतुब, पीराने कलियर, आस्ताना महबूबे इलाही से उन्हें क्यों पुर ख़ाश है कि वहां के हाज़िर बाशों को खुले बन्द बिदअ़ती और मुश्रिक बनाया करते हैं और इतने ही पर इक्तेफ़ा नहीं बल्कि पूरी मन्सूबा बन्दी से इन आस्ताना जात को मुक़फ़्फ़ल करा देने या ढवा देने की पैहम जिद्दो जहद है ?

अब टांडवी साहब की बारगाह में मुफ़्तीए बिजनौर मौलवी अज़ीज़ुर्रहमान

साहब की के पर की उड़ान मुलाहज़ा कीजिये और जोशे अक़ीदत की दाद दीजिये। जनाब शैख़ के बारे में तो हज़राते देवबन्द के ग़ुलुए मुहब्बत का यह आलम है।

कभी जब ज़िक्र छिड़ जाता है उनका
ज़बां दो दो पहर होती नहीं बन्द

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 72

"मैं अपनी सही व सादिक़ अक़ीदत और मुहब्बत की वजह से मजबूर हूं कि मुन्दर्जा ज़ैल हदीस का मिस्दाक़ आप को न क़रार दूं।

तर्जुमा:- क़रीब है कि लोग ऊंटों पर सफ़र करके दूर दराज़ से इल्म हासिल करने के लिए आयेंगे पस वह आलिमे मदीना से बढ़ कर किसी को आलिम न पायेंगे निसाई और हाकिम ने हदीसे मज़कूर की तहसीन की है और सुफ़ियान इब्ने महदी और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने फ़रमाया है कि मिस्दाक़ इस हदीस का इमाम मालिक इब्ने अनस हैं। मैं कहता हूं कि हमारे हज़रत शैख़ुल इस्लाम मौलाना सय्यद हुसैन अहमद मदनी आमतुम मिन आमतिल्लाह हैं।

पता देती है शोख़ी नक़्शे पा की
कोई इस राह से होकर गया है

नोट:- अब मुआमला नाज़िरीन की अदालत में पेश है कि मुफ़्तीए बिजनौर को इस इक़रार के बावजूद कि सुफ़ियान इब्ने महदी और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ ने फ़रमाया है कि मिस्दाक़ इस हदीस का इमाम मालिक इब्ने अनस हैं मगर वह इसको मानने के लिए तैयार नहीं। चूंकि उनकी सही और सच्ची अक़ीदत व मुहब्बत का यह कहना है कि इस हदीस के मिस्दाक़ मौलाना टांडवी हैं मुफ़्तीए बिजनौर के पास अपने इस दावे की कोई दलील नहीं है बजुज़ इसके कि उन पर टांडवी साहब की अक़ीदत का दबाव पड़ रहा है। क़ुरआन व सुन्नत की दलील तो मीलाद व क़ियाम उर्स व नियाज़ के लिए चाहिये। अपने मौलाना की क़सीदा ख़्वानी के लिए महज़ अक़ीदत व मुहब्बत का इशारा काफ़ी है। अगर मुफ़्तीए बिजनौर को ज़हमत न हो तो ज़रा इस गोशे पर भी रौशनी डाल दें कि यही हदीस सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आलिमे ग़ैब होने की भी रौशन दलील है क्योंकि यह बात ज़ाहिर है कि अगर आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मुत्तलअ

न होते तो इसकी ख़बर ही क्योंकर दे सकते थे कि लोग दूर दराज़ से इल्म हासिल करने आयेंगे पस वह आलिमे मदीना से बढ़ कर किसी को आलिम न पायेंगे।

सच जानिये यही हदीस जो मौलाना टांडवी की फ़ौक़ियत व बरतरी में बतौरे दलील लाई जा रही है अगर इसी हदीस को इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सुबूत में पेश किया जाये तो एक ही सांस में न जाने कितने सवालात इस हदीस पर वारिद कर दिये जायेंगे यह तो आये दिन का तजुर्बा है कि जो हदीस उनके हक़ में मुसबत मुद्दई हो तो उसका दर्जा हदीसे क़ुदसी से कम नहीं होता लेकिन अगर किसी हदीस से हयातुन्नबी और इल्मे ग़ैबे मुस्तफ़ा वग़ैरह का सुबूत दिया जाये तो अगर ज़्यादा नहीं सही तो कम से कम इस हदीस को ज़ईफ़ ज़रूर ही कह दिया जाएगा और रावियाने हदीस पर जिरह व तअ़दील की बहस खड़ी कर दी जाएगी इस मक़ाम पर कहना यह है कि सुफ़ियान इब्ने महदी और अब्दुर्रज़्ज़ाक़ जैसे माहिरीने फ़न लाख कहते रहें कि इस हदीस के मिस्दाक़ मालिक इब्ने अनस हैं मगर देवबन्दी इसको मानने के लिए तैयार नहीं चूंकि उनकी अक़ीदत का इशारा मालिक इब्ने अनस की तरफ़ नहीं बल्कि मौलाना टांडवी की तरफ़ है उनका कहना तो यह है कि-

वफ़ादारी बशर्ते उस्तुवारी असल ईमाँ है
मरे बुतख़ाने में तो कअ़बा में गाड़ो ब्रह्मन को

अब शैख़ुल इस्लाम नम्बर ही से एक और हवाला हाज़िर करता हूं जिससे उलमाए देवबन्द की धांदली का सही अन्दाज़ा हो सकेगा कि क़ौम की आंखों में धूल झोंक कर यह हज़रात कितनी होशियारी से अपने तक़द्दुस और इत्तेबाअ़े सुन्नत का प्रोपगन्डा करते हैं।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 56

"अल्लाहु अकबर एक वाक़िआ याद आता है कि सिवहारा में कुछ ख़ुद्दाम मुबारक पैरों के दबाने पर मुसिर हुए जिस पर इन्कार मुसलसल फ़रमाते रहे और आख़िर में फ़रमाया कि क्या सुन्नत से इसका सुबूत मिलता है अलग़रज़ हज़रते वाला क़ुद्दिस सिर्रहू इबादत मुआशरत, यहां तक कि अज़वाक़ व मवाजीद हर नौए ज़िन्दगी में इत्तेबाअ़े सुन्नत का मज़हरे कामिल थे।"

नोट:- नाज़िरीन ने यह तो पढ़ ही लिया कि कुछ ख़ुद्दाम मौलाना टांडवी का पैर दबाने पर मुसिर हुए तो मौलाना ने यह कह कर इन्कार कर दिया कि इसका

मुत्तफ़िक़ हदीस से नहीं मिलता। अब इसी मौक़ा पर शैख़ुल इस्लाम नम्बर की एक दूसरी रिवायत मुलाहज़ा कीजिये जो इसकी ज़िद है जिससे उनके इत्तेबाअ़े सुन्नत की पूरी क़लई खुल जाती है।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 38

"मौलाना अबुल वफ़ा क़ाइल हैं कि एक मर्तबा पंजाब से वापस हो रहे थे हज़रत 'टांडवी' के इलावा मौलाना अ़ताउल्लाह शाह साहब बुख़ारी भी साथ थे एक बार मौलाना अबुल वफ़ा साहब को महसूस हुआ कि कोई साहब उनका जिस्म निहायत आहिस्तगी से दबा रहे हैं उनको आराम महसूस हुआ और उन्होंने यह समझ कर कि पंजाबी हज़रात अक्सर इस क़िस्म की इरादत उलमा से करते हैं कोई तअ़ारुज़ न किया जब काफ़ी देर हो गई तो उन्होंने चादर से मुंह खोल कर देखा कि आख़िर यह कौन साहब हैं देखते ही बद हवास हो गये ख़ुद हज़रत शैख़ुल इस्लाम बदन दबा रहे थे वह घबरा कर उठे तो देखा कि मौलाना अ़ताउल्लाह साहब भी बैठे हुए अपना मुंह पीट रहे हैं कि मुझे भी हज़रत ने गुनहगार किया और अब आपकी बारी थी।"

अल्लाह रे ख़ुद साख़्ता क़ानून का नैरंग
जो बात कहीं फ़ख़्र वही बात कहीं नंग

सिवहारा में अगर पैर का दबवाना ख़िलाफ़े सुन्नत था तो फिर पंजाब की वापसी में शाह अ़ताउल्लाह बुख़ारी और मौलवी अबुल वफ़ा का बदन दबा कर मौलाना टांडवी ने ख़िलाफ़े सुन्नत फ़ेअ़्ल का इरतेकाब क्यों क्या ? क़िस्सा मुख़्तसर यह है कि सिवहारा में आख़िरश यह तअ़ारुज़ व तज़ाद कैसा ? इस रिवायत का यह टुकड़ा भी नाज़िरीन की ख़ुसूसी तवज्जोह चाहता है कि मौलवी अबुल वफ़ा ने यह समझ कर कि पंजाबी हज़रात अक्सर इस क़िस्म की इरादत उलमा से करते हैं कोई तअ़ारुज़ न किया यानी मौलवी अबुल वफ़ा साहब जागते हुए होशो हवास में अपना बदन दबवाते रहे इसकी दो ही सूरत हो सकती है। या तो मौलवी अबुल वफ़ा यह मसला न जानते थे कि पाँव दबवाना ख़िलाफ़े सुन्नत है वरना पाँव समेट लेते और ख़ादिम को मसला बता कर रुख़सत कर देते वरना फिर यह कि दीदा व दानिस्ता ख़िलाफ़े सुन्नत फ़ेअ़्ल के मुरतकिब होते रहे। अब इस गरोह को तो मौलवी अबुल वफ़ा ही के नाख़ुने तदबीर खोल सकेंगे।

इसी ज़िम्न में शैख़ुल इस्लाम की एक और रिवायत मुलाहज़ा कीजिये कि मौलाना टांडवी मासूम थे।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 80

"एक ख़ास निअ़्मत जो अल्लाह तआ़ला ने 'आप टांडवी' को अ़ता फ़रमाई थी वह थी तावीरे रोया। इस पैकरे इस्मत की ज़िन्दगी ने सय्यदुना यूसुफ़ अ़ला नबीय्यिना व अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम से जहां तक़द्दुस व इस्तिक़ामत अ़लल हक़ बातिल के मुक़ाबला में सीना तान कर अस्सिजनि अहब्बु इला ममाइद औननी का नारा बुलन्द करने का तर्का पाया था वहीं तावीले अहादीस के तमाम शोबे बिलख़ुसूस तावीरे रोया का कमाल भी हासिल फ़रमाया था।"

इश्क़ की चोट का कुछ दिल पे असर हो तो सही
दर्द कम हो कि ज़्यादा हो मगर हो तो सही

नोटः- क़ुरबान जाइये अगर आज हम सुन्नी सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को पैकरे नूर कह देते हैं तो नज्द से सहारनुपर तक तहलका मच जाता है कि अब्दुल्लाह का वह बेटा जो हमारा ही जैसा बशर था उसको पैकरे नूर कहा जा रहा है मगर अयोध्या बाशी मौलाना टांडवी को पैकरे इस्मत लिखते हुए गैरत न आई। एक वह इन्सान जो सरापा ख़ता व निस्यान हो उसको मासूम क्योंकर कहा जा सकता है। जबकि मुसल्लमात से है कि पैकरे बशरी व सुफ़ूफ़े इन्सानी में सिर्फ़ अम्बिया व रुसुल ही को मासूम कहा जा सकता है। यहां तक कि सहाबा, ताबेई, अहले बैत, औलिया, शुहदा सालिहीन इनमें से किसी को भी मासूम कहना दुरुस्त नहीं। चुनान्चे अहले सुन्नत व अहले तशअ़ का यह एक नेज़ाई मसला है कि अइम्मा को मासूम कहा जा सकता है या नहीं ? अहले तशअ़ अइम्मा की इस्मत के क़ाइल हैं मगर अहले सुन्नत को इससे इख़्तिलाफ़ है। इसके बावजूद हज़राते देवबन्द की नज़र में मौलाना टांडवी पैकरे इस्मत थे और सरकारे दो आलम उन्हीं जैसे बशर।

यह है देवबन्दी मिशन का नुक़्तए फ़िक्र और मतमहे निगाह कि अपने मौलाना को हज़रत सय्यदना यूसुफ़ अ़लैहिस्सलाम के दोश बदोश बिठाओ और आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपना जैसा बशर और गाँव का चौधरी कह कर अपनी ही सफ़ में उन्हें जगह दो। महबूबे ख़ुदा के लिए तो यह क़ानून है कि

उनकी तारीफ़ बशर जैसी करो या उससे भी कम दर्जा की। मगर मौलाना टांडवी को सरापा नूर और पैकरे इस्मत कहो और जहां कहीं मौक़ा मिल जाये अम्बिया व रुसुल से भी दो चार हाथ आगे बढ़ा देना।

लीजिये शैख़ुल इस्लाम ही से इसकी भी शहादत पेश किये देता हूं। यानी हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने मौलाना टांडवी की इक़्तेदा में नमाज़े जुमा अदा की।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 154

"हज़रत सय्यदना इब्राहीम अलैहिस्सलाम गोया किसी शहर में जामा मस्जिद के क़रीब एक हुजरा में तशरीफ़ फ़रमा हैं और मुत्तसिल एक दूसरे कमरे में कुतुब ख़ाना है हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने कुतुब ख़ाना से एक मुजल्लद किताब उठाई जिस में दो किताबें थीं एक किताब के साथ दूसरी किताब थी वह ख़ुत्बाते जुमा का मजमूआ था उस मजमूअए ख़ुतुब में वह ख़ुतबा नज़रें अनवर से गुज़रा जो मौलाना हुसैन अहमद मदनी ख़ुतबए जुमा पढ़ा करते हैं जामा मस्जिद में बवजहे जुमा मुसल्लियों का मजमा बड़ा है मुसल्लियों ने फ़क़ीर से फ़रमाइश की कि तुम हज़रत ख़लीलुल्लाह से सिफ़ारिश करो कि हज़रत ख़लीलुल्लाह अलैहिस्सलाम मौलाना मदनी को जुमा पढ़ाने का इरशाद फ़रमायें फ़क़ीर ने जुरअत करके अर्ज़ किया तो हज़रत ख़लील अलैहिस्सलाम ने मौलाना मदनी को जुमा पढ़ाने का हुक्म फ़रमाया मौलाना मदनी ने ख़ुत्बा पढ़ा और नमाज़े जुमा पढ़ाई हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने मौलाना मदनी की इक़्तेदा में नमाज़े जुमा अदा फ़रमाई फ़क़ीर भी मुक़्तदियों में शामिल था हज़रत सय्यदना इब्राहीम अलैहिस्सलाम ज़ईफ़ुल उम्र थे रीशे मुबारक सफ़ेद थी।

मैं समझता हूं तेरी इश्क़ गरी को साक़ी
काम करती है नज़र नाम है पैमाने का

नोटः- हमें इस मक़ाम पर इससे बहस नहीं कि इस क़िस्म के अवामी ख़्वाब को किसी की तारीफ़ व तौसीफ़ में बतौरे सनद पेश किया जा सकता है या नहीं? और न तो यही बहस छेड़नी है कि हज़राते देवबन्द अपने अकाबिर के फ़ज़ाइल व मनाक़िब ख़्वाब ही के रास्ते क्यों साबित करते हैं। अलबत्ता मातम तो यह करना है कि इस बद नसीब ने जब ख़्वाब में मौलाना टांडवी और हज़रत इब्राहीम

ख़लीलुल्लाह दोनों को यकजा देखा तो हज़रत ख़लीलुल्लाह के बजाए टांडवी से नमाज़े जुमा पढ़ाने की दरख़्वास्त क्यों की? बिलफ़र्ज़ अगर मुसल्लियों की ख़्वाहिश पर हज़रत ख़लीलुल्लाह ने टांडवी साहब को नमाज़े जुमा पढ़ाने का इशारा किया तो चाहिये यह था कि मौलाना टांडवी झिझकते हुए अदब समझते हुए अर्ज़ करते कि एक नबी की मौजूदगी में ग़ैर नबी को इमामत का हक़ नहीं पहुंचता और आज हम सब की सआदत इसी में है कि अल्लाह के एक बरगुज़ीदा पैग़म्बर की इक़्तेदा में अपनी नमाज़े जुमा अदा करें मगर यहां का आलम तो यह है कि 'ऊंट का कोई कल सीधा नहीं' पीरो मुर्शिद दोनों अज़मते नबुव्वत के ख़िलाफ़ बर सरे पैकार हैं।

तअज्जुब है कि मौलाना मुहम्मद मियां नाज़िमे जमीअतुल उलमा पर जो शैख़ुल इस्लाम नम्बर के मुरत्तिब हैं उन्होंने इस रिवायत को शरीके इशाअत क्यों कर लिया?

ऐ दोस्तो! अब यह फ़ैसला तुम्हारे हाथ में है कि एक नबी की मौजूदगी में ग़ैरे नबी के पीछे नमाज़ पढ़ना क़ाबिले हम्द व शुक्र है या लाइक़े तअस्सुफ़?

अगर यह ज़ियारत ख़्वाब ही में नसीब हुई ताहम टांडवी के पीछे तो और भी दिनों में नमाज़ पढ़ी जा सकती थी मगर फ़िरोज़ बख़्ती इसमें थी कि ख़्वाब ही में मस्जिद के एक नबी की इक़्तेदा में नमाज़ अदा कर ली जाती।

कहने वाले ने सच कहा-

चमन की बात हो या बज़्मे मय का नाम आये
लबों पे तज़्किरए यार आ ही जाता है

मौलाना टांडवी के साथ उनके नियाज़मन्दों और पुजारियों की दास्ताने मुहब्बत बहुत तवील है अगर यह वाक़िआत इसी बस्त व तफ़सील से क़लमबन्द किये गये तो किताब की ज़ख़ामत के बढ़ जाने का अन्देशा है इस लिए अब इख़्तेसार से काम लेते हुए चन्द हवालाजात और हाज़िर किये जाते हैं। मौलाना टांडवी इन्सानों की तक़दीर व तस्वीर बदल देते थे।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 155

"मेरे बुज़ुर्गो और दोस्तो क्या यह ज़िन्दा करामत नहीं है कि मैं आवारा गर्दों की सफ़े अव्वल में मुमताज़ हैसियत रखता था और उस्ताद कहलाता था मगर आज 1957 में शैख़ुल इस्लाम के ग़ुलामों में मुमताज़ हैसियत दी गई है मजाज़न कहलाता।"

कोई अन्दाज़ा कर सकता है उसके ज़ोरे बाज़ू का
निगाहे मर्दे मोमिन से बदल जाती हैं तक़दीरें

नोटः- मौलाना टांडवी की नज़रे करम ने गदाओं को शहन्शाही दी। शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 154

आज उस मुशफ़िक़ मुरब्बी शैखे कामिल का साथ है
जिसकी नज़रों से गदाओं को शहन्शाही मिले

नोटः- जी हां मौलाना टांडवी की एक नज़रे करम गदाए बेनवा को ताजे शाहाना अता करती थी और लोगों की तक़दीर बदल देती थी।

मगर जिस का नाम मुहम्मद या अली वह किसी चीज़ का मुख़्तार नहीं। और सुनिये मौलाना टांडवी उस दौर के अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक थे।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 148

"एक मर्तबा मुझको सोते में यह आवाज़ आई कि मौलाना हुसैन अहमद साहब इस दौर के अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक हैं।"

नोटः- अब्दुल्लाह इब्ने मुबारक ही नहीं बल्कि ख़ुलासए कायनात थे जैसा कि गुज़श्ता सफ़हात में गुज़र चुका यानी।

ख़ुदा के लिए यह तो मुश्किल नहीं
हो आलम का मजमूआ इक फ़र्दे वाहिद

मौलाना टांडवी उम्मत के आख़िरी सहारा थे। अब आज के देवबन्दी बिल्कुल बे सहारा व बे यारो मददगार हैं।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 97

"मगर अब आह मेरे मसीहा! दुनिया में तो इस वक़्त क़यामत बरपा है उम्मते मरहूमा का तू ही एक सहारा था सो क़यामत में मिलने का वादा कर के चला गया क्या ख़ूब है।"

जाते हुए कहते हैं क़यामत में मिलेंगे
क्या ख़ूब क़यामत का है गोया कोई दिन और

मौलाना टांडवी की मौत से शरीअत व तरीक़त की अज़मत लुट गई। शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 99

"उनकी मौत से शरीअत व तरीक़त की अज़मत लुट गई। इल्मो इरफ़ां की बज़्म सूनी हो गई। सुलूक व तसव्वुफ़ की ख़ानक़ाह उजड़ गई

अज़्म व इस्तिक़लाल के बुलन्द मिनारे ज़मीन के बराबर हो गये।"

नोटः- रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को तो हर देवबन्दी अच्छी तरह जानता पहचानता है कि पैग़म्बरे ख़ुदा देवबन्दियों के बड़े भाई थे। उन्हीं जैसे बशर थे अपनी उम्मत में उनका मर्तबा इतना ही बुलन्द था जैसे गाँव का चौधरी वग़ैरह वग़ैरह मगर मौलाना टांडवी के फ़ज़ाइल व कमालात का अन्दाजा करना यह हर इन्सान का काम नहीं है। मुलाहज़ा कीजिये-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 67

"आपके फ़ज़ाइले इल्मिया और कमालाते बातिनिया की सही इत्तेलाअ् या तो ख़ुदावन्दे क़ुद्दूस ही को हो सकती है। या उन औलियाए किराम और उलमाए रब्बानीन को हो सकती है जिनको मब्दाए फ़य्याज़ ने चश्मे बसीरत अता फ़रमाई है हम जैसे कोर चश्म आपकी ज़ाते क़ुद्सी सिफ़ात को क्या पहचान सकते हैं।"

नोटः- मौलाना टांडवी के फ़ज़ाइले इल्मी, कमालाते बातिनी की बारी आई तो सारे देवबन्दी चौंधिया गये आंखें ख़ीरा हो गईं। उनके फ़ज़ाइल व कमालात की इत्तेलाअ् या तो ज़ाते अहदियत को हो सकती है (हो सकती है, से यह बात भी मुतर शेह़ होती है कि बिलफ़ेअ्ल इत्तेलाअ् नहीं है अगर चाहे तो मुत्तलअ् हो सकता है) या फिर वह औलियाए किराम जिन्हें मब्दाए फ़य्याज़ से चश्मे बसीरत मिली हो मगर महबूबे ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से मुतअल्लिक़ हर देवबन्दी अच्छी तरह जानता है कि उन्हें पीठ पीछे की ख़बर न थी, दीवार के पीछे का इल्म न था। वह ग़ैब नहीं जानते थे, आख़िरश यह रसूल दुश्मनी नहीं तो और क्या है ? एक और नया लतीफ़ा सुनिये मौलाना टांडवी की मौत पर शादाब फूल पज़ मुर्दा हो गये और पानी सियाह हो गया।

कौन उस बाग़ से ऐ बादे सबा जाता है
रंग रुख़्सार से फूलों के उड़ा जाता है

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 159

"मौलवी शौकत अली बम्बवी मुतअल्लिम दारुल उलूम देवबन्द हज़रत की ख़िदमत में पेश करने के लिए चम्पा के फूल लाये एक बोतल में पानी भर कर फूल उसमें डाल दिये गये। इस तरह ख़ुशनुमा भी मालूम होते हैं। और उनकी उम्र भी चार माह हो जाती है। यानी चार माह तक

पज़ मुर्दा नहीं होते हज़रत टांडवी ने इस हदिया को मुसर्रत से क़बूल फ़रमाया और हुक्म दिया यह बोतल उनके कमरे में मेज़ पर रख दी जाये चार माह के बजाए तीन साल और तीन माह गुज़र गये थे फूल उसी तरह तरो ताज़ा थे उनकी ताज़गी में कोई फ़र्क़ नहीं आया था मगर अफ़सोस 5 दिसम्बर 1957 ई॰[1] के हादसए जांकाह की ताब वह भी न ला सके और दफ़अतन उनकी ताज़गी पज़ मुर्दगी से बदल गई वह सारे फूल सियाह हो गये यहां तक कि पानी में सियाही का असर आ गया।"

नोट।– शैख़ुल इस्लाम नम्बर से जितने भी शवाहिद पेश किये जा रहे हैं वह नाज़िरीन के हक़ में लम्हए फ़िक्रिया की हैसियत रखते हैं मक़सूदे निगारिश इसके सिवा कुछ भी नहीं है कि क़ारेईन उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी और पीर परस्ती का मुवाज़ना फ़रमाते हुए उनके मिशन का सही जाइज़ा लें। बात अपनी तरफ़ से कुछ भी नहीं कही जा रही है। यह कुछ भी है उन्हीं के घर का मुन्तशिर सरमाया है जिसको मैंने तर्तीब वार यकजा कर दिया है। मज़कूरा बाला रिवायत के तहत नाज़िरीन ख़्याल फ़रमायें कि अगर पानी मुसलसल तब्दील होता रहे तो चम्पा की उम्र ज़्यादा से ज़्यादा चार माह की हो जाती है मगर हज़रत शैख़ की ख़िदमत में पहुंचने के बाद उसकी उम्र 3 साल और 3 माह की हो गई और 5 दिसम्बर 57 ई॰ जो मौलाना टांडवी की तारीख़े मौत है इस हादसा का झटका वह भी बरदाश्त न कर सका और पज़ मुर्दा हो गया और इतना ही नहीं बल्कि फूल व पानी दोनों सियाह हो गये। न जाने कितनी सियाह रूह थी नतीजा यह निकला कि फूल की उम्र का बढ़ना और उसका यकायक पज़ मुर्दा होना साफ़ शफ़्फ़ाफ़ पानी का सियाह हो जाना यह तमाम चीज़ें मौलाना टांडवी के ज़ेरे इख़्तियार व इक़्तेदार थीं। अब इन्साफ़ पसन्दों का तक़ाज़ा है कि तक़वीयतुल ईमान का क़ानून यहां जारी किया जाये "अल्लाह साहब के इख़्तियारात किसी बन्दे को देना ऐसे ही है जैसे बादशाह का ताज चमार के सर पर रख दिया जाए" मगर यह सारे क़वानीन तो सरकारे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ही की बारगाह में नाफ़िज़ किये जाते हैं। बात मुख़्तसर सी यह है कि महबूबे ख़ुदा को घटाना और अपने उलमा को बढ़ाना यह देवबन्दी मिशन का मतमहे निगाह और ग़ायए मक़सूद है। इसी ज़िम्न में एक रिवायत और भी मुलाहज़ा फ़रमाइये कि मौलाना टांडवी के हुक्म पर धूप और छांव होती थीं।

[1] तारीख़े वफ़ात मौलाना टांडवी

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 161

"हज़रत मौलाना टांडवी और मियां बशीरुद्दीन साहब हज़रत मौलाना टांडवी की ससुराल किताल पुर ज़िला आज़मगढ़ जा रहे थे तीनों आदमी घोड़े पर सवार थे गर्मी की शिद्दत से परेशान थे। मैंने हज़रत मौलाना टांडवी से अर्ज़ किया कि धूप की शिद्दत से सख़्त परेशानी है हज़रत मौलाना ख़ामोश रहे थोड़ी देर में मैंने देखा कि अब्र का एक टुकड़ा नुमूदार हुआ और बढ़ते बढ़ते हम लोगों पर साया फ़गन हो गया और निहायत आराम से हम लोग चलने लगे थोड़ी देर के बाद मैंने देखा कि दूर से पानी आ रहा है मैंने हज़रत 'टांडवी' से अर्ज़ किया कि हज़रत वह धूप ही अच्छी थी अब तो भीगे हुए ससुराल पहुंचेंगे। हज़रत मौलाना फिर ख़ामोश रहे यहां तक कि पानी सर पर आ गया लेकिन ख़ुदा की क़ुदरत हर चहार तरफ़ पानी बरस रहा था, घोड़े पानी पर चल रहे थे लेकिन हम लोगों पर पानी का कोई क़तरा नहीं पड़ रहा था।"

नोटः– अगर आज हम लोगों के ज़बान व क़लम से यह निकल जाये कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम यह जानते थे कि बारिश कब होगी तो मुंह छूटते ही हमें मुशरिक कहा जाता है लेकिन मौलाना टांडवी सिर्फ़ यह नहीं कि बारिश कब होगी बल्कि धूप, छांव का होना और बारिश भी ऐसी कि इर्द गिर्द हो मगर पानी का कोई क़तरा मौलाना टांडवी और उनके साथियों पर न पड़ सके। यह सारी बातें उनके इख़्तियार में थीं गोया यह कि जिस क़दर भी निज़ामे आलम है वह सब उलमाए देवबन्द के क़ब्ज़ए क़ुदरत में है यही वजह है कि मौलाना थानवी जब घर से बाहर निकलते तो अब्र का साया हो जाना ज़रूरी था, फूल का शादाब रहना, उसका मुरझाना, पानी का सियाहा होना, अब्र का आना और बारिश का होना यह सब मौलाना टांडवी के इख़्तियारात थे।

इसी लिए तो हज़राते देवबन्द का यह कहना है कि मौलाना टांडवी इन्सान न थे बल्कि अल्लाह तआला अपनी किब्रियाई पर पर्दा डाल कर उतर आया था, रिसाला जिल्द अव्वल में गुज़र गया है। और मौलाना टांडवी पैकरे इस्मत थे। ऐसे ही मौलाना थानवी को अपने अकमल होने का यक़ीन था जिसके नतीजे में अपने मुरीदीन से ला इलाह इल्लल्लाह अशरफ़ अली रसूलुल्लाह पढ़वाते थे और यह मानी हुई बात है कि उन हज़रात के लिए आला से आला मक़ामात व मरातिब वही

दिल व दिमाग़ तस्लीम कर सकता है जिसको गढ़े हुए कश्फ़ व करामात से बोझल बना दिया गया हो। और ऐसे ही रसूले ख़ुदा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपना जैसा बशर और गाँव का चौधरी वही बद नसीब कह सकता है जो आक़ाए दो जहां के फ़ज़ाइल व कमालात से क़तअ़न ना अशना हो। यही वजह है कि उलमाए देवबन्द अपने बुज़ुर्गों की क़सीदा ख़्वानी में ज़मीन व आसमान के क़लावे मिलाते हैं और रसूले ख़ुदा के बारे में यह तल्क़ीन की कि बशर जैसी तारीफ़ करो बल्कि उससे भी कम दर्जा की। अब यहीं पर मौलाना टांडवी जैसे साहिबे कश्फ़ व करामात की धींगा मुश्ती मुलाहज़ा कीजिये और अन्दाज़ कीजिये कि वह किन बुज़ुर्गों में थे।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 5

"वालिद साहब चूंकि हज़रत हाजी इमदादुल्लाह व हज़रत गंगोही और हज़रत शैख़ुल हिन्द की सुहबत व ख़िदमत में अर्सा दराज़ तक रहे इस लिए हज़रत को उनसे गहरा तअ़ल्लुक़ था बे तकल्लुफ़ी का यह आलम था कि वालिद साहब एक मर्तबा देवबन्द आपकी ख़िदमत में हाज़िर थे। हज़रत 'टांडवी' ने फ़रमाया मिठाई खिलाइये वालिद साहब ने फ़रमाया कि मिठाई तो आप खिलाइये मैं आपका मेहमान हूं मगर हज़रत ने न माना कुछ देर तो इसरार किया लेकिन जब इस तरह काम न चला तो हज़रत मौला 'टांडवी' ने वालिद साहब को पछाड़ कर उनकी जेब से रुपया निकाल कर मिठाई मंगाई।"

नोटः– रावी यह लिखना भूल गया कि मौलाना टांडवी ने जब उसके वालिद को पछाड़ा था तो तलबा ने जोशे मुसर्रत में क़हक़हे ही पर इक्तेफ़ा किया या नारए तकबीर भी बुलन्द की थी, बहर कैफ़ ख़्वाह क़हक़हे लगे हों या नारए तकबीर की सदायें गूंजी हों हमें तो एक लम्हा के लिए नाज़िरीन को सफ़हए किताब से हटा कर देवबन्द के दारुल हदीस में ले जाना है और आपके तसव्वुर में उखाड़ पछाड़ का यह हसीन मन्ज़र लाना है कि मेहमान नीचे है और कई मन का लाशा उसके सीने पर बैठ कर जेब से रुपया निकाल रहा है और यह पछड़ा हुआ इन्सान मौलाना टांडवी की झाड़ फूंक से चारों शाना चित नहीं हुआ बल्कि लफ़्ज़ 'पछाड़ना' ख़ुद बता रहा है कि कुछ देर तक हाथा पाई होती रही और दाँव पैंतरे चले उसके बाद कहीं मौलाना टांडवी उस पर क़ाबू याफ़्ता हुए यह हैं हज़राते देवबन्द के खद्दर पोश अयोध्या वासी शैख़ुल इस्लाम जो इन्सान न थे बल्कि अल्लाह तआ़ला अपनी

किब्रियाई पर पर्दा डाल के आ गया था।

1929 में अमरोहा में जमीअतुल उलमाए हिन्द का जो अज़ीमुश्शान इजलास हुआ था उस मौक़ा पर आम चल रहे थे हमारे यहां मौलाना टांडवी को दावत दी गई हज़रत के साथ मुफ़्तीए आज़म हज़रत मौलाना किफ़ायतुल्लाह साहब भी थे। घर में जब हज़रत तशरीफ़ लाये तो गोश्त की हांडी पकी रखी थी हज़रत ने अज़ राहे ख़ुश तबई व बे तकल्लुफ़ी हांडी से ही दहाने मुबारक लगा कर शोरबा पीना शुरू कर दिया जुमला हमराही बशुमूल हज़रत मुफ़्ती साहब यह दिलचस्प मन्ज़र देख कर बे साख़्ता क़हक़हा लगाने पर मजबूर हो गये।

उठो व गर न हश्र न होएगा फिर कभी
देखो ज़माना चाल क़ियामत की चल गया

नोटः– कहां तो इत्तेबाए सुन्नत का यह आलम कि सिवहारा में पैर का दबवाना ख़िलाफ़े सुन्नत समझा गया और अमरोहा पहुंच कर एहतियात व तक़वा का सारा नशा हिरन हो गया। यहां तक कि मेज़बान से इस्तिफ़्सार किये बग़ैर हांडी से मुंह लगा कर शोरबा पीना शुरू कर दिया। दोस्तो! मुझे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हयाते तय्येबा का एक वाक़िआ याद पड़ता है कि एक बार जाने रहमत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अज़-राहे शफ़क़त व इनायत हज़रत बुरीदा रज़ियल्लाहु अन्हु के काशाना पर तशरीफ़ लाये, हज़रत बुरीदा ने चूल्हे पर हांडी चढ़ा रखी थी आक़ाए निअ़मत जाने रहमत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इरशाद फ़रमाया बुरीदा हांडी में क्या है अर्ज़ किया या रसूलल्लाह इसमें गोश्त है सरकार ने अज़-राहे तलत्तुफ़ व मेहरबानी इरशाद फ़रमाया क्या इसमें मेरा भी हिस्सा है। हज़रत बुरीदा ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह यह सदक़ा का गोश्त है और सरकार ने अपने ऊपर सदक़ा हराम फ़रमाया है। यह सुन कर आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बरजस्ता इरशाद फ़रमाया।

ल क सदक़तुन व लना हदियातुन ऐ बुरीदा तुम्हारे लिए तो सदक़ा है मगर

हमारे लिए हदिया है। अर्ज़ यह करना है कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सीरत व ज़िन्दगी में यह बात नहीं मिलती कि हुज़ूर ने बुरीदा से दरियाफ़्त किये बग़ैर हांडी से कुछ निकाला हो जाए कि मुंह लगा कर शोरबा पीना और तअज्जुब है कि देवबन्दियों के मुफ़्तीए आज़म मौलवी किफ़ायतुल्लाह साहब जो बात बात में इस तरह इस तरह कह कर समझाने के आदी थे वह भी इस धमाका चौकड़ी में शरीक थे हालांकि उनकी ज़िम्मेदारी तो यह थी कि वह मौलाना टांडवी को मसअला से आगाह करते कि फ़ुक़हा ने मेहमान को ख़्वान के बचे हुए शोरबे को पीने से मना फ़रमाया है ये जाएकि दस्तरख़्वान पर आने से पहले ही उसका सफ़ाया करके मेज़बान की हांडी लूटी जाये।

अब दो एक रिवायतें और भी मुलाहज़ा फ़रमाइये जो मौलाना क़ासिम नानौतवी और मौलाना टांडवी के मर्ज़ुल मौत से मुतअल्लिक़ हैं। मगर इससे पहले सय्येदना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरेलवी रज़ियल्लाहु तआला अन्हु पर देवबन्दी ग्रुप का एक नारवा व जारेहाना हमला का मुलाहज़ा कर लेना ज़रूरी है।

वफ़ादारी मेरा शीवा जफ़ाकारी शेआर उनका
मैं अपनी ही कहे जाऊं वह अपनी सी किये जायें

रिसाला अलएहसान जिल्दे दोम शुमारा नम्बर 1 मुहर्रमुल हराम सन् 1357 हि- मिताबिक़ 1995 ई- ज़ेरे उनवान मसाइले शहरिया स3

"और यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कोई शख़्स अपने मुख़लिसीन में वसीयत कर जाये कि मेरे लिए हफ़्ता में दो तीन बार फ़लां फ़लां खानों में से कुछ अशया भेज दिया करें और मिनजुमला उन अशया के दूध का बरफ़ खाना साज़ भी हो तो क़ाबिले ग़ौर बात यह है कि अगर कोई फ़ुल्के सादिक़ दिसम्बर और जनवरी में इस वसीयत पर अमल कर गुज़रे तो न जाने उस शख़्स का आलमे क़ब्र में क्या हाल होगा और ख़ुदा ही बेहतर जानता है कि फ़ातिहा का ईसाल होगा या ईसाले अज़ाब।"

नोट:- अलएहसान की मुन्दर्जा बाला इबारत वसाया शरीफ़ से मुतअल्लिक़ है एहसान फ़रोश एडीटर को ज़हमत न हो तो अपने घर की एक कहानी सुन लें। वसाया शरीफ़ का यह जुमला "दूध का बरफ़ खाना साज़ हो" तो आप की नज़र में खटक गया मगर यह ख़्याल न रहा कि इस वसीयत में ग़ुरबा व मसाकीन की कितनी रिआयत है वसीयत करने वाला ख़ुद अपने लिए बेचैन नहीं है बल्कि

उसकी ख़्वाहिश यह है कि मेरी फ़ातिहा में मुरीदीन व मुतवस्सिलीन के साथ ग़ुरबा व मसाकीन को उम्दा चीज़ें दस्तियाब हो जायें जो उनकी फ़रहत व इम्बेसात का ज़्यादा बाइस होगी चूंकि नादारों को अच्छी चीज़ें मुश्किल से दस्तियाब होती हैं।

यह बात तो क़ाबिले तारीफ़ है न कि लाइक़े मज़म्मत।

अलबत्ता अब अपने बुज़ुर्गों की शिकम परवरी व लज़्ज़ते नफ़्स की रिवायत मुलाहज़ा कीजिये कि मर्ज़ुल मौत में कलिमा व दुरूद पढ़ने या अज़ीज़ व अक़ारिब व ग़ुरबा व मसाकीन के हक़ में कलिमए ख़ैर कहने के बजाए सर्दा और ककड़ी के लिए दिल बेचैन था और ज़बान पर रूह अटकी हुई थी यहां तक कि मरते मरते मौलाना टांडवी के लिए लाहौर और कराची से सर्दा मंगाया गया और मौलाना क़ासिम के लिए लखनऊ से ककड़ी मंगाई गई। अब फ़रमाइये इन हज़रात के बारे में क्या फ़ैसला है ?

तमन्नाओं की क़त्ले आम क्यों है सोचना होगा
हमीं पर बारिशे अहकाम क्यों है सोचना होगा

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 114

"कौन समझ सकता है कि इस ख़्वाहिश मे भी सुन्नते अस्लाफ़ और तलबे रज़ाए इलाही का कहां तक जज़्बा था और अपनी तबई ख़्वाहिश का क्या हिस्सा था और यह भी अजीब इत्तेफ़ाक़ है कि हज़रत नानौतवी के लिए लखनऊ से ककड़ी मंगवाई गई थी तो हज़रत 'टांडवी' के लिए मौलाना सज्जाद हुसैन साहब की मअ़रेफ़त कराची से और मौलाना हामिद मियां साहब ने लाहौर से सर्दा भेजा।"

मेरा ही नाम ज़माना ने कर दिया बदनाम
मैं जिसके नाम पे मरता हूं उसका नाम नहीं

नोट:- मुदीरे एहसान फ़रोश को अब तो होश आया होगा कि उनके अकाबिर की जान उस वक़्त तक न निकली जब तक कि सर्दा और ककड़ी से पेट न भर लिया।

यह भी क्या ख़ूब रही कि सर्दा और ककड़ी के तलब करने में तलबे रज़ाए इलाही को दख़ल था 'मारे घुटना फूटे आंख' वाला मज़मून है। तलबे रज़ाए इलाही और हुसूल लज़्ज़ते नफ़्स व तबई ख़्वाहिश आख़िरश यह क्या बे जोड़ पैवन्द है। अब जानिये अक़ीदत व मुहब्बत के रोगी मरीज़े ग़ुलुए मुहब्बत हक़ाइक़ से मुंह मोड़

कर कुछ ऐसी ही अटांग शटांग हांका करते हैं। सव्येदना इमाम अहमद रज़ा की वसाया शरीफ़ में कीड़े निकालने वाले कभी अपने अकाबिर के डाए पेट व हाए नफ़्स का नारा समाअ़त फ़रमायें तो वसाया की इबारत खुद ही समझ में आ जाएगी। हां एक बात यह भी इरशाद फ़रमायें कि अगर ककड़ी और सर्दा के तलब करने में तलबे रज़ाए इलाही को दख़ल था और साथ ही साथ सुन्नते अस्लाफ़ का जज़्बा भी कारफ़रमा था तो सुन्नते अस्लाफ़ का यह जज़्बा महज़ ककड़ी और सर्दा ही खाने तक महदूद था या मीलाद व क़ियाम तक भी उसकी रसाई थी। इसको तो आप भी जानते होंगे कि आप सब के रूहानी जकड़ दादा हाजी इमदादुल्लाह साहब साल में महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुन्अ़क़िद करते और खड़े हो कर सलाम पढ़ने में लज़्ज़त महसूस फ़रमाते।

फिर क्या हुआ कि मीलाद व क़ियाम के इत्तेबाअ़ में आप हज़रात ने अपने अस्लाफ़ से रिश्ता व नाता तोड़ दिया। या अब आप लोगों के यहां हाजी इमदादुल्लाह साहब अस्लाफ़ के बजाए अख़लाफ़ में शुमार किये जाने लगे यह तो वही मज़मून है। "मीठा मीठा हड़प और कड़वा कड़वा थू" क़ारेईन इस हक़ीक़त को कभी भी फ़रामोश न फ़रमायें कि शरीअ़त से मज़ाक़ व इस्तेहज़ा उलमाए देवबन्द के बायें हाथ का खेल है। लज़्ज़ते नफ़्स पर तलबे रज़ाए इलाही का लेबल और मीलाद शरीफ़ को कन्हैया के जन्म से तश्बीह देना यह तो उनके सुबह व शाम का मश्ग़ला है। मज़्कूरा बाला रिवायत की तफ़सीली कड़ी भी मुलाहज़ा कर लीजिये तो बात आगे बढ़ाई जाये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 114

"कुछ इत्तेफ़ाक़ है कि उमूमन तमाम मशाइख़ और ख़ुसूसन मौलाना मुहम्मद क़ासिम ने आख़िर वक़्त में फल की ख़्वाहिश का इज़हार फ़रमाया चुनान्चे मौलाना मुहम्मद क़ासिम के लिए लखनऊ से ककड़ी मंगाई गई थी हज़रत (टांडवी) ने भी आख़िर में 'सर्दे' की ख़्वाहिश का इज़हार फ़रमाया और मिनजानिबिल्लाह अस्लाफ़ की सुन्नत पर तबीअ़त इस दर्जा मजबूर हुई कि जब मौलाना मुहम्मद क़ासिम और मौलाना मुहम्मद शाहिद फ़ाख़िरी मुलाक़ात को तशरीफ़ लाये तो फ़रमाया कहिये क्या आज कल सर्दा नहीं मिल सकता। उन्होंने अर्ज़ किया हुज़ूर ज़रूर मिल जाएगा।"

चूंकि इससे पहले मौलाना असअ़द साहब मौलाना फ़रीदुलवहीदी साहब वगैरह ने दिल्ली, सहारनपुर, मेरठ हर जगह तलाश किया मगर कहीं दस्तियाब न हुआ।

नोटः- वसाया शरीफ़ पर एतेराज़ करने वाले कभी गरीबान में मुंह डाल कर अपने अस्लाफ़ व बुज़ुर्गों की ख़्वाहिशे नफ़्स का जाइज़ा लें।

और इतना ही नहीं कि महज़ ककड़ी और सर्दा के लिए उनके अकाबिर ने सर पीटा हो बल्कि मौत के चंगुल में कलिमा दुरूद व सूरह यासीन पढ़ने व पढ़ाने के बजाए मौलाना टांडवी 'उल्लू' का तज़्किरा कर रहे थे मुलाहज़ा फ़रमाइये-

गुलशन, क़फ़स, बहार, गरीबाँ, जुनूं ख़िरद
मरबूत इन से बज़्मे ख़राबात हो गई

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 114

"वालिदा से पूछा कि अभी टांडे में तुम्हारे मकान पर उल्लू बोलता है, "हमेशा सुबह के वक़्त एक मख़्सूस मक़ाम पर बैठ कर वहां उल्लू बोलता रहा है" वालिदा ने अर्ज़ किया जी हां, फ़रमाया हां हमारे यहां बचपन में उसी जगह इमली का बहुत बड़ा दरख़्त था उसपर हमेशा एक उल्लू बोलता था। वह हस्बे आदत आज भी बोलता है। मैंने अर्ज़ किया हज़रत यह क्या ज़रूरी है कि जो उस वक़्त बोलता था आज भी वहीं हो। हां भाई उसकी उम्रें छः छः सौ साल तक होती हैं। फिर वालिदा से मुख़ातिब हुए 'अल्लाह दादपुर' हमारे बचपन में इस क़दर आबाद था कि हैरत होती है वह सब लोग कहां गये फ़रमाया कि वालिदा कहती थीं कि एक ज़माना में हर तरफ़ बड़े बड़े लोगों की चारपाईयां बिछी हुई होती थी और माल व दौलत की फ़रावानी थी लोगों की कसरत थी फिर वालिदा से इज़हारे राय के तौर पर फ़रमाया कि उस उल्लू के बारे में सुना है कि यह बहुत ही मनहूस होता है वालिदा ने कहा जी हां जहां बोलता है वह उजाड़ हो जाती है फ़रमाया कि सब तो मर गये अब किसे ले जाना चाहता है।"

नोटः- इस रिवायत का आख़िरी टुकड़ा क़ाबिले ग़ौर है कि सब तो मर गये अब किसे ले जाना चाहता है यानी मौलाना टांडवी क़ज़ा व क़दर से नहीं मरे बल्कि उन्हें उल्लू ले गया और उन्हीं को क्या बल्कि पूरे ख़ानदान को वही एक उल्लू ले

गया। उल्लु की नुहूसत पर इतना एतेमाद व भरोसा कि ख़ुदावन्दे क़ुद्दुस से भी एतेमाद व तवक्कुल जाता रहा।

कहा खोले हैं गेसू यार ने ख़ु बु कहां तक है

अब शैख़ुल इस्लाम नम्बर से एक ऐसी रिवायत पेश करता हु जो उलमाए देवबन्द की एक बहुत ही मअ्रेकतुल आरा बहस पर ज़रबे कारी का काम करती है जिस बहस का तज़्किरा मुदीरे फ़ारान ने भी तौहीद नम्बर में बड़ी शद्दो मद से किया है। पहले फ़ारान की बात सुनिये फिर शैख़ुल इस्लाम नम्बर की रिवायत।

फ़ारान तौहीद नम्बर सफ़्हा 40

"रसुलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जिस दरख़्त के नीचे सहाबए किराम से बैअ़त ली थी और जिसका ज़िक्र ख़ुद क़ुरआने करीम में आया है और लफ़्ज़ रज़ियल्लाहु अनिल मुमिनीन इज़ वया यओ नक तहतश्शजरह यह दरख़्त बरकत का कितना बड़ा असर व निशान बन सकता था मगर हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने यह देख कर कि लोग इस दरख़्त के पास कसरत से आने जाने लगे थे और ख़तरा हो गया था कि अक़ीदत का ग़ुलू कहीं मुसलमानों को किसी बे एतेदाली में मुब्तला न कर दे और आने वाली नसलें इस दरख़्त को निशाने ताज़ीम न बना लें हज़रत उमर ने उस दरख़्त ही को सिरे से कटवा दिया।"

दिल में तूफ़ाने वफ़ा आंखो मे सैले इश्तियाक़

इश्क़ से पहले मज़ाक़े आशिक़ी पैदा करो

नोटः- यह बात तो तफ़सील तलब है कि हज़रत उमर फ़ारूक़ ने उस दरख़्त को कटवाया था या वह अज़ ख़ुद ग़ायब हो गया जैसा कि बाज़ मुहक़्क़िक़ीन की राय है फ़िलहाल अगर इसी ख़्याल के तहत हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने उसको कटवाया तो अब अपने शैख़ुल इस्लाम मौलाना हुसैन अहमद की बिदअत परस्ती मुलाहज़ा फ़रमाइये जो हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने उसको कटवाया तो एलाने जंग के मुतरादिफ़ है। माहिर साहब सुनिये और कलेजा पीटिये।

असर करे न करे सुन तो ले मेरी फ़रियाद

नहीं है दाद का तालिब यह बन्दए आज़ाद

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़्हा 117

"रहमान ख़ाना के सेहन में एक दरख़्त था जिस में निहायत

ख़ुश्बुदार पीले फूल लगते थे सुरत में वह बिल्कुल बबूल से मुशाबेह था हज़रत मौलाना (हुसैन अहमद साहब) वह दरख़्त मदीना तय्येबा से लाये थे और बड़े शौक़ और चाहत से उसके नीचे बैठते व तहक़ीक़ से मालूम हुआ कि उसी जिन्स का वह दरख़्त था कि जिसके नीचे वह अज़ीमुश्शान बैअ़त हुई थी जिसको इस्लामी तारीख़ में बैअ़ते रिज़वान के नाम से याद किया जाता है अब वह दरख़्त तो ख़त्म हो गया है लेकिन शहर और दारुल उलूम में उसी नस्ल के कई दरख़्त और हो गये है।"

हज़रते नासेह जो आयें दीदा व दिल फ़र्शे राह

पर मुझे इतना तो समझायें कि समझायेंगे क्या

नोटः- फ़रमाइये माहिर साहब! देवबन्द और दरख़्त की पुजा पाट? और बिदअत परस्ती का मुज़ाहरा?

चूं कुफ़्र अज़ कअ्बा बर ख़ेज़द कुजा मानद मुसलमानी

जिस दरख़्त को हज़रत फ़ारूक़े आज़म ने किसी अन्देशा के पेशे नज़र कटवा दिया था वह न सही तो उसकी जिन्स का ही सही सैकड़ों मील की दूरी से जनाबे शैख़ उसको देवबन्द लाये----- पीपल पुजारियों के लंगोटिया साथी किसी न किसी बहाने दरख़्त की पूजा पाट को रिवाज देना ही चाहते थे ताकि साथियों के साथ कमाल दर्जे की मुशाबहत हो जाये खद्दर तो बदन से चिपक ही गया था जो कफ़न तक का साथी बना अलबत्ता पुजा व परस्तिश की कमी थी तो वहां पीपल और यहां बबुल।

माहिर साहब ख़ुदा लगती बात है क्या यह अन्देशा महज़ मदीना मुनव्वरा ही में था कि कहीं लोग इस दरख़्त को निशाने ताज़ीम न बना लें और यह अन्देशा देवबन्द में ख़त्म हो चुका है। मदीना तो दयारे हबीब है वहां अक़ीदत केशों के लिए गुम्बदे ख़ज़रा ही की ज़ियारत के लिए क्या कम है वहां तो क़ल्बे मुज़्तर की तस्कीन के हज़ारहा सामान फ़राहम हैं यह वही मदीना तय्येबा है जहां महबूबे ख़ुदा के जलवों की पैहम बारिश होती है जो ख़लीफ़तुल्लाहिल आज़म का दारुस्सल्तनत है वहां तो उन्हीं के जमाल व कमाल की बादशाही है और उन्हीं के हुस्न व जमाल का सिक्का चल रहा है।

फिर यह बात किस क़दर अक़्ल व फ़िरासत से बईद है कि गुम्बदे ख़ज़रा की ठन्डी छाँव को छोड़ कर कोई बबूल के दरख़्त की पुजा पाट में लग जाता अलबत्ता यह अन्देशा देवबन्द में ज़्यादा क़रीने क़ियास है कि गुम्बदे ख़ज़रा न सही तो वह

नखूल की सही जिसके नीचे बैअ़ते रिज़वां हो चुकी है और उसके नीचे बैठना तो दर किनार बल्कि अन्देशा है कहीं उसकी पत्ती फूल छाल जड़ तक को भी लोग खाते हों जैसा कि अहले नानौता क़ब्र की मिट्टी तक उखाड़ लाते और बाज़ू पर बांधते जहां बिदअ़त परस्ती का यह आलम हो वहां यह अन्देशा और भी ज़्यादा क़वी हो जाता है। मगर जनाब टांडवी ने उसकी कोई फ़िक्र न की ख़्वाह उस फ़ेअ़्ल से हज़रत फ़ारूक़े आज़म की रूह को सदमा पहुंचे या देवबन्द में उसको निशाने ताज़ीम बना लिया जाये उन्हें तो अपने साथियों से गायत दर्जा की मुशाबहत पैदा करनी मक़सूद थी।

दस्ते जुनूं ने ऐसी उड़ाई हैं धज्जियां
छोड़ा न एक जेबो गरीबां के तार को

माहिर साहब! अगर मेरे यह जुमले बारे ख़ातिर न हों तो यह अ़र्ज़ कर देना ज़रूरी जानता हूं कि तौहीद नम्बर की इशाअ़त से पहले आपने यह तय कर लिया था कि उलमाए देवबन्द की ताईद व हिमायत का पूरा पूरा हक़ अदा किया जायेगा ख़्वाह बातें सर ता सर ग़लत ही क्यों न कहनी हों और इस पर तमाशा यह कि ख़ुद आ बदौलत उलमाए देवबन्द के अक़ाइद से कमा हक़्क़ुहू वाक़िफ़ नहीं हैं।

मसलन वसीला व इस्तिम्दाद का रद् करते हुए आप तौहीद नम्बर में एक मक़ाम पर रक़मतराज़ हैं-

फ़ारान तौहीद नम्बर सफ़हा 16

"करबला में हज़रत इमाम हुसैन अलैहिस्सलाम और अहले बैते किराम पर क़ियामत गुज़र गई मगर उन नुफ़ूसे क़ुदसिया में से किसी ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इमदाद के लिए पुकारा और न हज़रत अली करमल्लाहु वजहहू की दुहाई दी।"

नोटः- माहिर साहब! आप करबला तो पहुंच गये मगर थाना भवन की सैर किये बग़ैर नहीं पहुंचे इसी लिए आपने बड़ी गहरी ठोकर खाई है हालांकि आपको [illegible] करबला की ख़बर लेनी थी। अब सुनिये अपने मौलाना [illegible] नबी व ग़ैर नबी से इस्तिमदाद व तवस्सुल के कितने [illegible] है नातिरीन से गुज़ारिश है कि वह हस्बे ज़ैल रिवायत पर कड़ी [illegible]। मुसन्निफ़ मौलाना थानवी सफ़हा 383 मज़मून दो मुतअ़ल्लिक़ फ़स्ल [illegible] तवस्सुल हासिल करने की बरकत मज़कूर है इतफ़ल बहुद

में क़सीदा बुर्दा के बरकात में लिखा है कि साहबे क़सीदा यानी इमाम अब्दुल्लाह शरफ़ुद्दीन मुहम्मद बिन सअ़द बिन मआज़ बूसीरी क़ुद्देस सिर्रहू को फ़ालिज हो गया था जिससे निस्फ़ बदन बेकार हो गया उन्होंने ब-इलहामे रब्बानी यह क़सीदा तस्नीफ़ किया और रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़ियारत से ख़्वाब में मुशर्रफ़ हुए आपने अपना दस्ते मुबारक उनके बदन पर फेर दिया यह फ़ौरन शिफ़ायाब हो गये और यह अपने घर से निकले थे कि एक दरवेश से मुलाक़ात हुई और उसने दरख़्वास्त की कि मुझको वह क़सीदा सुना दीजिये जो आपने मदहे नबवी में कहा है। उन्होंने पूछा कौन सा क़सीदा ? उन्होंने कहा जिसके अव्वल में यह है-

अमन तदक्कुर जीराने बज़ि सलमुन

उनको तअ़ज्जुब हुआ क्योंकि उन्होंने किसी को इत्तेलाअ़ नहीं दी थी उस दरवेश ने कहा कि वल्लाह मैंने उसको उस वक़्त सुना है जब कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में पढ़ा जा रहा था और आप ख़ुश हो रहे थे सो उन्होंने यह क़सीदा उस दरवेश को दे दिया और उसकी शुहरत हो गई और शुदा शुदा यह ख़बर साहब बहाउद्दीन वज़ीर मलिक ज़ाहिर को पहुंची उसने नक़ल कराया उसके घर वाले उससे बरकत हासिल करते थे और उन्होंने बड़े बड़े आसार उसके अपनी दीनी दुनियावी उमूर में देखे सफ़हा 384 और सअ़दुद्दीन ख़ारिक़ी जो कि तौक़ीअ़ निगार वज़ीरे मज़कूर था आशोबे चश्म में मुब्तला हुआ क़रीब था कि आंखें जाती रहीं किसी ने ख़्वाब में कहा कि वज़ीर के पास जा कर उससे क़सीदा बुर्दा लेकर आंखों पर रखो चुनान्चे उसने ऐसा ही किया और बैठे बैठे उसको पढ़ा फ़िलफ़ौर अल्लाह तआ़ला ने उसको शिफ़ा बख़्शी और रिसाला नेलुश्शिफ़ा मुअल्लिफ़ा अहक़र बयानी धानवीत्र में हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नक़्शए नअ़ल शरीफ़ के बरकात व ख़्वास मज़कूर हैं जब सिर्फ़ उन अल्फ़ाज़ में जो कि उन पर अल्फ़ाज़ दाल हैं और उस मलबूस में जो कि आपकी नअ़ल हैं और फिर उन नुक़ूश में जो कि उन नअ़ल की तमसाल है सो ख़ुद आपकी मजमउल कमालात व अस्मा जामेउल बरकात से तवस्सुल हासिल करना और उस वसीला से दुआ करना क्या कुछ न होगा।

नशरुत्तीब सफ़हा 241

दस्तगीरी कीजिये मेरे नबी कश्मकश में तुम्हीं हो मेरे नबी
जुज़ तुम्हारे कहां है मेरी पनाह फ़ौजे कुल्फ़त मुझ पर ग़ालिब हुई
ऐ इब्ने अब्दुल्लाह ज़माना मेरे ख़िलाफ़ है ऐ मेरे मौला ख़बर लीजिये मेरी
मैं हूं बस और आपका दर या रसूलल्लाह अब्रे ग़म घेरे न फिर मुझको कभी

सफ़हा 359 मिश्कात शरीफ़ में हज़रत अनस से रिवायत है कि हज़रत उमर जब लोगों पर क़हत होता तो हज़रत अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के वास्ता से दुआए बारिश किया करते और फ़रमाते कि अल्लाह हम 'पहले' आपके दरबार में अपने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का तवस्सुल किया करते थे आप हम को बारिश देते थे और अब हम आपके दरबार में अपने पैग़म्बर के चचा का तवस्सुल करते हैं सो हमको बारिश दीजिये चुनान्चे बारिश होती थी रिवायत किया इसको बुख़ारी ने।

फ़ाइदाः- इस हदीस से ग़ैरे नबी के साथ भी तवस्सुल जाइज़ निकला जब कि उसको नबी से कोई तअल्लुक़ हो क़राबते हिसिया का या क़राबत मअ़नविया का तो तवस्सुल बिन्नबी की एक सूरत यह भी निकली और अहले फ़हम ने कहा है कि इस पर मुतनब्बा करने के लिए हज़रत उमर ने हज़रत अब्बास से तवस्सुल किया न इस लिए कि पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ वफ़ात के बाद तवस्सुल जाइज़ न था जब कि दूसरी रिवायत से इसका जवाज़ साबित है और यह कि उस तवस्सुल पर किसी सहाबी से नकीर मन्क़ूल नहीं इस लिए इस में इज्माअ़ के माना आ गये।

हुआ है मुद्दई का फ़ैसला अच्छा मेरे हक़ में
ज़ुलेख़ा ने किया ख़ुद चाक दामन माहे कनआं का

नोटः- माहिर साहब! अब फ़रमाइये कि बात आपकी सही है या आपके हकीमुल उम्मत की ?

आपके हकीमुल उम्मत तो क़सीदा बुर्दा शरीफ़, नक़्शा नअ़ले पाक, और हज़रत अब्बास तक से तवस्सुल के क़ाइल हैं बल्कि वह यहां तक फ़रमाते हैं कि इस पर किसी सहाबी से नकीर मन्क़ूल नहीं लिहाज़ा उसकी हैसियत इज्माअ़ की हो गई है अब अगर ज़हमत न हो तो आप अपने दारुल उलूम देवबन्द से इस्तिफ़्ता कर लें कि इज्माअ़ का मुन्किर गुमराह है या काफ़िर ? देखिये आपके बारे में क्या हुक्म नाफ़िज़ होता है। फ़तवा देखते ही ताईद व हिमायत का सारा नशा हिरन हो

जाएगा। इसी लिए मैंने अ़र्ज़ किया था कि आपको करबला जाने से पहले थाना भवन जाना चाहिये था।

माहिर साहब! आपने वाक़िआए करबला में तस्वीर का महज़ एक ही रुख़ मुलाहज़ा फ़रमाया है। यानी अगर सरकार हुसैन की नज़र में तवस्सुल व इस्तिमदाद दुरुस्त होता तो सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम या मौलाए कायनात अली मुश्किल कुशा को इमाम हुसैन मैदाने करबला में पुकारे होते और न पुकारे तो आपने अ़दमे जवाज़ की दलील समझा। ऐ काश आप इतना ग़ौर करते कि मैदाने करबला में इमाम हुसैन किस मक़सद के तहत ख़ेमा ज़न हुए हैं। क्या मैदाने करबला में सरकार हुसैन अपने वालिदे मुहतरम या नाना जान की करामात व एजाज़ का मुज़ाहरा करने गये हैं या इसके सिवा कुछ और मक़सद है अगर मक़सद यह होता जैसा कि आप ब-गुमाने ख़्वेश समझ बैठे हैं तो यक़ीनन आप अपने सवाल में हक़ बजानिब होते मगर मक़सदे हुसैन करामात का इज़हार नहीं बल्कि अ़ज़्म व इस्तिकलाल की एक नई तारीख़ मुरत्तब करनी थी। चुनान्चे सरकार हुसैन मौत की आंखों में आंखें डाल कर मुस्कुराए। एक एक का लाश अपने कांधे पर उठाया। अली असग़र जैसे मासूम बच्चे को अपनी गोद में दम तोड़ते देखा मगर सब्र व शकेब का दामन न छूटा और पाए इस्तिक़ामत में कोई लग़ज़िश और डगमगाहट न आई यह था इमाम हुसैन का मक़सदे अज़ीम वरना यज़ीदी फ़ौज की पस्पाई व तबाह कारी के लिए नहीं बल्कि अतमामे हुज्जत की ख़ातिर ख़ुद सरकार हुसैन ने मैदाने करबला में बसा औक़ात अपनी करामात का इज़हार फ़रमाया है और इसी सिलसिला में इस्माईल मा ज़न्दरानी का एक वाक़िआ बड़ी ही शुहरत रखता है।

माहिर साहब! तौहीद नम्बर में तो आपने हक़ पसन्दी को बालाए ताक़ रख कर क़सम खाली है कि वह बात भी कही जाये जो तअ़स्सुब और किसी फ़िरक़ा की जम्बा दारी के मातहत हो वरना वह बात ही क्या जो उससे अलग थलग रहे। चुनान्चे आप अपनी हस्बे ज़ैल तहरीर का जाइज़ा लीजिये कि क्या वाक़िअतन यह ईमान व अक़्ल की आवाज़ है या वारफ़्तगीए अक़्ल की।

ऐ दोस्त अपने ग़म से कर इस दर्जा दिल फ़ेगार
फ़ितरत भी रहम खाये तो दरमॉ न कर सके

फ़ारान तौहीद नम्बर सफ़हा 22

"आप यानी रसूलुल्लाह के साहबज़ादे हज़रत इब्राहीम वफ़ात पाते है तो आंखों मे आंसू जारी हो जाते हैं ज़ाहिर है कि आपके इख़्तियार मे होता तो भला लख़्ते जिगर को मरने देते।"

यह है तन्क़ीसे रिसालत और तौहीने नबुव्वत का वह ग़ारतगर ईमान जज़्बए शैतनत जो उलमाए देवबन्द की वफ़ादारी में बार बार तौहीने नबुव्वत पर आपको उकसाता रहता है। आप ही फ़रमाइये आख़िरश यह कह कर आपने कौन सा बड़ा तीर मारा क्या ख़ुदा न कर्दा हम मे से किसी ने रसूलुल्लाह को ख़ुदा कहा है मआज़ल्लाह अलबत्ता ज़रा ज़हमत फ़रमा कर देवबन्द तशरीफ़ लाइये और देखिये कि आपके तीर ने कितनों को घायल कर दिया है सुनिये आपके मौलाना महमूदुल हसन मौलाना रशीद अहमद गंगोही के मरसिये में फ़रमाते हैं-

मुर्दों को ज़िन्दा किया और ज़िन्दों को मरने न दिया
इस मसीहाई को देखें ज़री इब्ने मरयम

किसी को मरने न देना यह तो मौलाना गंगोही की शान थी अलबत्ता अब आप क़ारी तय्यब साहब से दरियाफ़्त कीजिये कि जब मौलाना गंगोही की यह शान थी कि यह ज़िन्दों को मरने न देते तो ख़ुद आं बदौलत क्यों मर गये ? आप सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लख़्ते जिगर की वफ़ात पर हमें तअ्ना देने के बजाए उलमाए देवबन्द से पूछिये कि जिन गंगोही साहब को आप हज़रात ने तख़्ते ख़ुदावन्दी पर बिठाया था और क़ज़ा व क़दर जिनके क़ब्ज़ए क़ुदरत में थी वह क्यों मर कर मिट्टी में मिल गये। बुरा हो इस तअस्सुब और फ़िरक़ा बन्दी का जिसने आपको हक़ीक़त से इतना दूर कर दिया और अन्धा बना दिया कि आप यह भी न देख सके कि मेरे तरकश का तीर किस के दिल में पैवस्त हो रहा है।

मैं इस आरिफ़ाना तजाहुल के सदक़े
हर इक दिल को छेदा मेरा दिल समझ कर

माहिर साहब! अब दामन बचा कर गुज़रने की कोशिश न कीजिये आपके दिल का चोर गिरिफ़्त में आ चुका है।

अयां है अब ये बेगाना निगाही
कि दिल ने तेरे दिल की बात पाली

उलमाए देवबन्द की अम्बारदारी में अपनी चन्द सतरें और मुलाहज़ा फ़रमाइये- फ़ारान। सफ़हा 33

"अगर बुज़ुर्गाने दीन के विलादत व वफ़ात के यौम मनाने को इस्लाम में पसन्दीदा समझा जाता तो अम्बियाए साबिक़ीन एक दूसरे का यौमे विलादत व वफ़ात ज़रूर मनाते।"

निगाहे ग़ौर से देखो तो उक़्दा साफ़ खुल जाये
वफ़ा के भेस में बैठा है कोई बेवफ़ा होकर

नोटः- माहिर साहब! अगर वाक़िअतन यह आपके दिल की आवाज़ है तो मुझे कहने दीजिये कि अगर 'तौहीद नम्बर' की इशाअत को इस्लाम में पसन्दीदा समझा जाता तो अम्बिया व रुसुल ज़रूर उसकी इशाअत फ़रमाते और इस्लाम व अइम्मए दीन व शरीअत हिदाया, फ़तहुल क़दीर, आलमगीरी, बहरुर्राइक़, फ़तावा क़ाज़ी ख़ाँ हुस्सामी, तौज़ीह तलवीह की तरतीब व तदवीन में मश्ग़ूल होने के बजाए तौहीद नम्बर की इशाअत करते मगर हमें तो अस्लाफ़ में इसकी कोई मिसाल नहीं मिलती। आप फिर उसी सफ़हा पर तहरीर फ़रमाते हैं-

फ़ारान नम्बर सफ़हा 35

"यह मुरव्वजा मौलूद न सुन्नते रसूल है न उसवए सहाबा और न तरीक़े सल्फ़े सालिहीन बल्कि सुन्नते मुलूक है।"

माहिर साहब! अब मुझे कहने दीजिये कि तौहीद नम्बर की इशाअत न सुन्नते रसूल है न उसवए सहाबा और न तरीक़े सल्फ़े सालिहीन बल्कि सुन्नते सहाफ़त है क्या आपकी नज़र में सुन्नते सहाफ़त भी कोई दलील है और अगर हो सके तो यह भी फ़रमा दीजिये कि 'मुरव्वजा मौलूद' अगर सुन्नते सल्फ़े सालिहीन भी नहीं है तो देवबन्दियों के मुक़्तदा व पेशवा हाजी इमदादुल्लाह यह सल्फ़े सालिहीन से थे या सल्फ़े फ़ासिक़ीन से मआज़ल्लाह।

माहिर साहब! आपने अपने इदारिये में एक जगह यह भी तहरीर फ़रमाया है।

फ़ारान नम्बर सफ़हा 43

"इस बाब को ख़त्म करने से पहले इस बात का इज़हार कर देना ज़रूरी समझा गया कि हम ने जगह जगह एक गरोह को अहले बिदअ़त जो कहा है बाज़ हज़रात को ग़ालिबन गिराँ गुज़रे कि यह जिदाल अहसन की राह नहीं है उसके जवाब में गुज़ारिश यह है कि जिन लोगों का ओढ़ना बिछौना बिदआत हों उनको बिदअ़ती न कहें तो आख़िर क्या कहें ?"

कुछ न सय्याद का शिकवा न गुलचीं का गिला
अपने हाथों से जलाया है नशेमन अपना

माहिर साहब! मैं भी इस सिलसिला को ख़त्म करते हुए इस अमर का इज़हार ज़रूरी समझता हूं कि मैंने भी जगह जगह एक फ़िरक़ा को दरीदा दहन गुस्ताख़ बे अदब शातिमे रसूल कहा है। मुमकिन है यह बातें उन पर या आप पर बारे ख़ातिर गुज़रें तो जवाबन अर्ज़ है कि रसूलुल्लाह की बारगाह में गुस्ताख़ी बे अदबी, व दरीदा दहनी जिन लोगों का ओढ़ना बिछौना हो उन्हें शातिमे रसूल न कहा जाये तो क्या कहा जाये ?

तुम इनायत जो न करते तो इनायत होती

और इतनी बात तो आप भी फ़रमा चुके हैं कि उलमाए देवबन्द ग़ैर मुहतात ग़ैर मुअ्तदिल बे क़रीना बद सलीक़ा हैं लिहाज़ा अगर दरीदा दहन व गुस्ताख़ व बे अदब कहने की इजाज़त नहीं है तो यही कहने दीजिये कि उलमाए देवबन्द बे क़रीना व बद सलीक़ा हैं।

माहिर साहब! उलमाए देवबन्द की बद सलीक़गी पर एक आप ही मातम गुसार नहीं बल्कि इस अन्जुमन में आपके बहुत से साथी बराती हैं, लीजिये अपने खद्दर पोश ख़ुदा मौलवी हुसैन अहमद साहब के बारे में अपने अमीरे कारवाँ मौला सय्यद अबुल आला मौदूदी की राय मुलाहज़ा कीजिये, माफ़ फ़रमाइयेगा आप ही के अन्दाज़े बयान ने इस सिलसिला को दराज़ कर दिया है वरना हक़ीक़त तो यह है।

कुरबत की आरज़ू का गुनहगार मैं सही
बख़्शा इस आरज़ू को सहारा ख़ुद आपने

मसला क़ौमियत सफ़हा 52, मुरत्तेबा मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी।

"इस सिलसिला में डा० इक़बाल के मुतअल्लिक़ (मौलवी हुसैन अहमद साहब) फ़रमाते हैं कि उनकी हस्ती कोई मामूली न थी वह ऐसे थे और वैसे थे मगर बावजूद कमालाते गुनागूं के साहिरीने बरतानिया के सेहर में मुब्तला हो गये थे।"

नोटः- यानी मौलाना टांडवी की निगाह में डा० इक़बाल ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के हाथों कठ पुतली बन चुके थे वाह रे दीदा दिलेरी हिन्दुस्तान का वह माना हुआ शायर जिसने क़ौम के जगाने और बेदार करने में अपना रिकार्ड क़ाइम कर दिया था वह मौलाना टांडवी की नज़र में बरतानिया का आलए कार था।

अभी क्या है दो चार क़दम और आगे बढ़िये और मौलाना मौदूदी के अल्फ़ाज़ में टांडवी साहब की सही तस्वीर मुलाहज़ा कीजिये।

मसला क़ौमियत और इस्लाम सफ़हा 38 बहवाला मसला क़ौमियत सफ़हा 52

"अगर क़ौमियत ऐसी ही मलऊन और बद तरीन चीज़ है तो चूंकि यूरोप ने इसको इस्तेमाल करके इस्लामी बादशाहों और उस्मानी ख़िलाफ़त की जड़ खोदी है मुसलमानों को चाहिये था कि उसी मलऊन हथियार को बरतानिया की जड़ खोदने के लिए इस्तेमाल करते।"

नोटः- मौलाना टांडवी की मुन्दर्जा बाला राय पर मौलाना मौदूदी का तबसेरा मुलाहज़ा कीजिये।

मसला क़ौमियत सफ़हा 53.54

"मुन्दर्जा बाला इबारत से साफ़ ज़ाहिर है कि मौलाना (टांडवी) की निगाह में हक़ व बातिल का मेअ्यार सिर्फ़ बरतानिया बन कर रह गया है, वह मसला को न तो इल्मी ज़ावियए नज़र से देखते हैं कि हक़ाइक़ अपने असली रंग व रूप में नज़र आ सकें न वह मुसलमानों की ख़ैर ख़्वाही के ज़ावियए नज़र से उस पर निगाह डालते हैं।"

चन्द सतर बाद जब यह बात उन (मौलवी हुसैन अहमद) के दिल में बैठ चुकी है कि मुत्तहिदा क़ौमियत बरतानिया के लिए मुहलिक है तो जो शख़्स उसकी मुख़ालफ़त करता है वह बरतानिया परस्त के सिवा और हो ही क्या सकता है। ख़ैरियत यह हो गई कि किसी ने मौलाना को बरतानिया की हलाकत का एक दूसरा नुस्ख़ा न बता दिया जो मुत्तहिदा क़ौमियत से ज़्यादा कारगर है। यानी यह कि हिन्दुस्तान की पैंतीस करोड़ आबादी ख़ुदकुशी कर ले जिससे बरतानवी सल्तनत आन की आन में ख़त्म की जा सकती है यह तीर बहदफ़ तदबीर अगर मौलाना के दिल में बैठ जाती तो वह बे तकल्लुफ़ फ़रमाते जो शख़्स हिन्दुस्तान के बाशिन्दों को ख़ुदकुशी से रोकता है वह बरतानिया परस्त है। ख़ुदकुशी अगरचे मलऊन और बदतरीन फ़ेअ्ल सही मगर जब उससे बरतानिया की जड़ खोदी जा सकती है तो फ़र्ज़ हो जाता है कि उस फ़ेअ्ले क़बीह का इरतेकाब किया जाये।

नोटः- माहिर साहब! बात अभी ख़त्म नहीं हुई, यह तो आपने मुलाहज़ा फ़रमाया ही लिया कि आपके खद्दर पोश ख़ुदा मसाइल को न तो इल्मी ज़ावियए नज़र से जांचने परखने के आदी थे और न ही मसाइल के सोच विचार में मुसलमानों

की ख़ैर ख़्वाही का जज़्बा कारफ़रमा होता।

यों ब-जबीं होने से पहले यह मलहूज़े ख़ातिर रहे कि मुन्दर्जा बाला राय न तो उलमाए बरेली की है और न ही मशाइख़े मारेहरा व बदायूं की बल्कि आपके मुसल्लम मुक़्तदा व पेशवा जनाब मौदूदी साहब की राय है जिसके तस्लीम करने में आप कोई झिझक महसूस न करेंगे। अब ज़रा चन्द क़दम और आगे बढ़िये और टांडवी साहब पर मौदूदी साहब की शरई गिरिफ़्त का जाइज़ा लीजिये।

काम आई कुछ न पर्दा नशीनी हुज़ूर की
देख आई जाके बादे सबा सर से पाँव तक

मसला क़ौमियत सफ़हा 60 व 61

"मौलाना आख़िर फ़रमायें तो कि जिस मुत्तहिदा क़ौमियत को वह रसूले ख़ुदा की तरफ़ मन्सूब कर रहे हैं उस में आज कल की मुत्तहिदा क़ौमियत के अनासिरे तरकीबी में से कौनसा उन्सुर पाया जाता है अगर वह किसी एक उन्सुर का पता नहीं दे सकते और मैं यक़ीन के साथ कहता हूं कि हरगिज़ नहीं दे सकते तो क्या मौलाना को ख़ुदा की बाज़ पुर्स का ख़ौफ़ नहीं चन्द सतर बाद अल्फ़ाज़ के सहारा लेकर मौलाना (हुसैन अहमद) ने अपना मुद्दआ साबित करने की कोशिश तो बहुत ख़ूबी के साथ कर दी मगर उन्हें यह ख़्याल न आया कि हदीस के अल्फ़ाज़ को मफ़हूमे नबवी के ख़िलाफ़ किसी दूसरे मफ़हूम पर चस्पाँ करना और उस मफ़हूम को नबी की तरफ़ मन्सूब कर देना (मन कज़्ज़ब अलय्य मुतअम्मिदन)" की ज़द में आ जाता है।"

नोटः- माहिर साहब! मुझे अफ़सोस है कि बात बढ़ती ही जा रही है मगर चन्द लम्हे की और समअ् ख़राशी चाहता हूं और यह कहानी तो आप ही के बुज़ुर्गों की है जिससे आप को उकताना भी न चाहिये, लगे हाथ दो एक हवालाजात और भी मुलाहज़ा फ़रमा लीजिये।

मुत्तहिदा क़ौमियत और इस्लाम सफ़हा 57 की इबारत पर तबसेरा करते हुए जनाब मौदूदी साहब रक़मतराज़ हैं।

मसला क़ौमियत सफ़हा 64 व 65

"इबारत का एक एक लफ़्ज़ शहादत दे रहा है कि मौलाना (टांडवी)

न तो क़ौमियत के इस्तेलाही मफ़हूम को जानते हैं न कांग्रेस के मक़सद और मुद्दआ को समझते हैं न बुनियादी हुक़ूक़ के माना पर उन्होंने ग़ौर किया है न उनको ख़बर है कि जिन इज्तेमाई मजलिसों का वह बार बार इस क़दर सादगी के साथ ज़िक्र फ़रमा रहे हैं। उनके हुदूद व इख़्तियार व अमल मौजूदा दस्तूर के तहत किन किन राहों से उस दाइरे में नुफ़ूज़ करते हैं जिसको तहज़ीब व तमद्दुन और अक़ाइद व अख़्लाक़ का दाइरा कहा जाता है--

-------------------------- और यह बात मैं ख़ूब सोच समझ कर कह रहा हूं कि मौलाना हुसैन अहमद बईं हमा इल्म व फ़ज़्ल, कल्चर, तहज़ीब, पर्सनल लॉ वग़ैरह अल्फ़ाज़ भी जिस तरह इस्तेमाल कर रहे हैं उससे साफ़ ज़ाहिर हो रहा है कि वह उनके माना व मफ़हूम से ना आशना हैं। मेरी यह साफ़ गोई उन हज़रात को यक़ीनन बुरी मालूम होगी जो रिजाल को हक़ से पहचानने के बजाए हक़ को रिजाल से पहचानने के ख़ूगर हैं इसके जवाब में चन्द और गालियां सुनने के लिए मैं ने अपने आपको पहले ही तैयार कर लिया है।

मगर मैं जब देखता हूं कि मज़हबी पेशवाई की मसनदे मुक़द्दस से मुसलमानों की ग़लत रहनुमाई की जा रही है उनको हक़ाइक़ के बजाए औहाम के पीछे चलाया जा रहा है और ख़न्दक़ों से भरी हुई राह को शाहराहे मुस्तक़ीम बता कर उन्हे उसकी तरफ़ ढकेला जा रहा है तो मैं किसी तरह उस पर सब्र नहीं कर सकता।"[1]

नोटः- माहिर साहब! अगर आप थकान महसुस कर रहे हों तो आमिर साहब के असअद सल्लमहू को भी शरीके सफ़र कर लीजिये ताकि आप मौदूदी साहब की तरफ़ से मौलाना असअद को मुंह चिढ़ायें और मौलाना असअद अपने वालिदे बुज़ुर्गवार की हिमायत में आपको अंगूठा दिखायें यह तो आपकी घरेलू जंग का पस मन्ज़र है ख़ुदा का शुक्र है कि गाहे गाहे आप हज़रात का नक़्शए जंग बदल

[1] मौलाना मौदूदी को इसका यक़ीन था कि उलमाए देवबन्द अपनी हस्बे आदत गाली गलौज पर उतर आयेंगे वरना वह गाली सुनने के बजाए किसी सन्जीदा जवाब की उम्मीद रखते।

जाता है हम सुन्नियों से लड़ते लड़ते जब आप हज़रात थक जाते हैं तो आपस ही में एक दूसरे की जेबो गरीबां की ख़बर लेने लगते हैं। यह समझिये कि मुल्क का होशमन्द तबका आपकी तरफ़ से बे ख़बर है वह बहुत कड़ी निगाह से आपके जंग व जिदाल का नज़ारा कर रहा है।

माहिर साहब! अगर मेरी बातें आप के हक़ में तल्ख़ घोंट बन जाती हैं तो अपने सरख़ीले जमाअत मौलाना मौदूदी ही की राय पर अमल कीजिये। देखिये आपके मौदूदी साहब का कहना है कि मौलाना टांडवी तहज़ीब, कल्चर, पर्सनल लॉ का मायने तक नहीं जानते हैं। (1) मौलाना टांडवी मज़हबी पेशवाई की मसनदे मुक़द्दस से मुसलमानों की ग़लत रहनुमाई कर रहे हैं। (2) ख़न्दकों से भरी हुई राह को शाहराहे मुस्तक़ीम बता रहे हैं (3) मौलाना टांडवी ग़ैरे हदीस मफ़हूम को हदीस की तरफ़ मन्सूब कर रहे हैं (4) मौलाना टांडवी को ख़ुदा की बाज़ पुर्स का ख़ौफ़ नहीं वग़ैरह वग़ैरह और इतने ही पर बस नहीं बल्कि इसके इलावा कुछ और भी है, मुलाहज़ा फ़रमाइये मसला सफ़हा 69

लिल्लाह यह तुम देखने वालों से न पूछो
क्या चीज़ हो तुम देखने वालों की नज़र में

"कम से कम वह मौलवी हुसैन अहमदका उम्मत पर रहम फ़रमा कर अपनी ग़लती महसूस फ़रमा लें वरना अन्देशा है कि उनकी तहरीरें एक फ़ितना बन कर रह जायेंगी और उस पुरानी सुन्नियत का एआदा करेंगी कि ज़ालिम उमरा और फ़ासिक़ अहले सियासत ने जो कुछ किया उसको उलमा के एक गरोह ने क़ुरआन व हदीस से दुरुस्त साबित करके ज़ुल्म व तुग़्यान के लिए मज़हबी ढाल फ़राहम कर दी।"

नोटः- माहिर साहब! आपके खद्दर पोश ख़ुदा मौलवी हुसैन अहमद साहब की निकाब कुशाई शायद ही किसी ने इससे ज़्यादा की हो जितना कि आपके पेशवा मौलवी अबुल आला साहब ने की है। मेरी हैसियत तो महज़ नाक़िले रिवायत की है, अब जजमेन्ट व फ़ैसला तो नाज़िरीन के हाथ है। अलबत्ता इस मक़ाम पर नाज़िरीन से महज़ इतनी गुज़ारिश है कि उन रिवायात को सतही नज़र से देखने के बजाए उन्हें ब-निगाहे गाइर देखें और यह अन्दाज़ा करें कि उलमाए देवबन्द ने जिनको शैख़ुल इस्लाम ने शुरू करके पैकरे इस्मत और खद्दर पोश ख़ुदा तक

कह दिया हो उसकी मज़हबी और सियासी पोज़ीशन मौलवी अबुल आला मौदूदी की नज़र में क्या है। मुझे इस मक़ाम पर इससे बहस नहीं कि मसला क़ौमियत (यानी क़ौम मज़हब से है या वतन से) आया इस मसला में हक़ बजानिब कौन है? बल्कि उलमाए देवबन्द के शैख़ुल इस्लाम पर मौलाना मौदूदी के ताज़ियानए क़लम के कुछ निशानात दिखलाने हैं। हमें अफ़सोस है कि हर चन्द समेटने के बावजूद बात फैलती जा रही है और इसके बावजूद अभी तक यह दास्तान ख़त्म न हो सकी। इख़्तेतामे गुफ़्तगू पर महज़ दो एक हवाले और हाज़िर करके बात ख़त्म किये देता हूं।

जुनून को अक़्ल का पाबन्द करने की हिदायत है
अब अहले होश भी दीवाना पन की बात करते हैं

मसला क़ौमियत सफ़हा 68.69

"इस में ख़राबी बस इतनी है कि अपने मफ़हूमे ज़ेहनी को मौलाना हुसैन अहमदका कांग्रेस का मफ़हूम व मुद्दआ क़रार दे रहे हैं हालांकि कांग्रेस इससे ब-अम्रे मराहिल दूर है अगर मौलाना सिर्फ़ इतना कहने पर इक्तेफ़ा करते कि मुत्तहिदा क़ौमियत से मेरी मुराद यह है तो हमें उन से झगड़ा करने की ज़रूरत न थी लेकिन वह आगे क़दम बढ़ा कर फ़रमाते हैं कि नहीं कांग्रेस की मुराद भी यही है और कांग्रेस बिल्कुल नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के उसवए हसना पर चल रही है और मुसलमानों को मामून व मुत्मइन होकर अपने आपको इस मुत्तहिदा क़ौमियत के हवाला कर देना चाहिये जैसे कांग्रेस बनाना चाहती है। यहीं से हमारे और उनके दर्मियान निज़ाअ् का आग़ाज़ होता है।"

मसला क़ौमियत सफ़हा 63 का एक हवाला मुलाहज़ा फ़रमाइये-

"क्योंकि आप (मौलाना टांडवी) को सिर्फ़ बरतानवी इक़्तेदार का ज़वाल मतलूब है, आम इससे कि यह किसी सूरत में हो, इसी लिए आप ऐसी अन्जुमन के मुआमला में सिर्फ़ इल्लते जवाज़ ही ढूंढते हैं और इल्लते हुरमत जो सामने मुंह खोले खड़ी है आपको किसी तरह नज़र नहीं आती। लेकिन हम मजबूर हैं कि इन दोनों पहलूओं को साथ साथ देखें और इल्लते हुरमत को दफ़अ् किये बग़ैर इल्लते जवाज़ को क़बूल न करें इस लिए कि हमको बरतानवी इक़्तेदार का ज़वाल और इस्लाम का बक़ा

दोनों साथ साथ मतलूब है इसका नाम अगर बरतानिया परस्ती रखना है तो रखिये हमें इसके तअ़न की ज़र्रा बराबर परवाह नहीं।"

नोटः- आखिर मजबूर होकर मौलाना मौदूदी को हस्बे ज़ैल बात कहनी पड़ी।

मसला कौमियत सफ़हा 68

"मौलाना (हुसैन अहमद) इस मुत्तहिदा कौमियत को रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के उसवए हसना से तश्बीह देने की जुरअत फ़रमा रहे हैं हालांकि उन बुनियादी हुक़ूक़ की हैसियत मल्का विक्टोरिया के मशहूर एलान से कुछ भी मुख़्तलिफ़ नहीं है और मग़रिबी डिप्लोमेसी की ऐसी चालों का रिश्ता रसूले पाक सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अ़मल से जोड़ने की जसारत हम जैसे गुनहगार के बस की बात तो नहीं हां जिनके पास तक़वा का ज़ादे राह इतना ज़्यादा है कि वह ऐसी जसारतें करने पर भी बख़्शे जाने की उम्मीद रखते हैं उन्हें इख़्तियार है कि वह जो चाहें कहें और जो चाहें लिखें।"

नोटः- मुनासिब होगा कि यहीं पर उलमाए देवबन्द के पुराने साथी मौलाना उबैदुल्लाह सिन्धी के ख़ुतबए सदारत की चन्द सतरें हाज़िर कर दी जायें जिसमें उलमाए देवबन्द की दो रुख़ी पालीसी के सही ख़द्दो ख़ाल सामने आ जायेंगे।

आया है कभी ज़िक्र अगर दारो रसन का
गेसू व क़दे यार की बात आ ही गई है

ब-हवाला मसला क़ौमियत सफ़हा 71

"अगर मेरा वतन इस इन्क़ेलाब के नुक़सान से बचना चाहता है जो इस वक़्त दुनिया पर छा गया है और रोज़ छाता जा रहा है तो उसे यूरोपियन उसूल नेशनलिज़्म को तरक़्क़ी देना चाहिये। पिछले ज़माना में हमारा मुल्क जिस क़दर नामवर हो रहा है उसे दुनिया जानती है मगर उससे हम कोई फ़ाइदा नहीं उठा सकते जब तक हम आज की क़ौमों में अपना वक़ार साबित न कर सकें।—————————— मैं सिफ़ारिश करता हूं कि हमारे अकाबिरे मज़हब व मिल्लत ब्रिटिश गवर्नमेन्ट के दो सद साला अहद से ज़्यादा से ज़्यादा इस्तिफ़ादा की

कोशिश करें जिस तरह हमने यूरोप से तनफ़्फ़ुर बरत कर अपनी तरक़्क़ी महदूद कर लिया है इसे अब ख़ैरबाद कहें, इस मुआमला में मैंने तुर्की क़ौम के इस इन्क़ेलाब का पूरी तरह मुताला किया है जो सुल्तान महमूद से शुरू होकर मुस्तफ़ा कमाल की जम्हूरियत पर ख़त्म होता है। मैं चाहता हूं कि यूरोप के इन्टरनेशनल इज्तेमाआ़त में हमारा वतन एक मुअ़ज़्ज़ज़ मेम्बर बन जाये इस के लिए हमें अपनी मुआशरत में इन्क़ेलाब की ज़रूरत महसूस होगी।

सिन्धी अपने वतन का बना हुआ कपड़ा पहने मगर वह कोट व पतलून की शक्ल में होगा या कालरदार क़मीस और नैकर की सूरत में मुसलमान अपना नीकर घुटने से नीचे तक इस्तेमाल कर सकते हैं। हैट दोनों सूरतों में बे तकल्लुफ़ इस्तेमाल किया जाएगा। जब मुसलमान मस्जिद में आएगा, हैट उतार कर नंगे सर नमाज़ पढ़ेगा।"

नोटः- नाज़िरीन ने मसला क़ौमियत से मुतअ़ल्लिक़ मौलाना टांडवी और मुआशरती इन्क़ेलाब की बाबत मौलाना उबैदुल्लाह सिन्धी का नज़रिया पढ़ कर यह अन्दाज़ा कर लिया होगा कि उलमाए देवबन्द इस अम्र पर इत्तेफ़ाक़ व समझौता कर चुके हैं कि मज़हब व सियासत के नाम पर जब कोई तहरीक उठे तो उसका एक तरफ़ा साथ न दिया जाये।

अगर कोई कांग्रेस की हमनवाई करे तो दूसरा मुस्लिम लीग की जिसकी शहादत में मौलवी हुसैन अहमद[1] साहब टाडवी और मौलवी शब्बीर अहमद[2] साहब उस्मानी का नाम लिया जा सकता है। ऐसे ही अगर कोई मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब नज्दी को बाग़ी व लुटेरा कहे तो दूसरा मुत्तबेअ़े सुन्नत, जिसकी शहादत में मौलाना टांडवी[3] और मौलाना गंगोही[4] का नाम लिया जा सकता है। इस क़िस्म की मुतअ़द्दिद मिसालें ख़ून के आंसू जिल्द अव्वल में गुज़र चुकी हैं।

मक़सूदे निगारिश यह है कि उलमाए देवबन्द का नज़रिया और उनके फ़तावे क़ुरआन व हदीस की रौशनी में नहीं होते बल्कि यह फ़तावे सियासत की हर नई

(1) कांग्रेसी (2) मुस्लिम लीग (3) अब्दुलवहाब नज्दी बाग़ी व लुटेरा था (4) अब्दुलवहाब नज्दी मुत्तबेअ़े सुन्नत था।

करवट पर अपना रुख़ बदलते रहते हैं। मुनासिब होगा कि यहीं पर उलमाए देवबन्द के फ़तावे का कच्चा चिट्ठा भी पेश कर दिया जाये।

ख़िरद ज़न्जीर पहनाती रहेगी
जो दीवाने हैं दीवाने रहेंगे

"फ़तावए देवबन्द का तहक़ीक़ी जाइज़ा" अज़ मौलाना अबू मुहम्मद इमामुद्दीन रामनगरी सफ़हा 113 व सफ़हा 114 जमाअ़ते इस्लामी से मुतअ़ल्लिक़ मुफ़्तीए देवबन्द का फ़तवा।

"यह तरीक़े फ़िक्र व अन्दाज़े दावत व तबलीग़ सही नहीं है बल्कि ग़लत है कि यह नये मज़हब की ईजाद और तफ़रीक़ बैनुल मुस्लिमीन है जहां तक मुमकिन हो इससे इज्तेनाब ज़रूरी है। जवाब अव्वल में जो कुछ अ़र्ज़ किया गया है वह उसके शाहिद अ़दूल हैं जिसमें एतेज़ाल, ख़ारिजियत, राफ़िज़ियत, इज्तेहादे जदीद, तज्दीदे नव वग़ैरह सब ही कुछ है, सहाबा और रिवायते हदीस व तरीक़त व हक़ीक़त और उसके हामिलीन की जो गत बनाई है वह सवाल ही में मौजूद है वह (मौलाना मौदूदी) ऐसा मज़हब ईजाद करना चाहते हैं जो सल्फ़े सहाबा ही नहीं बल्कि असली रूहे इस्लाम ही मुख़ालिफ़ है।"

नोटः– जमाअ़ते इस्लामी और मौलाना मौदूदी से मुतअ़ल्लिक़ यह मुफ़्ती महदी हसन साहब मुफ़्ती दारुल उलूम देवबन्द का फ़तवा है। अब मौलाना मन्ज़ूर नोमानी देवबन्दी की राय मुलाहज़ा फ़रमाइये।

कोई जी भर के देख ले ऐ काश
लिये फिरता हूं कितनी सौग़ातें

फ़तवए देवबन्द का तहक़ीक़ी जाइज़ा सफ़हा 117 व 118 माख़ूज़ अज़ अल-फ़ुरक़ान, लखनऊ माह ज़ीक़अ़दा 1370 हि॰

"मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी को मैं ज़ाती तौर से भी जानता हूं-(चन्द सतर बाद) मैं कह सकता हूं कि उनके लिखे हुए सैकड़ों हज़ारों सफ़हात में मेरी नज़र से कभी कोई ऐसी चीज़ नहीं गुज़री जिसकी बिना पर फ़तवे की शक्ल में उनके ख़िलाफ़ कोई सख़्त हुक्म लगाया जा सके।"

नोटः– अब क़ारी मुहम्मद तय्यब साहब की राय मुलाहज़ा फ़रमाइये।

रिसाला ज़िन्दगी, रामपुर 1369 हि॰ बहवाला फ़तवए देवबन्द का तहक़ीक़ी जाइज़ा सफ़हा 60

"जहां तक अहक़र की राय का तअ़ल्लुक़ है यह सही नहीं है कि मौदूदी साहब का लिट्रेचर देखने से ईमान जाता रहता है ममदूह ने इस्लामी इज्तेमाइयात के बारे में निहायत मुफ़ीद और क़ाबिले क़दर ज़ख़ीरा फ़राहम कर दिया है इस दौरे ख़लत व अख़्लात और तलबीसे इश्तेबास में जिस बे-जिगरी से उन्होंने इस्लामी इज्तेमाइयात का तजज़िया और तन्क़ीह करके जमाअ़ती मसाइल को साफ़ किया है वह उन्हीं का हिस्सा है। मैं उन्हें इस्लामी इज्तेमाइयात का एक बेहतरीन सियासी मुफ़क्किर समझता हूं।"

नोटः- मौलाना महदी हसन मुफ़्तीए देवबन्द, मौलाना मन्ज़ूर नोमानी मुदीर अलफ़ुरक़ान, क़ारी मुहम्मद तय्यब मुहतमिम दारुल उलूम देवबन्द के फ़तावे आपकी नज़र से गुज़रे। ग़ालिबन यह बात आपके ज़ेहन में होगी कि इसी जमाअ़ते इस्लामी के मुतअ़ल्लिक़ मौलाना हुसैन अहमद टांडवी यह फ़तवा दे चुके हैं कि "अरकाने जमाअ़ते इस्लामी जहन्नमी हैं" यह जमाअ़त रवाफ़िज़ से बदतर है वग़ैरह वग़ैरह" जिस का हवाला जिल्द अव्वल में गुज़र चुका है।

अब इसी मक़ाम पर मौलाना क़ासिम नानौतवी के एक शेअ़्र पर उलमाए देवबन्द का फ़तवा मुलाहिज़ा कीजिये जो फ़तवा ला इल्मी में दिया गया है जिसकी असल कापी सुल्तानुल मुनाज़िरीन हज़रत मौलाना मुहम्मद हुसैन साहब संभली के पास है। अ़ल्लामा मौलाना मुजीबुल इस्लाम आज़मी के तवस्सुत से यह फ़तवा मैंने हासिल किया है।

सवालः- क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन इस मसला में कि एक मीलाद ख़्वाँ ने मुन्दर्जा ज़ैल शेअ़्र महफ़िले मौलूद में नबीए अकरम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नअ़त में पढ़ा। शेअ़्र-

जो छू भी देवे सगे कूचा तेरा उसकी नअ़श
तो फिर तो ख़ुल्द में इबलीस का बनायें मज़ार

(क़साइदे क़ासमी मुसन्निफ़ मौलवी क़ासिम नानौतवी सफ़हा 77 मतबूआ साढौरा ज़िला अम्बाला) सवाल में यह हवाला नहीं दिया गया था। अब जवाब मुलाहिज़ा फ़रमाइये-

जवाबः- (1) यह शेअ्र पढ़ना हराम और कुफ़्र है, अगर यह समझ कर पढ़े कि इसका एतेकाद और पढ़ना कुफ़्र है तब तो उसका ईमान बाक़ी न रहा और अगर यह इल्म न हो तो उसका पढ़ना और एतेक़ाद कुफ़्र है। यह शख़्स फ़ासिक़ और सख़्त गुनहगार है, इस को ता ब-मक़दूर इस हरकत से रोकना शरअन लाज़िम है। अहमद हसन 15 शव्वाल 1369 हि॰ संभल।

(2) इस शेअ्र का मफ़हूम कुफ़्र है। लिखने वाला (यानी शायर) और अक़ीदा से पढने वाला ख़ारिज अज़ ईमान हैं। ऐसे सरीह अल्फ़ाज़ में तावील की गुन्जाइश नहीं। ज़हूरुद्दीन संभल

(3) किसी बेहूदा और जाहिल आदमी का शेअ्र है। बेवक़ूफ़ और बेहूदा लोग ही ऐसे मज़मून से महज़ूज़ होते हैं। अगर यह उसका अक़ीदा है तो कुफ़्र है। दीनदार आदमी को इसके सुनने से भी एहतियात चाहिये।

फ़क़त सईद अहमद संभल

(4) इस शेअ्र का नअ्त में पढ़ना और लिखना दोनों कुफ़्र है।

वारिस अली अफ़ी अन्हु संभल

(5) तीनों हज़रात दाम ज़िल्लहुमुल आली के जवाबात की मैं बिल्कुल मुवाफ़क़त करता हूं।

मुहम्मद इबराहीम अफ़ी अन्हु मदरसतुश्शरअ् संभल

(6) शेअ्र मज़कूर अगरचे नअ्त में है लेकिन हद्दे शरीइयत से बाहर है। ऐसा शेअ्र न कहने वाले को कहना और न पढ़ने वाले को पढ़ना जाइज़ है। यह ग़ुलू और क़बीह है।

मुहम्मद किफ़ायतुल्लाह कानल्लाहु लहू दिल्ली

नम्बर 121 अलिफ़ नम्बर फ़तवा

"मज़कूरा शेअ्र अगरचे आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तारीफ़ में शायर ने कहा है लेकिन इतना ज़रूर है कि शायर शरई उसूल से वाक़िफ़ नहीं है। शेअ्र में हद दर्जा का ग़ुलु है जो इस्लामी उसूल के किसी तरह मुनासिब नहीं है। शायर काफ़िर इस वजह से नहीं हो सकता कि शेअ्र का पहला मिस्रअ् शर्त है (जो) माना में अगर के है और मुहाल चीज़ को फ़र्ज़ कर रखा है, शर्त का वजुद मुहाल है इस लिए

दूसरा मिस्रअ् जो बतौरे जज़ा के है इसका मुतहक़्क़िक़ होना भी मुहाल है मगर शेअ्र नअ्ते रसूल से बहुत गिरा हुआ और रकीक है, ऐसे ग़ुलू से शायर को बचना फ़र्ज़ और ज़रूरी है। ऐसे अशआर से आपकी ताज़ीम नहीं होती है बल्कि तौहीन का पहलू नुमायां हो जाता है। यह सही है कि कुरआन के हुक्म के मुताबिक़ इबलीस जन्नत में नहीं जाएगा मगर इस शेअ्र के क़ाइल को काफ़िर नहीं कह सकते कि इसमें मुहाल को फ़र्ज़ कर रखा है जब तक सही तौजीह उनके कलाम की हो सकती हो उस वक़्त तक उसके क़ाइल को काफ़िर कहना जाइज़ नहीं, ऐसे अशआर मौलूद में पढ़ना नहीं चाहिये।"

वल्लाहु अअ्लम कतबा महदी हसन
सदर मुफ़्ती दारुल उलूम देवबन्द
13/2/70 हि॰ (जुमा)

नम्बर 129 फ़तवा

"शायर का मक़सद बज़ाहिर रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नअ्त है और वह फ़र्ते अक़ीदत में सगे कूचए नबी को भी इबलीस से भी बदतर साबित करना चाहता है इसका मक़सद इबलीस को जन्नती कहना नहीं है जो इन नुसूस का इन्कार भी नहीं और न इबलीस के जन्नती होने का मुद्दई है इस लिए शायर को काफ़िर न कहा जायेगा अलबत्ता इस शेअ्र से चूंकि इस क़िस्म का ईहाम हो सकता है जैसा कि दूसरा फ़रीक़ कहता है और ईहामे कुफ़्र से भी बचना वाजिब है इस लिए इस शेअ्र को हरगिज़ न पढ़ा जाये और तौबा की जाये मगर दूसरे लोगों को भी इसके काफ़िर कहने में एहतियात की ज़रूरत है क्योंकि इल्तेज़ामे कुफ़्र और लुज़ूमे कुफ़्र में फ़र्क़ है और जब किसी क़ौल में एहतेमाल अदना कुफ़्र का भी हो सकता है अगरचे ब-तावील हो क़ाइल को काफ़िर न कहा जायेगा वल्लाहु अअ्लम।"

सईद अहमद ग़ुफ़ेरलहू
मुफ़्ती मज़ाहिरुल उलूम सहारनपुर
15 सफ़र 1370 हि॰

है गुनाहों को भी पामाल किये जाते हो
पांव रखते हो कहां और किधर पड़ता है

नोटः- एक ही सवाल के जवाब में नाज़िरीन ने भांत भांत की बोली मुलाहज़ा फ़रमा ली यह वह ऊँट है जिसका कोई कल सीधा नहीं। कोई तो मौलवी क़ासिम नानौतवी को जाहिल और बेहूदा कह रहा है, कोई काफ़िर और फ़ासिक़, कोई इल्तेज़ामे कुफ़्र और लुज़ूमे कुफ़्र की बहस में उलझा है। ग़रज़ कि उनके यहां फ़तवा नवेसी का कोई मेअ्यार ही नहीं और यह सारे फ़तावे इस बुनियाद पर हैं कि किसी को भी इसकी ख़बर नहीं कि तीर के निशाने पर कौन है अगर यह मालूम हो जाता कि बानीए दारुल उलूम देवबन्द का शेअ्र है तो फिर इस शेअ्र में नअ्ते नबी के वह गोशे निकाले जाते कि आलमगीरी व शामी के बजाए दीवाने ग़ालिब व दीवाने ज़ौक़ के सफ़हात उलटे जाते और उर्दू शायरी में इस शेअ्र को एक नये मफ़हूम का इज़ाफ़ा कहा जाता। यह भी एक रही कुफ़्र के फ़तावे ख़ुद देवबन्द से दिये जायें और बदनाम बरैली को किया जाये। आज बुलन्द बांग नारों से यह कहा जाता है कि 'काफ़िर को काफ़िर न कहो' हालांकि यह कह कर ख़ुद आँ बदौलत ने काफ़िर कह दिया यानी काफ़िर तो है मगर काफ़िर कहो मत।

इस सादगी पे कौन न मर जाये ऐ ख़ुदा
लड़ते हैं मगर हाथ में तलवार तक नहीं

सच जानिये इफ़्तेरा पर्दाज़ी और बुहतान तराशी में तो इस तबक़े ने रिकार्ड तोड़ दिया है। इस वक़्त मौलवी नज़ीर अहमद रहमानी की रद्दे अक़ाइदे बिदइया मेरी नज़र के सामने है इसके भी चन्द हवालाजात मुलाहज़ा फ़रमाइये तो यक़ीन आजाएगा कि देवबन्दियत और ग़ैर मुक़ल्लिदियत आपस में सौतेले भाई बहन हैं अक़ाइदे बिदइया हिस्सा अव्वल मुरत्तेबा नज़ीर अहमद रहमानी हमीदिया बरक़ी मशीन प्रेस बलुवा गंज लहरिया सराय दरभंगा सफ़हा 116 व 117

''पस अगर 'कुल्लु नफ़्सिन' से जुमला अफ़राद का इस्तिग़राक़ मुराद हो तो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए भी मौत तस्लीम करनी पड़ेगी हालांकि बरैलवी अक़ाइद के मुताबिक़ यह सही नहीं क्योंकि उनके नज़दीक तो आंहुज़ूर पर एक लम्हा के लिए भी मौत तारी नहीं हुई बल्कि आप 'ओट' यानी पर्दे में हो गये तो हमारे नज़दीक उनका यह अक़ीदा भी सही नहीं।''

नोटः- 'चे दिलावार अस्त दुज़्दे कि बकफ़ चराग़ दारद' भरी महफ़िल में इल्म व दियानत की आबरू लुटाना यह उन्हीं हज़रात का काम है।

यह क्या ग़ज़ब है कि आंजनाब ने बरैलवी अक़ीदे पर चोट तो करली मगर इसका कोई हवाला न दे सकेंगे। गोया आप जो कुछ फ़रमा दें वही बरैलवी अक़ीदा हो जाये अगर नक़्द व नज़र और तस्नीफ़ व तालीफ़ का यही तरीक़ा है जो आंजनाब ने इख़्तियार कर रखा है तो आइन्दा आप यह भी लिख सकते हैं कि 'बरैलवी अक़ीदे में सय्येदना इमामे आज़म अबु हनीफ़ा ख़ातमुन्नबीईन हैं।' फिर ऐसे ही ड़ंगर की उड़ाते रहिये और मुसन्निफ़ व मुअल्लिफ़ बन कर अपनी मेजारिटी में बैठ कर मौछों पर ताव दीजिये। ऐ काश आपको ख़ुदाई बाज़ पुर्स का ख़ौफ़ होता और कभी यह सोच सकते कि मरना है और मर कर ख़ुदाए क़दीर की बारगाहे अदालत में ज़िन्दगी का हिसाब व किताब देना है। अगर आज से पहले आप उसूले सहाफ़त से ना आश्ना थे तो अब होश व ख़िरद का दामन थामिये और अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास करते हुए इसका हवाला दीजिये कि बरैलवी मकतबए फ़िक्र की वह कौन सी किताब है जिस में यह अक़ीदा लिखा हुआ है कि (रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर एक लम्हा के लिए भी मौत का तिरयान नहीं हुआ बल्कि वह 'ओट' यानी पर्दा में चले गये।)

मैं नहीं कह सकता कि 'रद्दे अक़ाइदे बिदइया' यह कोई मुअक़्क़र व सन्जीदा किताब है या ब्लेक मार्केट करने वाले ताजिर का बही खाता, डन्डी मार बनिये का बही खाता तो ताहम ग़नीमत होता है मगर आपकी माया नाज़ तालीफ़ तो इससे भी चार क़दम आगे है। चुनान्चे आरिफ़ बिल्लाह मौलाना आसी अलैहिर्रहमा के शेअ्र पर भी आपने तन्क़ीद फ़रमाई है। मगर कतर ब्योंत करके उसकी असल सूरत ही मस्ख़ कर दी है अगर ज़हमत न हो तो एक बार 'ऐनुल मआरिफ़' का मुताला कर लीजिये। आपने तहरीर फ़रमाया है।

रद्दे अक़ाइदे बिदइया सफ़हा 17

वही जो मुस्तवीए अर्श था ख़ुदा होकर

रहमानी साहब ऐनुल मआरिफ़' का मुताला करके ख़ुदा लगती बात कहिये कि क्या आपने मिस्रअ् में 'है' को 'था' से बदल नहीं दिया। अब आप ही फ़रमाइये इस तरमीम के बाद आपकी तन्क़ीद का वज़न ही क्या रह गया ?

1. दीवाने आसी

रहमानी साहब! इबारात में कतर ब्योंत के आप इस क़दर आदी हैं कि दूसरों की भी तहरीर में आपको अपना ही अक्स नज़र आता है। चुनान्चे आप सफ़हा 158 पर रक़मतराज़ हैं-

"अल्फ़ाज़े हदीस के नक़ल व हवाला में मुरादाबादी की ख़ियानत"

अभी आप के मुंह से दूध की बू नहीं गई और आप सदरुल अफ़ाज़िल हज़रत मौलाना नईमुद्दीन रहमतुल्लाह अलैह के मुंह लगना चाहते हैं। चादर का तूल व अर्ज़ देख कर पाँव फैलाने की कोशिश करनी चाहिये।

दामन को ज़रा देख ज़रा बन्दे क़बा देख

रहमानी साहब! मुझे आपकी इस जसारत पर कोई शिकवा नहीं, मैं बहुत अच्छी तरह जानता हूं कि अम्बिया व रुसुल, उलमा व सुलहा की तन्क़ीस आप और आपकी बिरादरी का ओढ़ना बिछौना है। जब आप सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तन्क़ीस में नहीं चूकते तो फिर आप सदरुल अफ़ाज़िल अलैहिर्रहमा को कैसे बख़्श सकते हैं। अगर भूल बैठे हों तो अपनी ही किताब से एक इबारत मुलाहज़ा कर लीजिये।

रद्दे अक़ाइदे बिदइया सफ़हा 27

"यही वजह है कि जिस क़दर जलीलुल क़द्र अम्बिया अलैहिमुस्सलाम गुज़रे हैं उनके ख़ास लक़ब हैं मसलन इब्राहीम अलैहिस्सलाम को ख़लीलुल्लाह और हज़रत मूसा को कलीमुल्लाह और हज़रत ईसा को रूहुल्लाह लेकिन आंहज़रत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बावजूद इसके कि वह अशरफ़े अम्बिया था अपने लिए अब्दियत और रिसालत का लक़ब पसन्द किया।"

रहमानी साहब महज़ इस ख़्याल के तहत कि रसूले ख़ुदा को अपना जैसा बशर साबित किया जाये। सरकारे दो आलम के मक़ामे अब्दियत पर तो आपकी निगाह पड़ गई मगर इस वाक़िआ को आप हज़म कर गये कि एक बार सहाबा आपस में तज़्किरे कर रहे थे कि हज़रत मूसा कलीमुल्लाह थे। हज़रत ईसा रूहुल्लाह और हज़रत इब्राहीम ख़लीलुल्लाह थे कि अचानक उसी महफ़िल में जाने रहमत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तशरीफ़ लाये और फ़रमाया कि 'अना हबीबुल्लाह' मैं अल्लाह का हबीब हूं। फिर कभी आपने यह ख़्याल भी फ़रमाया कि सरकारे दो आलम ने अपने अब्दियत का लक़ब पसन्द फ़रमाया तो फिर एक वह शख़्स

जो उम्मती होने का दावेदार हो उसको अपने पैग़म्बर की इज़्ज़त व शान के इज़हार के लिए किन अल्क़ाब व ख़िताबात को इख़्तियार करना चाहिये। तन्क़ीसे रिसालत में इस क़दर ग़ुलू के बावजूद आप यह तहरीर फ़रमाते हैं।

रद्दे अक़ाइदे बिदइया सफ़हा 159

"ख़ुदा नख़्वास्ता अगर कोई शख़्स हमारी इन बातों को जनाबे रिसालत मआब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शाने अक़्दस की तन्क़ीस व तौहीन क़रार देने की कोशिश करे तो यह उसकी शरारत व ख़बासत होगी।"

नोटः- यह भी ख़ूब रही यह तो शराबियों और जुवाड़ियों वाला लब व लहजा है मसलन एक शराबी कहता है कि जो मुझे शराबी कहे वह ख़ुद शराबी है यही हाल आंजनाब का है सरकारे दो आलम को गालियां दीजिये और बतौरे इस्लाह उसकी तरफ़ आपको तवज्जोह दिलाये तो आंखें लाल पीली करके ख़ुद उसी को शरीर और ख़बीस कहिये। मैं हैरान हूं कि आप की इन बहकी बहकी अदाओं की कहां तक निशानदेही की जाये। आलम तो यह है।

यह गेसुओं की घटायें लबों के मयख़ाने
निगाहे शौक़े इलाही कहां कहां ठहरे

रहमानी साहब! अब इख़्तेतामे गुफ़्तगू पर इतनी ही गुज़ारिश है कि आइन्दा जब कभी भी क़लम उठाइये इसका लिहाज़ रखिये कि हवाला में जिस मक्तबए फ़िक्र की भी इबारत या उसका अक़ीदा पेश कीजिये सेहत का पूरा पूरा ख़्याल रखिये। 'रद्दे बिदइया' में जो अन्दाज़े तहरीर आपने इख़्तियार किया है वह न सिर्फ़ मेरी निगाह में बल्कि हर इन्साफ़ पसन्द की नज़र में नाक़ाबिले क़बूल होगा। अफ़सोस है कि अब इसका मौक़ा नहीं कि आपकी जमाअती पोज़ीशन पर कोई गुफ़्तगू की जाये वरना मैं इसकी वज़ाहत करता कि ग़ैर मुक़ल्लिदियत कहां की पैदावार है। बस इतना समझ लीजिये कि आप हज़रात अपने जिन आक़ाओं की बारगाह में हलफ़े वफ़ादारी उठा चुके हैं, उसके पेशे नज़र इस क़िस्म की बहकी बहकी बातों के लिखने पर मजबूर हैं। कौन नहीं जानता कि हिन्दुस्तान की ख़ारिजियत, देवबन्दियत, क़ादियानियत, ग़ैर मुक़ल्लिदियत सब उस वक़्त की पैदावार है जब कि अंग्रेज़ बहादुर ने दिल्ली लाल क़िला पर मसीही परचम लहराया है।

फ़र्क़ इतना है कि अंग्रेज़ी साम्राज से पहले क़ादियानियत का तो वजूद न था अंग्रेज़ों ने मुसलमानों में फूट डालने और मसला ख़त्मे नबुव्वत को कमज़ोर बनाने के लिए गुलाम अहमद को ख़रीदा और यह जमाअत इसी सहारे आगे बढ़ी, ऐसे ही फ़िरक़ा गैर मुक़ल्लिद जो आज अपने को अहले हदीस कहता है यह भी उसी वक़्त की पैदावार है चुनान्चे काफ़ी दिनों तक जमाअती तौर पर यह मसला ज़ेरे बहस रहा कि इस नये फ़िरक़े का नाम क्या होगा ? यह वाज़ेह रहे कि नया नाम नई जमाअत ही के लिए तलाश किया जाता है। रहमानी साहब! अगर मेरी बातों पर एतेमाद व भरोसा न हो तो ज़हमत फ़रमा कर एक बार फिर अपनी तारीख़े पैदाइश का जाइज़ा लीजिये और यह फ़रमाइये कि इब्तेदा में आपकी जमाअत का क्या नाम था ?

लीजिये मैं आपकी इस ज़हमत को किसी हद तक आसान किये देता हूं कि पहले आप लोग 'मुहम्मदी' थे फिर बाद में 'अहले हदीस' हो गये, नहीं जानता कि मुस्तक़बिल में आप लोग अहले हदीस ही अपना नाम रखेंगे या अहले! अलबत्ता फ़ितनए ख़ारिजियत उस वक़्त की पैदावार तो नहीं है मगर इस दबे हुए फ़ितने को अंग्रेज़ों ने उभारा और उसकी क़ियादत के लिए मौलवी अब्दुश्शकूर लखनवी का इन्तिख़ाब अमल में आया। मुनासिब होगा कि इस मक़ाम पर ख़ारजियों के इमाम मौलवी अब्दुश्शकूर लखनवी के भी कुछ अक़वाल पेश कर दिये जायें ताकि आपका इत्मीनाने क़ल्ब आपको हासिल रहे और यह यक़ीन हो सके कि ऐसी बातें वही कह सकता है जो इस्लाम से रिश्ता व नाता तोड़ कर किसी और से अपना साज़ बाज़ कर चुका हो। मुलाहज़ा फ़रमाइये।

मुख़्तसर सीरते नबविया सफ़हा 22 मुअल्लिफ़ मौलवी अब्दुश्शकूर लखनवी।

> "लेकिन बावजूद महासिने अक़्लिया के महासिने शरईया से आप 'यानी रसूले ख़ुदा" बिल्कुल बे ख़बर थे। महासिने शरईया की असल उसूल यानी ईमान बिल्लाह की हक़ीक़त भी आप न जानते थे।"

सफ़हा 22 अख़लाक़ी महासिन के तीन जुज़ हैं। तहज़ीबे अख़लाक़, तदबीरे मन्ज़िल, सियासते मुदन, इन तीनों से आप यानी 'रसूले ख़ुदा' क़तअन व असलन बे ख़बर थे जब आप यह भी न जानते थे कि किताबे इलाही क्या चीज़ है और ईमान क्या चीज़ है तो और महासिन से आपको क्योंकर आगाही हो सकती थी।

नोटः- इन इबारात को मैं इस क़ाबिल ही नहीं समझता कि इन पर नक़्द व नज़र की जाये। यह इबारतें ख़ुद ही पुकार पुकार कर कह रही हैं कि मैं किसी दुश्मने रसूल के मुंह से निकली हुई गालियों की गन्दा तस्वीर हूं। दो एक हवालाजात और भी मुलाहज़ा फ़रमाइये।

अख़्बारुन्नज्म मुअर्रख़ा 11 जून 1937 ई० सफ़हा 5 कालम 3 एडीटर मौलवी अब्दुश्शकूर लखनवी।

> "नबीए करीम ने फ़रमाया मैं तुम्हारी तरह एक मामूली इन्सान हूं अगर तुम में और मुझ में फ़र्क़ है तो सिर्फ़ इतना कि मैं तुम्हारे पास ख़ुदाए तआला का पयाम लाया हूं।"

नोटः- क़ुरआन मजीद की मुन्दर्जा वाला आयत का तर्जुमा देख कर डा० इक़बाल का एक शेअ्र याद आ गया।

इस राज़ को तो फ़ाश कर ऐ रूहे मुहम्मद ﷺ
आयाते इलाही का निगहबान किधर जाये

क्या मुझे कोई बता सकता है कि आयत के तर्जुमा में जो 'मामूली' कहा गया है, यह किस लफ़्ज़ का तर्जुमा है। या हसरता! क़ुरआन को आज खिलौना बना लिया गया है। ऐ दोस्तो अगर तुम्हें यही करना है तो महज़ कहने के लिए अपनी गर्दन में जो इस्लाम का क़ुलावा डाल रखा है उसको भी उतार फेंको जो कहना है खुले बन्द कहो ऐसे ही कब तक इस्लाम के जिस्म पर तुम नासूर बन कर रिश्ते रहोगे। आख़िरश तुम्हारी रीशा दवानियों का सिलसिला कब तक जारी रहेगा अगर तुम अज़ाबे आख़िरत को भूल बैठे हो और अब तुम्हें अपनी हड्डियों और बोटियों के झुलसने का एहसास तक नहीं रह गया है तो कम से कम इस्लाम और फ़रज़न्दाने इस्लाम पर तरस खाओ। आख़िरश तुम किस काफ़िर अदा के शिकार हो गये हो, अभी तो कल ही की बात है कि तुम्हारे बाप दादा रसूले ख़ुदा का गुन गाते थे और तुम ऐसे ख़ल्फ़ निकले कि सय्यदे आलम को एक मामूली बशर कहते हो।

काश तुम्हारी आंखें खुलतीं और ठन्डे दिल से अपनी किताबों पर नज़रे सानी करके मुसलमानों के हाले ज़ार पर करम करते।

मुझे अफ़सोस है कि बात कुछ फैल गई, मैं लखनवी साहब की बदज़बानी और बारगाहे नबुव्वत में गुस्ताख़ी की मिसालें दे रहा था। दो एक हवालाजात और

भी मुलाहज़ा फ़रमाइये।

अख़बारुन्नज्म जिल्द नम्बर 13 पर्चा नम्बर 11 तारीख़ 23 रबीउल अव्वल शरीफ़ 1352 हि॰ मुताबिक़ 6 जुलाई 1934 ई॰ सफ़हा 6 कालम नम्बर 2 सतर 24।

"तारीफ़ के तमाम अफ़राद अल्लाह के लिए साबित हैं किसी तरह की तारीफ़ किसी दूसरे के लिए जाइज़ नहीं। अल्लाह की ज़ात के सिवा किसी की तारीफ़ करना हराम है।"

नोटः– एक मुतलकुलअ़नान क़लम है जो बे लगाम शराबी की तरह बहकता जा रहा है। नाज़िरीन इबारत के इस टुकड़े पर ख़ास ध्यान रखेंगे। "किसी तरह की तारीफ़ किसी दूसरे के लिए जाइज़ नहीं।" लखनवी साहब की यह दास्तान कुछ मुख़्तसर नहीं बल्कि बहुत ही तवील है, न जाने ऐसे कितने अक़वाले मरदूदा हैं मसलन ख़ुदा ने एक कअ़बा बनाया तो शैतान ने अजमेर शरीफ़, देवा शरीफ़, कलियर शरीफ़, बहराइच शरीफ़ के रौज़े बनवाये। इमाम हुसैन बाग़ी थे इमाम हुसैन को सय्येदुश शुहदा कहना नाजाइज़ व हराम है, यज़ीद पलीद इमामे बरहक़ अमीरुल मोमिनीन था वग़ैरह वग़ैरह।

'तन हमा दाग़ दाग़ शुद पुम्बा कुजा कुजा नेहुम' का मज़मून है।

बात यह चल रही थी कि क़ादियानी, ख़ारिजी, ग़ैर मुक़ल्लिद, देवबन्दी यह सब एक ही थैले के चट्टे बट्टे हैं जो हिन्दुस्तान की सरज़मीन पर अंग्रेज़ बहादुर के सहारे फले फूले। अलबत्ता यह बात ज़रूर कही जाएगी कि वहाबी नाम की तहरीक दिल्ली के आख़िरी ताजदार बहादुर शाह ज़फ़र के दौर में चोर दरवाज़े से अपना दाख़िला ले रही थी जिसने कुछ ही दिनों बाद ग़ैर मुक़ल्लिदियत और देवबन्दियत का लिबादा ओढ़ लिया जिसकी शहादत में बहादुर शाह ज़फ़र का वह इस्तिफ़्ता जो ताजुल फ़ुहूल हज़रत अ़ल्लामा फ़ज़्ले रसूल बदायूनी रहमतुल्लाह अलैह की ख़िदमत में आया था पेश किया जा सकता है। सवाल व जवाब दोनों ज़बाने फ़ारसी में हैं। नाज़िरीन की सहूलत के लिए सवाल का ख़ुलासा उर्दू ज़बान में दर्ज किया जाता है। जवाब बहुत ही तवील है इस के बारे में इतना कह देना काफ़ी है कि ताजुल फ़ुहूल हज़रत अ़ल्लामा फ़ज़्ले रसूल बदायूनी अलैहिर्रहमा वर्रिज़वान ने जो जवाब बहादुर शाह ज़फ़र को इनायत फ़रमाया था उलमाए बरैली और उलमाए बदायूं का इसी पर मामूल है। सवाल मुलाहज़ा फ़रमाइये।

अकमलुत्तारीख़ अज़ सफ़हा 154 से 169 तक

इस्तिफ़्ता

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम॰

क्या फ़रमाते हैं उलमाए दीन व मुफ़्तियाने शरअ़ मतीन उस शख़्स के मुतअ़ल्लिक़ जो यह कहता है कि दिन मुतअ़य्यन करके महफ़िले मौलूद शरीफ़[1] मुन्अक़िद करना गुनाहे कबीरा है और महफ़िले मौलूद शरीफ़ में क़ियाम करना शिर्क है और फ़ातिहा करना तआ़म व शीरीनी पर हराम है और औलिया अल्लाह से मुराद चाहना शिर्क है और हस्बे दस्तूरे क़दीम ख़त्म में पांच आयतों का पढ़ना बिदअ़ते सइय्या है और हज़रत नबीए करीम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के क़दमे मुबारक का मोजज़ा हक़ नहीं है और कहता है तअ़ज़िया का बिलक़स्द या बिला क़स्द देखना कुफ़्र है और होली का देखना और दसहरे में सैर करना अगरचे बिला इरादा हो तो वह काफ़िर हो जाएगा और उसकी औरत पर तलाक़ हो जायेगी और कअ़बा शरीफ़ व मदीना मुनव्वरा के ख़ित्ता में कोई बुज़ुर्गी नहीं है इस वजह से कि उस ज़मीन में ज़ुल्म हुआ है और सुनने में आया है कि वहां के बाशिन्दगान ज़ालिम हैं, मदीना मुनव्वरा में हज़रत उस्मान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु को क़त्ल किया और मक्का मुअ़ज़्ज़मा में अब्दुल्लाह इब्ने ज़ुबैर को क़त्ल किया और हज़रत इमाम हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु को मक्का से बाहर किया पस ऐसी सूरत में उन लोगों की अ़क़ीदत और उनके पीछे नमाज़ पढ़ना या मुसलमानों को उन से बैअ़त होना दुरुस्त है या नहीं और शरअ़ शरीफ़ का ऐसे लोगों पर क्या हुक्म है नीज़ उनके मुत्तबेईन पर क्या हुक्म है।

फ़क़त नक़्ले मुहर हज़रत ज़िल्ले सुबहानी ख़लीफ़तुर्रहमानी

मुहम्मद बहादुर शाह बादशाह ग़ाज़ी

बादशाह दीने पनाह वफ़्फ़क़ल्लाहु लिमा युहिब्बु वरज़ाहु

अबू ज़फ़र सिराजुद्दीन

1. किलए मुअ़ल्ला में मीलाद, फ़ातिहा, नियाज़, ग्यारहवीं, तोशा, छटी जैसे तमाम ही मरासिम अहले सुन्नत का रिवाज था। जब इन मरासिम पर मौलवी इस्माईल देहलवी ने शिर्क व बिदअ़त के फ़तावे दिये तब बहादुर शाह ज़फ़र ने मौलाना फ़ज़्ले रसूल बदायूनी अलैहिर्रहमा की ख़िदमत में इस्तिफ़्ता किया। 12

ख़ुलासए गुफ़्तगू यह है कि मज़हबे अहले सुन्नत को मिटाने और कमज़ोर बनाने के लिए यह सब जमाअतें अंग्रेज़ों के इशारे पर आलमे वजूद में आईं चुनान्चे मौलवी इस्माईल देहलवी जो देवबन्दी वहाबी, ग़ैर मुक़ल्लिद सभी के मुक़्तदा व पेशवा हैं उन्हें ख़ुद अपनी तक़वीयतुल ईमान के बारे में इस अमूर का एहसास था कि इस किताब से इन्तेशार फैलेगा और मुसलमानों का शीराज़ा मुन्तशिर होगा मगर वई हमा किताब शाया हुई और मुसलमानों की यकजहती टुकड़े होकर रह गई।

चुनान्चे हज की रवानी से पहले मौलवी इस्माईल देहलवी ने एक भरे मजमा में जो तक़रीर की थी उसको मुलाहज़ा फ़रमाइये।

बाग़ीए हिन्दुस्तान सफ़हा 115

"मैं जानता हूं कि इस (तक़वीयतुल ईमान) में बाज़ जगह ज़रा तेज़ अल्फ़ाज़ भी आ गये हैं और बाज़ जगह तशद्दुद भी हो गया है मसलन उन अमूर को जो शिर्के ख़फ़ी हैं शिर्के जली लिख दिया गया है इन वजूह से मुझे अन्देशा है कि शौरिश ज़रूर फैलेगी।"

नोटः- अब मुआमला नाज़िरीन की अदालत में पेश है फ़ैसला करना आप ही हज़रात का काम है। तक़वीयतुल ईमान पर यह बदायूं या बरैली की तन्क़ीद नहीं है बल्कि अपनी तस्नीफ़ से मुतअल्लिक़ ख़ुद मुसन्निफ़ ही का इक़रार। आप समझ सकते हैं कि यह तक़रीर किस क़दर संभल कर की गई होगी और कितने ऊंचे तुले अल्फ़ाज़ ढूंडे गये होंगे मगर इसके बावजूद अदाएगीए मफ़हूम में मुसन्निफ़ ने हस्बे ज़ैल बातों का इक़रार किया है।

1. अल्फ़ाज़ भी तेज़ आ गये हैं, लफ़्ज़ भी यह इशारा कर रहा है कि माना में तेज़ी व तल्ख़ी तो है ही मगर अल्फ़ाज़ भी तेज़ हैं।

2. बाज़ जगह तशद्दुद भी हो गया है।

3. शिर्के ख़फ़ी को शिर्के जली लिख दिया है। आख़िरश यह दीन में ठीकेदारी नहीं तो और क्या है? यह इस्लाम और शरीअत से इस्तिहज़ा व मज़ाक़ की जीती जागती मिसाल है।

4. मुझे अन्देशा है कि शोरिश ज़रूर फैलेगी। जिस किताब से शौरिश फैलने का अन्देशा हो उसको छापना ही नहीं चाहिये। मगर इसी बात से पूरी हक़ीक़त वाज़ेह कर दिया और वहाबी मिशन की कलई भी खुल गई। अंग्रेज़ों के इशारे पर शौरिश फैलाने के लिए ही तक़वीयतुल ईमान लिखी गई है। यह वही तक़वीयतुल ईमान है

जिस का मौलवी रशीद अहमद गंगोही के फ़तवे की बिना पर हर घर में होना और उसका पढ़ना ऐने इस्लाम है। यह भी ख़ूब रही जिस किताब से शौरिश फैले उसका हर घर में होना ऐने इस्लाम है। गोया मआज़ल्लाह इस्लाम का काम शौरिश फैलाना है, आज उलमाए देवबन्द गली गली कूचा कूचा यह प्रोपगन्डा करते फिर रहे हैं कि उलमाए अहले सुन्नत का काम तो महज़ लड़ाना व शौरिश फैलाना है।

काश वह एक लम्हा के लिए नारमल हालत में तक़वीयतुल ईमान को पढ़ कर ख़ुद मुसन्निफ़ के बयान की रौशनी में यह फ़ैसला करते कि इफ़्तेराक़ बैनुल मुस्लिमीन के बानी ख़ुद आं वदौलत हैं या कोई और? चुनान्चे इस सिलसिला में मौलवी अब्दुश्शाहिद ख़ाँ शेरवानी नाज़िमे जमीअतुल उलमा अलीगढ़ का एक बयान हवाला में हाज़िर किया जाता है, जिससे हक़ीक़त ख़ुद ही बे निक़ाब हो जाएगी।

बाग़ीए हिन्दुस्तान सफ़हा 115 व 116

"पस इफ़राते ग़ुलू का नतीजा यह हुआ कि मौलाना (इस्माईल देहलवी) के जज़्बए इस्लाह और वअज़ व इरशाद की क़दर करने वाले पुराने साथी भी (मौलाना इस्माईल) की मुख़ालफ़त किये बग़ैर न रह सके उन्हीं में से अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी भी थे। अल्लामा की दूर बीं निगाहों ने ताड़ लिया कि यह तो आसमान से गिर कर खजूर पर अटकना हुआ, तफ़रीत की गई तो इफ़रात पैदा होकर रहेगा ऐसे मौक़ा पर महज़ नेही और ख़ामोशी गुनाहे अज़ीम है।"

नोटः- अब वह हज़रात जो हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी की हक़ पसन्दी से बरहम होकर उन्हें मौरिदे तअ्न व तशनीअ़ क़रार दे रहे हैं और मौलवी इस्माईल देहलवी की शोरिश पसन्दी पर रद्दे शिर्क व बिदअ़त का ग़िलाफ़ डाल कर तक़वीयतुल ईमान को ऐने इस्लाम कह रहे हैं वह अपने गरीबान में मुंह डाल कर सोचें कि अपनी रविश में वह किस हद तक हक़ बजानिब हैं।

ऐ काश अब भी उलमाए देवबन्द को होश आता और वह इस्लाम और मुसलमानों के हाले ज़ार पर तरस खाते आज उनसे यह मुतालबा है कि तक़वीयतुल ईमान में जहां बातिल व गुमराह अक़ीदे हैं, उसी के साथ इस किताब का अन्दाज़े बयान और लब व लहजा भी दुरुस्त नहीं है जिसकी बाबत ख़ुद मुसन्निफ़ का इक़रार है।

लिहाज़ा ऐसी किताब जिसमें अल्फ़ाज़ तेज़ आ गये हों, तशद्दुद हो और शिर्के ख़फ़ी को शिर्के जली लिखा गया हो और उस किताब से मुसलमानों में शोरिश फैलने

का अन्देशा हो, उसकी इशाअत ही न होनी चाहिये, मगर यहां तो नक़्शा ही बदला हुआ है, इशाअत की रोक थाम तो दर किनार उसी किताब को ऐने इस्लाम कह कर छापा और बेचा जा रहा है। और जिस क़दर तक़वीयतुल ईमान के इस्लाम का मुतालबा किया गया उसी क़दर मुसन्निफ़ की शिद्दत और बढ़ती गई। चुनान्चे मौलवी अब्दु शाहिद ख़ान शेरवानी नाज़िमे जमीअ़तुल उलमा अलीगढ़ सदर रक़मतराज़ हैं मुलाहज़ा फ़रमाइये।

वाग़ीए हिन्दुस्तान सफ़हा 114

"मुसलमानों की शिद्दते मुख़ालफ़त की बिना पर क़ुदरती तौर पर शाह साहब (मौलवी इस्माईल साहब) का जज़्बए इस्लाह ग़ुलू की शक्ल इख़्तियार कर गया एक तरफ़ तफ़रीत थी तो दूसरी जानिब इफ़रात शाह इस्माईल साहब ने मुसलमानों की हर ग़लत रवी को शिर्क से ताबीर करना शुरू किया।

चन्द सतर बाद

वअ़ज़ व तबलीग़ के साथ तस्नीफ़ व तालीफ़ का सिलसिला भी शुरू हुआ, पहले अरबी में फिर उर्दू में तक़वीयतुल ईमान लिखी इस में हद्दे एतेदाल से तजावुज़ किया गया इसका ख़ुद मुसन्निफ़ को भी एहसास था।"

नोटः- मुन्दर्जा बाला इबारत के हस्बे ज़ैल टुकड़े नाज़िरीन की तवज्जोह चाहते हैं।

1. शाह साहब का जज़्बए इस्लाह ग़ुलू की शक्ल इख़्तियार कर गया।

2. शाह साहब ने मुसलमानों की हर ग़लत रवी को शिर्क से ताबीर करना शुरू किया। यानी फ़िल वाक़ेअ़ वह बातें शिर्क तो नहीं हैं मगर चूंकि शाह साहब का जज़्बए इस्लाह ग़ुलु की शक्ल इख़्तियार कर चुका था इस लिए मुसलमानों का जो फ़ेअ़्ल भी उनके मिज़ाज व तबीअ़त के ख़िलाफ़ हो उसको शिर्क कह दिया गया। इस अन्दाज़ा के लिए यह बात काफी है कि तक़वीयतुल ईमान की हर हर सतर में जो शिर्क व बिदअ़त की के की गई है उसकी हक़ीक़त क्या है।

3 तक़वीयतुल ईमान में हद्दे एतेदाल से तजावुज़ किया गया यह तो सभी जानते हैं कि जो किताब हद्दे एतेदाल से मुतजाविज़ हो जाती है वह अपना वक़ार और वज़न

खो देती है। वह किताब नहीं कही जाती बल्कि मुसन्निफ़ के ग़म व ग़ुस्सा, क़हर व ग़ज़ब और गाली गुलूज का पुलिन्दा समझी जाती है।

4. इसका ख़ुद मुसन्निफ़ को भी एहसास था। यानी मुसन्निफ़ की ख़ता ग़ैर शुऊरी तौर पर न थी बल्कि दानिस्ता थी और यह बात अहले नज़र पर मख़्फ़ी नहीं कि ऐसी ख़ता इन्तेहाई मख़्दूश व ख़तरनाक होती है। यहाँ से यह बात भी वाज़ेह हो जाती है कि एहसासे लग़्ज़िश के बावजूद अगर लग़्ज़िश की जाए तो उसका भी इम्कान रहता है कि इस लग़्ज़िश पर कोई ख़ारजी दबाव पड रहा है। यानी शाह इस्माईल साहब को इसका एहसास तो था कि इस हद्दे एतेदाल से मुतजाविज़ हो चुका हूं और इस किताब से शोरिश फैलेगी मगर इस के बावजूद वह अपनी रविश न बदल सके महज़ इस वजह से कि उन पर अंग्रेज़ बहादुर का दबाव पड़ रहा था कि मेरे हक़ में वही किताब मुफ़ीद होगी जिससे मुसलमानों में शोरिश फैले। यह है तक़वीयतुल ईमान का पस मन्ज़र। न तो वह ऐने इस्लाम है और न ही रद्दे शिर्क व बिदअ़त में कोई क़ाबिले क़दर तस्नीफ़ बल्कि वह अंग्रेज़ बहादुर से रुपया ऐंठने की तरकीब बताने वाली एक किताब है वरना रद्दे शिर्क व बिदअ़त का जो तरीक़ा मौलवी इस्माईल देहलवी ने इख़्तियार किया था उसको ख़ुद मौलवी क़ासिम नानौतवी न बरदाश्त कर सके बल्कि इस मज़मूम तरीक़े पर उन्होंने बड़ी सख़्त तन्क़ीद करते हुए इज़हारे तनफ़्फ़ुर किया है जिसको आप मुसन्निफ़ सवानेह क़ासिमी के क़लम से मुलाहज़ा फ़रमाइये मगर इससे पहले मौलवी इस्माईल साहब के अन्दाज़े तबलीग़ व इस्लाह पर एक शेअ़र सुन लीजिये।

> मयख़ाना सलामत है तो हम सुरख़ीए मय से
> तज़ईने दरो बामे हरम करते रहेंगे

सवानेह क़ासिमी जिल्द दोम सफ़हा 25

"कौन नहीं जानता कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ज़माना में न कलामुल्लाह इस तरह मिन अला इला आख़िरह में लिखा हुआ था न उस ज़माना में ज़बर, ज़ेर, जज़्म और तश्दीद ईजाद हुए थे न कुतुबे अहादीस यूं तस्नीफ़ हुईं न तदवीने कुतुबे फ़िक़ह, उसूले फ़िक़ह और तफ़सीर का दस्तूर था।

तबक़ाए उलमा की कज़फ़ूरा बाला ख़िदमात या इसी नौइयत की जो दूसरी चीज़ें हैं उन को आप[1] ने इसी मद में शुमार फ़रमाया है। जो ज़िम्नन व अरज़न मामूर बिही हैं यानी शरीअत के मुतालबात की तकमील में मुमिद्दो मुआविन हैं।"

सफ़हा 22 – ऐसे ही इलाजे कल्बी में बहुत से उमूर होते हैं कि वह सराहतन मामूर बिही नही होते ज़िमनन व अर्ज़न मामूर बिही होते है इस वजह से ज़ाहिर में वह बिदअत मालूम होते है हक़ीक़त में बिदअत नही।

नोटः- अब पते की बात सुनिये सफ़हा 20 और 21

"उस ज़माना में मुसलमानों के बाज़ ममालिक में भी यह सवाल उठ खड़ा हुआ था कि अगली नसलों के दीन पर एतेमाद करके पिछली नसलें जिन बातों को मानती चली आती हैं ज़रूरी है कि उन पर तन्क़ीद की जायें। ख़ुसूसन अरब जो मुसलमानों का दीनी मर्कज़ है, उस तहरीक का वज़न उसके बाज़ ख़ास इलाक़ों पर ग़ैर मामुली पड़ रहा था। नज्द के बाशिन्दे और उसी इलाक़ा के एक आलिम मुहम्मद बिन अब्दुल वहाब उस तहरीक के सबसे बड़े अलम बरदार थे। यही पेच दर पेच तासीरी अस्बाब थे जिनका नतीजा यह हुआ कि सय्यद शहीद जिस जमाअत को छोड़ कर अइयाउन् इन्द रब्बिहिम युर्ज़ुक़ून की क़ुदूसी सफ़ में शरीक हुए थे, उस जमाअत के बाज़ अफ़राद ततहीर व तज़्किया के इस अमल में हुदूद से तजावुज़ करने लगे, सड़े हुए गोश्त के साथ ज़िन्दा गोश्त पर भी अमले जर्राही करने लगे बे एहतियातियांइस हद तक तरक़्क़ी करके पहुंच चुकी थी कि मुसलमानों की दीनी ज़िन्दगी की शराईन और शहे रग तक को नश्तर ज़नी की धमकियां देने लगी थीं और बक़ौल सय्येदना इमामुल कबीर फ़ुयूज़े क़ासिमिया सफ़हा 4 उलमा व फ़ुक़रा जिनको ख़ुलासए उम्मत कहिये उस ख़ुलासए उम्मत को अपने अमले जर्राही का नख़्तए मश्क़ उन लोगों ने चाहा कि बना लिया जाये गोया इस्लाम की सीजुक़ (13) साला दीनी व इल्मी तारीख़ के सारे औराक़ ही को चाहते थे कि बे-दर्दी के साथ फाड़ दिया जाये अलग़रज़ बिदअत के साथ ऐसी बेशुमार चीज़ों को वह बिदअत ठहराने लगे जिनके बिदअत होने की कोई वजह न थी।"

1. मौलवी क़ासिम नानौतवी

क़दम यह उठते नहीं है उठाये जाते है

नोटः- अब इस ख़ुसूस में जनाब क़ारी मुहम्मद तय्यब साहब ने गुज़ारिश है कि अगर उन्हें उलमाए अहले सुन्नत की बातें नागवारे ख़ातिर गुज़रती हैं तो कम से कम उन्हें अपने दादा की नसीहत पर अमल करना चाहिये और शिर्क व बिदअत से मुतअल्लिक़ जो नज़रिया मौलवी क़ासिम नानौतवी ने बयान किया है उसी को अपनाने की कोशिश करते।

फ़ुयूज़े क़ासिमिया और सवानेह क़ासिमी की जो इबारात पेश की गई हैं यह ख़ुद उनके घर की बातें हैं गोया यह वह हवालाजात हैं जिससे देवबन्दी मशीनरी के एक एक कल व पुर्ज़े ख़ुद ही ढीले हो जाते हैं।

तक़वीयतुल ईमान पर नक़्दो नज़र का यह एक इजमाली ख़ाका है। इख़्तेतामे गुफ़्तगू पर इस अमर का इज़हार ज़रूरी है कि बाज़ उलमाए देवबन्द ने तक़वीयतुल ईमान को मौलवी इस्माईल देहलवी की तरफ़ मन्सूब करने से इन्कार किया है।

इस सिलसिला में इन्तेहाई तजस्सुस व तलाश के बाद मौलवी अब्दुश्शकूर मिर्ज़ापुरी की किताब 'अत्तहक़ीक़ुल जदीद अला तस्नीफ़िश्शहीद' मुझे दस्तियाब हो सकी जिसका शुरू से मैंने मुताला किया लेकिन मुसन्निफ़ ने इस्बाते मुद्दआ से मुतअल्लिक़ जो तर्ज़े इस्तिदलाल इख़्तियार किया है वह इन्तेहाई ना-पसन्दीदा व नाक़ाबिले क़बूल है। ग़ालिबन यही वजह है कि यह किताब ख़ुद देवबन्द हल्क़ा में भी मक़बूल न हो सकी। इस लिए इस किताब पर किसी भी तब्सेरा को बर्बादीए वक़्त समझता हूं। वैसे मुसन्निफ़ ने ख़ुद इस अमर का एतेराफ़ भी किया है। मेरे शुबहात मसाइल से मुतअल्लिक़ नहीं हैं बल्कि मौलवी इस्माईल की किताब होने में शुबहा है, हवाला मुलाहज़ा फ़रमाइये।

"अत्तहक़ीक़ुल जदीद अला तस्नीफ़ि शहीद" मुसन्निफ़ मौलवी अब्दुश्शकूर मिर्ज़ापुरी मतबअ् मजीदी, कानपुर स. 7

चार किताबों पर शुबहा

"जद्वल की कुतुबे मतबुआ व मशहूरा में से सिराते मुस्तक़ीम, तनवीरुल ऐन इज़ाहुलहक़, ख़ुसुसन तक़वीयतुल ईमान, वह किताबें हैं जिनके मुतअल्लिक़ शुबहात हैं मगर उन शुबहात का तअल्लुक़ मसाइल से नहीं बल्कि तारीख़ से है जिन्हें क़लम बन्द किये अर्सा गुज़रा। ताहम शाया करने की हिम्मत न पड़ती थी।"

नोट :- अव्वलन तो ख़ुद मुसन्निफ़ ने अपनी पूरी काविश को शुबहा से ताबीर किया है और यह तय है कि यक़ीन को यक़ीन ही तोड़ता है न कि शुबहा।

फिर आगे चल कर मुसन्निफ़ का यह कहना कि किताब को कलमबन्द किये अर्सा गुज़रा शाया करने की हिम्मत न पड़ती थी। जिससे ख़ुद उनकी छुपी कमज़ोरियों का पता चलता है इस लिए मेरी अपनी राय में इस किताब के इक़्तेबासात पर नक़्दो नज़र करना महज़ सफ़हात को काला करना है।

मेरे ख़्याल में मौलाना सय्येदुज़्ज़माँ साहब टीचर आबिदा एच.इ. स्कूल मुज़फ़्फ़रपुर ने अपनी किताब "ताज़ीमे शहे मुस्तफ़ा" ब-जवाब "शहीद की सच्ची बातें" मुरत्तेबा मौलवी नूर मुहम्मद टांडवी। में इस उनवान पर काफ़ी रौशनी डाली है जिन अहले ज़ौक़ को इससे ज़्यादा की तलाश हो वह इसकी तरफ़ रुजूअ् करें। 'ताज़ीमे शहे मुस्तफ़ा' अपने अन्दाज़ की सन्जीदा और अनोखी किताब है।

नाज़िरीन ने पिछले सफ़हों में मुहम्मद बिन अब्दुलवहाब नज्दी और मौलवी इस्माईल देहलवी की तहरीक पर मौलवी क़ासिम नानौतवी बानी दारुल उलूम देवबन्द की राय मुलाहज़ा फ़रमाई है कि ख़ुद बानीए दारुल उलूम देवबन्द को इस तहरीक से इत्तेफ़ाक़ न था।

मगर इसको क्या कहिये कि इख़्तिलाफ़े अस्लाफ़ से मुंह मोड़ लिया है अब उन हज़रात को बसा औक़ात अपने बुज़ुर्गों की मुवाफ़क़त इतनी मन्ज़ूर नहीं जिस क़दर कि हमारी मुख़ालफ़त।

चुनान्चे अभी कल ही की बात है कि 'ख़ून के आँसू' जिल्द अव्वल की इशाअ़त पर मौलवी अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी से ख़ुद देवबन्दी मकतबए फ़िक्र के एक फ़र्द ने सवाल किया तब बजाए इसके कि मौलाना उसको कोई माक़ूल जवाब देते मुझ पर दो बार तबर्रा करके दिल की भड़ास निकाल ली।

अजीब इत्तेफ़ाक़ कि सवाल मेरे फाइल में महफ़ूज़ है जो महज़ इस ख़ातिर हदियए नाज़िरीन है कि इस सवाल ही को पढ़ कर यह फ़ैसला कर सकेंगे कि 'ख़ून के आंसू' ने ख़ुद देवबन्दी ज़ेहन व फ़िक्र को किस हद तक मुतज़लज़ल किया है।

इस सिलसिला में इदारा पास्बान को सैकड़ों ख़ुतूत मौसूल हुए और ख़ुद मुझे अपने बेश्तर प्रोग्राम में लोगों ने ऐसे वाक़िआत बताये कि 'ख़ून के आंसू' को पढ़ कर बहुत से देवबन्दियों ने तौबा की है। सवाल मुलाहज़ा फ़रमाइये।

बात वह कहिये कि जिस बात के सौ पहलू हों
कोई पहलू तो रहे बात बदलने के लिए

रोज़नामा 'आज' बम्बई जिल्द नं॰17 शुमारा नं॰ 229ए 20 अगस्त 1961

मौलाना अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी से गुज़ारिश

"हज़रत मौलाना अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी से गुज़ारिश है कि यूं तो हमेशा उलमाए देवबन्द और रज़ा ख़ानियों का अक़ाइद के मसला में इख़्तिलाफ़ रहा और मुनाज़रा तक की नौबत आई मगर हम लोगों ने यही समझा कि उलमाए देवबन्द हक़ बजानिब हैं रज़ा ख़ानी ज़िद्दी हैं और ज़बरदस्ती अपनी बात मनवाना चाहते हैं मगर हाल ही में एक किताब 'ख़ून के आंसू' मौलवी मुश्ताक़ अहमद निज़ामी इलाहाबादी ने शाया की है जिसमें अलजमीअ़त शैख़ुल इस्लाम नम्बर का हवाला देते हुए मौलाना अब्दुर्रज़्ज़ाक़ साहब मलीहाबादी का मज़मून नक़ल किया है। जो मौलाना मदनी के मुतअ़ल्लिक़ है उसमें लिखा है कि-

मौलाना मदनी साहब अल्लाह तआ़ला के रूप में हमारी ख़िदमत किया करता था, हमारी गलियों में चला फिरा करता था और यहां तक लिखा है कि तुम कभी तसव्वुर भी कर सके कि रब्बुल आलमीन अपनी किब्रियाइयों पर पर्दा डाल के तुम्हारे घरों में भी आकर रहेगा।

पहले तो ख़्याल हुआ कि यह बात ग़लत है। ऐसी बात कोई इन्सान अक़्ल वाला नहीं कह सकता मगर अहबाब के इसरार पर अलजमीअ़त शैख़ुल इस्लाम नम्बर बड़ी मुश्किल से हासिल किया गया देखा तो वाक़ई इस क़िस्म की इबारत मौजूद है, फिर उसे पढ़ कर बड़ी शर्मिन्दगी हुई, फिर ख़्याल हुआ कि मौलाना अबुल वफ़ा साहब ईद मीलादुन्नबी में तशरीफ़ ला रहे हैं बज़रीया अख़बार उन से दरियाफ़्त कर लिया जाएगा कि क्या इस मज़मून के ख़िलाफ़ किसी अपने आलिम ने यानी उलमाए देवबन्द में से किसी आलिम ने इस तहरीर के ख़िलाफ़ पर्चा निकाला कि यह मज़मून ग़लत है और ऐसा लिखना कुफ़्र है।

मौलाना अब्दुर्रज़्ज़ाक़ साहब मलीहाबादी को तौबा करना चाहिये और आपने भी इसके ख़िलाफ़ कोई मज़मून लिखा और शाया कराया। आपने उस मज़मून को देखा तो ज़रूर होगा अगर किसी ने भी उलमाए

देवबन्द से उसके ख़िलाफ़ कोई पर्चा शाया किया हो तो बराए करम उन पर्चों का हवाला देते हुए किसी अख़बार में पहली फ़ुरसत में शाया करदें ताकि हम लोग रज़ा ख़ानियों को जवाब दे सकें वरना चलते फिरते हम पर सवाल होता है और जुमले कसे जाते हैं ख़ामोशी से सुन लेते हैं और उसमें हमने यह भी लिखा देखा कि मौलाना हुसैन अहमद साहब मौलाना अबुल वफ़ा साहब का पाँव दबाया करते थे। उम्मीद है कि आज ही कल में इसका जवाब किसी अख़बार में मरहमत फ़रमा कर हम सब को मुतमइन फ़रमायेंगे।

फ़कत आपका मुख़लिस
बुरहानुद्दीन मेरठी

ख़ूब उम्मीदें बंधीं लेकिन हुईं हिरमाँ नसीब
बदलियां उठीं मगर बिजली गिराने के लिए

नोटः- मुझे अफ़सोस है कि अज़ीज़ी अब्दुर्रहमान ने बम्बई से जवाब की कापी मेरे पास भेजी थी मगर वह फ़ाइल में महफ़ूज़ न रह सकी ताहम मुझे उसकी तलाश है अगर वह अख़बार मिल गया तो बिला कम व कास्त वह जवाब ख़ून के आंसू जिल्द सोम में शाया कर दिया जाएगा। ग़ालिबन मौलाना शाहजहानपुरी के जवाब का आख़िरी टुकड़ा यह था-

"मुश्ताक़ निज़ामी और उनके पुरखों का यही काम है"

अब इस जवाब की रौशनी में सवाल के चन्द टुकड़े मुलाहज़ा फ़रमायें।

(1) पहले तो यह ख़्याल हुआ कि यह बात ग़लत है ऐसी बात कोई इन्सान अक़्ल वाला नहीं कह सकता।

(2) उसे पढ़ कर शर्मिन्दगी हुई।

(3) क्या किसी देवबन्दी आलिम ने इस तहरीर के ख़िलाफ़ पर्चा निकाला कि यह मज़मून ग़लत है।

(4) और ऐसा लिखना कुफ़्र है।

अब नाज़िरीन इन्साफ़ फ़रमायें कि मैंने सिर्फ़ अब्दुर्रज़्ज़ाक़ मलीहाबादी का एक मज़मून बतौरे हवाला पेश किया था, जिसको देख कर ख़ुद देवबन्दी जमाअत के एक फ़र्द के यह तअस्सुरात हैं कि यह बात ग़लत है ऐसा कोई दीवाना पागल ही

लिख सकता है कोई अक़्ल वाला इन्सान नहीं लिख सकता। ऐसे मज़मून को पढ़ कर हमें शर्मिन्दगी होती है। यह मज़मून ग़लत है और ऐसा लिखना कुफ़्र है।

यह बात मुश्ताक़ निज़ामी और उसके पुरखों ने नहीं बल्कि अकाबिरे देवबन्द की गन्दी व कुफ़्री इबारात देख कर ख़ुद उनकी जमाअत का एक फ़र्द यह हुक्म लगाता है। यह सब कुछ कहने के साथ साइल कितनी सादगी से यह भी कह गुज़रता है कि-

"चलते फिरते हम पर सवाल होता है और जुमले कसे जाते हैं, ख़ामोशी से सुन लेते हैं।"

कोई सोचे तो सही कि साइल के इन जुमलों से कितनी बेकसी व बेचारगी टपकती है मगर मौलाना शाहजहानपुरी को इसका कुछ भी एहसास न हुआ, बस यह कह कर दामन छुड़ा लिया कि मुश्ताक़ निज़ामी और उनके पुरखों का यही काम है।

मौलाना शाहजहानपुरी के तज़्किरे से एक बात याद आई 'ख़ून के आंसू' जिल्द अव्वल में बहवाला तजल्ली देवबन्द एक मज़मून की इशाअत हुई है कि यह लोग बहराइच शरीफ़ उर्स में शिरकत करते हैं और नज़राना में रुपये के इलावा क़ब्र शरीफ़ की चादरें भी अपने साथ ले जाते हैं। चुनान्चे तजल्ली फ़रवरी 62 ई॰ के शुमारा में मौलवी अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी और मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब शाहजहानपुरी से मुतअल्लिक़ एक और मज़मून शाया हुआ है जो दर्ज ज़ैल है-

ख़्याले ख़ातिरे अहबाब चाहिये हर दम
अनीस ठेस न लग जाये आबगीनों को

तजल्ली फ़रवरी 62 ई॰ स. 17 सुर्ख़ी 'पेट की बातें' सवाल नम्बर 4 अज़ अब्दुल वहीद-

"तजल्ली के मई 61 ई॰ के शुमारा में हमने मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब और मौलवी अबुल वफ़ा साहब शाहजहानपुरी की क़ब्र परस्ती और क़ौल व अमल के तज़ाद के सिलसिला में कुछ इस्तिफ़सार किया था और यह तहरीर किया था कि इन हज़रात के रवैया से कुछ लोग जो राहे रास्त पर आ गये थे वह आलमे तज़बज़ुब में पड़ गये हैं। इस सिलसिला में आपके मुफ़स्सल जवाब ने बिहम्दिल्लाह उन लोगों पर बहुत अच्छा असर किया। ख़्याल था कि शायद मज़कूरा मौलवी साहबान

की आंखें भी खुल जायेंगी और सौ सवा सौ रुपये की ख़ातिर अब ज़मीर फ़रोशी न करेंगे और दरगाह में उर्स के मौक़ा पर तशरीफ़ न लायेंगे मगर हमारी हैरत की इन्तेहा न रही जब हमने देखा कि यह दोनों हज़रात फिर तशरीफ़ लायें और बड़ी ढिटाई से फिर वही सब बातें की जो साले गुज़श्ता में की थीं, उनके रवैया को देख कर एक बरेलवी मौलवी साहब ने कहा कि लोग मज़ारों पर मुर्ग़ा मेंढा वग़ैरह चढ़ाते हैं। हमने भैंसा चढ़ा दिया। यह इशारा मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब की तरफ़ था। अफ़सोस है शहर के ख़ुश अक़ीदा हज़रात के जज़्बात हर दो मौलवी साहबान की तरफ़ से बहुत बरगश्ता हो गये। चुनान्चे एक इश्तेहार उर्स के मौक़ा पर शाया हुआ था। जिसमें मौलवी साहब मज़कूर से कुछ सवालात किये गये थे। यह इश्तेहार ठीक उस वक़्त तक़सीम हुए जब मौलवी मुहम्मद क़ासिम साहब तक़रीर करने बैठे इश्तेहार ख़ुद उनके हाथ में दिया गया, मगर मौलवी साहब निहायत सफ़ाई के साथ उसको पी गये, एक भी सवाल का जवाब देने की ज़हमत गवारा नहीं फ़रमाई और निहायत इत्मीनान के साथ अपना नज़राना और बरकत्ता लेकर चले गये।" इश्तेहार मज़कूरा वाला बराए तबसेरा इरसाले ख़िदमत है।

मुंह खुले ख़ुम का न वाइज़ क़ुल क़ुले मीना के बाद
मैकदे में तूल इतना तू न दे तक़रीर को

"आपके मुर्सला पमफ़्लेट को नक़ल करके उस पर तबसेरा करना सिवाए तूले ला हासिल के और कोई फ़ाइदा नहीं रखता। क़द तबईनर्रुशुदु मिनल ग़ई थी अच्छा क्या है और बुरा क्या। यह वाज़ेह हो चुका लेकिन नफ़्से अम्मारा के पाए सरकश में बेड़ियां डालना दलाइल के बस से बाहर है। फ़िलहक़ीक़त आपके ख़त में कोई बात जवाब तलब ही नहीं लेकिन उसे सिर्फ़ इबरत के लिए नक़ल कर दिया है, हां यह सुन लीजिये कि क़ुबूरी शरीअत के नापाक हंगामों की हुरमत का देवबन्दी मसलक की तरफ़ और उनके जवाज़ व इस्तिहसान का बरेली की तरफ़ मन्सूब हो जाना महज़ एक इस्तेलाही बात है वरना हक़ीक़त यह है कि यह तबीलुज़्ज़ैल मसला किसी गरोही मसलक से तअल्लुक़ नहीं रखता। बल्कि यह तो दीन के असासी उमूर में शामिल है। क़ब्रों पर मेले लगाना

हराम है। मुर्दा बुज़ुर्गों से मदद चाहना शिर्क है। गाना बजाना ज़िन्दिक़ा है। ग़ैरुल्लाह की नज़र व नियाज़ बिदअत व मअसियत है। यह सब देवबन्दियों का मसलक नहीं बल्कि क़ुरआन का फ़ैसला और हदीस का फ़रमान है। यह सब अल्लाह और रसूल का वाज़ेह फ़रमूदा है। देवबन्दियों ने इसके आगे सरे तस्लीम ख़म कर दिया। इस लिए यह उनका मसलक क़रार दिया गया और बरेलवियों ने इसे नफ़्सानी व शैतानी रुजहानात की रौ में बहा दिया इस लिए उनका मसलक जवाज़ व इस्तिहसान ठहराया गया लेकिन हक़ीक़त यह है कि मसलक वसलक का इन मसाइल में कोई सवाल ही नहीं यह तो सरीह हक़ व बातिल का का मुक़ाबला है। एक तरफ़ तौहीद है दूसरी तरफ़ शिर्क व बिदअत, एक तरफ़ अब्दियत है और दूसरी तरफ़ ज़िन्दिक़ा, एक तरफ़ क़ुरआन व सुन्नत है और दूसरी तरफ़ ज़ेहनी मुबालग़े, ख़्याली परवाज़ें, ज़ोअ्फ़े एतेक़ाद और ग़ुलू दर ग़ुलू, एक तरफ़ मन ज़ल्लज़ी यशफ़ओ इन्दहू इल्ला बि इज़्निह का यक़ीने महकम है और दूसरी तरफ़ ईसा इब्ने मरयम इब्नुल्लाह वाला फ़ासिद ज़ेहन मौलवी मुहम्मद क़ासिम और मौलवी अबुल वफ़ा साहबान अगर ख़ुद को देवबन्दीयुल मसलक कहते हैं और फिर भी क़ुबूरी शरीअत के हंगामों में शरीक होकर कुछ पैसे कमा लेते हैं तो यह कोई अजब बात नहीं। जमीअतुल उलमा के अअ्यान व अकाबिर तस्वीर कशी को हराम बतलाते हैं लेकिन उनका ऑरगन रोज़नामा अलजमीअत धड़ल्ले से तस्वीरें शाया करता है न करे तो उसका कहना है कि अख़्बार न चले इसी तरह कितने ही मुसलमान रिश्वत लेते हैं, शराब पीते हैं, जुआ खेलते हैं, ज़ेना करते हैं अगर मज़कूरा वाला दोनों मौलवी साहबान ही इस गिरानी के दौर में माली मनफ़अत की ख़ातिर थोड़ा सा तक़य्या कर गुज़रते हैं तो इसमें तअज्जुब और तशवीश की क्या बात है। जहां तक इस तहर के सवालात का तअल्लुक़ है कि आख़िरत में ऐसे निफ़ाक़ और तक़य्या का क्या अन्जाम होगा, दुनिया में लोग क्या कहेंगे और बिरादराने मिल्लत पर इन हरकतों का क्या असर पड़ेगा तो ख़ूब समझ लीजिये कि इन सवालात की गिरिफ़्त अर्सा हुआ उलमा के दिल व दिमाग़ से ढील हो चुकी (इल्ला माशाअल्लाह) अगर

यह गिरिफ़्त ढील न होती तो उम्मते मुस्लिमा आज इस अन्जाम को पहुंची हुई न होती अगर कोई आला ऐसा होता जो बता सकता कि फ़लां शख़्स के क़ल्ब में ख़ुदा और हिसाबे आख़िरत का ख़ौफ़ किस मिक़दार में है तो यक़ीन कीजिये अजीब अजीब इन्केशाफ़ात सामने आते कितने ही ऐसे लोगों के बारे में जिन्हें हम दुनियादार नाक़ाबिले इल्तेफ़ात समझते हैं। यह आला बताता कि उनके दिलों में ख़ौफ़े आख़िरत की वाफ़ी मिक़दार मौजूद है और कितने ही ऐसे बुज़ुर्गों के बारे में जिनके मुतअ़ल्लिक़ आम ख़्याल यह है कि उनके निचोड़े हुए दामन से फ़रिश्ते वुज़ू करते हैं। यह आला इन्केशाफ़ करता कि वहां ख़ौफ़े आख़िरत के नाम की कोई चीज़ सिरे से मौजूद नहीं है बल्कि उनकी जगह ग़ुरूरे ज़ाहिद है, किब्रे अ़ब्दियत है, या फिर मुहरे इत्तेफ़ाक़ है। हासिले जवाब यह है कि खाने कमाने के लिए उन लोगों को जो जी भर के दुनिया कमाना चाहते हैं। आमिर उस्मानी दलील को दलील से तोड़ सकता है, लेकिन किसी देवबन्दी मौलवी को उर्सों में जाने और नज़र व नियाज़ वसूल करने से नहीं रोक सकता यह तो उस दुर्रए फ़ारूक़ी का काम है जो न जाने अब कब आएगा।"

> कल मियां हज्जाम सबका मूंडते फिरते थे सर
> आज इस कूचा में उनकी भी हजामत हो गई

नोटः- चाहिये तो यह था कि मुन्दर्जा बाला मज़मून का इक़्तेबास हाज़िर कर देता लेकिन बिलक़स्द व बिलइरादा मैंने न पूरे मज़मून को मिन व अ़न (जूं का तूं) शामिल कर दिया ताकि बयक वक़्त तस्वीर के दोनों रुख़ सामने आ जायें। मज़मूने बाला से अगर एक तरफ़ मौलवी अबुल वफ़ा[1] और मौलवी मुहम्मद क़ासिम[2] की दो रुख़ी पालीसी से निक़ाब होती है तो उसी के साथ उर्सों को मिटाने और हुरमते औलिया को पामाल करने की मन्सूबा बन्दी भी सामने आ जाती है।

[illegible] अब भी हमारी जमाअ़त के बाज़ वह अफ़राद जो रद्दे वहाबिया से गुरेज़ करते हैं या नरमी तक़रीर व तहरीर से यों ब-जवीं होते हैं वह ठन्डे दिल से ग़ौर करें कि वह अपनी रविश में किस हद तक हक़ बजानिब हैं। हमारे मुख़ालिफ़ कैम्प

[1] [illegible] (2) [illegible]

से हर वक़्त ऐटमी धमाका की आवाज़ आ रही है और आप हमें तरकश तक संभालने की इजाज़त नहीं देते।

वाज़ेह रहे कि जिस तरह एक मुल्क में सिपाहियों और फ़ौजी दस्तों का जाल बिछा रहता है जिसका काम यह है कि मुल्क अन्दरूनी और बाहरी हमलों की रोक थाम करे। ताकि मुल्क के निज़ामे अमल में कोई रख़्ना वाक़ेअ़ न हो सके। ऐसे ही एक जमाअ़त को भी ऐसे अफ़राद की ज़रूरत पड़ती है जो जमाअ़त के अन्दरूनी या बाहरी फ़ितनों की मुदाफ़अ़त के लिए हर वक़्त सीना सिपर रहें वरना ऐसी जमाअ़त हवाओं के दोश पर होती है न तो वह अन्दरूनी फ़ितनों का रोक कर सकती है और न ही बाहरी हमले की ताब ला सकती है, अगर मुल्क का ताजिर तबक़ा फ़ौजियों के दोश बदोश नहीं खड़ा होता तो कम से कम उनकी उम्दा कारगुज़ारियों की तहसीन ज़रूर करता है वरना वह मुल्क का बाग़ी क़रार पाता है।

ऐसे ही जमाअ़त का वह तबक़ा जो मुख़ालिफ़ गरोह से टक्कर नहीं लेता तो कम से कम उसे ज़बान व क़लम की जंग करने वालों के ख़िलाफ़ ज़हर भी नहीं उगलना चाहिये वरना मेरे ख़्याल में ऐसे लोग उन खुले हुए दुश्मनों से कहीं ज़्यादा ख़तरनाक और ज़हरे हलाहल हैं। न जाने यह मारे आस्तीन कब और कहां डस लेगा। ऐसे लोगों के लिए इसके सिवा और क्या कहा जाये-

> रंगत है, नज़ाकत है, लताफ़त है मगर हैफ़!
> एक बूए वफ़ा यह गुले रअ़्ना नहीं रखते

बज़ाहिर यह चन्द सतरें किताब के मौज़ूअ़ से बाहर मालूम होती हैं लेकिन ख़ून के आंसू का मक़सद जहां यह है कि देवबन्दी अक़ीदे को पेश करके दुश्मन को असल वज़अ़ क़तअ़ में सामने खड़ा कर दिया जाये तो उन दोस्त नुमा दुश्मनों के चेहरे से अगर निक़ाब उठा दी गई तो क्या मुज़ाइक़ा!

> सुना करते हैं पहरों दिल लगा कर मेरे शेवन को
> सुख़न सन्जी सिखाता हूं नवा सन्जाने गुलशन को

बात यह चल रही थी कि वसा औक़ात उलमाए देवबन्द हमारी मुख़ालफ़त के ग़ुलू में अपने अकाबिर से भी मुंह मोड़ लेते हैं जिसकी ज़िन्दा मिसाल हस्बे ज़ैल हवाले में मुलाहज़ा फ़रमाइये-

मल फ़ूज़ाते अशर फ़ुल उलूम बाबत माहे रमज़ान 1355 हि० स 68

"फ़रमाया हाजी मुहम्मद अली अम्बेठवी कलियर शरीफ़ से वापस आये तो कहा कि हज़रत हाजी ने मुझ को समाअ़ की इजाज़त दी है। हज़रत मौलाना गंगोही देवबन्द तशरीफ़ लाये हुए थे और बहुत बड़ा मजमा था, मौलाना से इसका ज़िक्र किया गया, फ़रमाया मुहम्मद अली ग़लत कहता है और अगर यह सही कहता है तो हाजी साहब (हाजी इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की) ग़लत कहते हैं।

हज़रत हाजी साहब मुफ़्ती नहीं हैं। यह मसाइल हज़रत हाजी साहब को हम से पूछने चाहियें।"

शेअ़रः-

कुछ तर्ज़े सितम है भी कुछ अन्दाज़े वफ़ा भी
खुलता नहीं हाल उनकी तबीअ़त का ज़रा भी

नोटः- यह है उलमाए देवबन्द के क़ुतबे आलम, मुरब्बीए ख़लाइक़ मौलाना रशीद अहमद गंगोही जिन्होंने कव्वा ख़ोर शरीअ़त की बुनियाद डाली है कि पीर को मुरीद से मसला दरियाफ़्त करना चाहिये।

मेरे उस्तादे मुहतरम मुर्शिदे बरहक़ मुजाहिदे मिल्लत मौलाना अलहाज मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िब्ला बसा औक़ात फ़रमाते हैं कि जो शागिर्द उस्ताद से चूँ व चेरा न करे और जो मुरीद अपने पीर से चूँ व चेरा करे दोनों नाक़िस हैं।

उस्तादी व शागिर्दी में क़ील व क़ाल की गुन्जाइश है लेकिन पीरी मुरीदी में तो पीर के इशारे पर चलना पड़ता है, बुलबुले शीराज़ हज़रत हाफ़िज़ अलैहिर्रहमा ने कितने पते की बात कही है-

शेअ़रः-

बः मय सज्जादा रंगीं कुन गरत पीरे मुग़ाँ गोयद
कि सालिक बेख़बर न बुवद ज़े रस्मो राहे मन्ज़िलहा

अब जबकि देवबन्दियों के रूहानी लकड़ दादा हज़रत हाजी इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की का तज़्किरा आ ही गया है तो उनकी मशहूर व मअ़रूफ़ तालीफ़ 'फ़ैसला हफ़्त मसला' से चन्द ऐसे हवाले हाज़िर कर दिये जायें जिससे यह सही अन्दाज़ा हो जाये कि पीर कुछ कहता है और मुरीद कुछ।

मुझ से भी है इक़रार अ़दू से भी है वादा
क्या जाने कहां जायेंगे नीयत किधर की है

फ़ैसला हफ़्त मसला मुअल्लिफ़ हाजी इमदादुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की सफ़हा 10

"मलाइका का दुरूद शरीफ़ हुज़ूरे अक़दस में पहुंचाना अहादीस से साबित है। इस एतेक़ाद से कोई शख़्स अस्सलातु वस्सलामु अ़लैक या रसूलल्लाह कहे कुछ मज़ाइक़ा नहीं।"

नोटः- पीर की निगाह में अस्सलातु वस्सलामु अ़लैक या रसूलल्लाह दुरुस्त है। मगर मुरीदों की शरीअ़त में शिर्क व बिदअ़त।

फ़ैसला हफ़्त मसला स. 8

"लफ़्ज़े उर्स इस हदीस से है (तर्जुमा) यानी बन्दए सालेह से कहा जाता है कि अ़रूस की तरह आराम कर क्योंकि मौत मक़बूलाने इलाही के हक़ में विसाले महबूबे हक़ीक़ी है इससे बढ़ कर कौन अ़रूस होगी। चूंकि ईसाले सवाब बरूहे अमवात मुस्तहसन है ख़ुसूसन जिन बुज़ुर्गों से फ़ुयूज़ व बरकात हासिल होते हैं उनका ज़्यादा हक़ है और हर अपने पीर भाई से मिलना मोजिबे इज़दियादे मुहब्बत व तज़ायुदे बरकात है। नीज़ तालिबों का यह फ़ाइदा है कि पीर की तलाश में मुशक़्क़त नहीं होती, बहुत से मशाइख़ रौनक़ अफ़रोज़ होते हैं इसमें जिस से अक़ीदत हो, उसकी ग़ुलामी इख़्तियार करे। इस लिए मक़सूद ईजादे रस्मे उर्स से यह था कि सब सिलसिला के लोग एक तारीख़ में जमा हो जायें बाहम मुलाक़ात भी हो जाये और साहबे क़ब्र की रूह को क़ुरआन व तआम का सवाब भी पहुंचाया जाये, यह मसलेहत है तअ़य्युने यौम में।"

उसी सफ़हा पर आगे चल कर फ़रमाते हैं-

"पस हक़ यह है कि ज़ियारते मक़ाबिर इन्फ़ेरादन व इज्तेमाअ़न दोनों तरह जाइज़ और ईसाले सवाब क़िराअत व तआ़म भी जाइज़ और तअ़य्युने तारीख़ ब-मसलिहत भी जाइज़ सब मिल कर भी जाइज़ रहा।"

नोटः- पीर व मुर्शिद की नज़र में उर्स, तअ़य्युने यौम, क़ुरआन व तआ़म का ईसाले सवाब, यह सारी बातें जाइज़ व दुरुस्त हैं मगर मुरीदीन की कव्वा ख़ोर शरीअ़त में यह सारी बातें नाजाइज़, हराम, शिर्क व बिदअ़त हैं, जहां जहां माली मन्फ़अ़त या सियासी तक़ाज़े हों वहां सब जाइज़ है।

शेअ़रः-

सियासत में कभी दाख़िल रियासत में कभी शामिल

हमारा मौलवी भी फ़िल मसल थाली का बैगन है

फ़ैसला हफ्त मसला स. 6

"नफ़्से ईसाले सवाब अरवाहे अमवात में किसी को कलाम नहीं।"

फ़ैसला हफ्त मसला स. 7

"पस यह हैयत मुरव्वजा ईसाले सवाब किसी क़ौम के साथ मख़्सूस नहीं और ग्यारहवीं ग़ौसे पाक क़ुदेस सिर्रुहू की, दसवां, बीसवां, चेहलम, शशमाही, सालियाना वग़ैरह और तोशा हज़रत शैख़ अहमद अब्दुल हक़ रुदौलवी रहमतुल्लाह अलैह और सेह मनी हज़रत बु अली शाह क़लन्दर रहमतुल्लाह अलैह व हलवाए शबे बरात और दूसरे तरीक़े ईसाले सवाब के क़ाइदे पर मबनी हैं और मशरब फ़क़ीर का इस मसला में यह है कि फ़क़ीर पाबन्द इस हैयत का नहीं है मगर करने वालों पर इन्कार नहीं करता।"

नोटः- पीर व मुर्शिद की ख़ानकाह में सोयम, दसवां, बीसवां, चेहलम, सालियाना, शबे बरात, ग़ौसे पाक की ग्यारहवीं और हज़रत मख़्दूम शैख़ अब्दुल हक़ रुदौलवी का तोशा, हज़रत बु अली शाह क़लन्दर की सेह मनी वग़ैरह सभी दुरुस्त हैं।

लेकिन मुताए़ आलम, क़ुतुबे आलम, मुरब्बीए ख़लाइक़ जनाब गंगोही और उनके मुत्तबेईन की क़व्वा ख़ोर शरीअ़त में यह सारी बातें शिर्क व बिदअ़त, नाजाइज़ व हराम हैं।

अलबत्ता अगर चुरा छुपा कर फ़ातिहा की यह तमाम चीज़ें खाने को मिल जायें तो तय्यब व ताहिर हैं।

शेअ़रः-

रियाज़ तौबा न टूटे न मैकदा छुटे

ज़बाँ का पास रहे वज़अ़ का निबाह रहे

फ़ैसला हफ्त मसला स. 3

"पहला मसला मौलूद शरीफ़ का इसमें तो किसी को कलाम ही नहीं कि नफ़्से ज़िक्रे विलादत शरीफ़ हज़रत फ़ख्रे आदम सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मूजिबे ख़ैरात व बरकाते दुनियवी व उख़रवी है।"

फ़ैसला हफ्त मसला स. 5

"और मशरब फ़क़ीर का यह है कि महफ़िले मौलूद में शरीक होता हूं बल्कि ज़रीयए बरकात समझ कर हर साल मुन्अ़क़िद करता हूं और क़ियाम में लुत्फ़ व लज़्ज़त पाता हूं।"

नोटः- यह जाने रहमत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का मुंह बोलता मोअ़जेज़ा नहीं तो और क्या है ? पीर व मुर्शिद न सिर्फ़ मीलाद व क़ियाम के क़ाइल बल्कि ज़रीयए बरकात समझ कर हर साल महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुन्अ़क़िद करते हैं और खड़े होकर सलाम पढ़ते हैं लुत्फ़ व लज़्ज़त महसूस करते हैं जैसा कि आम अहलुल्लाह का दस्तूर रहा और है, वैसे ही हाजी इमदादुल्लाह मुहाजिर मक्की भी इस पर आमिल व पाबन्द रहे। मगर यह सारे मरासिम देवबन्द की चहार दीवारी तक पहुंचते पहुंचते इसराफ़, फ़ुज़ूल ख़र्च, नुमाइश, रस्म बन कर शिर्क व बिदअ़त की नज़र हो गये। हालांकि यह वही देवबन्द है जो अपने एक मेहमान के ना ता में दस हज़ार की रक़म ख़र्च करता है। मुलाहज़ा कीजिये तजल्ली देवबन्द-

"पुम्बा कुजा कुजा निहम तन हमा दाग़ दाग़ शुद" का मज़मून है-

आज तक़द्दुस व इत्तेबाए़ शरीअ़त के नाम पर क़ौम को लूटा जा रहा है। खोपड़ी घुटी हुई, मूंछें साफ़, पेशानी पर काला दाग़, हाथ में तस्बीह, पाएजामा के बजाए लम्बा नैकर और अगर रज़ाकारों की सफ़ में शामिल हो गये तो सर पर चने की गठरी और बग़ल में सत्तू, ज़बान पर कलिमा मगर नरख़रे से नीचे नहीं उतरता सूरत से शैख़ नज्दी के सौतेले भाई मालूम हों और सीरत में उसके भी चचा। इन लोगों का हाल बिल्कुल उन दो मस्ख़रों की तरह है कि एक मस्ख़रे ने अपने साथी से कहा "अजी तुम हमें और हमारे ख़ानदान वालों को नहीं पहचानते, हमारे बाप दादा ने वह वह कर दिखाया कि जिस को तुम भी सुन कर हैरान हो जाओगे।

उसके साथी ने कहा "अरे भई कुछ सुनाओ तो सही।"

मस्ख़रा बोला "हम अपने ख़ानदान वालों से सुनते चले आये हैं कि हमारे लकड़ दादा ने एक मकान बनवाया था, जिसका सेहन इतना बड़ा था कि एक तेज़

रफ़्तार घोड़ा सेहन के पूरबी हिस्से से सेहन के पश्चिमी हिस्से की तरफ़ चलता और सारी उम्र चलते चलते मर जाता मगर सेहन के इस सिरे से उस सिरे तक पहुंच न पाता।"

यह सुनते ही उसके साथी ने कहा "तुम झूट और बिल्कुल झूट कहते हो। फिर भी यह कोई ज़्यादा तअज्जुब की बात नहीं, अलबत्ता हमने अपने ख़ानदान की एक रिवायत सुनी है कि हमारे लकड़ दादा ने 'बांस' के सारे जंगलात को कटवा कर एक बांस को दूसरे में, दूसरे को तीसरे में तीसरे को चौथे में ग़रज़ कि ऐसे ही सारे बांस को जुड़वाते चले गये बिलआख़िर वह इतना लम्बा हो गया कि जब कभी ज़रूरत पड़ता, बारिश न होती तो हमारे लकड़ दादा किसी बदली को उसी बांस से खोद देते और झमाझम बारिश हो जाती तो उसके साथी ने कहा तुम तो बिल्कुल ही झूट कहते हो, कहीं इतना बड़ा बांस तैयार किया जा सकता है। आख़िरश उसको रखते कहां थे, तो झट उसके साथी ने कहा उसी मकान के सेहन में जिसको तुम्हारे लकड़ दादा ने बनवाया था। तो फ़ौरन उसने कहा तब तो बिल्कुल सही है।

शेअ्र:-

करेगा हमसरी क्या इश्क़ में कोई भला मेरी
कि चिलमें रात दिन भरता था मजनूं का चचा मेरी

देखा आपने यह उलझा हुआ मसला किस क़दर आसानी से हल हो गया। जब एक ने इतने बड़े सेहन को मान लिया तो दूसरे ने बारिश बरसाने वाला बांस भी तस्लीम कर लिया। यह बहस वाक़िआ की नहीं थी बल्कि शख़्स व अफ़राद की थी। बिल्कुल यही हाल उलमाए देवबन्द का है। अगर किसी करामत की निस्बत मौलाना थानवी के वालिद और मौलाना टांडवी के दादा की तरफ़ कर दीजिये तो अपनी जगह छोड़ कर आप से क़रीब आ जायेंगे और आँखों में आँखें डाल कर बड़े मासूम व भोले बन कर इरशाद फ़रमायेंगे। अरे साहब इन बुज़ुर्गों का क्या कहना वह अल्लाह वाले थे, उनका मर्तबा तो इससे भी ज़्यादा बुलन्द था जितना कि हम और आप समझ रहे हैं। मौलाना गंगोही क़ुतुबे आलम व मुरब्बीए ख़लाइक़ थे, मौलाना नानोतवी इन्सानी रूप में फ़रिश्ता थे, फ़रिश्ता और क्या कहना हमारे हकीमुल उम्मत का वह तो अपने दौर के पैग़म्बर व रसूल थे और कुछ न पूछिये मौलाना टांडवी के मुतअ़ल्लिक़ अल्लाह तआ़ला अपनी किब्रियाई पर पर्दा डाल कर उतर आया था। हालांकि हाल यह है-

शेअ्र:-

रात शैतों को ख़्वाब में देखा
सारी सूरत जनाब की सी थी

दोस्तो! यह दुनिया का उसूल है कि इन्सान अपने बुज़ुर्गों की बड़ाई बयान करने में लुत्फ़ व लज़्ज़त महसूस करता है। यह एक फ़ितरी तक़ाज़ा है जिस पर न कोई पहरा बिठाया जा सकता है और न ही कोई बन्द बांधा जा सकता है। सोचो तो सही यह अल्लाह का कैसा फ़ज़्ले अ़ज़ीम है कि उलमाए देवबन्द अपने ख़ाना साज़ पीरों की तारीफ़ में ज़बान व क़लम घिस रहे हैं और उलमाए अहले सुन्नत उसकी बारगाह में ख़िराजे अक़ीदत पेश करते हैं जो ख़ुलासए काइनात और महबूबे ख़ुदा हैं। अब इसी ज़िम्न में अपने बुज़ुर्गों की बारगाह में उलमाए देवबन्द की अक़ीदत केशी के चन्द ऐसे हवालाजात मुलाहज़ा फ़रमाइये जिस से आपको उनकी ज़ेहनियत और बद अक़ीदगी का सही अन्दाज़ा हो सके।

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल मतबूआ नामी प्रेस लखनऊ स. 26

"एक ख़्वाब का ज़िक्र करते हुए हज़रत वाला ने ख़्वाब देखा कि हज़रत वाला को एक बुज़ुर्ग ने और एक दुनियावी हाकिम ने दो मुतफ़र्रिक़ तहरीरें लिख कर दीं और दोनों में यह लिखा था कि हमने तुम को इज़्ज़त दी। एक पर्चा पर तो चारों तरफ़ हुज़ूर सरवरे आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मुहर लगी हुई थी और वह साफ़ पढ़ी जाती थी और दूसरी मुहर के हुरूफ़ न पढ़े जाते थे। हज़रत मौलाना मुहम्मद याक़ूब साहब रहमतुल्लाह अ़लैह ने उसकी यह ताबीर देखी कि तुम्हें इन्शाअल्लाह तआ़ला दीन और दुनिया दोनों की इज़्ज़त मिलेगी।"

नोट:- मैं ख़ून के आंसू जिल्द अव्वल में इसकी तरफ़ इशारा कर चुका हूं कि यह भी एक अजीब हादसा है कि उलमाए देवबन्द अपने अकाबिर के जिस क़दर भी बुज़ुर्गी व करामात का तज़्किरा करते हैं वह सब बराहे ख़्वाब ही नुमूदार होती है।

अशरफ़ुस्सवानेह की दो एक और रिवायत मुलाहज़ा फ़रमाइये जिस से उनकी ग़ुलुए मुहब्बत का अन्दाज़ा हो सकेगा।

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल स. 124,125

"हज़रत हाफ़िज़ अहमद हुसैन शाहजहानपुरी जो बावजूद शाहजहानपुर

के बड़े रईस होने के साहबे सिलसिला बुज़ुर्ग थे हज़रत वाला से बहुत मुहब्बत फ़रमाते थे। एक बार किसी के लिए बद दुआ की तो वह शख़्स दफ़अ़तन मर गया। बजाए इसके कि वह अपनी करामात से ख़ुश होते डरे और बज़रीया तहरीर हज़रत वाला से मसला पूछा कि मुझे क़त्ल का गुनाह तो नहीं हुआ। हज़रत वाला ने मुफ़स्सल जवाब दे दिया। जिससे उनकी पूरी तशफ़्फ़ी हो गई। ख़ुलासा जवाब का यह था कि अगर आप में क़ुव्वते तसर्रुफ़ है और बद दुआ करने के वक़्त अपने उस क़ुव्वत से काम लिया था कि यह शख़्स मर जाये तब तो क़त्ल का गुनाह हुआ और चूंकि नज़रे शुबहा आ़मिद है इस लिए दीयत और कफ़्फ़ारा वाजिब होगा।"

जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

नोटः- पहले ख़्वाब का मक़सद यह था कि अपने शैख़ के लिए दीन व दुनिया की इज़्ज़त साबित की जाये और दुसरी रिवायत से यह साबित करना है कि जब हकीमुल उम्मत के ख़ुदान ऐसे साहबे तसर्रुफ़ थे कि अगर किसी को बद दुआ दें तो वह दफ़अ़तन मर जाये। फिर हकीमुल उम्मत की क़ुव्वते तसर्रुफ़ का क्या आलम होगा। अब अशरफ़ुस्सवानेह की तीसरी रिवायत मुलाहज़ा फ़रमा कर उलमाए देवबन्द की चौमुखी पालीसी का जाइज़ा लीजिये।

शेअ़रः-

हुदूदे कूचए महबूब हैं वहीं से शुरू
जहां से पड़ने लगे पाँव डगमगाए हुए

अशरफ़ुस्सवानेह हिस्सा अव्वल स. 12

"थानवी साहब के परदादा के हालात का तज़्किरा करते हुए!

परदादा साहब तो किराना और शामली के दर्मियान जहां पुख़्ता सड़क है शहीद हुए और वहीं पर समाउद्दीन साहब के मज़ार के पास दफ़्न किये गये और शुरू में बहुत अ़र्से तक उनका उर्स भी होता रहा।"

चन्द सतर बाद-

शहादत के बाद एक अ़जीब वाक़िआ हुआ। शब के वक़्त अपने घर मिस्ल ज़िन्दा के तशरीफ़ लाये और अपने घर वालों को मिठाई ला कर दी और फ़रमाया अगर तुम किसी से ज़ाहिर न करोगी तो इसी तरह

रोज़ाना आया करेंगे। लेकिन उनके घर वालों को यह अन्देशा हुआ कि घर वाले जब बच्चों को मिठाई खाते देखेंगे तो मालूम नहीं क्या शुबहा करें इस लिए ज़ाहिर कर दिया और फिर आप तशरीफ़ नहीं लाये। यह वाक़िआ ख़ानदान में मशहूर है।

शेअ़रः-

जादु है या तिलिस्म तुम्हारी ज़बान में
तुम झुट कह रहे हो मुझे एतेबार है

नोटः- इसको तो ख़ुदा ही बेहतर जानता है कि मिठाई कौन लाता था और किस साज़ बाज़ के तहत लाता था जिसको करामत व बुज़ुर्गी का रंग दिया जा रहा है। यह भी बदनामी से बचाने का एक नया रास्ता है। लेकिन अब उन मिठाई खाने वालों से कोई दरियाफ़्त करे कि तुम्हारे घर का कोई फ़र्द शहीद हो जाये तो वह ज़िन्दा हो जाता है, चलता फिरता है बल्कि वह बच्चों के लिए मिठाई भी लाता है मगर क्या नक़्स रह गया था सय्यदे सालार मसऊद ग़ाज़ी रहमतुल्लाह अलैह की शहादत में कि आज उनकी क़ब्र को मिट्टी का ढेर कहा जाता है और आस्तानए बहराइच पर जाने वालों को मुशरिक व बिदअ़ती ?

मेरे दिल को तोड़ो पर इतना समझ लो
कि बरबाद होगा यह काशाना किस का

अगर सय्यदे सालार मसऊद ग़ाज़ी अ़लैहिर्रहमा वर्रिज़वान की हयात व ज़िन्दगी से आपको इन्कार होगा तो फिर थाना भवन के शहीदों का आप किस तरह गुन गा सकेंगे ?

या ललअ़जब वा हसरता!

एक हंगामए महशर हो तो उसको भूलूं
सैकड़ों बातों का रह रह के ख़्याल आता है

दाद दीजिये अंग्रेज़ बहादुर को कि वह न जाने उलमाए देवबन्द को अफ़्यून की कौन सी गोली खिला गया कि आज तक उसका नशा उतर ही न सका। दो चार किताबें, दस पांच इबारतें होतीं तो इम्तेदादे ज़माना उन्हें ख़ुद ही मिटा देता और इख़्तिलाफ़ात की नहरें धीरे धीरे ख़ुद ही पट जातीं। मगर यहा तो क़ौमे मुस्लिम की तबाही व दिल आज़ारी के लिए क़दम क़दम पर ख़ेमे नसब हैं। एक हिफ़्ज़ुल ईमान व तक़वीयतुल ईमान ही का रोना नहीं है बल्कि उस गरोह ने जब भी क़लम

उठाया तो क़ौमे मुस्लिम ही को तख़्ताए मश्क़ बनाया। कभी रसूले करीम को गालियां देकर हमें रुलाया तो कभी हुरमते औलिया व अज़मते अस्लाफ़ को घटा कर हमें सताया और जब इससे भी तस्कीन न हुई तो क़ौम व पेशा की बहस छेड़ कर पूरी मिल्लते इस्लामिया की दिल आज़ारी की। चुनान्चे हिन्द व पाक में लाखों नहीं करोड़ों की तादाद में अन्सारी बिरादरी के ऐसे दीनदार मुख़ैइर, अहले इल्म, अहले सरवत मिलेंगे जिनकी बदौलत हज़ारहा मदारिसे अरबिया व फ़ारसिया फल फूल रहे हैं और मज़हबी उमूर में यह बिरादरी कितने ज़ौक़ व शौक़ से पेश पेश होकर हिस्सा ले रही है वह मुह्ताजे बयान नहीं। आज इसी बिरादरी में इतनी अक्सरियत से हाफ़िज़, क़ारी, मौलवी, आलिम, फ़ाज़िल मिलेंगे कि दूसरी बिरादरी में मिलना मुश्किल है।

लेकिन ऐसी दीनदार व अहले ख़ैर बिरादरी के लिए मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी का नज़रिया मुलाहज़ा कीजिये जिसको नक़ल करते हुए मेरा क़लम कांप रहा है।

मुसन्निफ़ मौलवी अशरफ़ अली थानवी दर मत्बअ् इमदादुल मताबेअ् थाना भवन ज़िलहिज्जा 1366 हि॰ सफ़हा 25।

तर्जुमाः- जुलाहा दो दिन नमाज़ पढ़ कर (अपनी कम अक़्ली की वजह से) वही का इन्तेज़ार करता है।"

अब मैं इस मक़ाम पर नाज़िरीन का इन्साफ़ चाहता हूं कि वह ठन्डे दिल से सोचें कि या इस्लाम का कौन सा ऐसा अहम मसला था जिसके बयान किये बग़ैर मौलाना थानवी का तबलीग़ी मिशन नातमाम रह जाता ? इस के सिवा और क्या कहा जाये कि आपस में मुसलमानों को लड़ा कर अंग्रेज़ बहादुर की ख़ुशनूदी और वफ़ादारी का हक़ अदा किया जा रहा था। चुनान्चे अब से बहुत दिनों पहले देवबन्द की चहार दीवारी से इसी क़िस्म का एक नारवा हमला किया गया था जिस पर हिन्दुस्तान की पूरी अन्सारी बिरादरी तड़प तड़प उठी और जमीअतुल अन्सार क़स्बा मऊनाथ भंजन ज़िला आज़मगढ़ के अराकीन ने बतौरे एहतेजाज एक किताबचा शाया किया था जिसके टाइटल पेज की सुर्ख़ी यह है-

डूब मरने की जगह है दोस्तो

मुफ़्ती साहब देवबन्द और हकीमुल उम्मत मौलाना अशरफ़ अली साहब

थानवी के इल्मी तहज़ीब का नमूना और करोड़ों पेशावर मुसलमान भाइयों की तौहीन व तज़लील।

अब इसी किताबचा की चन्द इबारतें मुलाहज़ा फ़रमाइये जिनसे आपको अन्दाज़ा होगा कि इफ़्तेराक़ बैनुल मुस्लिमीन में उलमाए देवबन्द का कितना ज़बरदस्त हाथ है।

सफ़हा की इबारत सुनिये-

"जब क़ियामत का दिन होगा एक मुनादी आवाज़ देगा कि वह लोग कहां हैं जिन्होंने ज़मीन पर रहते हुए अल्लाह के साथ ख़यानत की है। इस पर ठठेरे और सर्राफ़ हाज़िर किये जायेंगे।"

सफ़हा 4 की दूसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

"मेरी उम्मत के बद तरीन लोग दस्तकारी करने वाले सुनार हैं।"

तीसरी इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये-

"जुलाहों से मशवरा न लो इस लिए कि अल्लाह तआला ने उनकी अक़्लें सल्ब कर ली हैं और उनकी कमाई से बरकत दूर कर दी, इसलिए कि हज़रत मरयम अलैहस्सलाम जुलाहों की एक जमाअत के पास से गुज़रीं तो उनसे रास्ता पूछा। उन्होंने ग़लत रास्ता बता दिया तो मरयम अलैहस्सलाम ने बद दुआ की कि ख़ुदाए तआला तुम्हारी कमाई से बरकत सलब कर ले।"

नोटः- अब मुफ़्ती साहब देवबन्द और पेशावर अक़वाम के सफ़हा 8 व 9 की इबारत मुलाहज़ा करके अन्दाज़ा कीजिये कि उलमाए देवबन्द के जारेहाना हमलें से भारत के मुसलमानों में कैसा शदीद हैजान था।

सफ़हा 8 व सफ़हा 9

"मुहतरमाने क़ौम! हुक्कामे बालादस्त देवबन्द की मन्तिक़ समझना आसान नहीं है, यही तो इनका ज़बरदस्त हथकन्डा है जिससे तमाम दुनिया चक्कर में है। कहां तो मुफ़्तीए देवबन्द पेशावरों की तज़लील व तौहीन करने के मुतअल्लिक़ यह कोशिश और वह गरमागरमी व शोरा शोरी कि हम अपनी तरफ़ से कुछ नहीं कहते बल्कि ख़ुद सरकारे रिसालत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो कुछ पेशावरों के मुतअल्लिक़ फ़रमाया है वही पेश कर रहे हैं और सिर्फ़ एक ही झटके में मुफ़्ती साहब और

शुरफ़ा अराकीन व मुदर्रसीन दारुल उलूम देवबन्द की यह वे नमकी और फीकापन कि हर कलिमा गो मुसलमान को अपना भाई समझते हैं। हम शुरफ़ाए अराकीन दारुल उलूम देवबन्द से कहे देते हैं कि अब वह ज़माना गया कि आप मदरसा की चहार दीवारी के अन्दर बैठ कर जो कुछ रतब व याबिस फ़रमा दिया करते थे दुनिया उस पर ईमान लाने के लिए तैयार थी और रात दिन उन लोगों के गोरख धन्दों और मन्तिक़ी ऐच पेच में पड़ी रहती थी।"

हुआ हासिल यह हमको दोस्तों की बेवफ़ाई से
कि हमने उम्र भर को तौबा कर ली आ नाई से

नोटः- मुन्दर्जा बाला इबारत के हस्बे ज़ैल जुमले क़ाबिले तवज्जोह हैं।

(1) यही तो उन (उलमाए देवबन्द) का ज़बर दस्त हथकन्डा है।

(2) मदरसा की चहार दीवारी के अन्दर बैठ कर जो कुछ रतबे याबिस फ़रमा दिया करते थे।

(3) उन लोगों के गोरख धन्दों और मन्तिक़ी ऐच पेच।

इस ज़िम्न में अरवाहे सलासा की एक इबारत मुलाहज़ा कीजिये।

अरवाहे सलासा सफ़हा 274

हिकायत (291): मौलवी फ़ारूक़ साहब ने फ़रमाया कि मौलाना अहमद हसन ने इरशाद फ़रमाया कि जब मैं अव्वल अव्वल मौलाना क़ासिम साहब की ख़िदमत में हाज़िर हुआ तो मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहब की ख़िदमत में एक जुलाहा आया और दावत के लिए अर्ज़ किया। मौलाना मुहम्मद क़ासिम साहब रहमतुल्लाह अलैह ने मन्ज़ूर फ़रमा लिया। यह अम्र मुझको बहुत नागवार हुआ इतना कि जैसे किसी ने गोली मार दी कि भला जुलाहे की दावत भी मन्ज़ूर कर ली।

तवाज़ोअ् का तरीक़ा साहबो सीखो सुराही से
कि जारी फ़ैज़ भी है और झुकी जाती है गर्दन भी

नोटः- यह हैं उलमाए देवबन्द और उनके हाशिया नशीन कि उनके क़बूल कर लेने पर उन्हें इतनी नागवार गुज़री कि गोया किसी ने उन्हें गोली मार दी।

यह और बात है कि जमीअतुल अन्सार मऊनाथ भंजन ज़िला आज़म गढ़ के एजलास पर उनकी पालीसी नर्म हो गई थी लेकिन उलमाए देवबन्द ने अब से पहले जो कुछ लिख दिया था आज तक उसकी इशाअत हो रही है मुझ पर तो

महज़ नक़ले रिवायत की ज़िम्मेदारी है और वह भी बा दिले न-ख़्वास्ता।

ख़ुदाए क़दीर की बारगाह में यही दुआ है कि वह उनकी इस्लाह फ़रमाए ताकि यह गरोह मक़ामे नबुव्वत की अज़मत व बरतरी, हुरमते औलिया और वक़ारे मुस्लिम का पास व लिहाज़ रख सके।

किस क़दर दुख और सदमे का मक़ाम है कि यह वही हज़रात हैं जो अपने ख़ाना साज़ पीरों की मन्क़बत में ऐसी छलांगें मारते हैं जो सिर्फ़ उन्ही को ज़ेब देता है न तो हुदूदे शरई की कोई रिआयत और न ही रिवायत व दिरायत का कोई लिहाज़। इस मौक़ा पर मौलाना टांडवी की तारीफ़ का एक शेअ्र सुन लीजिये और देवबन्दी ज़ेहन व फ़िक्र को दाद दीजिये।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 49

हुजूमे ख़लाइक़ है बहरे ज़ियारत
नहीं उसको जन्नत में भी आज फ़ुरसत

नोटः- गोया जन्नत भी आसाम व सिलहट की कोई नशिस्तगाह है, जहां लोग सियासी मसाइल का हल दरियाफ़्त करने या दुआ तावीज़ के लिए जोक़ दर जोक़ चले आ रहे हैं या वहां भी तक़सीम व बटवारा की नौबत आ गई है कि हज़रते शैख़ से 'क़ौमी नज़रिया' पर उनकी राय हासिल की जाये।

जब बात आ ही गई है तो हज़रते शैख़ से मुतअल्लिक़ 'शैख़ुल इस्लाम नम्बर' का एक शेअ्र और सुन लीजिये-

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 100

मिलता नहीं है राबेतए दौरे मअ्रेफ़त
घबरा रही है रहमते यज़दाँ तेरे लिए

इस ज़िम्न में रोज़ नामा 'नई दुनिया' दिल्ली के अज़ीम मदनी नम्बर से भी एक शेअ्र मुलाहज़ा फ़रमाइये।

अज़ीम मदनी नम्बर सफ़हा 186

अपनी कहां बिसात कि उस तक पहुंच सकें
हम ज़र्राहाए ख़ाक हैं वह आफ़ताब था

यह बहुत ही सादा और वाज़ेह अशआर हैं जिन पर मुझे कोई तब्सेरा करना नहीं है। इनको पेश करके देवबन्दी मकतबए फ़िक्र की एक झलक दिखलानी है

कि यह अपनों की तारीफ़ में क्या से क्या हांक जाते हैं और यह हाल मुरीदों व अक़ीदत केशों ही का नहीं है बल्कि ख़ुद आँ बदौलत जब तअल्ली और डींग पर उतर आते हैं तो मक़ामे नबुव्वत से नीचे की बात ही नहीं करते। अरवाहे सलासा की एक इबारत मुलाहज़ा फ़रमाइये–

अरवाहे सलासा सफ़हा 297

हिकायत नम्बर 314– "फ़रमाया कि एक मर्तबा हज़रत मौलाना गंगोही रहमतुल्लाह अलैह और मौलाना नानौतवी रहमतुल्लाह अलैह हज्जे बैतुल्लाह को तशरीफ़ ले गये। मौलाना गंगोही का तो क़दम क़दम पर इन्तेज़ाम और मौलाना नानौतवी रहमतुल्लाह अलैह ला उबाली[1] कहीं की चीज़ कहीं पड़ी है कुछ परवाह ही नहीं, उस वक़्त एक गरोह मौलाना गंगोही रहमतुल्लाह अलैह के पास गया कि हम भी आपके हमराह हज को चलेंगे। आपने फ़रमाया कि ज़ादे राह भी है। उन्होंने कहा कि ऐसे ही तवक्कुल पर चलेंगे। मौलाना ने फ़रमाया– जब हम जहाज़ का टिकट लेंगे तो तुम मैनेजर के सामने तवक्कुल की पोटली रख देना, बड़े आये तवक्कुल करने, जाओ अपना काम करो। फिर उन लोगों ने हज़रत मौलाना नानौतवी रहमतुल्लाह अलैह से कहा तो आपने इजाज़त दे दी।

हर गुले रा रंग व बूए दीगर अस्त

रास्ता में जो कुछ भी मिलता वह सब लोगों को दे देते और साथियों ने कहा कि हज़रत आप तो सब ही दे देते हैं कुछ तो अपने पास रखिये तो फ़रमाया इन्नमा अना क़ासिमुन वल्लाहु युअति..."

नोटः– यह वही हदीस है जिसको आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपनी बाबत इरशाद फ़रमाया मगर देवबन्दियों के मुक़्तदा पेशवा अपने बारे में फ़रमाते हैं कि अल्लाह अता फ़रमाता है और मैं तक़सीम करता हूं। सच जानिये इसी हदीसे पाक को जब उलमाए अहले सुन्नत फ़ज़ाइले मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के लिए उनवाने गुफ़्तगू बनाते हैं तो हज़राते देवबन्द के चेहरे पर एक रंग आता है और एक जाता है मगर जब अपनी बारी आई तो झट से बिला तकल्लुफ़

1 इसी ला उबाली पन के नतीजे में तहज़ीरुन्नास जैसी किताब लिखी गई। इस किताब पर तौर हासिल गुफ़्तगू ख़ून के आंसू जिल्द 3 में की जाएगी।

कह दिया कि अल्लाह अता फ़रमाता है और मैं तक़सीम करता हूं, उनका हाल तो यह है कि अगर आक़ाए दो जहां की तारीफ़ व तौसीफ़ में कोई हदीस पेश की जाये तो उसको फ़ौरन हदीसे ज़ईफ़ कह कर मुंह बना लेंगे गोया हदीस क़ाबिले इस्नाद ही नहीं है लेकिन अपने लिए हदीसे ज़ईफ़ भी क़बूल कर लेंगे कि हदीस तो है अगरचे ज़ईफ़ सही, हवाला मुलाहज़ा फ़रमाईये।

किसे ख़बर थी कि लेकर चराग़े मुस्तफ़वी
जहां में आग लगाती फिरेगी बू लहबी

अरवाहे सलासा सफ़हा 272

"एक मर्तबा मौलाना गंगोही रहमतुल्लाह अलैह ने हाज़िरीने मजलिस से फ़रमाया कि मौलाना मुहम्मद क़ासिम को गुलाब से ज़्यादा मुहब्बत थी, जानते भी हो क्यों थी। एक साहब ने अर्ज़ किया कि हदीसे ज़ईफ़ में आया है कि गुलाब जनाबे रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अर्क़े मुबारक से बना हुआ है। फ़रमाया हां अगरचे हदीस ज़ईफ़ है मगर है तो हदीस।"

नोटः– अगर आज हम उसी हदीसे पाक से सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के फ़ज़ाइल साबित करना चाहें तो उनका हर छोटा बड़ा शोर मचाएगा कि यह तो हदीसे ज़ईफ़ है लेकिन जब गंगोही साहब के चहीते की बारी आई जिसको भरी महफ़िल में चारपाई पर लेकर लेटते थे तो साफ़ साफ़ कह दिया कि अगरचे हदीसे ज़ईफ़ है मगर है तो हदीस। यह देवबन्दी गरोह के किसी छोटे मोटे की बात नहीं है बल्कि मुरब्बीए ख़लाइक़ क़ुतुबे आलम पीरे मुग़ाँ हज़रत गंगोही साहब का इरशादे हुमायूं है। जिनकी हदीस दानी पर पूरी दुनियाए देवबन्दीयत को इत्तेफ़ाक़ है।

जब बात उनके लाफ़ व गुज़ाफ़ और तअल्ली और डींग मारने की आ गई है तो उसको मुकम्मल ही कर दिया जाये। पिछले सफ़हात पर यह बात गुज़र चुकी है कि मौलाना गंगोही ने फ़रमाया।

"हाजी साहब मुफ़्ती नहीं हैं। यह मसाइल हज़रत हाजी साहब को हम से पूछने चाहियें।"

और अब अरवाहे सलासा की एक हिकायत मुलाहज़ा कीजिये जो जनाब धानवी साहब से मुतअल्लिक़ है।

अरवाहे सलासा सफ़हा 387

हिकायत नम्बर 423:- "फ़रमाया कि एक मर्तबा मैं हज़रत हाजी साहब के मल्फ़ूज़ात व हालात बयान कर रहा था। उस जलसा में एक वकील साहब हज़रत हाजी साहब रहमतुल्लाह अलैह के मुअतक़िद बैठे हुए थे जो बहुत मज़े ले रहे थे और एक हालत तारी थी उन्होंने उसी हालत में मुझे मुख़ातब करके यह शेअ्र पढ़ा-

तू मुनव्वर अज़ जमाले कीस्ती तू मुकम्मल अज़ कमाले कीस्ती

मैंने फ़िलबदीही यह जवाब दिया-

मन मुनव्वर अज़ जमाले हाजीयम मन मुकम्मल अज़ कमाले हाजीयम

नोटः- यह भी ख़ूब रही। जब हाजी साहब का फ़तवा आप हज़रात के ख़िलाफ़ था तो बड़ी सफ़ाई से कह दिया कि हाजी साहब मुफ़्ती नहीं हैं उन्हें हम से फ़तवा दरियाफ़्त करना चाहिये और जब अपने इज़हारे कमाल की बारी आई तो झूम झूम कर यह पढ़ने लगे।

मन मुकम्मल अज़ कमाले हाजीयम

जब आप लोगों की नज़र में ख़ुद हाजी इमदादुल्लाह साहब मुकम्मल नहीं थे (मुफ़्ती नहीं थे) तो यह कमाल आप में कहा से आ गया ?

अब हज़रत गंगोही की एक रिवायत सुनिये अरवाहे सलासा स॰ 290

हिकायत नम्बर 307:- "ख़ानसाहब ने फ़रमाया कि एक दफ़ा हज़रत गंगोही साहब रहमतुल्लाह अलैह जोश में थे और तसव्वुरे शैख़ का मसला दर पेश था, फ़रमाया कह दूं। अर्ज़ किया गया कि फ़रमाइये फिर फ़रमाया कह दूं, अर्ज़ किया गया कि फ़रमाइये, फि फ़रमाया कह दूं अर्ज़ किया गया फ़रमाइये तो फ़रमाया कि तीन साल कामिल हज़रत इमदाद[1] का चेहरा मेरे क़ल्ब में रहा है और मैंने उन से पूछे बग़ैर कोई काम नहीं किया।"

[1] हाजी इमदादुल्लाह मक्की

नोटः- यह वही हाजी साहब हैं जिन्हें मौलाना गंगोही से फ़तवा दरियाफ़्त करना चाहिये था। अब कोई दरियाफ़्त करे कि सरकारे दो आलम के ख़्याल लाने से तो नमाज़ जाती रहती है जब मुसलसल तीन साल हाजी साहब आपके क़ल्ब में रहे तो आपकी नमाज़ का क्या हश्र हुआ ? अगर उनके लिट्रेचर से इस क़िस्म की मुतज़ाद इबारतें इकट्ठा की जायें तो वह ख़ुद एक मुस्तक़िल किताब हो जाएगी, यह सिर्फ़ चन्द इशारे हैं।

अब इसी ज़िम्न में मौलाना क़ासिम नानौतवी की एक रिवायत मुलाहज़ा कीजिये जिसमें उन्होंने अपने झूट बोलने का इक़रार किया है।

अल्लाह रे बुतों की तलव्वुन मिज़ाजियाँ
हां हां घड़ी में है तो घड़ी में नहीं नहीं

अरवाहे सलासा सफ़हा 368

हिकायत नम्बर 391:- "मेरी इस बात को किसी ने नवाब क़ुतबुद्दीन ख़ान साहब तक भी पहुंचा दिया और मौलवी नज़ीर हुसैन साहब तक भी और मौलवी साहब तो सुन कर नाराज़ हुए मगर नवाब साहब पर यह असर हुआ कि जहां मैं ठहरा हुआ था मेरे पास तशरीफ़ लाए और मेरे पाँव पर अमामा डाल दिया और पाँव पकड़ लिये और रोने लगे और फ़रमाया भाई जिस क़दर भी मेरी ज़्यादती हो ख़ुदा के वास्ते मुझे बतला दो। मैं सख़्त नादिम हुआ और मुझ से बजुज़ उसके कुछ बन पड़ा कि मैं झूट बोलूं। लिहाज़ा मैंने झूट बोला (और सरीह झूट मैंने उसी रोज़ बोला था) और कहा कि हज़रत आप मेरे बुज़ुर्ग हैं मेरी क्या मजाल थी कि मैं ऐसी गुस्ताख़ी करता।"

नोटः- नाज़िरीन ने इस हिकायत से अन्दाज़ा कर लिया होगा कि दुनिया के एक नवाब से साबिक़ा पड़ गया तो बानीए दारुल उलूम देवबन्द मौलाना क़ासिम नानौतवी सरीह झूट बोल गये और थे भी कुछ ऐसे ही ला उबाली कहीं सच, कहीं झूट, कहीं गोल मोल। अब गोल मोल वाली रिवायत सुनिये-

नव उम्र हैं अभी है तलव्वुन मिज़ाज में
ग़ुस्से का एतेबार है उनके न प्यार का

अरवाहे सलासा सफ़हा 268

हिकायत नम्बर 276 "फ़रमाया सिवहारा में एक जमाअत ने जिन

मे नमसलए मौलिद में नज़ाअ हो रहा था। मौलाना क़ासिम साहब रहमतुल्लाह अलैह उस वक़्त वहां तशरीफ़ रखते थे। मौलूद के बारे में दरियाफ़्त किया तो फ़रमाया कि भाई न तो इतना बुरा है जितना लोग समझते हैं न उतना अच्छा है जितना लोग समझते हैं। यह हिकायत मौलवी मुहम्मद यहया सिवहारवी से सुनी है।"

नोटः- यह बिल्कुल वही मज़मून है-

वाग़वाँ भी खुश रहे राज़ी रहे सय्याद भी

और यह कुछ मौलवी क़ासिम नानौतवी ही के साथ मुनहसिर नहीं बल्कि तमाम ही अकाबिरे देवबन्द का यही आलम कि जहां जैसा मौक़ा देखा वहां वैसी बात कह दी।

चुनान्चे पिछले सफ़हात में मौलवी हुसैन अहमद साहब के तज़्किरे में ऐसे वाक़िआत गुज़र चुके हैं। मसलन सिवहारा में लोगों ने पाँव दबाना चाहा तो आँ बदौलत ने फ़रमाया कि इसका सुन्नत से सुबूत नहीं मिलता और खुद हज़रत शैख़ मौलवी अबुल वफ़ा वग़ैरह का पाँव दबाया करते इस सिलसिला की एक और रिवायत मिल गई है जो एक ख़ास' मक़सद के तहत दर्ज की जाती है।

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 149

"हज़रत मौलाना अहमद शाह साहब रहमतुल्लाह अलैह हसनपुर के एक मशहूर बुज़ुर्ग थे जिनके साहबज़ादे मौलाना सय्यद महमूद अहमद साहब हज़रत शैख़ुल इस्लाम के ख़ुलफ़ा में हैं। मौलाना अहमद शाह हज़रत के यहां मेहमान थे, गरमियों का मौसम था, दोपहर का वक़्त शाह साहब आराम फ़रमा रहे थे। हज़रत शैख़ पहुंचे और पांव दबाने शुरू कर दिये। मौलाना अहमद शाह साहब ने घबरा कर उठना चाहा तो हज़रत शैख़ ने एक हाथ उनके सीना पर रख लिया कि वह उठ न सकें और दूसरे हाथ से उनके पांव दबाते रहे। देर तक यह ख़िदमत अन्जाम दी।"

नोटः- वाक़िआत पढ़ने से कुछ ऐसा अन्दाज़ा होता है कि जनाब शैख़ को पाँव दबाने से बड़ी दिलचस्पी थी। जब मौलाना टांडवी का ज़िक्र आ ही गया है तो एक और दिलचस्प रिवायत सुन लीजिये कि मौलाना को पाएख़ाना साफ़ करने की भी महारत थी।

आदत जो पड़ी हो हमेशा की वह दूर भला कब होती है
रखी चुनौटी पाकेट में पतलून के नीचे धोती है

शैख़ुल इस्लाम नम्बर सफ़हा 149

"मौलाना मुहम्मद इस्माईल साहब सम्भली जो हज़रत की ख़िलाफ़त से भी मुशर्रफ़ हैं, रावी हैं कि एक मर्तबा ट्रेन में हज़रत वाला फ़र्स्ट क्लास में सफ़र कर रहे थे, एक हिन्दू साहब बहादुर भी उसी डब्बा में थे वह क़ज़ाए हाजत के लिए पाख़ाना में गये और फ़ौरन वापस आ गये। हज़रत शैख़ ने भांप लिया, थोड़ी देर बाद ख़ामोशी से उठे, पाख़ाना में गये वह निहायत गन्दा हो रहा था उसको साफ़ किया फिर वापस तशरीफ़ लाये थोड़ी देर में साहब बहादुर से दरियाफ़्त किया, आप पाख़ाना से क्यों वापस आ गये थे। साहब बहादुर ने जवाब दिया। वह बहुत गन्दा है। हज़रत ने फ़रमाया- नहीं वह तो साफ़ है जाकर मुलाहज़ा फ़रमाइये। साहब बहादुर बेहद मुतअस्सिर हुए।"

नोटः- आज के माहौल में यह कहना कि साहब बहादुर बहुत मुतअस्सिर हुए। यह महज़ मौलवी इस्माईल साहब की ख़ुश फ़हमी है। अलबत्ता साहब बहादुर का इस बात से मुतअस्सिर होना ज़्यादा क़रीने क़ियास है कि जब (पाएख़ाना की सफ़ाई करने वाले) लोग फ़र्स्ट क्लास में सफ़र करेंगे तब तो हम लोगों का ख़ुदा ही हाफ़िज़।

न पूछिये कि मौलाना टांडवी के मुतवस्सिलीन ने क्या क्या गुल खिलाये हैं। तक़सीमे हिन्द से पहले का एक वाक़िआ है कि कांग्रेस की दावत पर टांडवी साहब लाहौर गये और पंजाब मन्दिर में आप की तक़रीर हुई। उस वक़्त लाहौर से अख़बार 'मिलाप' निकलता था चुनान्चे दूसरे दिन अख़बार 'मिलाप' में जली क़लम से यह सुर्ख़ी थी "पंजाब मन्दिर में मौलाना नंगे अस्लाफ़ की वलवला अंगेज़ तक़रीर" एडीटर मिलाप को यह मालूम था कि मौलाना टांडवी अपने को 'नंगे अस्लाफ़' लिखते हैं और उसका यह ख़्याल था कि यह मौलाना का कोई बहुत बड़ा ख़िताब होगा। अख़बार जैसे ही बाज़ार में आया पूरी दुनियाए देवबन्दियत में आग लग गई और एक कुहराम मच गया। यहां तक कि देवबन्दियों का एक जत्था दफ़्तर मिलाप तक पहुंच गया जिनका नारा था। दफ़्तर में आग लगा दो। पानी सर से ऊँचा देख कर एडीटर मिलाप बाहर निकल आया, उसने मुश्तइल हुजूम से दरियाफ़्त किया

आख़िरश शोर व हंगामा कैसा है ? तब लोगों ने कहा कि तुम ने हज़रत शैख़ुल इस्लाम की तौहीन की है इस लिए हम दफ़्तर में आग लगायेंगे।

यह सुनकर एडीटर मिलाप ने कहा कि आख़िरश मेरे जुर्म की निशानदेही तो की जाये कि मैंने क्या ख़ता की है, मैं तो ख़ुद कांग्रेसी होने के एतेबार से मौलाना का एहतेराम करता हूं यह सुनते ही सब ने बयक आवाज़ कहा "क्या तुमने हमारे हज़रते शैख़ को नंगे अस्लाफ़ नहीं लिखा, आख़िर अब इससे बढ़ कर और क्या तौहीन होगी ?" यह सुनते ही एडीटर मिलाप ने कहा कि "भई यह बात कुछ मैंने अपनी तरफ़ से तो लिखी नहीं, मौलाना ख़ुद अपने को नंगे अस्लाफ़ लिखते हैं अगर मैंने लिख दिया तो क्या मुज़ाइक़ा।"

यह जवाब पाकर तमाम देवबन्दियों ने कहा "जनाब यह इख़्तियार हमारे हज़रते शैख़ को है कि वह बर बिनाए इज्ज़ व इन्केसार अपने को नंगे अस्लाफ़ लिखें या कुछ और! लेकिन यह हक़ किसी दूसरे को नहीं पहुंचता कि अगर बर सबीले तवाज़ोअ़ हज़रत ने जो कुछ अपने को लिखा हो वही दुसरा भी उन्हें लिखे।

अल्लाह रे ख़ुद साख़्ता क़ानून का नैरंग
जो बात कहीं फ़ख़्र वही बात कहीं नंग

यह क़ानून मौलाना टांडवी के बारे में तो याद रहा कि मौलाना ने इज्ज़ व इन्केसार के तहत अपने को नंगे अस्लाफ़ लिखा है। लिहाज़ा यह उनका अपना हक़ है जिसको कोई दूसरा नहीं इस्तेमाल कर सकता। लेकिन जब बारगाहे रिसालत की बारी आई तो क़ानून के दामन की धज्जियां उडा दी गईं और आज हर छोटा बड़ा देवबन्दी रसूले किर्दगार को अपना जैसा बशर कहने के लिए 'इन नमा अना बशरुम मिस्लुकुम' का नारा बुलन्द कर रहा है। आख़िरश यहां पहुंच कर क्यों अक़्ल का दीवाला निकल गया। जो क़ानून मौलाना टांडवी के लिए इख़्तियार किया गया वही क़ानून यहां क्यों नहीं इख़्तियार किया जाता कि पैग़म्बरे ख़ुदा का हक़ था कि उन्होंने कुफ़्फ़ारे मक्का की तालीफ़े क़ुलूब के लिए तवाज़ोअ़न यह बात फ़रमाई थी न कि आम मुसलमानों को यह इख़्तियार दिया गया कि वह रसूले ख़ुदा के ख़िताबात को छोड़ कर अपना जैसा बशर कहते फिरें। आज इत्तेबाए सहाबा व पैरवीए अस्लाफ़ के बुलन्द बांग नारे हैं। क्या किसी में यह दम ख़म है जो यह बता सके कि सय्येदना

अबू बकर सिद्दीक़, सय्येदना फ़ारूक़े आज़म, सय्येदना उस्मान ग़नी, सय्येदना अ़ली मुर्तज़ा या किसी और सहाबी ने आक़ाए दो जहां सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अपना जैसा बशर कहा हो। और सिर्फ़ बशर ही नहीं बल्कि बड़ा भाई कह कर रिश्ता व नाता भी जोड़ लिया गया हो जिसके लिए कुल्लु मुमिन अख़ुव्वतुन को बतौरे सनद पेश किया जाता है। अगर बड़ा भाई कहने के लिए इतनी सी बात काफ़ी है कि हर मोमिन आपस में भाई हैं तो एक ज़ीना और आगे बढ़ जाइये जिस तरह रसूले ख़ुदा पर मोमिन का इतलाक़ किया जाता है तो परवरदिगारे आलम ने भी अपने असमा व सिफ़ात से मोमिन फ़रमाया है अ ल मोआमिनुल मुहैमिनुल अज़ीज़ुल जब्बारुल मुतकब्बिर जब तबारक व तआ़ला भी मोमिन है तो अब उलमाए देवबन्द को यह कहना चाहिये कि अल्लाह तबारक व तआ़ला बड़ा भाई है और रसूले ख़ुदा मंझले भाई और देवबन्दी छोटे भाई। मआ़ज़ल्लाह सुम्म मआ़ज़ल्लाह॰

एक ज़रूरी अर्ज़दाश्त

इख़्तेतामे गुफ़्तगू पर यह मुनासिब मालूम हुआ कि चन्द ज़रूरी बातें नाज़िरीन की ख़िदमत में पेश कर दी जायें ताकि किताब से मुतअल्लिक़ कारेईन किसी ग़लत फ़हमी में मुब्तला न हो सकें।

(1) ख़ून के आंसू की तरतीब का मक़सद न तो किसी का तआक़ुब है और न ही छेड़ छाड़ बल्कि इस बाब में जितनी भी किताबें लिखी गईं उनके मुतअल्लिक़ उलमाए देवबन्द और उनके मुत्तबेईन का यह कहना था कि उसमें गाली गुलूज है और एक फ़िरक़ा की जानिबदारी के साथ दूसरे गरोह से धींगामुश्ती का खुला हुआ मुज़ाहरा, चुनान्चे वह इस प्रोपेगन्डा में इतने कामयाब हुए कि उलमाए अहले सुन्नत की तक़रीर व तहरीर से मुतअल्लिक़ मुल्क के गोशा गोशा से यह आवाज़ उठने लगी कि अरे साहब यह लोग तो फ़सादी और झगड़ालू हैं और जहां कहीं भी इन्होंने यह समझा कि फ़लां की तक़रीर मुअस्सिर होगी या फ़लां किताब ज़ेहन व फ़िक्र पर असर-अन्दाज़ होगी तो फ़ौरन काना फूसी शुरू कर दी कि इनकी तक़रीर में नहीं जाना चाहिये यह तो हिफ़्ज़ुल ईमान और तक़वीयतुल ईमान की इबारत पढ़ कर सुनाते हैं और फ़लां फ़लां किताबें नहीं देखनी चाहियें। चूंकि इन किताबों में उलमाए देवबन्द की इबारात पर तन्क़ीद व तब्सेरा है और साथ ही उनको बुरा भला कहा गया है। आज की मस्मूम व ज़हरीली फ़ज़ा ने हमारे ख़िलाफ़ जो एक तूफ़ान उठा रखा है। अब आपको हर्फ़ और सतरों में इसी का जवाब तलाश करना है।

(2) आज उलमाए अहले सुन्नत की तक़रीर के ख़िलाफ़ यह कहा जाता है कि यह लोग तो उलमाए देवबन्द की इबारात पढ़ कर सुनाते हैं। यह वह आवाज़ है जिससे ख़ुद उनके बुतलान का पता चलता है। आज हम पूरी दुनियाए देवबन्दियत को चैलेन्ज करते हैं वह काली कोठरी हो या खुला मैदान हमारी किताबों की एक एक सतर पढ़ कर अपनों व ग़ैरों सभी को सुनायें इस लिए कि हमें अपने मिशन पर [illegible] एतमाद व भरोसा है कि जो कुछ भी लिखा गया है वह क़ुरआन व सुन्नत की रौशनी में लिखा गया या अस्लाफ़ के उन अक़वाल व अफ़आल की रौशनी में जिनकी सनद क़ुरआन व हदीस तक पहुंचती है। इस लिए बिला झिझक और बग़ैर रोक टोक उन्हें खुल कर इजाज़त है कि हमारे मुस्लिम रहनुमाओं में

से जिसकी किताब भी अपने इजलास में पढ़ कर सुनाना चाहें वह जी खोल कर सुनायें। अगर बात हम ने हक़ कही है और वह उसकी ग़लत तावील कर रहे हैं या उन अल्फ़ाज़ को ग़लत माना पहना रहे हैं तो दुनिया इतनी अन्धी नहीं कि हक़ को यकसर छोड़ कर उनकी ग़लत तावीलात में उलझ जायेगी हम को अपनी इबारात की हक़्क़ानियत व सदाक़त और उनके वाज़ेह व रौशन होने पर उतना ही यक़ीन हासिल है जितना कि कल की सुबह और सूरज के निकलने पर।

बल्कि हम इस बारे में मुसर्रत व शादमानी महसूस करते हैं कि पिन्डाल किसी और का हो और बात हमारी कही जाये इख़राजात किसी और के हों और मिशन हमारा पेश किया जाये। लिहाज़ा यही तवक़्क़ोअ़ हम उलमाए देवबन्द से भी रखते हैं कि अगर इजलास में हिफ़्ज़ुल ईमान और तक़वीयतुल ईमान वग़ैरह की इबारत पेश की जाये या हमारी किताबों में उसका ज़िक्र किया जाये तो उन्हें चीं ब-जबीं होने के बजाए ख़ुश होना चाहिये कि इख़राजात किसी और के हैं और पैग़ाम हमारा पहुंचाया जा रहा है लेकिन जब इसके ख़िलाफ़ आवाज़ उठाई जाती है तो इसी से उलमाए देवबन्द का बुतलान ख़ुद से रौशन हो जाता है कि वह इस हक़ीक़त को बहुत अच्छी तरह जानते हैं कि हमारी इबारतें काली कोठरी में पढ़ी जा सकती हैं मगर खुले मैदान में नहीं पेश की जा सकतीं।

(3) उलमाए देवबन्द ने हमारे ख़िलाफ़ जहां यह प्रोपेगन्डा किया है कि हम उनकी इबारात पर तन्क़ीद व तब्सेरा करते हैं इसके इलावा इनका एक हरबा यह भी है कि क़ौम को चन्द फ़ुरूई मसाइल में उलझा कर अपनी कुफ़्रियात पर पर्दा डालने की कोशिश की है। जहां मौक़ा मिला मीलाद व क़ियाम पर चोट कस दी। उर्स व नियाज़ पर शिर्क व बिदअ़त का फ़तवा सादिर कर दिया ताकि क़ौम उनकी कुफ़्रियात पर मुत्तलअ़ न हो सके और वह यह समझे कि उलमाए देवबन्द और उलमाए अहले सुन्नत का इख़्तिलाफ़ मीलाद व क़ियाम जैसे मसाइल पर है। लिहाज़ा आज की सब से अहम ज़िम्मेदारी यह है कि बिला ख़ौफ़े लौमते लाइम उनकी कुफ़्रियात को बे निक़ाब किया जाये। अपनी तक़रीर व तहरीर में जहां फ़ुरूई मसाइल को किताब व सुन्नत से साबित किया जाये वहीं इस अम्र की वज़ाहत भी कर दी जाये कि हमारा इख़्तिलाफ़ महज़ मीलाद व क़ियाम की हद तक नहीं है बल्कि उलमाए देवबन्द एहानते रसूल जैसे गारत-गर ईमान जराइम के मुजरिम हैं। वाज़ेह रहे अगर

हमारे फ़अ़्आल उलमा ने इसकी तरफ़ से ग़फ़लत बरती तो एक दिन ऐसा आएगा कि क़ौम उर्स व नियाज़ के मसाइल पर तो दलील तलब करेगी मगर उलमाए देवबन्द की वह गन्दा व कुफ़्री इबारात जो इख़्तिलाफ़ात की संगे बुनियाद हैं उनके बारे में यह कह कर दामन खींच लेगी कि उन इबारात से मुतअ़ल्लिक़ तो हमारा कोई इख़्तिलाफ़ ही नहीं है। ख़ुदा न कर्दा मेरी इस तहरीर का मक़सद यह नहीं कि उन इख़्तिलाफ़ात को मैं और वसीअ़ करना चाहता हूं बल्कि इस इज़हारे हक़ीक़त का पस मन्ज़र यह है कि उलमाए देवबन्द अपनी कुफ़्री इबारात से तौबा करके उसकी इशाअ़त बन्द कर दें तो हम भी अपना तर्ज़े सुख़न और अन्दाज़े तहरीर बदल दें।

(4) इस सिलसिला में आज बाज़ अपने ही इदारों की तरफ़ से यह आवाज़ उठाई जाती है कि यह बातें बहुत पुरानी हो गई। सांप गुज़र गया अब उसकी लकीर पर लाठी मारने से क्या फ़ाइदा ? मुझे कहने दीजिये और मेरी इस जसारत को नज़र अन्दाज़ कीजिये कि ऐसे इदारे या ऐसे अफ़राद वह ख़ुद फ़रेब ख़ुर्दा हैं या दीदा व दानिस्ता दूसरों को फ़रेब में मुबतला करना चाहते हैं। मैं इस मक़ाम पर क़ारेईन की हल्की सी तवज्जोह चाहता हूं कि अगर बर सबीले तनज़्ज़ुल यह बात तस्लीम भी कर ली जाये कि बात बहुत पुरानी हो चुकी है लिहाज़ा अब उसकी तरफ़ से ज़बान व क़लम का रुख़ मोड़ दिया जाये तो अगर पुरानेपन की दलील इतनी ही भारी भरकम है तो ऐसी रंगीन व जिद्दत पसन्द तबीअ़तों का इसके सिवा हमारे पास कोई इलाज नहीं कि उनसे यह दस्त बस्ता अ़र्ज़ किया जाये कि बन्दा परवर यह माहौल अगर आपके हक़ में साज़गार नहीं तो कोई और राह लीजिये जहां आए दिन नित नये मसाइल सर उठाते हों जिससे आपकी रंगीन मिज़ाजी को क़रार मिल सके वरना अन्देशा है कहीं कल आपने यह कहना शुरू कर दिया कि क़ुरआन व तफ़्सीर पुरानी हो चुकी है और अहादीस के शुरूह व हवाशी पर सदियां बीत गई हैं लिहाज़ा आज के मज़ाक़ के मुताबिक़ नई तफ़सीर होनी चाहिये और कुतुबे अहादीस पर नये अन्दाज़ व नई डीज़ाइन के शुरूह व हवाशी हों तब तो इस्लाम बाज़ीचए अत्फ़ाल बन कर रह जाएगा और मुसलमान से अमान उठ जायेगा। इसके इलावा यह कहना भी ग़लत है कि बातें पुरानी हो गई, लिहाज़ा अब उनका ज़िक्र न किया जाये। बन्दा परवर अगर आप की उम्र चालीस बरस हो चुकी है और पन्द्रह बरस की उम्र से आज तक आप इन इख़्तिलाफ़ात को सुनते चले आ रहे हैं तो यह बातें आपके हक़ में पुरानी हो गई हैं लेकिन आने वाली नस्ल जो अब

होश गोश के मैदान में आ रही है जिससे अभी तक उसके कान आ[illegible]ना नहीं उसके हक़ में तो यह बातें पुरानी नहीं हैं।

हां अगर हिफ़्ज़ुल ईमान, तक़वीयतुल ईमान, तहज़ीरुन्नास, बराहीने क़ातेआ़ के मुसन्निफ़ीन अपने पीछे कोई लश्कर न छोड़ गये होते और यह किताबें उन्हीं की क़ब्र में दफ़न हो गई होतीं और यह लोग अपना अक़ीदा अपने साथ लेकर चले गये होते तो यह बात गवारा कर ली जाती। जब उनके अ़क़ाइद के प्रचार करने वाले ही नहीं तो ऐसे अ़क़ाइद के बाल की खाल निकालने से क्या फ़ाइदा! लेकिन जब हम यह देख रहे हैं कि उनके अज़नाब (पैरवी करने वालों) व मुत्तबेईन का एक गरोह जो क़दम क़दम पर शिर्क व बिदअ़त का ख़ेमा नसब किये बैठा है और प्रेस की पूरी ताक़त उन किताबों की इशाअ़त में ख़र्च हो रही है फिर ऐसे हालात में हम यह कैसे तस्लीम कर लें कि बातें पुरानी हो गई। लिहाज़ा अब उनसे सर्फ़े नज़र किया जाये। हम किसी अ़सबियत या तंग नज़री के तहत ऐसी बात नहीं कह रहे हैं बल्कि इस हक़ीक़त पर हमारे मुतक़द्दिमीन व मुतअख़्ख़िरीन का तर्ज़े अ़मल शाहिदे अ़द्ल है। चुनान्चे तारीख़े इस्लाम का मुताला कीजिये तो मालूम होगा कि इस्लाम ही के नाम पर न जाने कितने गुमराह और बातिल फ़िरक़ों ने सर उठाया और उनकी जितनी उम्र रही उसी एतेबार से उनका रद्द व इब्ताल किया गया। मसलन जबरिया, क़दरिया, मोअ़्तज़ली वग़ैरह यह अपने अपने वक़्त के गुमराह फ़िरक़े इस्लामी मुअ़्तक़िदात के ख़िलाफ़ बर सरे पैकार नज़र आये तो उलमाए इस्लाम की सारी ताक़त उनकी तरफ़ मश्ग़ूल हो गई, यहां तक कि अब उन फ़िरक़ों के अक़वाल बतौरे नक़ल चले आ रहे हैं कि किसी दौर में ऐसे फ़िरक़ों ने जन्म लिया या जिनके अक़वाल ऐसे और ऐसे थे और इसी ज़ैल में उनके जवाबात दर्ज किये जाते हैं ताकि दर्से निज़ामी का फ़ारिग़ुत्तहसील तआ़रुफ़ी हैसियत से उनसे आश्ना रहे लेकिन अब उन फ़िरक़ों के ख़िलाफ़ कोई महाज़े जंग नहीं है चूंकि अब उन फ़िरक़ों का कोई नशरियाती प्रोग्राम नहीं, न उनका कोई हेड क्वार्टर है और न ही ब्रांच, यह अपने वक़्त की पैदावार थे और कुछ दिनों बाद ही अपनी मौत के घाट उतर गये। इसलिए आप देखिये कि आज उलमा की तक़रीर और तहरीर के निशाने पर यह फ़िरक़े रह ही नहीं गये। लेकिन फ़ितनए वहाबिया ऐसा नहीं है। यह रोज़ बरोज़ अपनी जड़ें मज़बूत करता जा रहा है और हमारे ख़िलाफ़ उसके नये नये अड्डे बनते जा रहे हैं।

लिहाज़ा यह कह कर उन मसाइल से दामन छुड़ाना कि बात पुरानी हो चुकी है अक्ल व क़ियास से बईद है। इस फ़रेब ख़ुर्दगी और ख़ुश फ़हमी पर इसके सिवा और क्या कहा जाये कि कुछ अपने ही हमारी राह में कुआँ खोद रहे हैं। दुश्मन अपनी पूरी होशमन्दी व दानाई से अपनी राह हमवार करता जा रहा है और बाज़ अपने इस तमाशागाहे आलम में अपनों ही का गरीबान थामे तमाशाइयों को दावते नज़ारा दे रहे हैं।

(5) वाज़ेह रहे जिस तरह हमें खुले हुए दुश्मन के चेहरे से निक़ाब उलटना है और उनकी घिनौनी और मकरूह सूरत से लोगों के दिल में घुन पैदा करना है। बिल्कुल ऐसे ही दोस्त नुमा दुश्मनों की भी निक़ाब कुशाई करनी है। हम यह जानते हैं कि हमें इस राह में तीरे मलामत का निशाना बनना पड़ेगा और अपनों ही के हाथ तल्ख़ घोंट पीना होगा। अल्लाह का शुक्र है कि क़लम उठाने से पहले हम इसके लिए तैयार हो चुके हैं। हमें दक़ियानूस कहा जाये या लकीर का फ़क़ीर हम पर इन जुमलों का कोई असर नहीं होता। हमें अपने बुज़ुर्गों से यही दौलत मिली है जिसके हम अमीन और वारिस हैं। सय्येदना इमाम अहमद रज़ा फ़ाज़िले बरेलवी, इमामुल मनातिक़ वलफ़लसफ़ा हज़रत अल्लामा फ़ज़्ले हक़ ख़ैराबादी, सय्येदुल आरिफ़ीन हज़रत मौलाना फ़ज़्ले रसूल बदायूनी, हुज्जतुल इस्लाम हज़रत मौलाना हामिद रज़ा ख़ाँ साहब बरेलवी, सदरुश्शरीया हज़रत मौलाना अमजद अली साहब मुसन्निफ़ बहारे शरीअत, सदरुल अफ़ाज़िल हज़रत मौलाना मुहम्मद नईमुद्दीन साहब मुफ़स्सिरे क़ुरआन रिज़वानुल्लाह तआला अलैहिम अजमईन की तारीख़ हमारी निगाहों के सामने है और उनके तसल्लुब फ़िद्दीन को हम उनकी ज़िन्दगी का तुग़राए इम्तियाज़ समझते हैं। इस राह में उन्हें घर से बे घर होना पड़ा। अपने बेगाने हुए, अपनों और ग़ैरों के तअन व त नीअ् सुनी मगर जादए इस्तिक़ामत से उनका क़दम एक इन्च भी पीछे न हट सका। बिफ़ज़्लेही तआला आज भी उनके मुत्तबेईन की एक अच्छी ख़ासी जमाअत मौजूद है। आक़ाए निअ्मत हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द, उस्तादे मुहतरम व मुर्शिदे बरहक़ मुजाहिदे मिल्लत मौलाना हबीबुर्रहमान साहब, उस्ताजुल असातिज़ा हज़रत मौलाना सय्यद गुलाम जीलानी साहब मेरठी, उस्ताजुल उलमा हज़रत मौलाना हाफ़िज़ अब्दुल अज़ीज़ साहब, सुल्तानुल मनाज़िरीन हज़रत मौलाना रफ़ाक़त हुसैन साहब, बुरहाने मिल्लत हज़रत मौलाना सय्यद बुरहानुल हक़ साहब, सदरुल उलमा हज़रत मौलाना सय्यद मिस्बाहुल हसन साहब

फफूंद शरीफ़, सय्यदुल उलमा हज़रत मौलाना सय्यद आले मुस्तफ़ा साहब, नासिरुल उलूम हज़रत मौलाना मुफ़्ती अब्दुर्रशीद ख़ाँ साहब अदामल्लाहु फ़ुयूज़हुम व बरकातहुम्मुल आलिया जैसे अपने अकाबिर व मशाइख़ हैं जो अपने बुज़ुर्गों की ज़िन्दगी के आइनादार हैं। रब्बे करीम इनके ज़िल्ले आतिफ़त को हम पर दराज़ फ़रमाये आमीन बिजाहे सय्येदिल मुर्सलीन सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम।

बात बहुत बढ़ गई, मक़सूदे निगारिश यह है कि हमें हालात का सही जाइज़ा लेना चाहिये कि हमारे मिशन को कमज़ोर बनाने में कैसे कैसे लोगों का हाथ है।

(6) आज फ़ुरूई मसाइल से मुतअल्लिक़ उलमाए देवबन्द का यह भी ग़लत अन्दाज़ है कि हर बात में हम से क़ुरआन व सुन्नत का मुतालबा किया जाता है। क़ुरआन व सुन्नत के इसास व बुनियाद होने से किसी को इन्कार नहीं, इसकी अज़मत सर व आँखों पर, यह दोनों हमारी ज़िन्दगी के वह मताअ् अज़ीज़ हैं जिस पर हमें बजा तौर पर फ़ख़्र हासिल है मगर प्यारे कहना यह है कि जो बात भी कहो क़रीने और सलीक़े से कहो, अगर फ़ातिहा दिलाई जाये तो यह कहते हो कि इसके सुबूत में क़ुरआन की आयत पढ़ो। अगर हम बुज़ुर्गों की क़ब्र पर हुसूले सवाब की गरज़ से चले जायें तो बड़े ही भोले बन कर यह कहते हो कि अगर क़ुरआन की आयत नहीं तो फिर बुख़ारी शरीफ़ ही की हदीस में दिखला दो। आपके मुतालबे पर सरे तस्लीम ख़म है मगर कुछ हमारी भी सुन लीजिये। आपके हज़रते शैख़ 'मौलाना टांडवी' की लाठी को लोग बतौरे तबर्रुक रखते थे। आपके मौलाना थानवी के पाँव धोकर पानी पीने को लोग ज़रीयए नजात समझते थे वग़ैरह वग़ैरह तो अगर आप क़ुरआन शरीफ़ की आयत और बुख़ारी शरीफ़ की हदीस से इसका सुबूत न दे सकें तो कम से कम मिश्कात शरीफ़ जो दर्से निज़ामी में हदीस की पहली किताब समझी जाती है इसी से इसका सुबूत दीजिये।

आख़िरश क्या क़ुरआन व हदीस महज़ मीलाद व क़ियाम ही के सुबूत के लिए है फिर यह क्या तुरफ़ा तमाशा कि आप हज़रात अपनी दर्सगाहों में तो अपने तलबा को यह दर्स देते हैं कि उसूले शरीअत चार हैं। अदिल्लाए अरबआ क़ुरआन, सुन्नत, इज्माअ्, क़ियास से काम लिया जायेगा। तलाक़ व निकाह, बैअ् व शरा, रोज़ा, नमाज़, हज व ज़कात वग़ैरह वग़ैरह जैसे मसाइल में क़ुरआन व सुन्नत के अलावा इज्माअ् व क़ियास से भी दलील क़ाइम की जाती है मगर उर्स व नियाज़, मीलाद व क़ियाम के लिए सिर्फ़ क़ुरआन व हदीस से दलील चाहिये।

और इस पर कट हुज्जती और हट धर्मी का यह आलम कि अगर आपके किसी बुज़ुर्ग व पेशवा ने मीलाद व क़ियाम किया हो तो आप इसकी नित नई तावील करते हैं कि कहीं हमारे बुज़ुर्ग पर शिर्क व बिदअ़त की छाप न पड़ जाये, जैसा कि पिछले सफ़हात में हाजी इमदादुल्लाह साहब मुहाजिर मक्की का तज़किरा किया है कि मौसूफ़ महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुनअ़क़िद करते और खड़े होकर सलाम पढ़ने में लज़्ज़त महसूस करते।

लेकिन अब जनाब हाजी साहब क़िबला के मीलाद व क़ियाम पर आमिर उस्मानी की तावीलात मुलाहज़ा कीजिये–

तजल्ली देवबन्द, अगस्त 62 ई० सफ़हा 40

"तीसरी वजह यह थी कि हज़रत हाजी साहब के तमाम अक़ाइद व तसव्वुरात सब के सामने थे उनमें उनको अहले इल्म इरादतमन्दों ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बारे में मुश्रिकाना और ग़ाली व ग़ैर मुनासिब की शुमूलियत नहीं पाई बल्कि यही देखा कि तौहीद उनके दिल व दिमाग़ में रची बसी है लिहाज़ा यह क़ियास करने में कोई चीज़ मानेअ़ नहीं हुई कि साल ब साल मीलाद मुन्अ़क़िद करने के पीछे हुब्बे रसूल का सीधा सादा जे़हन कारफ़रमा है और क़ियाम की तह में एक मासूम से तसव्वुरे ताज़ीम के सिवा कोई ग़ुलु आमेज़ अक़ीदा मौजूद नहीं है।"

नोटः– नाज़िरीन से गुज़ारिश है कि यह मुन्दर्जा बाला तहरीर को बार बार पढ़ें और यह अन्दाज़ा करें कि अपने को बचाने के लिए कैसे कैसे तराशीदा और ख़राशीदा अल्फ़ाज़ ढूंढे गये हैं। हाजी साहब अगर मीलाद व क़ियाम फ़रमायें तो उसमें 'हुब्बे रसूल का सीधा सादा ज़ेहन कारफ़रमा है और क़ियाम की तह में एक मासूम सा तसव्वुरे ताज़ीम' है। हालांकि यह वही हाजी साहब हैं जो ख़ुद आमिर साहब की नज़र में आलिम नहीं हैं, एक ग़ैर आलिम अगर मीलाद व क़ियाम करता है तो उसकी तावील की जाती है कि "तौहीद उनके दिल व दिमाग़ में रची बसी है" और अकाबिर उलमाए अहले सुन्नत जिनके इल्म व फ़ज़्ल को अपने व ग़ैर सभी तस्लीम करते हों अगर वह मीलाद और क़ियाम कर लें तो खुले गुमराह, कट्टर बिदअ़ती, पक्के मुश्रिक, न जाने वह कौनसा आला है आमिर साहब के पास जिससे वह लोगों के दिलों का भेद जान लेते हैं कि किस के क़ल्ब व जिगर में तौहीद रची बसी है और किसका सीना उससे ख़ाली है।

तजल्ली के इसी शुमारे में आगे चल कर आमिर साहब रक़्मतराज़ हैं ज़रा पढ़िये और जनाब के तर्ज़े इस्तिदलाल की दाद दीजिये सफ़हा 42।

"इसी तरह आप मुतअ़द्दिद मिसालें सोच सकते हैं जिन से मालूम होगा कि असमाए सिफ़त में ग़ालिब अहवाल के एतेबार से बनते हैं ग़ालिब भी न सही तो कम से कम यह तो तय शुदा है कि किसी भी इसमे सिफ़त का इतलाक़ उसी वक़्त होता है जब उस सिफ़त का ज़ुहूर नुमायाँ तौर पर हो, अगर किसी इन्सान को फ़ासिक़ या आ़सी व ख़ाती कहने के लिए सिर्फ़ इतनी ही बात काफ़ी होती कि कभी न कभी उससे फ़िस्क़ या ख़ता या मअ़सियत का सुदूर हो गया है तो दुनिया में कोई शख़्स भी अम्बिया के सिवा इन मकरूह अस्माए सिफ़त से नहीं बच सकता क्योंकि अम्बिया के सिवा कोई भी मासूम नहीं।

इससे साबित हुआ कि महज़ मीलाद व क़ियाम की बिदअ़त को सादगी के साथ इख़्तियार करने की वजह से हज़रत हाजी साहब को 'बिदअ़ती' नहीं कहा जा सकता।"

नोटः– क़ुरबान जाइये आपके तर्ज़े इस्तिदलाल पर, हाजी साहब 'फ़ैसला हफ़्त मसला' में ख़ुद तहरीर फ़रमाते हैं कि मैं हर साल महफ़िले मौलूद शरीफ़ मुन्अ़क़िद करता हूं और खड़े होकर सलाम पढ़ने में लज़्ज़त महसूस करता हूं। लेकिन आमिर साहब फ़रमाते हैं कि अगर किसी से कभी कभार कोई फ़ेअ़्ल सादिर हो जाये तो उसकी बिना पर हुक्म नहीं लगाया जाता बल्कि ग़ालिब अहवाल की बिना पर, जैसे किसी को फ़ासिक़ कहने के लिए इतनी सी बात काफ़ी नहीं है कि कभी उससे फ़िस्क़ का सुदूर हो गया यानी ता वक़्ते कि उस फ़िस्क़ पर इसरार न हो उस वक़्त तक उसे फ़ासिक़ नहीं कहा जाएगा।

आमिर साहब बिलफ़र्ज़ अगर निफ़ाज़े अहकाम से यही दस्तूर व क़ानून है जैसा कि ब-गुमाने ख़्वेश आपने सुपुर्दे क़लम किया है तो उसी क़ानून के आईने में हाजी साहब की भी तस्वीर मुलाहज़ा कीजिये। यानी ता वक़्ते कि फ़ेअ़्ल पर इसरार न हो उस पर हुक्म न लगाया जायेगा तो हाजी साहब क़िबला ने यह तो नहीं फ़रमाया कि उम्र के किसी हिस्सा में भूल कर सहवन मैंने मीलाद शरीफ़ की महफ़िल मुन्अ़क़िद कर ली थी और सलाम भी खड़े होकर पढ़ लिया था बल्कि वह अपने फ़ेअ़्ल को

इसरार व इल्तेज़ाम की सराहत फ़रमाते है न तो कभी कभार है और न भूल चूक है बल्कि दीदा व दानिस्ता बाइसे ख़ैर व बरकत समझ कर हर साल, फिर पढ़ लीजिये हर साल जाने उनके इस फ़ेअ्ल की इब्तेदा और उम्र के एतेबार से यह महफ़िल उनके घर में पचास मर्तबा मुन्अकिद हुई होगी या इससे कुछ कम व बेश। अब आप ही फ़रमाइये अगर उन्होंने अपनी उम्र में पचास मर्तबा महफ़िले मौलूद शरीफ़ मुन्अक़िद की तो इसको इत्तेफ़ाक़िया, कभी कभार, बाई चान्स कहा जाएगा या इस फ़ेअ्ल का इसरार व इल्तेज़ाम और कोई रोज़ाना तो महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुन्अक़िद करता नहीं बल्कि आम दस्तूर यही है कि ख़ैर व बरकत के हुसूल के लिए साल में एक ही दो मर्तबा लोग हस्बे तौफ़ीक़ अपने अपने घरों में महफ़िले मीलाद शरीफ़ मुन्अक़िद करते हैं और यही लोग आपकी इस्लाह में मौलूदी और बिदअ़ती कहते जाते हैं।

अब कहिये हाजी साहब के बारे में क्या इरशाद है ? यह कैसे आपने लिख दिया कि हम उनको बिदअ़ती नहीं कहेंगे। आख़िरश यह दीन में ठीकेदारी नहीं तो और क्या है ? जिसको आप अपना समझें इरतेकाबे बिदअ़त के बावजूद उसको बिदअ़ती न कहें और जिन बुज़ुर्गों के ख़िलाफ़ आपने महाज़े जंग क़ाइम कर रखा है उनके हर फ़ेअ्ल पर शिर्क व बिदअ़त की छाप लगाने में कोई तअम्मुल नहीं। इसके इलावा हाजी साहब महज़ मीलाद व क़ियाम के पाबन्द न थे बल्कि नियाज़, फ़ातिहा, उर्स, सोयम, चालीसवाँ, बरसी जैसे तमाम ही मरासिम के न सिर्फ़ क़ाइल बल्कि अमलन पाबन्द थे। फ़ैसला हफ़्त मसला तो आपने पढ़ी होगी, इसका नाम ही फ़ैसला हफ़्त मसला है। अब यह न कहियेगा कि हाजी साहब महज़ मीलाद व क़ियाम की बिदअ़त का इरतेकाब फ़रमाते थे बल्कि इसके इलावा और भी बहुत से मरासिम है जो आपकी नज़र में बिदअ़त और मअ़सियत हैं वह सब उनके मामूलात में दाख़िल है।

लिहाज़ा आप यह बावर कराने की कोशिश तो कीजिये ही नहीं कि आप को देवबन्द या जमाअ़ते इस्लामी के ख़ज़ाने से कोई ऐसा आला मिल गया है जिसके ज़रीये से आप लोगों की नीयत और इरादे का पता लगा लेते हैं कि कौन सादा लौह होकर मीलाद व क़ियाम कर रहा है और कौन ग़ैरे सादा लौह होकर।

मुमकिन है मौलाना इमामुद्दीन रामनगरी जिन से आप इस वक़्त मुख़ातिब है वह आपकी इन धमकियों में आकर मरऊब हो जाये, हालांकि वह आपसे ज़्यादा

तजर्बाकार हैं उन पर आपका जादू चल जाये क़रीने क़ियास नहीं लेकिन आपने अपने दलाइल के ताने बाने में यही कोशिश की है कि उन्हें उलझा लिया जाये।

इसको तो आप दोनों समझें मगर मुल्क का वह तबक़ा जिसको आप बिदअ़ती कहते हैं वह आपके हाजी साहब की तरह इतना सादा लौह नहीं है कि मीलाद व क़ियाम महज़ अपनी सादगी के तहत कर लेता है बल्कि यह एक पढ़ा लिखा तबक़ा है जो अपने अक़ाइद पर बुरहान व बय्यिना की ऐसी शमा रौशन किये है कि लाख बार तूफ़ान उठे मगर वह शमा न बुझ सकी और इन्शाअल्लाह तआला सुबहे क़ियामत तक यह रौशन रहेगी इस लिए यह ख़्याल तो आप अपने दिल से निकाल दीजिये कि वह आपकी इस क़िस्म की लायानी बातों से मरऊब हो जाएगा और इसका यक़ीन कर लेगा कि सही मानों में आपको कोई ऐसा आला मिल गया है जिससे आप दिलों का भेद मालूम कर लेते हैं और अगर इस्तिदलाल का यही तरीक़ा इख़्तियार किया जाये। जो आपका वतीरा है तो फिर दूसरों को भी कहने दीजिये कि माहनामा तजल्ली की इशाअ़त में क़ौम की इस्लाह व फ़लाह का कोई जज़्बा कारफ़रमा नहीं है बल्कि अपनी नुमाइश और तिजारती फ़रोग़ की एक लगन है जो आपके दिल व दिमाग़ पर मुसल्लत है। इसी का नतीजा है कि आप अपने इदारिया के लिए जंग व जिदाल का नया नया उनवान तलाश करते रहते है। आप अपनी उंगलियों पर ख़ुद ही गिन लीजिये कि थोड़े से वक़्फ़ा में आपने कितनों से पंजा आज़माई की है।

एक दौर आप का वह गुज़रा है जब कि आप अपने ही उस्ताद मौलवी हुसैन अहमद साहब टांडवी के मुक़ाबिल लंगोट बांधे खड़े थे, यह जानते हुए कि यह देवबन्द की बड़ी शख़्सियत है अगर उन से मुड भेड़ हो गई तब तो काम ही चल जाएगा। फिर जब आपने उनका पीछा छोड़ा तो आपने मौलवी मन्ज़ूर नोमानी को दावते जंग दी। जब उन्होंने मुंह न लगाया तो मुदीरे फ़ारान माहिरुलक़ादरी को हल मिन मुबारिज़ कह कर पुकारा, कुछ दिनों उन से नोंक झोंक चलती रही तो आपने अपने रफ़ीक़े क़लम मौलवी इमामुद्दीन रामनगरी को झिंझोड़ा जिन से आज तक सिलसिलए जंग जारी है।

अभी आप इसी महाज़ पर थे कि उससे ज़्यादा उम्दा जंग मिल गया यानी मुदीरे बुरहान मौलाना सईद अहमद अकबराबादी से आप लिपट गये और इदारिया के इख़्तेताम पर बड़ी नियाज़मन्दी से आप यह कह गुज़रे कि

"हम खुद को मजबूर पाते हैं कि उनके तीसरे इदारिये पर भी अगले माह ज़बाने नक़्द दराज़ करें।"

यह जुमला आपने सिर्फ़ इस लिए लिख दिया कि लोगों को आपके अगले इदारिये का इन्तेज़ार रहे, इसी का नाम है जज़्बए नुमाइश और तिजारती कारोबार के फ़रोग देने का वह तरीक़ा जिसको आप दीन व मिल्लत का मफ़ाद क़रार देते हैं। अब आप ही फ़रमाइये वह कौन है जो आपकी ज़बान दराज़ी से बच कर निकल गया हो आप तो इसी ताक बात में रहते हैं कि हर माह नक़्शए जंग बदलता रहे ताकि नाज़िरीने तजल्ली जिनका ज़ेहन व फ़िक्र मसाइल पर एतेदाल पसन्दी से गौर करने के बजाए उखाड़ पछाड़ का आदी बन चुका है जो यह मारा वह मारा का नारा बुलन्द करके किसी भी मज़मून पढ़ने के ख़ूगर हैं। उनके दस्तरख़्वान पर आप ऐसे ही तेज़ नमक मिर्च का सालन रखते हैं। और साथ ही क़ौम के साथ यह धप्पल बाज़ी कि हमारा जज़्बए दीनी हमें मजबूर करता कि हम किसी बुराई को देखें और ख़ामोश न रह जायें, अगर वाक़िआ यही है तो रिसाला की इशाअत से पहले आपका जज़्बा कहां सोया था, जिस जिस गली में आपको ख़ेमाहाए बातिल नज़र आते हैं वहां वहां की ख़ाक आप छानते नज़र आते, मगर यह क्या हुआ कि क़लम पकड़ते ही आप चुन चुन कर एक एक का गरीबान पकड़ कर उलझ गये।

कुछ तो है जिसकी पर्दा दारी है

लिहाज़ा अपनी लचर दलीलों की दाद आपको उसी तबक़ा से चाहिये जो दावा और दलील की इलासी व कलीदी हैसियत नहीं जानता, आप उस हल्के में धूल की रस्सी बटने की कोशिश न कीजिये जो बिऔनिही तआला अप जैसों को देखते ही यह सुना देता है-

बहर रंगे कि ख़्वाही जामा मी पोश
मन अन्दाज़े क़दत रा मी शनासम

वरना क्या तमाशा है कि हम मीलाद व क़ियाम करें तो मअ़सियत केश और बिदअ़ती हो जायें और आप के रूहानी लकड़ दादा हाजी इमदादुल्लाह उसी बिदअ़त का इरतेकाब फ़रमायें तो कट्टर मुवह्हिद हो जायें। जनाब आमिर साहब इस क़िस्म का तज़ाद कुछ आप ही की तहरीर में नहीं है बल्कि यह आपको बतौरे वरासत मिली है।

लीजिये लगे हाथ एक पुरानी कहानी सुन लीजिये और बात ख़त्म कर दी जाये

यह उस वक़्त की बात है जब कि आप और मौलवी इमामुद्दीन रामनगरी एक ही प्लेट फ़ार्म पर थे और दूसरे प्लेट फ़ार्म पर आपके उस्ताद मौलवी हुसैन अहमद साहब, चुनान्चे आपके उस्ताद मौलाना टांडवी ने आप हज़रात से एक मुतालबा किया था।

तजल्ली फ़रवरी मार्च 57 ई॰ सफ़हा 74

"रामनगरी साहब और मौदूदी साहब और उनके मुत्तबेईन का फ़र्ज़ है कि अगर उनका अक़ीदा ख़वारिज व मुअ़तज़ेला का नहीं है और वह वाक़ेअ़ में अहले सुन्नत व जमाअ़त के अक़ीदे पर हैं तो एलानिया तौर पर बग़ैर किसी क़िस्म की झिझक के एलान फ़रमायें और उन इबारात को खुलबात से निकाल कर मुनासिब इबारत दर्ज फ़रमायें जैसा कि अहले हक़ का फ़रीज़ा है और हमेशा बड़े बड़े अइम्मए हक़ इस पर अ़मल पैरा हैं, उनको अपनी ग़लतियों से रुजूअ़ करने में कभी नफ़्सानियत और अनानियत मानेअ़ नहीं हुई और यह अस्लाफ़े किराम की हक़ परस्ती थी।"

(ईमाने अ़मल सफ़हा 82)

नोटः- यह तो वह मुतालबा है जो मौलवी हुसैन अहमद साहब ने जमाअ़ते इस्लामी और उसके मुत्तबेईन से किया था अब मौलवी इमामुद्दीन रामनगरी का वह मुतालबा पढ़िये जो उन्होंने जमाअ़ते इस्लामी की तरफ़ से मौलवी हुसैन अहमद साहब से किया था।

तजल्ली फ़रवरी मार्च 57 ई॰ सफ़हा 74 व 75

"रहा हज़रत मौलाना मदनी के मुतालबे का दूसरा हिस्सा तो हज़रत मुहतरम ने इस पर ग़ौर नहीं फ़रमाया कि वह कितना नाक़िस है हज़रत मुहतरम और उनके हमनवा दूसरे उलमा व अकाबिरे देवबन्द जमाअ़ते इस्लामी के पूरे लिट्रेचर को दफ़्तरे ज़लालत व बे दीनी क़रार देते हैं इस लिए जमाअ़ते इस्लामी जब तक अपने ज़ख़ीरए कुतुब को दरिया बुर्द न कर दे। हज़रत मौलाना मदनी जमाअ़ते इस्लामी को ईमान व इस्लाम का सर्टीफ़ीकेट कैसे दे सकते हैं, लिहाज़ा हज़रत मुहतरम के मुतालबे का यह हिस्सा तो खुद उन्हीं के अक़ीदे व मसलक के एतेबार से ग़लत है इस लिए उसके पूरा करने का सवाल ही पैदा नहीं होता अलबत्ता इस

मौक़ा पर हमें ख़ुद हज़रत मौलाना मदनी से एक सवाल करना है (बरैलवी मसलक के उलमा व अकाबिर ने तमाम अकाबिरे देवबन्द की तसानीफ़ को ज़लालत व बद दीनी और कुफ़्रियात का मजमूआ क़रार दिया है।)

चन्द सतर बाद- हज़रत मौलाना मदनी इरशाद फ़रमायें कि उन्होंने बड़े बड़े अइम्मए हक़ की पैरवी में कहां तक अहले हक़ का फ़रीज़ा अन्जाम दिया है ? और अकाबिरे देवबन्द की ग़लतियों से रुजूअ़ करने में कहां तक ख़ुलूस व लिल्लाहियत से काम लिया है।"

नोटः- जादू वह है जो सर चढ़ के बोले- अभी टाटा नगर के सफ़र में मौलाना अलहाज क़ारी मुहम्मद उस्मान साहब आज़मी से यह मालूम हुआ कि बैंगलौर के ग़ैर मुक़ल्लिदीन ने कोई किताब शाया की है जिसमें उलमाए अहनाफ़ की ख़बर लेते हुए हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत पर कुफ़्र का फ़तवा दिया है। मुआ़मला सुन्नी और वहाबी का नहीं था बल्कि ग़ैर-मुक़ल्लिद और हनफ़ी का था लिहाज़ा इस निशाने की ज़द में हिफ़्ज़ुल ईमान की इबारत भी आ गई अगर यह किताब दस्तियाब हो गई तो ख़ून के आंसू जिल्द सोम में उसका हवाला हदियए नाज़िरीन किया जाएगा।

मेरा अपना इरादा यही था कि 'ख़ून के आंसू' दो हिस्सों पर ख़त्म कर दी जाये लेकिन गुजरात के दौरा में हज़रत मुहद्दिसे आज़म हिन्द अलैहिर्रहमा ने इरशाद फ़रमाया कि इसके तीन हिस्से हों और आख़िरी हिस्से में उलमाए देवबन्द की पुरानी किताबों पर तब्सेरा किया जाये, चुनान्चे हज़रत अलैहिर्रहमा के इरशद के मुताबिक़ जो बाज़ किताबें मेरे पास न थीं उन सब को हासिल कर लिया है और जिल्दे सोम का भी काम किसी हद तक हो चुका है। इन्शाअल्लाह तआ़ला हिफ़्ज़ुल ईमान, तक़वीयतुल ईमान, सिराते मुस्तक़ीम, तह्ज़ीरुन्नास, बराहीने क़ातेआ़, अलइमदाद, अशद्दुल अज़ाब सैफ़े यमानी, अश्शिहाबुस्साक़िब, अलमुहन्नद वग़ैरह जैसी किताबों पर नये अन्दाज़ का तबसेरा किया जाएगा और उनकी तमाम तावीलात पर ऐसी हुज्जत व दलील क़ाइम की जाएगी, जिससे उनका नाक़ाबिले क़बूल होना आफ़ताब से ज़्यादा रौशन हो जाएगा। अब जिसके पास 'ख़ून के आंसू' के मुकम्मल हर सेह हिस्से होंगे वह उलमाए देवबन्द की किताबों से बे नियाज़ हो जाएगा। इन्हीं तीनों हिस्से में उनके तमाम अ़क़ाइद समेट दिये जायेंगे।

जिल्दे सोम के आख़िरी हिस्से में उलमाए देवबन्द के अ़क़ाइद की एक बहुत

लम्बी लिस्ट होगी जिसमें उनके तमाम अक़वाल को मअ़ हवाला के दर्ज कर दिया जाएगा ताकि किसी भी उजलत के मौक़ा पर उससे काम लिया जा सके।

अब अख़ीर में गुज़ारिश है कि परवरदिगारे आलम हम सब को अपने प्यारे रसूल का वफ़ादार बनाये और उनकी इज़्ज़त व हुरमत पर मर मिटने की तौफ़ीक़ दे।

ऐ रब जिस तरह हम अपने मुआ़मलात में दोस्त और दुश्मन की शनाख़्त रखते हैं ऐसे ही सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के दोस्त और दुश्मन के परखने और पहचानने की सलाहियत अ़ता फ़रमा।

ऐ रब हम उस गरोह से इज़हारे बेज़ारी करते हैं, जो तेरे रसूल को पैग़म्बर भी कहते हैं और मआ़ज़ल्लाह गाँव का चौधरी और चमार से ज़्यादा ज़लील व ज़र्रए नाचीज़ से कमतर भी।

ऐ रब हमारा ईमान है कि जिस तरह तू अपनी शाने उलूहियत में बे मिस्ल व बे नज़ीर है ऐसे ही जाने रहमत सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम न सिर्फ़ इन्सानों बल्कि पैग़म्बरों और रसूलों में सब से मुमताज़ व यगाना हैं।

ऐ रब हमें इसी निखरे हुए अ़क़ीदे पर चला और इसी पर मौत भी अ़ता फ़रमा आमीन सुम्म आमीन बिजाहि सय्येदिल मुर्सलीन सल्लल्लाहु अलैहि व आलिही वसल्लम।

जिल्द दोम ख़त्म शुद

ख़ुशी के आंसू

जिसमें ख़ून के आंसू जिल्दे अव्वल पर मुल्क व मिल्लत के अकाबिर की गिराँक़दर राय और तन्क़ीद व तबेसरा को इकट्ठा कर दिया गया है

हस्बुल हुक्म

मुक्तदाए अहले सुन्नत हज़रत मुफ़्तीए आज़म हिन्द
दाम ज़िल्लुहुम व फुयूज़ुहुम

मुरत्तेबा

अब्दुर्रशीद अरशद निज़ामी

पेशे लफ़्ज़

यह किताबचा जो अब आपके ज़ेरे मुताला है इसकी बाबत मेरा अपना इरादा यह था कि आने वाली रायें पासबान में शाया कर दी जायेंगी।

मगर मुक़्तदाए अहले सुन्नत हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द के इरशादे हुमायूं ने किताबी साइज़ की इशाअ़त पर हमें पाबन्द कर दिया और यह नाम भी हुज़ूर ही का तज्वीज़ किया हुआ है।

इस किताब से मुतअ़ल्लिक़ जब हज़रत मुजाहिदे मिल्लत मौलाना मुहम्मद हबीबुर्रहमान साहब क़िबला से मैं ने राय तलब की तो हज़रत ने यह फ़रमाया कि मैं तुम्हारी तक़रीर सुन कर यह कहता था तुम्हें ख़िताबत आती है जैसा कि मैं अक्सर तुम्हें समझाता हूं कि ख़िताबत और बुरहान में बड़ा फ़र्क़ है लेकिन इस किताब ने मेरा ख़्याल बदल दिया और इसी को तुम मेरी राय समझो।

अफ़सोस कि आज हम में हज़रत मुहद्दिसे आज़म हिन्द अ़लैहिर्रहमा न रहे मगर हज़रत की राय फ़ाइल में महफ़ूज़ थी तबर्रुकन उसी से इसका आग़ाज़ किया जाता है।

मुश्ताक़ अहमद निज़ामी
कछौछा शरीफ़

ख़ून के आंसू

यह उस मुबारक तस्नीफ़ का नाम है जो हज़रत अल्लामा ख़तीबुल मिल्लत पासबाने उम्मत मौलाना मुश्ताक़ अहमद निज़ामी के ज़िम्मेदार क़लम का एक शानदार शाहकार है देवबन्दियत क्या चीज़ है इसको क़बूल कर लेना चाहिये या साफ़ तौर से उससे बेज़ारी का एलान कर देना चाहिये कितने देवबन्दी हैं वह ख़ुद नहीं जानते कि उनके बानियाने फ़िरक़ा के अक़ाइद क्या हैं और कितने सुन्नी हैं वह अब तक न जान सके कि देवबन्दियत में ऐसी क्या क्या चीज़ें हैं जिनकी बिना पर इस्लामी दुनिया इस फ़िरक़ा से बेज़ार है यह हज़रत मौलाना का देवबन्दियों और सुन्नियों दोनों पर अज़ीम एहसान है कि न सिर्फ़ सुन्नियों को महफ़ूज़ रहने का मौक़ा दिया बल्कि देवबन्दियों को भी लमहए फ़िक्रिया दिया कि वह ठन्डे दिल से सोच सकें कि हम किधर जा रहे हैं और जिधर जा रहे हैं वहां ख़्वाह सब कुछ होगा मगर नजात भी है या नहीं।

मौलाना की यह तस्नीफ़ अपनी शान की बे मिस्ल तस्नीफ़ है जिसकी मुल्क व क़ौम को बेहद ज़रूरत थी और देवबन्दियत व सुन्नियत की हक़ीक़त पर अब तक जो पर्दा डाला जाता था वह चाक कर दिया और सुन्नी उलमा देवबन्दियों को क्या कहते हैं उसकी तरफ़ इशारा तक नहीं किया और देवबन्दी लोग अपनी देवबन्दियत को क्या बता रहे हैं उसी को देवबन्दी क़लम से निकले हुए अक़ाइद व कलिमात को मन्ज़रे आम पर लाकर ग़ौर व फ़िक्र की देवबन्दियों को दावते आम दी है।

अभी तक देवबन्दी अवाम व ख़वास में क़दरे मु तरक यह थी कि हर देवबन्दी किसी मसला में यह सुन कर कि यह हमारे बड़ों की बात है गो रसूले पाक की अज़मत के ख़िलाफ़ है अपने बड़ों की ताईद में इतना बढ़ जाता था जिसको वह बड़े भी पसन्द न करें वह सिर्फ़ यह चाहता था कि अपने उलमा बहर हाल मासूम क़रार पायें और हक़ व नाहक़ की तलाश नहीं करता था यह बात पहले से चली आ रही है कि उलमाए देवबन्द के अकाबिर ने एक इबारत के क़ाइल पर कुफ़्र व गुमराही का फ़तवा दिया और जब पता चला कि यह तो मौलवी इस्माईल की इबारत है तो सर पीटने लगे अभी गोया कल की बात है कि क़ासिम नानौतवी की इबारत

पर उनके पोते मौलवी तय्यब मुहतमिम मदरसा देवबन्द ने कुफ़्र का फ़तवा दे दिया मगर जब उनके इल्म में आया कि यह तो दादा जान का कुफ़्र था तो साइल को आंख दिखाने लगे कि पहले क्यों न बता दिया अगर बता देता तो मैं अपने दादा को बहर हाल मासूम क़रार देकर इबारते कुफ़्रिया को ऐन इस्लाम ठहरा देता ख़ुद मेरा वाक़िआ है कि मौलवी हनीफ़ ख़ैराबादी ने मुझको लिख कर दे दिया कि हमारे उलमाए देवबन्द तौहीने रसूल को कुफ़्र नहीं जानते मगर उनके मुनाज़िरीन को मालूम कराया तो वह कानों पर हाथ रखने लगे। बात यह है कि यह सदी देवबन्दियत की पैदाइश की सदी है और हर तहरीक अपने जन्म दिनों में बाहमी तख़ालुफ़ व तहाफ़ुत में पड़ जाती है मौलाना का सब से बड़ा एहसान यह है कि पूरी देवबन्दियत की बरहना तस्वीर एक जगह रख दी है।

इस तस्नीफ़ को पढ़ कर जी चाहता है कि इसका नाम (देवबन्दियत अपने आईने में) रखा जाये और हज़रत शाह अब्दुल अज़ीज़ मुहद्दिस देहलवी के ज़ौक़ के मुताबिक़ (तोहफ़ए देवबन्दिया) नाम रखा जाये और मौलवी इलियास बरनी हैदराबादी के तर्ज़ पर (देवबन्दी मज़हब) रखा जाये कि नाम ही से ज़ाहिर हो जाये कि मुसन्निफ़ की काविशों ने क्या चीज़ मुल्क व मिल्लत को दी है गो इसमें शुब्हा नहीं कि एक मुस्लिम दीनदार को देवबन्दी शोख़ियों और बद कलामियों को देख कर ख़ून के आंसू निकल पड़ते हैं लेकिन यह लफ़्ज़ पहले से अफ़साना नवीसों ने इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है और अब इज़हारे हक़ीक़त के हक़ में वह जानदार लफ़्ज़ नहीं रहा।

अब आलिमे इस्लामी का तक़ाज़ा यह है कि मौलाना ने जिस सिलसिला को शुरू कर दिया है अपने इल्मे वसीअ़ की बदौलत उसको आख़िर तक पहुंचायें अबातीले देवबन्दिया में मज़ीद इज़ाफ़ा करें हिस्सा दोम में यह वाज़ेह कर दें कि देवबन्दियत दर हक़ीक़त वहाबियत का फ़ार वर्ड ब्लाक है और इलियासी तहरीक देवबन्दियत के रज़ाकारों की टोली है और तीसरे हिस्सा में देवबन्दियत जिन अक़ाइदे क़बीहा अहले सुन्नत से टक्कर ले रही है उसको देखा कर कुछ सुन्नियों पर भी एहसान फ़रमा दें कि देवबन्दी अपनी देवबन्दियत को देखें तो ग़रीब सुन्नी भी अपनी सुन्नियत का नज़ारा करके दिल से दुआयें दें।

फ़क़ीर अबुलमहामिद सय्यद मुहम्मद ग़ुफ़िरलहू अशरफ़ी जीलानी
23 रबीउल आख़िर शरीफ़ 1381 हि०

बरेली शरीफ़

चाइले वे वदल फ़ाज़िले नौजवां मौलवी मुश्ताक़ अहमद सल्लमहू

अस्सलामु अलैकुम

मिज़ाजे गिरामी! आज मैंने आपकी किताब (ख़ून के आंसू) देखी बेहद मुसर्रत हुई। लिहाज़ा आप याद रखें कि उर्स के मौक़ा पर एक नुस्ख़ा (ख़ून के आंसू) ज़रूर साथ लेते आयें। मैं आपकी अनोखी तहक़ीक़ात देख कर बहुत मसरूर हुआ हूं मैं अस्बाबे ज़वाल के दूसरे हिस्से में उससे भी मदद लूंगा। इस सिलसिला में मुझे अपने मरहूम मेहरबान मौलाना क़ाज़ी ग़ुलाम सज्जाद साहब की एक बात याद आई उन्होंने जब 'अस्बाबे ज़वाल' का मुबय्यज़ा देखा तो बहुत ख़ुश हुए और वापस करते वक़्त कहने लगे कि मैं इस किताब को देख कर इस नतीजा पर पहुंचा हूं कि रद्दे मुबतदेईन आपके ख़ानदान ही का हिस्सा हो गया है आला हज़रत क़ुद्दस सिर्रहू ने तमाम मुबतदेईन का रद्द इल्मी हैसियत से किया और ऐसा किया कि क़यामत तक के लिए काफ़ी है तुम ने उस रद्द का दूसरा रास्ता इख़्तियार किया है अब मुसन्निफ़ीन इध र आयेंगे। यह किताब एक पगडन्डी है जिसे अगले मुसन्निफ़ीन शारेअे आम कर देंगे तो मैं आप की किताब को देख कर समझा कि वह पगडन्डी इसी इज़ाफ़ा से शारेअे आम हो गई। ख़ुदावन्दे आलम आपको शाद व आबाद रखे और ज़्यादा से ज़्यादा आप से ऐसी दीनी ख़िदमात ले जिन से वह और उसका प्यारा रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) राज़ी हो। वस्सलाम

दुआगो- हसनैन रज़ा

अदरी ज़िला आज़मगढ़ (मौजूदा मऊ)

सरापा ख़ुलूस अल्लामा निज़ामी दाम ज़िल्लुहुलआली

हदियए सलाम मस्नून! तालिबे ख़ैर -बख़ैर अल्लाह करे ज़ोरे क़लम और ज़्यादा हो। जा अल हक़ व ज़हक़ल बातिल इन्नल बातिल काना ज़हूक़ा क़िलए नज्दियत को हिचकोले में लाने वाली किताब 'ख़ून के आंसू' में आपकी काविशे फ़िक्र, बालिग़ नज़री, कसरते मालूमात, तर्ज़े निगारिश, अन्दाज़े तहरीर महीनों सालों दाद दी जाये तो हक़ अदा न होगा। नई रौशनी और जिद्दत पसन्दी का दौर है वक़्त की पुकार के मुताबिक़ आपकी ज़बाने हक़ तर्जुमान से सदाए लब्बैक निकली आपके हुस्ने तदब्बुर ने मिज़ाजे क़ौम को समझा अगर नाने जवीं भी रग़बत के साथ मक़बूले शिकम हो जाये तो तवानाई व तन्दुरुस्ती में ग़ैर मामूली मददगार व मुआविन बन सकती है और अगर लतीफ़ और मुक़व्वी ग़िज़ायें बजब्र शिकम में ठूंस दी जायें तो रोहन इन्तेशात पज़ीर ही होगी।

क़स्रे देवबन्दियत की जैसी जासूसी और सुराग़ रसानी फ़रमाई हैरत है, ख़ुद उनको भी अपने घर के तमाम गोशों का इतना इल्म न हुआ होगा। ख़ून के आंसू में वह तमाम ख़ुसूसियत मौजूद हैं जिन से हर मकतबए फ़िक्र ज़ौक़ व लज़्ज़त महसूस करेगा। अदबे लतीफ़ के दिलदादे हों या मज़हब व मिल्लत के शैदाई या नक़्द व तब्सेरा के फ़िदाई, आपने अपनी ख़ुदा दाद क़ाबिलियत से बुतलान व उदवान की ख़ार ज़ार वादियों में भटकने वालों के सामने लम्हए फ़िक्रिया पेश कर दिया। ग़रज़ यह गुलदस्तए महासिन मौजूदा दौर में शाहकार तस्नीफ़ है, हाथ में किताब आई तो ख़त्म किये बग़ैर छोड़ने को तबीअत न चाही और इख़्तेताम पर जौक़े मुताला तशना ही रहा। मैं ने इतनी ज़ख़ीम किताब घन्टा में देख ली दोबारा देखना चाहता था मगर अहबाब व अइज़्ज़ा के तक़ाज़ों ने नाक में दम कर दिया। मिल्लते इस्लामिया के हर फ़र्द से समीमे क़ल्ब से अपील करूंगा कि इसकी इशाअत में किसी भी इमकानी जिद्दो जहद से बाज़ नहीं आयें ताकि दूसरा हिस्सा जल्द नज़र नवाज़ हो सके नीज़ आपके जज़्बए करम से इसरारे पैहम करूंगा कि दूसरे हिस्सा में ज़्यादा ताख़ीर न हो।

वस्सलाम मअलइकराम

मुजीबुल इस्लाम नसीम आज़मी

मुदर्रिस मदरसा अरबिया अल जदीद

धैरा जी

'ख़ून के आंसु' का बरसों से इन्तेज़ार था। मुम्बई की मुलाक़ात में बाबू मुश्ताक़ ने किताब का एक नुस्ख़ा दिया। ख़िलाफ़े मामूल किताब की एक एक सतर देखा तबीअत फड़क गई, दिल बाग़ बाग़ हो गया।

इसमें कोई शुबहा नहीं कि पूरी किताब हक़ व सदाक़त की आईनादार है और बाबू मुश्ताक़ की काविशे ज़ेहनी पर ग़म्माज़ है। देवबन्दी अक़ाइद के रद्द व इब्ताल में बहुत सी किताबें लिखी गईं मगर 'ख़ून के आंसु' पहली किताब है जिसको सुन्नी मकतबए फ़िक्र की शाहकार कहा जा सकता है।

मुसन्निफ़ ने बड़ी दीदा रेज़ी और तहक़ीक़ से काम लिया है। यह किताब इस क़दर सुलझे अन्दाज़ में लिखी गई है कि कहीं भी क़लम ने सन्जीदगी व मतानत का साथ नहीं छोड़ा मुसन्निफ़ के हक़ में मेरी पुर ख़ुलूस दुआ है और सुन्नियों से इल्तेमास है कि वह 'ख़ून के आंसू' हर घर में पहुंचा दें।

गदाए ख़्वाजा सय्यद अब्दुल हक़ क़ादरी चिश्ती

7 मुहर्रमुल हराम सन् 1381 हि०

जिला सियालकोट

मौलाना अलमुकर्रम दामत बरकातुहुम

व अलैकुम अस्सलाम

"ख़ून के आंसू" मिल गई है। एक ही मजलिस में सारी पढ़ डाली बड़ा लुत्फ़ आया और मालूमात में इज़ाफ़ा भी हुआ।

शातिमाने रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के बाज़ ऐसे अक़ाइद व आमाल का भी आपने इन्केशाफ़ फ़रमाया है। जिन से ग़ालिबन ख़ुद उनके मुअतक़िदीन भी वाक़िफ़ न थे या वाक़िफ़ थे मगर उनके इख़्फ़ा ही को बेहतर समझते थे। बहरहाल आपकी यह तालीफ़ अहले सुन्नत के लिए एक गिरां क़दर इल्मी व तारीख़ी तोहफ़ा है और मुख़ालिफ़ों के मुक़ाबला में एक मज़बूत हरबा। ख़ुदा तआला आपको इस मेहनत का अज्रे अज़ीम अता फ़रमाये। आमीन॰

अबुन्नूर मुहम्मद बशीर

मुदीर माहे तैबा, कोटली लोहारां, सियालकोट

सहसराम

'ख़ून के आंसू' कितनी मर्तबा पढ़ी इसका शुमार मुश्किल है। वक़्त गुज़ारने के लिए जब कभी हाथ में ली दूसरे तमाम काम भूल कर पढ़ता चला गया। कई मर्तबा बे साख़्ता ज़बान से निकल गया अजीब जुनून ख़ेज़ किताब है। उस्तादुल उलमा हज़रत मौलाना ज़ियाउल हसन साहब क़िबला का यह आलम कि किताब पूरी करने के शौक़ में पूरी रात आंखों आंखों में गुज़ारी। मौसूफ़ ने आपकी कोशिश को बहुत सराहा।

हासिल इस ख़ामा फ़रसाई का यह है कि 'ख़ून के आंसू' अपने मौज़ूअ् पर ऐसी अछूती और लाजवाब किताब है जो हर मकतबए ख़्याल के लोगों को दावते फ़िक्र व नज़र दे रही है।

इस में हम सुन्नियों पर यह इल्ज़ाम है कि उलमाए देवबन्द को ख़्वाह मख़्वाह बुरा भला कहते हैं। फ़ाज़िल मुसन्निफ़ ने किताब में उसी की निक़ाब कुशाई की है कि असल हक़ीक़त क्या है, उलमाए देवबन्द के मुतअल्लिक़ हमारे ख़्यालात महज़ अफ़साना ज़ाद है या ठोस हक़ीक़त।

क्या वाक़ई उलमाए देवबन्द ऐसे हैं ? क्या यह बातें सच हैं ? क्या उनके इख़्तिलाफ़ात की कुछ हक़ीक़त है ? क्या बरेलवी सच्चे हैं ? इसी क़िस्म के न जाने कितने सवालात हैं जो आज के इन्सानी दिमाग़ में पैदा होते हैं फ़ाज़िल मुसन्निफ़

ने किताब में इन्हीं सवालात के जवाब दिये हैं फिर सब से बड़ी ख़ूबी यह कि मुसन्निफ़ ने अपनी तरफ़ से कुछ भी नहीं कहा उन्हीं के फ़रमूदात को अवाम की अदालत में पेश करके फ़ैसला उन्हीं पर छोड़ दिया है।

हक़ीक़त यह कि तमामी फ़िक्र व नज़र के लोगों को इस किताब का मुताला ज़रूर करना चाहिये। ताकि नफ़्से वाक़िआ से ग़लत प्रोपगन्डा की दबीज़ तहें उठ सकें और असल हक़ीक़त वाज़ेह हो सके। किताब पर मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी और मकतबए पासबान का नाम होना ही उसके इल्मी सेकाहत की गारन्टी है। किताब का मुताला यक़ीनन मेरे दावे की तस्दीक़ कर देगा। मुसन्निफ़ अपनी कोशिश में कामयाब और क़ाबिले मुबारकबाद हैं। फ़क़त

कामिल सहसरामी

2 अगस्त 61 ई॰

पटना

'ख़ून के आंसू' वसूल पाया। पढ़ कर बड़ी मसर्रत हुई। अल्लामा निज़ामी ने दुनियाए सुन्नियत के लिए बड़ा काम अन्जाम दिया है। देवबन्दियों, वहाबियों के लिए दन्दान शिकन जवाब है।

(मौलाना) मुहम्मद इस्लाम अख़्तर फ़िरदौसी

शोलापुर

'ख़ून के आंसू' लिख कर आपने देवबन्दियों का पर्दा चाक कर दिया। आपकी ज़ाते गिरामी पर जितना भी हम फ़ख़्र करेंगे कम है। आपने अहले सुन्नत व जमाअत पर बड़ा एहसान किया है।

सय्यद अब्दुल्लाह चीफ़ क़ाज़ी

शोलापुर

जाइस

अल्हम्दु लिल्लाह ख़ून के आंसू की वी.पी. वसूल हो गई जो कमी अब से बहुत पहले महसूस की जा रही थी। बहम्देलिल्लाह आपके हाथों पूरी हो गई। जज़ाकुमुल्लाहु ख़ैरलजज़ा॰

अब्दुलवहीद ख़ाँ, जाइस

अहमदाबाद

'ख़ून के आंसू' शुरू से आख़िर तक देखी अजीब अन्दाज़ से लिखी है कि अब तक इस कमाल की किताब रद्द में नहीं गुज़री जो अपनी हैसियत से अनोखी है।

उम्मीद कि और जिल्दें भी इसी अन्दाज़ की होंगी। और जिन लोगों ने भी देखा बहुत पसन्द किया। मौला तआ़ला ज़ोरे क़लम और ज़्यादा करे।

(मौलाना) निसार अहमद मुबारकपुरी
मुक़ीम हाल अहमदाबाद

अहमदाबाद

'ख़ून के आंसू' जिल्द अव्वल मेरी निगाह से गुज़री और मैंने बिलइस्तीआब मुताला किया यह बात क़ाबिले क़दर है कि इसके तमाम हवालाजात उलमाए देवबन्द ही के किताबों से दिये गये हैं। उनकी किताबों का मुकम्मल रिसर्च करने के बाद आपने रोज़े रौशन की तरह ज़ाहिर फ़रमा दिया कि वाक़ेई देवबन्दी मुल्लाओं ने अल्लाह और उसके हबीबे पाक अ़लैहिस्सलातु वस्सलाम की शाने अरफ़अ़ व आला में गुस्ताख़ियां की हैं। इस किताब ने तो ऐवाने बातिल में ज़लज़ला पैदा कर दिया और अक़ाइदे बातिला की धज्जियां उड़ गईं। दौरे हाज़िर में उम्मते मुस्लिमा को ऐसी जामेअ़ और मुदल्लल किताब की अशद ज़रूरत थी जिसकी कमी को जनाब वाला ने पूरा फ़रमा दिया।

सय्यद बुरहानुद्दीन
सदर तबलीग़े सीरत अहमदाबाद

कानपुर

'ख़ून के आंसू' को अपनी उम्मीद से ज़्यादा बुलन्द पाया। आपकी काविश और रिसर्च पर जिस क़दर भी आपकी तहसीन की जाये कम है इस किताब ने हर बहाबी देवबन्दी का सर नीचा कर दिया, दलाइल की पुख़्तगी और अन्दाज़े तहरीर ने चार चांद लगा दिये हैं जिस क़दर सुलझे पैराए में ख़ून के आंसू की तरतीब दी गई है वह आपका अपना हक़ है जिसने भी किताब को देखा तहसीन व आफ़रीं कहे बग़ैर न रह सका। इस में कोई शुबाह नहीं आपने हम सब का सर ऊँचा कर दिया।

(मौलाना) ज़हीरुद्दीन
ख़ादिम सुन्नी जमीअ़तुल उलमा, कानपुर

मालेगाँव

मुद्दत हुई आपने ख़ून के आंसू का तज़्किरा किया था। अब मुताला से गुज़र गई अपनी अदीमुल फ़ुरसती के बावजूद पूरी किताब को देखा। जितनी दियानत व अमानत से आं अज़ीज़ ने हवालाजात को इकट्ठा किया है उस पर एक मैं ही नहीं बल्कि हर इन्साफ़ पसन्द आपको मुबारकबाद देगा, रद्द में बहुत सी किताबें लिखी गई हैं लेकिन ख़ून के आंसू अपनी नौइयत की पहली किताब है जिसने हर

दिल व दिमाग़ पर बड़ा असर किया है। किताब देख कर दिल बाग़ बाग़ हो गया और बे साख़्ता ज़बान से दुआयें निकल आईं। ख़ून के आंसू देखने के बाद इश्तियाक़ बढ़ गया कि जल्द से जल्द आपकी किताब 'मेअ़यारे हक़' मन्ज़रे आम पर आ जाये जिसका आं अज़ीज़ मुझ से तज़्किरा कर चुके हैं। ख़ुदावन्दे करीम आं अज़ीज़ को सेहत व सलामती से रखे और दीने मतीन का आपसे ज़्यादा काम ले आमीन॰

(मौलाना) मुहम्मद सिद्दीक़ आज़मी अशरफ़ी
ख़ादिम दारुल उलूम अशरफ़िया, अहले सुन्नत, मालेगाँव

कछौछा शरीफ़

आपकी गिरां क़दर क़ाबिले फ़ख़्र किताब 'ख़ून के आंसू' नज़र से गुज़री तमसीलात, नज़ाइर व शवाहिद से वाक़िआत व हक़ाइक़ और सच्ची तस्वीर आपने खींच कर रख दी है। बिला शुबहा मुआ़नेदीन व मुकाबिरीन पर रौशन हुज्जत और दलीले क़ातेअ़ क़ाइम कर दी गई है। मुझे तो किताब मज़कूर की सतर सतर और लफ़्ज़ लफ्ज से ईमान व इरफ़ान की हलावत महसूस हुई। उम्मीद है कि यह किताब अरबाबे नज़र व अहले बसीरत के लिए मशअ़ले राह और अहले यक़ीन व इज़आ़न के लिए मज़ीद इत्मीनाने क़ल्ब का बाइस होगी। अहले इन्साफ़ से राहे हक़ क़बूल करने की उम्मीद है। अल्लाह तआ़ला मुज़बज़ेबीन व मुरताबीन को इसके ज़रीया हिदायत नसीब फ़रमाये।

(मौलाना) सय्यद हमीद अशरफ़ कछौछवी
मुदर्रिस अहसनुल मदारिस, कानपुर

हिम्मत नगर

'ख़ून के आंसू' नज़र से गुज़री बेहद पसन्द आई ऐसी मुदल्लल व सन्जीदा किताब आज तक नज़र से नहीं गुज़री थी। आपकी मेहनत व काविश क़ाबिले दाद है।

(मौलाना) अब्दुस्सत्तार, हिम्मत नगर

छपरा

'ख़ून के आंसू' शुरू से लेकर आख़िर तक पढ़ी बेहद ख़ुशी हुई ख़ुदा की ज़ात से उम्मीद है कि मुसलमानों को इससे फ़ाइदा पहुंचेगा। हमारी दुआ है कि परवरदिगारे आलम आपकी और तमाम उलमाए अहले सुन्नत की उम्र दराज़ फ़रमाये ताकि दीने मतीन की ख़िदमत होती रहे।

(मौलाना) ज़फ़ीरुल हसन
दारुल उलूम नईमिया, छपरा

जालौन

एक मुद्दत से 'ख़ून के आंसू' के लिए तबीअत बेचैन थी। आपने वाक़ेई इस पुर फ़ेतन दौर में मज़हबे अहले सुन्नत का बहुत बड़ा काम अन्जाम दिया और वक़्त की बड़ी कमी को पुरा किया। हक़ाइक़ को सामने ला कर बे दीनों ज़मीर फ़रोशों के पोशीदा करतूतों को बे निक़ाब करके अवाम को सही हालात से रूशनास कराया।

मुहम्मद सादिक़

सेक्रेट्री जमीअ़तुल उलमा, कोंच, ज़िला जालौन

हावड़ा

आपने यह मअ़रेकतुल आरा किताब मुसम्मा बः ख़ून के आंसू तस्नीफ़ फ़रमा कर सुन्नियों पर एहसाने अ़ज़ीम फ़रमाया और देवबन्दियों को राहे हिदायत दिखाया। क्या अच्छा होता कि देवबन्दी हज़रात इस को सन्जीदगी के साथ मुताला करते और अपने गिरेबान में मुंह डाल कर सोचते। अब तक जो सुन्नी उलमाए किराम उनके कुफ़्री अक़वाल की तरदीद किताब व सुन्नत की रौशनी में करते रहे। इस पर वह थी बः जबीं होकर सुन्नियों का शोर व शर कह कर दामन छुड़ाते रहे अब उनके ही घर के हवालाजात से उनके अक़वाल का कुफ़्री होना या क़ाबिले नफ़रीं होना साबित किया गया है। अब देखा जाये कि यह कौन सा पैंतरा बदलते हैं और मन गढ़त तावीलात से दामन बचाने की कोशिश करते हैं।

उलझा है पाँव यार का ज़ुल्फ़े दराज़ में

ख़ुदावन्दे क़ुद्दूस आपकी उम्र में बरकत फ़रमाये और ऐसी ही दूसरी तस्नीफ़ की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दे ताकि हक़ व बातिल आश्कारा हो जाये। ग़रज़ कि ख़ून के आंसू की तारीफ़ जितनी भी की जाये कम है। यह किताब तारीफ़ की मुहताज नहीं है। सही मानों में आपने वक़्त के तक़ाज़ों को पूरा किया है। मेरी बहुत दिनों से तमन्ना थी कि कोई ऐसी किताब तस्नीफ़ हो जिस में देवबन्दियों को एतेराज़ करने का मौक़ा न मिले बेशक यह किताब ऐसी मुदल्लल है कि किसी को चूं चेरा करने की हिम्मत न होगी। आपने जो कुछ हवाला दिया है उन्हीं के बुज़ुर्गों की तस्नीफ़ की हुई किताब से, बेशक यह किताब बे मिसाल और लाजवाब है।

मेरी दिली दुआ है कि अल्लाह तआ़ला आपको तौफ़ीक़ दे कि ऐसी ही नायाब किताब तस्नीफ़ करते रहें। ख़ुदा उसका अज्र देगा। मुझे उम्मीद है कि इस किताब के पढ़ने के बाद हर मुसलमान हक़ व बातिल का फ़ैसला कर लेगा।

फ़क़त वस्सलाम

(हाफ़िज़) मुहम्मद इस्लाम, हावड़ा

सुल्तानपुर

रद्दे वहाबिया दियाबना में किताबों का लिखना यह पुरानी बात है मगर जिस अन्दाज़ से आपने 'ख़ून के आंसू' में ख़ुश्क मज़ामीन को इन्तेहाई दिलचस्प व दिल आवेज़ बना दिया है, यह एक बिल्कुल नया तरीक़ा है, जहां आप मज़ामीन के फ़राहम करने और उसकी तरतीब देने में मुस्तहिक़े दाद और उससे कहीं ज़्यादा एक नये स्लूबे बयान व जदीद तर्ज़े निगारिश पर क़ाबिले मुबारकबाद लाइक़े तहसीन हैं।

यह देख कर जी बहुत ख़ुश हुआ कि किताबत, तबाअ़त और टाइटल पेज कवर को दीदा ज़ेब बनाने में दफ़्तर पासबान ने बड़े हौसला से काम लिया है। वरना इस बारे में आ़म तौर पर लोगों का बड़ा गिरा हुआ मज़ाक़ है।

मुहम्मद सलीम

मुहतमिम जामिया अरबिया

फ़ैज़ाबाद

ख़तीबे मिल्लत हज़रत मौलाना मुहतरम ज़ाद फ़ज़्लुकुम व अ़ेनायतुकुम

मिज़ाजे आली! अस्सलामु अलैकुम

आपकी मअ़रेकतुल आरा तस्नीफ़ ख़ून के आंसू का अव्वल ही फ़ुरसत में ग़ाइरे नज़र से मुताला किया। किताब का इफ़ादी पहलू रौशन व ताबनाक है। देवबन्दियत के नाम निहाद व जुब्बा व दस्तारों वाले मौलवियों के करतूत मन्ज़रे आम पर आ गये। सुन्नी हज़रात जल्द से जल्द इस किताब का मुताला करके अपने ईमान को तरो ताज़ा करें और एअ़लाए हक़ व इबताल बातिल का जो जीता जागता सुबूत आपने दिया है इसके लिए हज़ार बार आप लाइक़े मुबारकबाद हैं। रब्बे करीम की बारगाहे बे नियाज़ में दुआ है कि मज़कूरा किताब को शरफ़े क़बूलियत से नवाज़ते हुए आपकी क़ुव्वते तहरीर व तक़रीर को क़ाइम रखे। काश सुन्नियत आपकी ज़ाते अक़दस से उजागर हो और फले फूले।

फ़क़त

आपकी दुआओं का मुहताज

मुश्ताक़ अहमद सदर मुदर्रिस अशरफ़ुल उलूम

बराऊँ शरीफ़ ज़िला बस्ती

ख़ून के आंसू

मेरी नज़र में

ख़तीबे मशरिक़ अल्लामा मुश्ताक़ अहमद निज़ामी साहब सिर्फ तक़रीर व ख़िताबत ही के बादशाह नहीं बल्कि इस्लामी तर्ज़े फ़िक्र की हामिल तहरीर व इन्शा के भी एक मुमताज़ मुन्फ़रिद ताजदार हैं। इस्लाम व सुन्नियत की क़ाबिले क़दर ख़िदमत अन्जाम दी उसकी पूरी दुनियाए इस्लाम मुअ्तरिफ़ है।

रब्बुल आलमीन आपके वजूदे मसऊद को हवादिसे रोज़गार से महफ़ूज़ रखे और सेहत व आफ़ियत, सुकून व इत्मीनान की दौलत से नवाज़े-----

हज़रत ममदूह की ताज़ा तरीन गिरांमाया तस्नीफ़ 'ख़ून के आंसू' जो आम किताबी साइज़ के दो सौ छप्पन सफ़हात पर फैली हुई है। अहले सुन्नत के लिट्रेचर में क़ाबिले सद सताइश इज़ाफ़ा है। इफ़ादी हैसियत से इसकी जिस क़दर भी तारीफ़ की जाये कम है इस होश रुबा व हिम्मत शिकन दौर में जब कि मार्केट में फुहश अफ़सानों के मजमुए, मुख़र्रिबुल अख़्लाक़ नाविलें और जिन्सियात में हैजान पैदा करने वाले रसाइल व जराइद बकसरत छाये हुए हैं। ऐसी किताब जो शुरू से आख़िर तक इन्तेहाई मज़हबी रंग में रंगी हुई हो मन्ज़रे आम पर लाना यक़ीनन जूए शीर लाने के मुतरादिफ़ और निहायत जुरअत व हिम्मत की बात है।

ईं कार अज़ तू आयद व मर्दां चुनीं कुनन्द

'ख़ून के आंसू' अस्रे हाज़िर और मज़ाक़े वक़्त के ज़बान व अदब की मुकम्मल रिआयत के साथ इन्साफ़ व दियानत के तमाम तक़ाज़ों को पूरा कर रही है इसके मज़ामीन अगर एक तरफ़ ख़िरमने वहाबियत व देवबन्दियत पर बिजली की तरह गिरते हैं तो दूसरी तरफ़ परिस्ताराने हक़ व हामियाने इस्लाम व सुन्नियत के चमने ज़ार के लिए हयात अफ़रोज़ व ईमान परवर बहार साबित हो रहे हैं।

इस किताब के तमाम इफ़ादी पहलू पर रौशनी डालने के लिए एक तवील व बसीत मज़मून दरकार है जिसका इस वक़्त मौक़ा नहीं है। इसकी ख़ुसूसियात में सबसे अज़ीम ख़ुसूसियत जो इसको एक मक़ाम पर फ़ाइज़ कर रही है यह है कि वहाबियत देवबन्दियत की एतेक़ादियात व अमलियात की जिस क़दर भी गन्दगियां बे निक़ाब व तश्त अज़ बाम की गई हैं उनके सुबूत में ख़ुद परिस्ताराने वहाबियत

व देवबन्दियत की किताबों से हवाले पेश किये गये हैं ताकि उन बदनाम व रुसवाए ज़माना क़ौम का कोई फ़र्द इन्कार व तरदीद की जुरअत न कर सके और कफ़े अफ़सोस मलता हुआ ठन्डी ठन्डी सांस लेने पर मजबूर हो जाये------।

ईमान व एतेक़ाद की हिफ़ाज़त व बक़ा और वहाबिया दियाबना को दन्दान शिकन जवाब देने के लिए इस किताब का हर मुसलमान के घर में रखना ज़रूरी है।

मैं हज़रत मुसन्निफ़ दाम ज़िल्लहुल आली की ख़िदमत में अर्ज़ करूंगा कि वह इस मुफ़ीद व पास्बाने ईमान व अमल किताब का दूसरा हिस्सा भी जिस क़दर जल्द मुमकिन हो मन्ज़रे आम पर लाने की कोशिश करें।

मुख़लिस
मुहम्मद साबिरुलक़ादरी नसीम बस्तवी
मुदर्रिस दारुल उलूम फ़ैज़ुर्रसूल बराऊँ शरीफ़,
ज़िला बस्ती (उ॰प्र॰)

आरा- शाहाबाद

बिरादरे गिरामी हज़रत मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी सलाम मसनून बसद ख़ुलूस व अक़ीदत!

'ख़ून के आंसू' वक़्त व माहौल के तक़ाज़ा पर आपकी क़ाबिले क़दर तस्नीफ़ है जो भी पढ़ता है एक सही और मुहकम फ़ैसला किये बग़ैर नहीं रहता। अन्दाज़े बयान की पाकीज़गी और दलाइल व बुरहान की जामेइयत देख कर दिल से दुआ निकलती है--- अल्लाह करे ज़ोरे क़लम और ज़्यादा।

यह एक हक़ीक़त है कि आपने जो इस किताब की तस्नीफ़ में राह व रविश इख़्तियार की है बड़ी प्यारी है ख़ुदावन्दे करीम ने जिसे अक़्ले सलीम व फ़हम व फ़रासत अता फ़रमाई है वह इस किताब को पढ़ कर देवबन्दियत के ख़दो ख़ाल को नुमायां देख कर एक सही राह ज़रूर मुक़र्रर कर लेगा हां जिसे ख़ुदाए तआला ने अक़्ल ही न दी हो वह बेचारा मजबूर महज़ है।

मेरा इब्तेदा ही से यह नज़रिया है कि मौजूदा दौर के फ़ुज़लाए देवबन्द अपने अकाबिरीन की नाशाइस्ता और तौहीन आमेज़ किताबों पर दिल से नालां हैं मगर ज़बान से वह बातें नहीं कहते जो क़ुरआन व हदीस का फ़ैसला है।

ख़ून के आंसू जिल्द दोम का इन्तेज़ार है। मौला तआला आपको इल्म व अमल

में काफ़ी से काफ़ी तरक़्क़ी दे ताकि आप क़ौम की रहनुमाई कर सकें।

तालिबे दुआ
शबनम कमाली मुज़फ़्फ़रपुरी
सदर मुदर्रिस मदरसा वहीदिया, आरा शाहाबाद

बहरुल उलूम कटिहार

मुहिब्बे मुख़लिस ख़तीबे मशरिक़ फ़ाज़िले गिरामी हज़रत मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी मदज़िल्लुहुल आली सलाम मस्नून!

बख़ैरम व ख़्वाहाने ख़ैर नीज़ आपकी क़ाबिले दीद तालीफ़े जदीद मुसम्मा ब: 'ख़ून के आंसू' मुताला से गुज़री, इसके ज़ाहिरी औसाफ़ और मानवी ख़ूबियों ने ऐसा महसूस कर दिया कि अलालते तबअ् के बावजूद इतनी ज़ख़ीम किताब का मुताला एक ही नशिस्त में महज़ छ: घन्टे में ख़त्म किया वे साख़्ता ज़बान से सदाए तहसीन निकली। मज़मून दिलचस्प और अन्दाज़े बयान अनोखा है तर्ज़े निगारिश शाइस्ता और ज़ौक़ अफ़ज़ा है अपने क्या ग़ैर भी मुताला से कैफ़ व लज़्ज़त महसूस करेंगे। रद्दे वहाबिया में जो नई राह आपने पैदा की है और निहायत ही एतेदाल पसन्दी के साथ उनके ख़्यालात व किरदार की झलक उन्हीं की तहरीरों से पेश करके उनकी बेख़ कुनी की जो पसन्दीदा और सन्जीदा रविश आपने इख़्तियार की है आप ही का हिस्सा है कि इतनी ज़ख़ीम किताब के अन्दर भूले से भी सन्जीदगी व मतानत का दामन हाथ से न छूट सका और जज़्बाती हैजान भी एतेदाल पसन्दी की राह में हाइल न हो सका। ऐसी नई मालूमात आपने फ़राहम की हैं जिनसे अवाम क्या तबक़ए ख़वास भी ना आ ना था बल्कि ख़ुद देवबन्दियों को भी अपने अन्दरूने ख़ाना की ख़बर न थी और अपने घर के तमाम गोशों का इल्म न था। अकाबिरे देवबन्द ने अपने अक़ाइद के मकरूह नाज़ेबा और अपने किरदार के गन्दे और घिनौने चेहरे को मकर व फ़रेब के हसीन दोपट्टे और दीदा ज़ेब निक़ाब से छुपा रखा था। और हक़ीक़त से बे ख़बर अवाम बनावटी हुस्न और ज़ाहिरी ज़ेब व ज़ीनत पर फ़रेफ़्ता हो रहे हैं आपने भरी महफ़िल में उनका दोपट्टा खींच कर असली सूरत दुनिया को दिखा दी और उनकी अय्यारी व तक़य्या बाज़ी का निक़ाब सरे बाज़ार उलट कर बीच चौराहे पर बे हिजाब कर दिया कि हर देखने वाला उनके उयूब व नक़ाइस से आगाह हो जाये। यक़ीनन आपकी नई दरियाफ़्त क़ाबिले दाद और आपकी ज़ेहनी काविश लाइक़े मुबारकबाद है। मिल्लते इस्लामिया के हर फ़र्दे बशर

से मेरी मुख़लिसाना गुज़ारिश है कि वह ज़रूर इस किताब का मुताला करें और हल्क़ए अहबाब को भी मुताला पर उभारें। बल्कि मेरी राय तो यह है कि सुन्नी मकतबए फ़िक्र के तमाम मदारिस व मकातिब में इस का मुताला तलबा के लिए ज़रूरी क़रार दिया जाये ताकि उनकी मालूमात में ग़ैर मामूली इज़ाफ़ा हो जाये और जब कभी गन्दुम नुमा जौ फ़रोश से मुलाक़ात व गुफ़्तगू हो तो उनकी सूरत उन्हीं के आईना में दिखा दी जाये-

ईं कार अज़ तू आयद व मर्दां चुनीं कुनन्द

आपका अपना, मुहम्मद मुश्ताक़ अहमद ग़फ़रलहू मुज़फ़्फ़रपुरी
ख़ादिम शोबा तदरीस व इफ़्ता,
जामिया लतीफ़िया बहरुल उलूम, कटिहार

उतरौला

पासबाने क़ौम ज़िन्दाबाद!

सलाम मस्नून! 'ख़ून के आंसू' मौसूल हुई इन्तेहाई लज़्ज़त महसूस करते हुए मुकम्मल पढ़ डाली देवबन्दियत के राज़हाए सर बस्ता का इन्केशाफ़, अन्दरूने ख़ाना की नोक झोंक हसीन व दिलचस्प अन्दाज़ में बयान करना आप ही का हिस्सा है तर्ज़े तहरीर की ख़ूबियां नाक़ाबिले बयान हैं। ऐसा महसूस होता है कि एक दरिया बहता जा रहा है। अल्फ़ाज़ की मौज़ूनियत व दिलकशी, शीरीं बयानी, अशआर का ततावुक़, बे पायां मालूमात, फ़ाज़िले उलूमे मशरक़िया की ताईद करते हैं। देवबन्द की चहार दीवारी आपने बहुत क़रीब से देखी है। आप घर के राज़ी तो नहीं मगर भेदी ज़रूर हैं। एक एक जिल्द गंगा राम जमना दास के पास भेजवा दीजिये। अब भी अगर देवबन्दी धर्म न समझें तो उससे ख़ुदा समझे।

मन्ज़ूर है इस बज़्म में इस्लाहे मफ़ासिद
न तर जो लगाता है वह दु मन नहीं होता

दूसरी जिल्द कब मिलेगी? मिज़ाजे गिरामी तो बख़ैर होगा?

तुराब अली रज़वी सदरुल मुदर्रिसीन
मदरसा ज़ियाउल इस्लाम जामा मस्जिद उतरौला, ज़िला गोंडा

बलिया

ज़ुलमज्दे वल करम हज़रत मौलाना मुहतरम ज़ैद मजदकुम
अस्सलामु अलैकुम वरहमा

गिरामी नामा नज़र नवाज़ हुआ। याद फ़रमाई का शुक्रिया। बज़रीया हज़रत शैख़ुत्तज्वीद अशरफ़िया मुबारकपुर आपकी ताज़ा तस्नीफ़ 'ख़ून के आंसु' मिली। एक ही नशिस्त में पूरी किताब मिन अव्वलिही इला आख़िरिही पढ़ डाली, माशाअलमौला तआला किताबे मज़कूर अपनी नौइयत में ख़ुद अपनी नज़ीर है। दुनियाए सुन्नियत के लिए बेहतरीन सरमाया और मुख़ालिफ़ीन के लिए मशअ़ले राह है।

इख़्तिलाफ़ी मसाइल (माबैन अहले सुन्नत व दियाबना) को दिलचस्प पैराया और आम फ़हम ज़बान में समझाने की सई की गई है।

उलमाए देवबन्द की रसूल दुश्मनी और उनकी तौहीन आमेज़ इबारतों और फिर उनकी तावीलात को अच्छी तरह उजागर किया गया है।

मेरे ख़्याल में अगर देवबन्दी साहबान अपनी आंखों से तअस्सुब की ऐनक हटा कर सन्जीदगी के साथ इस किताब का मुताला करें तो हो सकता है कि सिराते मुस्तक़ीम नसीब हो।

मौलाए क़दीर बतुफ़ैल अपने प्यारे हबीब व महबूब दानाए ग़यूब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आपके इल्म व अ़मल में रोज़ अफ़ज़ूं तरक़्क़ी अ़ता फ़रमाये। आमीन॰

सुबहानल्लाहुल क़ादरी अमजदी ग़ुफ़ेरलहू
ख़तीब जामा मस्जिद व मुदर्रिसे अव्वल
मदरसा रशीदिया मिस्बाहुल उलूम महल्ला बशनीपुर शहर बलिया

अकबराबाद

क़तअ़ तारीख़

सुन्नियों के लिए हक़ीक़त में — मूनिसे ग़म हैं ख़ून के आंसु
नज्दियों की रगें कतरने को — तेग़े दो दम हैं ख़ून के आंसु
फ़लके इश्क़ से गिरे हैं यह — सुर्ख़ शबनम हैं ख़ून के आंसु
कहते हैं हालते वहाबियत — साग़रे जम हैं ख़ून के आंसु

नज्दियत की तबाहियों के लिए
ऐटमिक बम हैं ख़ून के आंसु

भीकीपुर

अज़ीज़े गिरामी क़दर मौलवी अनवार अहमद निज़ामी सल्लमहू
दावाते वाफ़ेरा मुताला नुमाइन्द

परसों 13 दिसम्बर को चहार शम्बा (बुध) के दिन मेरे ग़रीब ख़ाना पर मौलाना मुहम्मद सलीम साहब सुल्तानपुरी ब-सिलसिला चन्दा मदरसा अरबिया सुल्तानपुर तशरीफ़ लाये, मौलाना के साथ हज़रत मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी की तालीफ़ की हुई किताब ख़ून के आंसु की पहली जिल्द थी। जिसको मैंने मौलाना से लेकर पढ़ना शुरू किया। इस क़दर महवियत पैदा हुई कि मैं सारी रात किताब पढ़ता रहा। सुबह को चूंकि मौलाना तशरीफ़ ले जाने वाले थे इस लिए बिलइस्तीआब न पढ़ सका। लेकिन मैं किताब के मुताला से इस नतीजा पर ज़रूर पहुंचा कि दुनियाए सुन्नियत में इस किताब ख़ून के आंसु से बेहतर जो क़सरे वहाबियत देवबन्दियत में ज़लज़ले डाल दे कोई दूसरी किताब लिखी नहीं गई। मेरे ख़्याल में इस किताब का हर मुसलमान साहबे ईमान के घर में होना ज़रूरी है। हर मुसलमान के लिए यह किताब पढ़ना ज़रूरियाते दीन से है और साथ ही यह भी ज़रूरी है कि इस किताब के अक्सर व बेश्तर नुस्ख़े वहाबियों देवबन्दियों और नदवियों के यहां भी पहुंच जायें मुमकिन है मौला तआ़ला उनको इस किताब के मुताला की बरकत से तौबा की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे। मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी की ज़ाते गिरामी क़ाबिले सद हज़ार तहसीन है कि उन्होंने बातिल की निक़ाब कुशाई फ़रमा कर इहक़ाक़े हक़ किया मौला तआ़ला उन्हें जज़ाए ख़ैर अ़ता फ़रमाये और किताब को मक़बूले ख़ास व आ़म बनाये आमीन। किताब ख़ून के आसू की दोनों जिल्दें अपनी पहली फ़ुरसत में बसबीले डाक ज़ैल के पता पर बज़रीया वी.पी. रवाना फ़रमा कर मश्कूर फ़रमाइये। वी.पी. वसूल कर ली जाएगी इत्मीनान रखिये। अगर जिल्दे सानी तबअ़ न हुई हो तो पहली जिल्द फ़ौरन भेज दीजिये। मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब और उनके वालिद माजिद साहब की ख़िदमत में सलाम मस्नून पेश कीजिये बक़िया सब ख़ैरियत है।

फ़क़त वदुआ (मेरा पता यह है)
अहक़र जलालुद्दीन ताजी क़ादरी रज़वी
मौज़ा भीकीपुर, डाक ख़ाना फ़तह पुर, ज़िला रायबरेली
(मैं किताब का निहायत बेचैनी से इन्तेज़ार करूंगा। बहुत ही जल्द भेजियेगा।)
15 दिसम्बर 61 ई॰ दिन जुमा

मुज़फ़्फ़रपुर

हज़रत अल्लामा मौलाना मौलवी मुश्ताक़ अहमद निज़ामी साहब

सलामे रहमत व मसर्रत

किताब मुसम्मा ख़ून के आंसू नज़र से गुज़री, बड़ी ख़ुशी हुई, ब-नज़रे अमीक़ मुताला किया। फ़र्ते ज़ौक़ व शौक़ ने किताब के इख़्तेताम पर मजबूर कर दिया। एक ही जलसा में पूरी किताब शुरू से आख़िर तक पढ़ गया इसकी तौसीफ़ व तारीफ़ से मैं क़ासिर व आजिज़ हूं।

फ़िलहक़ीक़त इस पुर आशोब दौर में इस नौइयत की किताब की अशद कमी महसूस की जा रही थी जिस कमी को अल्लामा फ़ाज़िले उलूमे मशरक़िया ने पूरा फ़रमा दिया।

अल्लामा की मज़कूरा तस्नीफ़ ने तो ऐवाने वहाबियत व देवबन्दियत में ज़लज़ला पैदा कर दिया है और गन्दुम नुमा जौ फ़रोश के दामे तज़वीर को ख़ूब चाक किया है।

हमारी दुआ है कि मौला तआला अपने हबीब के तुफ़ैल में फ़ाज़िले मुसन्निफ़ को मज़कूरा नौइयत की कसीर किताबों के लिखने की मज़ीद तौफ़ीक़ अता फ़रमाये और मज़कूर किताब को क़बूलियते आम्मा का शरफ़ बख़्शे। आमीन॰ हज़रत मौलाना अनवार अहमद साहब ख़ुश बाश।

फ़क़ीर महबूब आलम क़ादरी तेग़ी मुज़फ़्फ़रपुरी

सदर मुदर्रिस मदरसा ज़ियाउल उलूम,

मौज़ा मिर्ज़ापुर, पुर्णिया (बिहार)

फ़ैज़ाबाद

करम फ़रमा ज़ाद मजदुकुम

अस्सलामु अलैकुम मिज़ाजे गिरामी!

किताब ख़ून के आंसू बज़रीया वी.पी. पोस्ट मौसूल हुई। दूसरा हिस्सा अगर तबअ हो चुका है तो फ़ौरन रवाना फ़रमायें नवाज़िश होगी। जनाब ने बड़ा एहसान किया है कि 'ख़ून के आंसू' तस्नीफ़ फ़रमा कर भोले भाले नादान मुसलमान को दामे फ़रेब से आगाह कर दिया। पोशीदा किरदारों को सब के सामने रख दिया। अब जिस का जी चाहे माने या न माने अपना सर खाये। आपने नेक व बद सब कुछ समझा दिया जो एक मुख़लिस का काम था, कर दिखलाया अल्लाह पाक अज्रे

अज़ीम अता फ़रमाये आमीन॰ बेशक हम जिनके हैं उन्हीं का दम भरते रहेंगे। अल्लाह पाक बे नियाज़ है जो कुछ किया अपने हबीबे लबीब के वास्ते और कुल उन्हीं के हवाले करके मुख़्तारे कुल बना दिया यहां तक कि उनकी हर अदा को अपना लिया। सुबहानल्लाह क्या ज़ात मज़हरे सिफ़ात है। वस्सलाम

जनाब का ख़ादिम हक़ीर फ़क़ीर अब्दुल क़दीर अशरफ़ी

जलालपुरी सुम्म फ़ैज़ाबादी अफ़िय अन्हु

(पोस्ट जलालुपर ज़िला फ़ैज़ाबाद)

नेपाल

मुकर्रमी जनाब मैनेजर साहब मक्तबा पासबान

अस्सलामु अलैकुम मिज़ाज शरीफ़

'ख़ून के आंसू' की वी.पी. बड़े इन्तेज़ार के बाद मिली, शुरू से आख़िर तक एक ही नशिस्त में देख डाला। मुदीरे 'पास्बान' का यह क़लमी शाहकार जहां ग़ुलामाने रिसालत पनाही सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को ख़ून के आंसू रुलाता है वहीं वहाबियत, देवबन्दियत के चेहरे से निक़ाब पलट देता है जिस से उनकी करीह सूरतें सामने आ जाती हैं और बेसाख़्ता ज़बान पर आ जाता है।

अजीब ज़माना ने है खाया पलटा दाढ़ी लम्बी है अक़ीदा उलटा

'ख़ून के आंसू' हिस्सा दोम और 'दो मुजाहिद' की कब तक इशाअत हो रही है अल्लामा निज़ामी साहब की ख़िदमत में सलाम पेश कर दीजिये ज़्यादा हद्दे अदब फ़क़त वस्सलाम।

मुहम्मद रफ़ीकुल क़ादरी रज़वी

सदर मुदर्रिस मदरसा नूरुल उलूम, बहादुरगंज, राज नेपाल

गोंडा

मैनेजर पास्बान महज़िल्लुहुल आली सलाम व नियाज़!

अल्लामा ख़तीबे मशरिक़ के गिराँक़दर तस्नीफ़ ख़ून के आंसू को दफ़्तर पासबान में देखा मौलाना अनवार अहमद निज़ामी महज़िल्लुहुल आली ने करम फ़रमा कर ज़ियारत के लिए दिया। बेसाख़्ता क़ल्ब से आवाज़ निकली ख़तीबे मशरिक़ ज़िन्दाबाद, इदारा पासबान पाइन्दाबाद।

इस दौरे पुर फ़ेतन में दर हक़ीक़त अवाम को जिस तस्नीफ़ की ज़रूरत थी उसे इदारए पासबान ने पूरा फ़रमा दिया।

सुन्नियो! अब भी वक़्त है आंखे खोलो और इदारए पासवान की हर मुमकिन ख़िदमत करो ताकि मौलाना मुहतरम तुम्हारे दूसरी दीनी ज़रूरियात को पूरा फ़रमाने की कोशिश करें। ख़ून के आंसू हक़ीक़त में एक ऐसी तस्नीफ़ है जिससे पहले मेरा ख़्याल है कि दूसरी किताब मार्केट में मैंने नहीं देखी और मौलाना मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी मदज़िल्लुहुल आली को तहनियत मुबारकबाद पेश करता हूं।

दुआ है कि मौला अज़्ज़ व जल्ल अपने हबीब सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के सदक़े में आपको ज़ोरें क़लम अता फ़रमाये। आमीन॰

आपका अबुल बयान मिस्बाहुर्रज़ा मुहम्मद अहमद माहिर रजवी गोंडवी रायबरैली

मुकर्रमी हज़रत मौलाना अनवार अहमद साहब निज़ामी दामत बरकातुहुमुल आलिया

सलाम मसनून!

किताबे मुबारका ख़ून के आंसु हिस्सा अव्वल मुअल्लिफ़ हज़रत बाबरकत ख़तीबे मशरिक़ अल्लामा मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी मदज़िल्लुहुल आली बज़रीया वी.पी. पार्सल दस्तियाब हुई। किताबे मुबारका को पढ़ कर बहुत मसर्रत हुई दुनियाए सुन्नियत पर फ़ाज़िले मुसन्निफ़ ने इस किताब को मुरत्तब फ़रमा कर बहुत ही ज़बरदस्त एहसाने अज़ीम फ़रमाया है। किताब के पहले हिस्सा को पढ़ कर दूसरे हिस्सा का सख़्त इज़्तेराब के साथ इन्तेज़ार है यह किताब क्या है गोया कूज़ा में समुन्दर बन्द किया गया है। यह एक बेश क़ीमत इल्मी तोहफ़ा है अहले सुन्नत व जमाअत के लिए। इस किताबे मुबारक ने बड़े अछूते अन्दाज़ में वहाबियत की निक़ाब कुशाई की है दुआ है कि रब तबारक व तआला अपने महबूब वाक़िफ़े ग़ुयूबे मुनज़्ज़ा अनिल उयूब अलैहिस्सलातु वस्सलाम के सदक़ा व तुफ़ैल में मुअल्लिफ़ साहब का साया ता क़ियामे क़ियामत अहले सुन्नत व जमाअत पर क़ाइम रहे आमीन॰

फ़क़ीर अब्दे मुस्तफ़ा मुहम्मद इस्हाक़ ख़ां क़ादरी वारसी व क़ादरी रजवी हशमती व क़ादरी चिश्ती अशरफ़ी ग़ुफ़ेरलहू (ख़लीफ़ा माज़ून व मजाज़ दर सलासिले आलिया क़ादरिया रज़विया व क़ादरिया चिश्तिया अशरफ़िया) बानी व मुहतमिम मदरसा गौसिया इस्लामिया

अरीयानवाँ, डाकख़ाना शंकरगंज ज़िला रायबरैली

मदीना मुनव्वरा

हज़रतुल फ़ाज़िल जनाब अल्लामा मुश्ताक़ अहमद साहब निज़ामी फ़ज़्लहुल्लाहु तआला

असलामु अलैकुम व रहमतुल्लाहि व बरकातुहू

'ख़ुन के आंसू' हज़रत क़िबला जनाब मौलाना मौलवी ज़ियाउद्दीन साहब क़ादरी ने इस हक़ीर को बग़र्ज़े मुताला इनायत की। अक्सर इस क़िस्म की किताबें हज़रत मौलाना साहब मौसूफ़ इनायत करते हैं, मगर जो ख़ूबी आपकी मज़कूरा बाला किताब में पाई गई वह कहीं देखने में नहीं आई। जिन हक़ाइक़ को आपने मुख़ालिफ़ गरोह की किताबों के हवालाजात से बयान और ज़ाहिर किया है हक़ीक़त में "उनका जूता उनके सर" के मिस्दाक़ है। फ़िलहक़ीक़त आपने आम मुसलमानो के साथ बड़ा एहसान किया है। जिनको हमारे उलमाए सू और क़ौम के रहनुमाओं ने 'फुटबाल' बना रखा है। ख़ुदा करे अवाम मुसलमान उन हक़ाइक़ को पढ़े और फिर सोचें और हिदायत पायें। आमीन॰

अल्लाह रब्बुल इज़्ज़त आपको जज़ाए ख़ैर अता फ़रमाये और दुश्मनाने रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से हर तरह महफ़ूज़ रखे आमीन॰

आपका दूसरा हिस्सा भी ज़रूर क़िबला मुहतरम मौलाना साहब मौसूफ़ के पास इन्शाअल्लाह पहुंचेगा और इन्शाअल्लाहुल अज़ीज़ उसका भी मुताला यह हक़ीर ज़रूर करेगा जिसका बेहद इश्तियाक़ है।

आपने जिस क़दर मेहनत और वसीअ़ मुताला के बाद अपनी मज़कूरा बाला किताब को तरतीब देकर हक़ाइक़ को बयान फ़रमाया है क़ाबिले तहसीन व दाद है और दुआ है कि ख़ुदावन्दे तआला आपके इन जज़्बात और ज़ोरे क़लम में इज़ाफ़ा फ़रमाते हुए सही मानों और ख़ुलूस के साथ ख़िदमते ख़ल्क़ की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन॰

कारे लाइक़ा से हमेशा इस हक़ीर को याद फ़रमाते रहें।

फ़क़त वस्सलाम

मुहम्मद अब्दुलग़नी अफ़िय अन्हु मुहाजिर मदनी

सुल्तानपुर

मुहिब्बी मौलाना अनवार निज़ामी!

ख़ून के आंसू पर तबसेरा यह मेरा मन्सब नहीं अलबत्ता जब यह मालूम हुआ कि आक़ाए निअ्मत हुज़ूर मुफ़्तीए आज़म हिन्द के इशारे पर मौसूल होने वाली रायें बनाम 'ख़ुशी के आंसु' शरीके इशाअ़त कर ली जायेंगी तब यह जुरअत हुई मैं भी उसमें शामिल हो जाऊँ इसमें कोई शुबहा नहीं कि ख़ून के आंसू अपनी नौइयत की पहली किताब है जिसने अन्दाज़े तन्क़ीद व तर्ज़े तबसेरा की एक नई राह पैदा कर दी। ख़तीबे मशरिक़ अ़ल्लामा निज़ामी अपनी इस काविश में तन्हा मुस्तहिके दाद नहीं बल्कि उन्होंने हम सब का सर ऊँचा कर दिया जिसको हम हर सोसाइटी में पेश करते हुए फ़ख़्र महसूस करते हैं।

मक्तबा पासबान ख़ून के आंसू की इशाअ़त पर क़ाबिले मुबारकबाद है।

आपका साथी

मुहम्मद असलम सदर मुदर्रिस मदरसा जामिया अरबिया सुल्तानपुर

बम्बई

अ़सरे हाज़िर की अदीमुल मिसाल किताब, ख़ून के आंसू मेरी नज़र से गुज़री इसके महासिन और सनदे क़बूलियत की यह एक रौशन दलील है कि माज़ी क़रीब में कोई किताब इससे ज़्यादा मुम्बई के मार्केट में अपना नाम न पैदा कर सकी। आज अपने व ग़ैर हर एक अनजुमन में इसका तज़्किरा है और बिगड़े हुए ज़ेहन व फ़िक्र के संवारने में ख़ून के आंसू ख़ुद अपनी मिसाल है। बम्बई की दुनिया जिल्दे दोम का बेचैनी से इन्तेज़ार कर रही है। ख़ून के आसू आने वाली नसल के लिए निशाने मील का काम देगी।

हफ़ीज़ुर्रहमान ख़तीब अ़रब मस्जिद मदनपुरा

बुरहानपुर

एक मुद्दत से किताबों के मुताला का मौक़ा ही नहीं मिलता कुछ तो अवराद व वज़ाइफ़ की मशग़ूलियत और कुछ मुरीदीन के मुतअ़द्दिद काम की मसरूफ़ियत जिसके बाइस यह सिलसिला ही जाता रहा लेकिन ख़ून के आंसू पहली किताब है

जिसने सोए हुए ज़ौक़े मुताला को जगा दिया और इसकी एक एक सतर पढ़नी पड़ी दिल बहुत ख़ुश हुआ कि हालात के बिल्कुल सही तक़ाज़े पर यह किताब मन्ज़रे आम पर लाई गई है। यह किताब एक मेरे ही नहीं बल्कि करोड़ों मुसलमानों के दिल की तर्जुमान हो गई। अज़ीज़ी मौलाना निज़ामी आप दुआए दरवेशाना क़बूल फ़रमायें और दीने हक़ की ख़िदमात अन्जाम देते रहें।

अ़ब्दुल ग़फ़ूर अशरफ़ी

नाज़िम मदरसा अशरफ़िया इज़हारुल उलूम बुरहानपुर

बड़ौदा

बाबू अ़ब्दुर्रशीद अरशद निज़ामी।

यह मालूम करके ख़ुशी हुई आँ अज़ीज़ ख़ुशी के आंसु की तरतीब दे रहे हैं मेरी भी चन्द सतरें शामिल कर लीजियेगा। मेरी नज़र में ख़ून के आंसू पहली किताब है जिसने सुन्नी मक्तबए फ़िक्र को तन्क़ीद व तबसेरा का एक नया अन्दाज़ बख़्शा है और वहाबिया दियाबना के हक़ में लम्हए फ़िक्रिया है, इस किताब ने बहुत से वह नौजवान जिनके क़दम डगमगा गये थे उनको संभाला दिया। ख़तीबे मशरिक़ अ़ल्लामा निज़ामी और अज़ीज़ी मौलाना अनवार निज़ामी से सलाम कह दें।

सय्यद अज़ीमुद्दीन

ख़ानक़ाहे रेफ़ाइया, बड़ौदा

रायपुर

शदीद इन्तेज़ार के बाद ख़ून के आंसू मौसूल हुई, मुताला से पहले इसकी तारीफ़ सुन चुका था। मौलाना निज़ामी ने ऐसे ख़ुश्क मज़मून को जिस क़दर दिलचस्प व रंगीन बना दिया है यह उनका अपना हिस्सा है नक़्द व नज़र से मुतअ़ल्लिक़ बहुत सी किताबें और बेशुमार मज़ामीन नज़र से गुज़रे मगर ख़ून के आंसू से बढ़ कर किसी को जाज़िबे मुताला न पाया। मुसन्निफ़ का पूरी मिल्लते इस्लामिया पर एक एहसाने अ़ज़ीम है जो कभी फ़रामोश न किया जा सकेगा।

फ़ारूक़ अली - रायपुर

मुज़फ़्फ़रपुर

ख़ून के आंसू का पोस्टर जिस वक़्त मेरी नज़र से गुज़रा मैंने समझा कि जैसे अब से पहले रद्दे वहाबिया में किताबें लिखी गई हैं उसी तर्ज़ की यह दूसरी किताब होगी चुनान्चे वी.पी. वसूल करने के बाद कई दिन तक मेरे सिरहाने यह किताब पड़ी रही। एक दिन यूं ही बे एतेनाई से उठाया और पढ़ना शुरू किया। चुनान्चे मुकम्मल बारह घन्टे में पूरी क़िताब देख गया और आज जब कि मैं अपने तअस्सुरात का इज़हार कर रहा हूं। तक़रीबन इकीस बार इस किताब को पढ़ चुका और मुनाज़रा की किताबों की जो फ़ाइल है उसमें महफ़ूज़ कर लिया। मैं जानता हूं कि मैदाने मुनाज़रा में यह किताब सैकड़ों पर भारी है। मेरे पास वह अल्फ़ाज़ नहीं जिससे ख़तीबे मशरिक़ अल्लामा निज़ामी की ख़िदमात को सराहा जा सके।

ख़लीलुर्रहमान अशरफ़ी

भागलपुर

मैं मौलाना मुश्ताक़ निज़ामी को उस वक़्त से जानता हूं जब कि हम दोनों मुजाहिदे मिल्लत मौलाना हबीबुर्रहमान साहब क़िबला की दर्सगाह में पढ़ते थे मैं उन से सीनियर जमाअत में था अपनी फ़रागत के बाद मौसूफ़ की तक़रीर का शोहरा सुना। मुद्दतों के बाद जब उनकी तक़रीर सुनी तो महवे हैरत रहा।

आज जब कि 'ख़ून के आंसू' देखी तो यह न फ़ैसला कर सका कि मौलाना निज़ामी को शाहकारे क़लम कहा जाये या शाहकारे ख़िताबत, सच तो यह है कि वह ज़बान व क़लम दोनों के बादशाह हैं। अल्लाह तआला उनकी उम्र में बरकत अता फ़रमाये। अब तो मैं ख़ून के आंसू से मैदाने मुनाज़रा में बहुत ही काम लिया करता हूं।

ग़ुलाम मुस्तफ़ा भागलपुर

نام	معنی	نام	معنی	نام	معنی
مُحَمَّدٌ	تعریف کیا ہوا	رَسُوْلٌ	پیغمبر	قَائِمٌ	نماز قائم رکھنے والا
اَحْمَدُ	سب سے زیادہ حمد کرنے والا	نَبِیٌّ	غیب جاننے والا	حَافِظٌ	یاد رکھنے والا
حَامِدٌ	سراہنے والا	طٰهٰ	طٰهٰ	شَهِیْدٌ	گواہ
مَحْمُوْدٌ	سراہا گیا	یٰسٓ	یٰسٓ	عَادِلٌ	عدل کرنے والا
قَاسِمٌ	بانٹنے والا	مُزَّمِّلٌ	کملی والا	حَكِیْمٌ	حکمت والا
عَاقِبٌ	پیچھے آنے والا	مُدَّثِّرٌ	چادر اوڑھنے والا	نُوْرٌ	نور
فَاتِحٌ	کھولنے والا	شَفِیْعٌ	سفارش کرنے والا	حُجَّةٌ	دلیل
خَاتَمٌ	ختم کرنے والا	خَلِیْلٌ	مخلص دوست	بُرْهَانٌ	دلیل
حَاشِرٌ	گواہی دینے والا	یا رسول اللہ ﷺ		اَبْطَحِیٌّ	ابطح والا
مَاحِیْ	محو کرنے والا			مُؤْمِنٌ	مؤمن
دَاعٍ	بلانے والا	كَلِیْمٌ	اللہ سے کلام کرنے والا	مُطِیْعٌ	تابع دار
سِرَاجٌ	چمکتا چراغ	حَبِیْبٌ	اللہ کا دوست	مُذَكِّرٌ	نصیحت کرنے والا
رَشِیْدٌ	نیک	مُصْطَفٰی	چنا ہوا	وَاعِظٌ	اصلاح کرنے والا
مُنِیْرٌ	روشن	مُرْتَضٰی	رضامند	اَمِیْنٌ	امانت دار
بَشِیْرٌ	خوش خبری دینے والا	مُجْتَبٰی	برگزیدہ	صَادِقٌ	سچا
نَذِیْرٌ	ڈرانے والا	مُخْتَارٌ	اختیار دیا گیا	مُصَدِّقٌ	تصدیق کرنے والا
هَادٍ	ہادی	نَاصِرٌ	مدد دینے والا	نَاطِقٌ	واضح زبان والا
مَهْدٍ	ہدایت والا	مَنْصُوْرٌ	مدد دیا گیا	صَاحِبٌ	ساتھی

نام	معنی	نام	معنی	نام	معنی
مَكِّیٌّ	مکے والا	عَالِمٌ	علم والا	مُبِیْنٌ	ظاہر
مَدَنِیٌّ	مدینے والا	طَیِّبٌ	پاک	اَوَّلٌ	سب سے اوّل
عَرَبِیٌّ	عرب والا	طَاهِرٌ	طہارت والا	آخِرٌ	سب کا آخر
هَاشِمِیٌّ	ہاشمی	مُطَهَّرٌ	پاکیزہ	ظَاهِرٌ	ظاہر
تِهَامِیٌّ	تہامی	خَطِیْبٌ	خطاب والا	بَاطِنٌ	پوشیدہ
حِجَازِیٌّ	حجاز والا	فَصِیْحٌ	فصیح	رَحْمَةٌ	رحمت
تَرَازِیٌّ	تَرَازِیٌّ	سَیِّدٌ	سردار	مُحَلِّلٌ	حلال فرمانے والا
قُرَشِیٌّ	قریشی	مُنْتَقِیٌّ	[illegible]	مُحَرِّمٌ	حرام بتانے والا
مُضَرِیٌّ	مضر والا			اٰمِرٌ	حکم دینے والا
اُمِّیٌّ	کسی سے نہ پڑھا ہوا				منع کرنے والا
عَزِیْزٌ	غالب	اِمَامٌ	امام	شَكُوْرٌ	شکر گزار
حَرِیْصٌ	ایمان لانے پر حرص کرنے والا	بَارٌّ	نیک خو	قَرِیْبٌ	قریب
رَءُوْفٌ	نرم دل	شَافٍ	شفا دینے والا	مُنِیْبٌ	نیابت کرنے والا
رَحِیْمٌ	رحم والا	مُتَوَسِّطٌ	معتدل پیغام دینے والا	مُبَلِّغٌ	پیغام پہنچانے والا
یَتِیْمٌ	یتیم	سَابِقٌ	پہلے آنے والا	طٰسٓ	طٰسٓ
غَنِیٌّ	بے نیاز	مُقْتَصِدٌ	میانہ رو	حٰمٓ	حٰمٓ
جَوَّادٌ	سخی	مَهْدِیٌّ	ہدایت کرنے والا	حَسِیْبٌ	کافی
فَتَّاحٌ	حاکم	حَقٌّ	حق	اَوْلٰی	سب سے بہتر